

हरियाना प्रदेश का लोकसाहित्य

[सखनऊ विरवविद्यालय द्वारा पी एच० डी०
के उपाधि के लिए स्वीकृत शोध-प्रबंध]

लेखक

डाक्टर शकर लाल यादव

एम० ए०, पी-एच० डी०

हिन्दुस्तानी एकेडेमी

इलाहाबाद

—प्रकाशक —

हिन्दुस्तानी एंडे डेमी, इलाहाबाद

प्रथमावृत्ति—२०००, १९६०

मू० १२) रु०

प्रकाशकीय

भारतीय लोकजीवन का पुरातन और अधुनातन मायताओं की अभिव्यक्ति यदि एक साथ देवनी हा ता लोकसाहित्य की आर दृष्टिपात करना चाहिये । गीता, गायत्रियों, कथाओं और कथावता आदि में लोक-संस्कृति की जो धारा रही है, वह अनुप्राण और सार्वकालिक है । हिन्दुस्तानी एन्डेमा ने पिन्डले कह वपा से हिंदी भाषी प्रदेश में विशिष्ट ज्ञेय ने लोक-साहित्यिक अध्ययन का प्रकाशन किया है । डाक्टर शकरलाल यादव का प्रस्तुत अध्ययन "हरियाना प्रदेश का लोक साहित्य" इसी दिशा में आगे बढ़ा हुआ एक कदम है ।

हरियाना, हिन्दा ज्ञेय का सीमान्त प्रदेश है । किसी समय यह प्रदेश आर्य सभ्यता एवं संस्कृति का केंद्र था । पुराण और पुराणेतर साहित्य में इस प्रदेश का विशेष महत्व प्राप्त हुआ है । तात्पर्य यह कि संस्कृत की गरिमा से परिपूर्ण इस प्रदेश का लोकसाहित्य समृद्ध है ।

।वद्वान् लेखक ने गहन अध्ययन के बाद हरियाना-प्रदेश के विभिन्न रूपों—लोकगीत, लोककथा, लोकगाथा तथा अन्य प्रकीर्ण साहित्य का गवेषणात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया है । इसमें भाषाशास्त्राय प्रमुख निरलेपणों न साथ सांस्कृतिक और ऐतिहासिक पक्ष पर भी प्रामाणिक अध्ययन है । परिशिष्ट में एक वहद् शब्दसूचा भी दी गया है । तीन गीता की स्वर लिपि भी है ।

आशा है, लोकसाहित्य के अध्येताओं के लिये यह पुस्तक उपादेय सिद्ध होगी और विद्वत्समान में समादृत होगी ।

हिन्दुस्तानी एकेडेमी
इलाहाबाद

विद्या भास्कर
मन्त्री तथा कोषाध्यक्ष

उपोद्घात

किसी देश की कृष्टि और सङ्कृति का परिचय उस देश के लोकसाहित्य में प्राप्त माना में मिल जाता है। लोकसाहित्य जन-जीवन का आइना है। इस दृष्टि में अनगण्य जनता की भावनाओं का, सुख दुःखमयी विविध मनोवृत्तियों का प्रतिफलन होता है। नागर साहित्य में भाव और विचारों का प्रकाशन कलात्मक ढंग से, भाषा और कथन शैली के परिष्कार के साथ होता है परन्तु लोकसाहित्य में वह बिना किसी सजावट, बिना किसी बनावट के, स्वतः प्रसूटित होता है। लोकसाहित्य वह पौधा है जिसे किसी माली ने न तो सींचा और न काटा छाँटा है, वह तो बिना विशेष परिपोषण के पुष्पित और फलित होता है। इसलिए इसकी सुगंध मधुर और मीनी होता है। साहित्यिकता, संगीतात्मकता और कलात्मकता का लोकसाहित्य में नागर-साहित्य के समान उत्कर्ष नहीं मिलेगा परन्तु साहित्य, संगीत और कला का मूल प्रेरक स्रोत लोकसाहित्य और लोकगीतों में ही निहित है। भाषा का मूल रूप भी इसी साहित्य में प्राप्त होता है।

भारतीय जन जीवन आदि काल से ही अपने सुख-दुःख की रात को सहज अकृत्रिम ढंग से लोकसाहित्य के विविध रूपों में प्रकट करता आया है। आदिकाव्य रामायण के रचयिता महर्षि वाल्मीकि लिखित साहित्य के आदि कवि कहे जाते हैं। उनसे पूर्व भी लोक जीवन की सुख दुःखात्मक अनुभूतियों तत्कालीन जन भाषा में प्रकट हुई होंगी, परन्तु आज उनके आकलन का लिपिबद्ध लेखा नगण्य है। लोकसाहित्य की धारा तब से अब तक भाषा परिवर्तन के साथ बहती चली आ रही है।

पश्चात्त्य देशों में लोकसाहित्य का सकलन और उसके अध्ययन का कार्य १९ वीं शताब्दी के आरम्भ से ही गभीरता के साथ होने लगा था। इन्हीं पश्चात्त्य मनीषियों से प्रेरणा पाकर हमारे यहाँ लोकसाहित्य का अध्ययन प्रारम्भ हुआ। हिन्दी में लोकसाहित्य संग्रह का व्यवस्थित कार्य प० रामनरेश त्रिपाठी जी ने किया। उन की 'कविता कौमुदी' इस दिशा की प्रथम पुस्तक मानी जाती है। आगे चलकर विश्वविद्यालयों में भी इस साहित्य के अध्ययन का कार्य आरम्भ हुआ।

दो वर्ष हुए मैंने अपने निरीक्षण में लोकसाहित्य से संबंधित तान विषय— भोजपुरी लोकसाहित्य का अध्ययन, अवधी लोकसाहित्य का अध्ययन तथा

बुदेलखण्डी लोकसाहित्य का अध्ययन—तान विद्यार्थियों को दिये । डा० कृष्णदेव उपाध्याय ने अथय परिश्रम के साथ कार्य करने भोजपुरी लोक साहित्य पर प्रबंध पूरा कर दिया और उन्होंने पा० एच डी० की उपाधि भी प्राप्त की, परन्तु अथय की विषया पर काय पृष्ण न हा मका । ब्रज लोकसाहित्य का, डा० सत्येन्द्र जी का अध्ययन इस समय तक हिन्दी जगत में आ चुका था । इसी बीच सन् १९५३ इ० म श्री शम्भू लाल यादव (अथय ७० यादव) ने इस विश्वविद्यालय म हिंदा अनुसंधान क लिए प्रवेश लिया और उन्हें मने मकी अभिषेक क अनुसार अपने मिदशन म 'हरियाना प्रदेश का लोकसाहित्य' विषय के अध्ययन का कार्य दिया । डा० यादव हरियाना क्षेत्र में हा एक डिप्टी कालेज क हाहा विभाग क अध्यक्ष क रूप म कार्य कर रहे थे । उनका मधा अर उनक उत्साह का परिचय मुझे मिल चुका था । उन्होंने बड़ी लगन और पारश्रम क साथ यह कार्य सन् १९५७ म पूरा कर लिया और इस वृत्ति पर उन्हें इस विश्व विद्यालय ने पा० एच० डी० की उपाधि प्रदान की ।

डा० यादव न अपने इस शाय प्रबंध म हरियानी खड़ा बोली क लोकगात, लोक गथा, लोक गाथा तथा अथय प्रशंसक लोकसाहित्य के रूप का अध्ययन किया है । इसका साथ ही उन्होंने लोकसाहित्य के रमणीयतम रूप 'लोक-नाट्य' पर भी विशेष प्रकाश डाला है । इस प्रकाश का अध्ययन इन काटि क अथय अध्ययना म नहीं है । लोकगीतो म मार्मिकता एव सहजानुभूति है तथा चित्रात्मकता का कैसा योग रहता है—यह एक महहोर गीत म, मुझे डा० यादव ने एक गमय सनाड था, उन्हें सु दर रंग से बैठा है —

चोरण चाल्या छूट क होलिया लम्बी राह ।

बघैकर पकड़ू भावक मिरै गोउर्या म्हा दम नाय ॥

मेरी धारली मरहोर ।

प्रबंध के अन्त म नागरू खड़ा बोला का एक उद्धृत शब्द कोप भी डा० यादव ने दिया है । मरे विचार म यह अनुसंधान वृत्ति रोचकता और उपादेयता, दाना दृष्टिों में उच्च काटि का है । डा० यादव इस समय लखनऊ विश्वविद्यालय क हिंदा विभाग में लोकसाहित्य के विशेषज्ञ प्राध्यापक हैं । उनकी लेखनी से लोक और नागरसाहित्य के अथय ग्रंथ भी प्रसृत हा, यह मेरी मंगल कामना है ।

लखनऊ विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग की शार से हमने भी कुछ प्रकाशन हिन्दा-संसार के सम्मुख प्रस्तुत किये हैं । इस ग्रंथ का भी हम

छापते परखु हिन्दुस्तानी एकेडेमा, प्रयाग (उत्तर प्रदेश) ने इस शोध प्रबंध के प्रकाशन का कार्य अपने हाथ में लिया है। इसके लिए हम एकेडेमी की सराहना करते हैं। आशा है, इस ग्रन्थ के प्रकाशन से लोकसाहित्य के अध्ययन की अभिवृत्ति उद्दीप्त होगी और हिन्दी जगत् लाभान्वित होगा।

—दीनदयालु गुप्त

डा० दीनदयालु गुप्त

एम० ए०, डी० लिट्०

अध्यक्ष,

हिन्दी तथा अन्य भारतीय भाषाएँ,

लखनऊ विश्वविद्यालय

विजयदशमी, २०१७

प्रस्तावना

यदि साहित्य समाज का दर्पण है तो यथार्थ में लोकसाहित्य समाज का आत्मा का उज्वल प्रतिबिम्ब है। किसी देश की जातीय, राष्ट्रीय, साहित्यिक, सामाजिक, ऐतिहासिक, धार्मिक एवं आर्थिक माप के लिए यदि कोई वास्तविक पैमाना हमारे पास है तो वह उस देश का लोकसाहित्य ही है। यह अपने असंख्य रूपों में ही आकषक, अपनी कच्ची अनस्था में ही मजुर और अपनी हीनस्थिति में ही उच्च तथा महान् है। उसके वैज्ञानिक एवं व्यवस्थित अध्ययन की हिन्दी में बड़ी कमी रही है। मैंने इस पुस्तक रूप में 'हरियाना प्रदेशीय लोकसाहित्य' का अध्ययन प्रस्तुत किया है। समूचे हरियानी लोक वाङ्मय को एक ही स्थान पर छूने का अथवा अनुशीलन की सामर्थ्य मुझ में नहीं है। मैंने केवल कतिपय नमूने पाठकों के समक्ष रखे हैं। परन्तु जय गुलाब म कटक है, मयक में अक है तब प्रस्तुत कृति में भा पाठकों को कुछ स्तनन एवं तृटियाँ मिलें ता काइ आश्चर्य की बात नहीं। फिर भी, यदि इस पुस्तक से हिन्दी लोकजाता साहित्य का तनिक भा उपकार हुआ अथवा नाममान का भी किसी अमान की पूत हुआ और साथ ही पाठकों का कुछ भा मनोरजन हुआ, ता मैं अपना प्रयाम सकल समझूँगा।

“एव चेत् परितोषाय विदुषा कृतिना वयम्”

— गङ्गलाल यादव

वक्तव्य

१९४६ की बात है। मैं रेवाड़ी कालेज में हिन्दी प्राध्यापक रूप में पहुँचा। वहाँ पर छात्रावास में रहने तथा स्थानीय निवासियों के सम्पर्क में आने से जनपदीय बोला ने साथ मेरा परिचय हुआ। संस्कृत व्याकरण, अनर्बचन शास्त्र के अध्ययन और भाषातत्व विज्ञान की शिक्षा ने मेरे भातर भाषा के रहस्यों की खोज के प्रति जो आग्रह उत्पन्न कर दिया था उसे अत्र अपने विकास के लिए क्षेत्र मिला।

म अक्सर की प्रतीक्षा में था। सौभाग्य से मेरे अनन्य शुभचिंतक, सुहृद् और मुझे साहित्य क्षेत्र में सतत समुत्साहित रिये रहनेवाले अग्रज सदश रामकवर जी, एम. ए. (कोसली रेवाड़ी) ने १९५१ के अंत में मेरी प्रवृत्ति को समझकर एक लोक सभादात्मक नाटक का अभिनय कराया। मैंने यह अनुभव किया कि वे नाटकीय सभाद जो हरियानी बोली में थे, अपेक्षाकृत विशेष आकर्षक थे। इस जाला के सभापण और गीतों में, राग और रागिनियों में ओजस्विता, सामाजिकता, लोकवातातत्व और भाषायीतत्व प्रधानता से उपलब्ध थे। अत्र मने अपने को उस जेला के निरुट पाया जिधने आधुनिक रङ्गी वाली हिन्दी के निर्माण व विकास में एक महत्वपूर्ण कार्य किया है और जिसकी इस दिशा में एक मौलिक देन है। ऐसे ही कारणों ने मेरी रुचि हरियानी बोली की आर विशेषरूप से जागरूक हुई। मैंने स्वयं कुछ सामग्री एकत्र की और अपने कुछ छात्रों को भा ऐसा करने के लिए प्रेरित किया।

१९५२ के मध्य में, लखनऊ विश्वविद्यालय में हिन्दी तथा आधुनिक भारतय भाषा विभाग के अध्यक्ष डा० दीनदयालु जी गुप्त से मेरा भेंट हुई। मैंने हरियानी बोली के लोकसाहित्य के अध्ययन का अपना विचार उनके समक्ष रक्ता। डा० गुप्त जी ने मेरी प्रार्थना पर विचार किया और सहायता पहुँचाने का आश्वासन ही नहीं दिया, अपितु अपने विश्वविद्यालय में अन्वेषण के रूप में मुझे खोज कार्य की अनुमति प्रदान कर वृत्तसम्प्ल भी किया।

अत्र मेरा विचार हरियाना प्रदेश के लोकसाहित्य का वैज्ञानिक रीति पर अन्वेषण करने का था। इसके लिए यह आवश्यक था कि सामग्री स्व

प्रकार से यथार्थ एवं विशुद्ध हो। अतः मैंने इस कार्य की यथार्थता के लिए साधारण से साधारण कठिनाई भी उठाकर नहीं रखी है। इस सामग्री को स्वयं उस प्रदेश में घूम घूमकर मैंने एकत्र किया है और फलस्वरूप कई बार परित्राणक बनकर हरियाणा प्रदेश में भ्रमण करता फिरा हूँ। इस सफल का प्रतिशब्द मैंने जनता के मुँह से सुनकर लिखा है और समर्पित किया है। प्रदेश के तीर्थों, मेलों, मठों और समाधियों पर भी मैंने अपनी उद्देश्यपूर्ति के लिए श्रद्धा के पुष्प चढ़ाये हैं और प्रचुर सामग्री एकत्र की है।

एक कहावत है, “बारह कोस पर पाणी और बायीं नदल जाते हैं।” अतः मैंने बोली के इस सूक्ष्म परिवर्तन को समझ सकने और लिख सकने के लिए अपने पड़ाव प्रायः १८२० कोस पर लगाये जिमसे यून से न्यून परिवर्तन भी मेरी पकड़ से नहीं बच सके हैं। मेरे दौरा की कठिनाइयों अपना पृथक् अस्तित्व एवं इतिहास लिए हुए हैं। मैं जिस गाँव में जाकर उतरता ग्रामीण जनता के लिए एक कौतूहल की वस्तु बन जाता था। वे न समझ पाते कि एक व्याक्त जो पना लिखा है, मन्नात एव स्वच्छ वेशभूषा धारण किये है, कबल कार्य करता है—हाली हाली (ग्वाले) से कहानी सुनना, उनका सभापण सुनना और बूटली (बुद्धा) लुगाइयाँ ने पुराटे गीत मुन्ना आदि। अधिकतर जनता मुझे सी० आइ० डी० (सुतन्त्र) विभाग का कोई अधिकारी समझती और मेरी उपस्थिति को सदैव सदिग्धरूप से देखती। अनुनय करने पर भी वे लाग मेरी बात पर ध्यान न देते और ओले टाले मारकर मसखरी करने नौ दो ग्यारह हाँ जाते। वयस्क ग्वालिये अवश्य एक आध अश्लील-सी रागणी सुना देते जो सभवतः उनका भावी गायिका की रूपरेखा मात्र सींचती थी। ऐसी स्थिति में स्त्री-गीतों को लेखनीबद्ध करने की तो बात ही दूर थी। इस सहज एवं निर्मूल ग्राम मुलम आशका ने मेरे सामने कई बार प्रतिकूल परिस्थितियाँ तक उपस्थित कीं, जिनका वणन यहाँ अपेक्षित नहीं है। इतना लिखना तो अवश्य अमगत न हागा कि मुझे कई बार इन प्रतिकूल परिस्थितियों से बचने के लिए वहाँ से खिसकना पड़ा है। अनेक बार निराश कर देनेवाली कठिनाइयों आईं, परन्तु ‘परदेश फलेस नरेसहुँ को’ के साथ धैर्यपूर्वक उई भी सहा है।

अपने उद्देश्य में रत, मने मान अपमान, भूख-प्यास आदि की चिंता न की और अपनी यात्राओं पर बराबर बन्ता रहा। जनता ने भी मेरी क्षमता तथा साहस को पहचाना। अब कुछ लोग मेरा बात सुनने लगे। कुछ अपना सतत उपस्थिति, मृदुल स्वभाव एवं सिधाई से मैंने जनता को

अन्तत अपनी आर आकर्षित कर ही लिया और उनका भ्रम दूर हुआ। गाँव के मरपच, स्कूला के अध्यापक एवं अन्य पेशेनाल लोग मेरे इस कार्य का कुछ कुछ महत्त्व पहचानने लगे। इस उद्योग एवं अध्ययन से जो निरन्तर चार वर्षों तक चलता रहा, मेरे पास मिलाकर कोई दो सदस छोट्टे गढ़ गीत और कई सौ कहानियाँ संकलित हो गईं।

इस सग्रह की मेरी अपनी योजना रही है। खेत-क्यार में कीकड़ को छाया में बैठकर, खेत-रक्षक के मचान पर चढ़कर, घसियारे की गठड़ी पर बैठकर मैंने इसका संचयन किया है। कहानी लिखने में एक कठिनाई यह हुई है कि कई बार इन्हें ग्रामीण वाली म लिख सकना दुष्कर रहा है। यह उस परिस्थिति में हुआ है जब कथक तेजी से बढ़ा है और उसे धीरे धीरे कहानी सुनाने में कठिनाई हुई है। कई कथकों की ऐसी प्रवृत्ति होता है कि जब वे कहानी सुनाना आरम्भ कर देते हैं तो उनके कंठ के पट खुल जाते हैं और वे गाढीव के सदृश अप्रतिहत गति से अपने लक्ष्य की ओर बढ़ते हैं। एसा स्थिति में कहानी खड़ी बोली में ही लिखी जा सकी है। मेरे इस सग्रह में मे लगभग २२५ गीत और १५ कहानियाँ उन चटमारों के हाथ पडकर नष्ट हो गई जिन्होंने घग्गर के काठे में मुझे दिन धौले लूट लिया था। एक अघेड़ पुरुष मेरे उस भाले को लेकर सम्पत्त हो गया जिसमें मेरा रात-दिन का परिश्रम और ग्रामीण नर-नारियों का हृदय भरा हुआ था।

हरियानी लोकसाहित्य संकलन के पश्चात् मैंने हरियानी भाषा के इतिहास तथा विकास, प्रादेशिक संस्कृति तथा अन्यान्य शातव्य बातों के लिए सामग्री एकत्र की। इसके लिए मैं शिक्षित जनता के सम्पर्क में आया और प्राचान लेख, हस्तलिखित पुस्तकें तथा ऐसी ही अन्य उपयोगी सामग्री का मैंने स्वाचा। इस प्रकार इलाके की पूरी जानकारी मुझे हुई।

मेरी अगली योजना की यह विशेषता रही है कि मैंने जोगी, भाट, मिरासी, डूक और भाषा आदि से लोक-गाथाएँ एकत्र कीं। हरियाना प्रदेश के नामीगिरामी रागियाँ से यहा के प्रसिद्ध राग मुने और लेखनद्ध किये। जींद रियासत के बाँदखुर्द ग्राम के प्रसिद्ध गायक सान्ना चागी म हरियाने का लोकप्रिय राग 'निहालदे' सुना। माडौटा ग्राम (राहतक) के चतरू मूरगस स उसका दूसरा पाठ लिया। तासरा पाठ बाबा मगल भारथी के मुरारिन से अधिगत किया। दाया खुद (हासी) क श्रीचन् हरिचन् के गौत्रव्य से "गुरु गंगा का साका" प्राप्त किया। नरवाना (पटियाला) से टुगा की लडाइ का किस्सा श्रयवा "देवी का जुग्म" लेखनद्ध किया। गोहाणा से

(राहतक) 'राग राव किसन गोपाल' हस्तगत किया। महम से महमी राधुआ के उदात्तचरित्र वाले अथदान एकर किये। दादरी, हिसार, तोपाम और पानापत से पूरनमल, गापीचद भरथरी, रूपवसत आदि लोफ गाथाओं का हासिल किया। इस प्रकार मने हरियाने की सभी मुख्य मुख्य गाथाएँ एकर कीं, परन्तु विस्तारभय से केवल तीन गाथाएँ—निहालदे, गुरु गूगा और गग राव किशनगोपाल ही मने सजिलार यहाँ ली हैं। ये सभी राग (गाथाएँ) अप्रकाशित हैं, नूतन हैं एवं मौलिक हैं। इस संग्रह का एक राग किन्सा राव किशन गोपाल अभी तक उपनिर्गत रहा है। उसे पाठकों के समान रखन का श्रेय प्रस्तुत लेखक को है। यह राग एकदम मौलिक एवं यथाथ है। पनाब की लाकगाथाओं के यशस्वी उद्धारक सर आर सी टम्पल ने अपना पुस्तक 'दि लाजेड्स आव् दि पञ्जाब' भाग २ में ५८ गाथाएँ संग्रहीत की हैं। उनमें से १७ हरियाने में प्रचलित हैं एवं प्रिय हैं। परन्तु हमारा संग्रह के सभी राग (गाथाएँ) इनसे पृथक् हैं, अतः सुतरा मौलिक हैं।

इस प्रकार मने अनेक यात्राएँ करके हरियाना प्रदेश के साथ साजि य स्थापित किया है। मुक्त मन है कि इस महान् प्रदेश के साथ में तादात्म्यलाभ कर सका हूँ। सन्तोष में यही मेरे इस संग्रह का इतिहास है।

संग्रह के उपरांत अपने शोधकार्य को यथासम्भन्न पूर्ण, प्रामाणिक एवं व्यापक बनाने में कोई कमी मने नहीं छोड़ा है। इस कार्य के लिए मुझे अनेक सम्पन्न पुस्तकालयों में अध्ययन का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। इनमें से केन्द्रीय पुरातत्व पुस्तकालय, दिल्ली, केन्द्रीय सचिवालय, दिल्ली विश्वविद्यालय और लखनऊ विश्वविद्यालय के पुस्तकालय प्रमुख हैं। मने राहतक, हिसार, कनाल, गुडगाव, जींद और पटियाला नामा आदि जिला व रियासतों के सभी गजेटियर देखे हैं। लिखना प्रारम्भ करने से पूर्व मने लानवाना के धुरीण विद्वान्—फ्रेजर और टेम्पल (बर्न एवं विशप) विचारक रस्किन और सी राहुल साकृत्यायन, डा० वासुदेव शरमा अग्रवात, श्री बनारसीदाम चतुर्वेणी, भारतीय लान्साहित्य मर्मज्ञ सत्येन्द्र एवं सत्यार्थ, मिथर्सन और एलविन, त्रिपाठी तथा मेघाणी, पारीक एवं राकेश और दुबे तथा उपाध्याय आदि सभी विद्वानों के साहित्य का अध्ययन किया है।

इस प्रयत्न से पूर्व इस दिशा में दो कार्य—'ब्रज लान्साहित्य का अन्वयन' तथा 'भानपुरी लोकाहित्य का अध्ययन' क्रमशः डा० सत्येन्द्र एवं डा० वृष्णदेव उपाध्याय के मेरे देखने में आये हैं। इस निबन्ध के तैयार करन में डा० वृष्णदेव उपाध्याय के प्रथम को पथिभूत् रूप में रखा है। यह

प्रथम भाषा एच० डा० ने लिये डा० गुप्त के निर्देशन में लिखा गया था। श्री एम० एस० रघुनाथ की पुस्तक 'हरियाना व लोक गीत' अभी प्रकाशित हुई है परन्तु वह प्रयत्न साधारण, एकांगी एवं कृत्रिम है। उसमें हरियाना लोकसाहित्य के केवल एक रूप-गीता का ही लिखा गया है। अतः यह मन में सायं कहा जा सकता है कि प्रस्तुत लेखक का यह काम अपने क्षेत्र में मौलिक एवं नूतन है। इस निबन्ध के निमाण में मेरा अपना मौलिक दृष्टिकोण ही स्पष्ट रहा है। मैंने सामग्री को वैज्ञानिक रूप से जाँच कर है और उसमें अध्ययन के लिए एक नूतन एवं मनावैज्ञानिक पद्धति अपनाई है। प्रारम्भ में लोकसाहित्य एवं लोकगीतों का विषयक विवेचनापूर्ण अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। प्रथम अध्याय में हरियाना प्रदेश के प्रामाणिक इतिहास की रचना की गयी है और उसका प्राचीन गौरवपूर्ण का पता लगाया है। द्वितीय अध्याय में हरियाना वाली का भाषायी अध्ययन किया गया है। ऐसा करने में हमारा यह लक्ष्य रहा है कि पाठक हरियानी लोकसाहित्य—गीत, कथा, गाथा तथा विविध साहित्य के समन्वय के लिए हरियानी वाली में अभिवृत्ता प्राप्त कर लें। हरियाना के स्थान स्थापन (लोकेशन) के लिए भाषायी मानचित्र किया गया है जिसने पुस्तक का मूल्य बढ़ा है। इस प्रयत्न को मैं मौलिक एवं स्वातंत्र्य समझता हूँ। अगले चार अध्यायों में हरियानी लोकसाहित्य का विस्तार अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। नृतीय अध्याय में गीतों के अध्ययन के पाठ्य 'साहित्यचक्र' नाम के कलागणेशों के मनोरञ्जनार्थ एक सूक्ष्म-विवेचन और किया गया है। अन्तिम अध्याय में हरियाना प्रदेश की लोक सृष्टि का चित्र उपस्थित किया गया है। अन्त में एक परिशिष्ट भाग जोड़कर पुस्तक को पूरा किया गया है। इसमें दो हरियानी लोक कृतियाँ भी गई हैं जिसमें हरियानी के रूप-निर्धारण में पाठक को सरलता होगी। कार्यकारी के उपराग के लिए एक कृष्ण शब्द सूची भी दी गई है। इसमें हरियानी वाली के शब्द भंडार का सहज ही ज्ञान हो जायेगा। गाथ ही नमूने के तौर पर तीन गीतों का स्वरलिपि भी दी गई है। इन प्रकार लेखक ने प्रस्तुत पुस्तक को सभा दृष्टिसे उपयुक्त बनाने का चेष्टा की है।

अतः मैं, एक जान और कह दना चाहता हूँ कि प्रस्तुत प्रयत्न में मैंने शिक्षातन्त्रिता की कड़े बात नहीं कही है। न मैंने किसी नूतन दिशा की शुरुआत किया है और न कहीं नदर धरेगी हा खान निकाली है। मैंने तो नवल हरियाना प्रदेश में प्राप्त लोक साहित्य का साधारण-सा विवेचन का है। मेरा निश्चय है कि लोकसाहित्य अध्ययन के लिए यह पुस्तक अवश्य उपयोगी सिद्ध होगी।

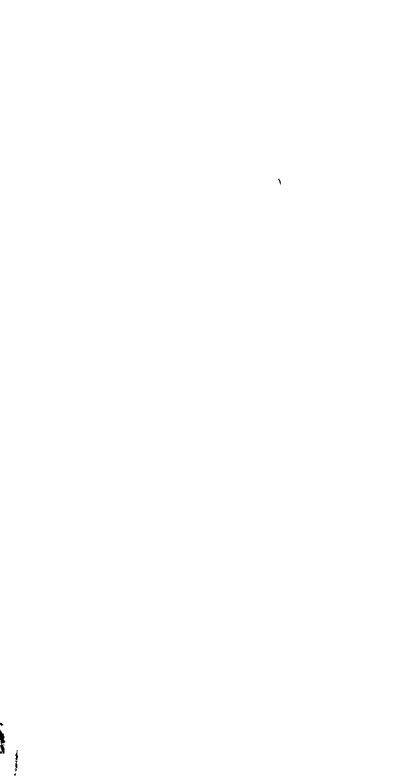
साथ ही जिन सज्जनों से मुझे अपेक्षित सहयोग तथा मुहमोंगी सहायता, आशा एव उत्साह मिला है उनसे प्रति भी कृतज्ञता प्रकाशित करना मैं अपना पुनीत कर्तव्य समझता हूँ। इस सम्बन्ध में सर्वप्रथम मैं डा० दानदयालु जी गुप्त के प्रति आभारी हूँ जिनकी महती कृपा से मैं इस प्रशस्त पथ पर अग्रसर हुआ। गुप्त जी की अनुकम्पा के बिना सम्भवतः मेरा आत्मिक एव उत्साह कला रूप में ही सीमित रहकर मुझकर सूख जाता। उन्हीं के निर्देशन में यह प्रबंध लिखा गया है। डा० भगारथ मिश्र और डा० सरयू प्रसाद जी अग्रवाल का भी कृतज्ञ हूँ, उन्होंने भी समय-समय पर मुझे मार्ग दिखाया है। इन दोनों सज्जनों के साथ बैठकर कई बार मैंने अपने विषय की विवेचना और आलोचना की है। वैसे तो मेरे सहायकों की नामावली बड़ा लम्बी है, फिर भी कुछ महानुभाव ऐसे हैं जिनका नामाल्लेख किए बिना मैं अवश्य ही अपने कर्तव्य में एक नुस्ते छोड़ जाऊँगा।

इस क्रम में, श्री देवेन्द्र सिंह (छारा रोहतक) का नाम विशेष रूप से स्मरण रहेगा जिनसे यहाँ अत्र ५ वर्ष पूर्व इस कार्य का श्रीगणेश हुआ। श्री खजान सिंह चौधरी (रोहतक) मेरे उन छात्रों में से एक हैं जिन्होंने मुझे लज्जाशील महिला जगत् के सत्रीकठ से गीत लिखने में सबसे अधिक सहायता प्रदान की। निश्चय ही उनसे बिना मेरा यह कार्य इतना सम्पन्न न होता। मैं इनका कृतज्ञ हूँ। प० जयनारायण जोशी (दाही) ने मुझे हरियाणा प्रदेश में प्रचलित नानाविध अनुष्ठान, संस्कार, आचार, परम्परा एव विश्राम आदि का साक्षात् ज्ञान कराया। दादरी (जींद रियासत) के प० जयन्ता प्रसाद यास और उनके साथी जैलाल नूरदास ने मुझ पर सक सहायता दी। वे मेरे धन्यवाद के पात्र हैं। रोहतक जिले के परिभ्रमण में मेरे एक दूसरे छात्र श्री छाट्टाराम यादव ने जो मेरी सहायता की है वह स्मरण की वस्तु है। पानीपत में श्री ब्रह्मानंद जी गोयल, प्रधानाध्यापक, स्थानाय जैन हाई स्कूल ने अपने इलाक़ से जो सामग्री एकत्र करवाई है, वह अमूल्य है। कनाल, कैथल, गाहाणा, नरवाणा और जारवल आदि स्थानों में कई हितैषी मेरा सहायक सूची के रत्न हैं। सोनीपत में भाटा का चौपाल २० दिनों मुझे चिरकाल तक स्मरण रहेंगे जहाँ मुझ कहानियों की अपार निधि मिली है। भिनी के लक्ष्मणप्रतिष्ठ साहित्यकार श्री क. देयालाल जा भिनी के मेरे प्रति जगत् सदायना का ध्वजधार रहा है। नि सदेह, वे मेरे सज्जनों में सहायकों में न एक हैं। मैं उनका उपकार से कदापि उन्मत्त न हो सकूँगा। कप्तान राव वारध सिंह जी (रामपुरा) ने अपने पुस्तकालय से अमूल्य सहायता प्रदान की। वे मेरा शत्रु के पात्र हैं। श्री एच. पी. पटेल

(नटगान) ने मुझे गुजराती भाषा और साहित्य का परिचय कराया है। गायनाचार्य मास्टर श्री राम जी ने कई गानों की स्वर्णलिपि तैयार कर मुझे सत्रिय सहायता प्रदान की। हरियाना प्रदेश के मायाया मानचित्र तैयार करने में श्री लक्ष्मी नारायण बजा, एम ए, ने जो परिश्रम किया है वह क्वापि मुलात्ता न जा सकेगा। वे धन्दगा के पात्र हैं। मेरी पत्नी ने अनेक महिलाओं की सहज सलज्ज बाणियों को कागज पर प्रतिष्ठित कर मेरी जो सहायता की है वह अनुपम है। भारका (हिसार) की भीमती कुती जी का स्नेह भा प्रशसनीय है जिन्होंने छी-सुलभ लज्जा मिश्रित चाव से तथा नित्य्यायमान से अपने सरस एव अनूल्य गीतरलों से मेरी भोला भरी है। वे धन्यवाद की पात्री हैं।

अत मे, मैं शत-अशत उन सब सहायकों का भी कृतज हूँ जिन्होंने मेरी चनिक भी सहायता की श्रयवा परदेश में मुझे सुख-सुविधा दी।

—लेखक



विषय-सूची

विषय-प्रवेश

१७-४८

क—लोकसाहित्य का अध्ययन—प्रवृत्ति—पृष्ठभूमि—	१६-२७
ख—लोकवार्ता एव लोकसाहित्य—	२७ ३६
(अ) प्रयाग की समस्या—	२७ ३२
(आ) लोक वार्ता का क्षेत्र एव व्यापकता—	३२ ३५
(इ) लोक वार्ता और लोकसाहित्य का संबंध—	३५-३६
✓ ग—लोकसाहित्य के विविध रूप—	३६-३८
घ—लोकसाहित्य की विशेषताएँ—	३८ ४२
ङ—लोकसाहित्य का महत्व—	४२ ४८
१ ऐतिहासिक महत्व—	४३-४४
२ सामाजिक महत्व—	४४ ४५
३ शिक्षा विषयक महत्व—	४५ ४६
४ आचारिक महत्व—	४६
५ भाषा वैज्ञानिक महत्व—	४६ ४७
६ सांस्कृतिक महत्व—	४७ ४८

प्रथम अध्याय

४९-७८

अ—हरियाना प्रदेश का इतिहास और क्षेत्रविस्तार—	५१ ६२
(१) हरियाना प्रदेश का इतिहास, नामकरण व प्राचीनता	५१ ५६
(२) हरियाना का क्षेत्रविस्तार—	५६ ६२
आ—हरियाना लोकसाहित्य के विविध रूप—	६३-७८
(१) लोकसाहित्य के मूलतत्त्व—	६४
(२) हरियाना लोकसाहित्य का वर्गीकरण—	६४ ७८
१ हरियानी लोक गीत—	७२ ७५
२ लोक कथा—	७५ ७७
३ अभिनयात्मक लोकसाहित्य—	७७
४ प्रकीर्ण साहित्य—	७८

द्वितीय अध्याय

७९-११९

हरियानी बोली का अध्ययन—

७६ ११६

- १ भाषा विज्ञान की दृष्टि से पूर्वपीठिका— ८१-८३
 अ नामकरण— ८३-८५
 आ हरियानी का अध्ययन (आवश्यकता)— ८५
 इ हरियानी का क्षेत्र विस्तार— ८५-८६
 ई हरियानी का समीपवर्ती बोलियों से पार्थक्य— ८६ १०३
 (क) हरियानी और पञ्जानी— ८६ ६२
 (ख) हरियानी और राजस्थानी— ६२ ६६
 (ग) हरियानी और ब्रज— ६६ ६८
 (घ) कौरवी और हरियानी— ६८ १००
 (ङ) दक्षिणी और हरियानी— १०० १०३
 उ हरियानी और समीपवर्ती बोलियों के नमूने— १०३ १०६
 ऊ हरियानी में साहित्य सृजन के अभाव के कारण— १०६-१०६
 २ व्याकरण की दृष्टि से— ११० ११६

तृतीय अध्याय

१२१-३३६

लोक-गीत—

१२१ ३३६

- अ ललुगीत (पूर्वपीठिका) — १२३ २६६
 क संस्कार सम्बन्धी गीत — १२६ २०१
 जन्म के गीत—दौहद (आजणा) का वर्णन, प्रसव पीड़ा, ननद भावज की बदनी, नेग के गीत, बधावा गात, छठी व गीत, खीचड़ी के गीत, दृष्टिदोष तथा मूल उपशान्ति के गीत— १२६-१४४
 विवाह के गीत—सगाई, लगन, मात न्यौतना, हलदातयान, उमठना, माणरापना, मात के गात, लाडो, महदी, लकड़ी, विवाह के दिन घर पक्ष में घुड़चढ़ी या निकाही, रौद्रिया, रात की पहुँच, रतजगा, विवाह के दिन कया-पक्ष म चाक धाकना, फेरें या चारी, फेरों के पाछे (देवघर) के गीत, छन और विदा के गीत— १४४ १६८

मृत्युगीत—जामाता की मृत्यु, विनाहिता कया तथा वृद्ध की मृत्यु के गीत—	१६८ २०१
ख मृत्युगीत—वर्ष के उत्सव एवं त्योहार का वर्णन—	२०१ २५०
१ दई देवता आदि के गीत—अ राग सम्बन्धी देवता—शातलामाता के गीत आदि— आ तार्थयात्रा सम्बन्धी जालाजी के यात्रा के गीत—	२०५ २१३
२ भिन्न भिन्न मासों में गाये जानेवाले गीत—	२१३ २५०
क श्रावण—भूला के गीत, हरियाली तीज, मल्हार, मान के गीत, मनिहार, चन्द्राबल, बारहमासा—	२१३ २३२
ख भाद्रपद—कृष्णजमाष्टमी, गूगापीर अथवा जहार पीर के गीत—	२३२ २३८
ग क्वार—साजी के गीत—	२३८
घ कार्तिक—कार्तिक स्नान, हरजस, परमाती, देवउठान आदि के गीत—	२३८ २४३
ङ फाल्गुन—हाली, धूल, मस्ती और शिका- यत के गीत आदि—	२४३ २५०
ग कृषिगीत—बुआइ, किसान की समृद्धि (आवश्यकताएँ), आभूषण प्रियता का गीत, बपा के लिए प्राथना, गजरे का गीत, इग्न का गीत, मल्होग मक्का का गीत, पैल का गीत, गाय तथा चरगा गीत और बारा—	२५० २६०
घ राजनैतिक प्रभाव के गीत—बापू के निधन का गीत, युद्ध और भरती के गीत—	२६० २६१
ङ अन्य गीत—हुन्की, नृत्यगीत तथा पनघट के गीत—	२६१-२६६
आ प्रारंभ गीत—	२६६-३१६
क हरियानी लोह-गाथाओं का वर्गीकरण—	२६७ २७१
ख हरियानी लोह गाथाओं में पात्र—	२७१ २७३
ग हरियानी लोह-गाथाओं में प्राप्त अभिप्राय—	२७३-२७५
घ हरियानी लोह-गाथाओं का स्वरूप (विशेषताएँ)—	२७५ २८२

हरियाने के तीन प्रतिनिधि लोकरागों का विवेचनात्मक

विस्तृत अध्ययन—

२८२ ३१६

१ निहालदे—

२८२ २६३

२ गूगा—

२६३ ३१०

३ किस्सा राव किशन गोपाल—

३१० ३१६

इ हरियाणी लोकगीतों में साहित्य तत्व—

३१६ ३३६

क अलंकार विधान—

३२० ३२३

ख रस परिपाक—

३२३ ३३५

ग लोक गीता म लय—

३३५-३३६

घ लोक गीतों में छन्द—

३२६

चतुर्थ अध्याय

३३७-३७६

लोक-कथा—

३३६ ३७६

क भारतीय परम्परा म लोक कहानिया—

४३६ ३४६

ख आधुनिक भारतीय भाषाओं में लोक कहानिया—

४४७ ३५०

ग हरियाने का लोक कहानिया—विविध रूप—

३५० ३६४

घ हरियानी लोक कहानिया का गमकरण—

३६४ ३६५

ङ हरियानी लोक कहानी का शिल्पविधान—

४६५ ३७०

च हरियाना लोक कहानियों का विशेषताए—

३७० ३७१

छ हरियानी लोक कहानियों म विविध अभिप्राय—

३७१ ३७५

ज लोक-कहानिया और आधुनिक साहित्यिक कहानियों

में अन्तर—

३७५ ३७६

पचम अध्याय

३७७-४०८

हरियानी लोकनाट्य साहित्य —

३७६ ४०८

क लोकनाट्य परम्परा एवं लोक रगमच —

३७६ ३८५

ख हरियानी—सागीत—

३८५ ३९२

(१) हरियानी सागीत (साग) का शिल्प विधान—

३८८ ३९०

(२) हरियाना सागीत और हिन्दी नाटक में अन्तर—

३९० ३९२

ग हरियानी सागीत का इतिहास—

३९२ ३९७

घ हरियानी सागीत म सूफी प्रभाव—

४०७ ४०५

ङ हरियाना लोकनाट्य और सिनेमा—

४०६-४०७

च हरियानी लोकनाट्य का विशेषताए—

४०७ ४०८

षष्ठ अध्याय

४०९-४५५

प्रकीर्ण साहित्य—

४११ ४५५

पूर्व पीठिका—

४११

क लोकोक्तिया (कहावनें)—लोकाक्ति समूह, लोकोक्ति साहित्य का महत्व, लोकोक्ति साहित्य की विशेषताएँ, वर्ण्य विषय, जातिपरक, देश व स्थान परक, इतिहास परक, कृषि वर्षापरक, नीतिगर्भित, व्याप्तमक—

४१२-४२०

ख मुहावरे (रूढ़ियाँ)—

१ (क) मुहावरे का अर्थ

(ख) लोकाक्तिया और मुहावरों का अंतर,

(ग) मुहावरों का महत्व—

४२१ ४२३

२ हरियानी मुहावरों का अध्ययन (क) सकार तथा प्रभाश्री का उल्लेख (ख) ऐतिहासिक चित्रण (ग) पौराणिक चित्रण (घ) जातिगत विशेषताएँ (ङ) व्याप्तिक (च) शकुन विचार—

४२३ ४२५

ग पहला (काला गाथा), मुफरिया—

४२६ ४४३

घ सृष्टिया—घाघ, भट्टरी, सरूपा तथा सहदेव का सृष्टिया—

४४३ ४४७

ङ त्वेलो में वाणी विनास—

४४७ ४५४

च. फुटकर—वृद्धाश्रमों के आशोचन आदि—

४५४ ४५५

सप्तम अध्याय

४५७-४७५

हरियानी लोक-साहित्य में प्रादेशिक संस्कृति—

४५६ ४७५

क हरियानी जन समुदाय—

४६० ४६२

ख हरियाण का भूमि—

४६० ४६५

१ पाना की पूनता—

४६२ ४६३

२ अकालों की भीषणता—

४६३ ४६५

ग हरियाना में प्रचलित विश्वास—

४६६-४७०

१ अथविश्वास—

४६६ ४६७

२ अथ विश्वास तथा शकुन विचार—

४६७-४७१

३ जनमत्र तथा टोने टोटके—	४७१-४७२
घ हरियानी समाज—	४७२ ४७४
ङ हरियाने का भोजन—	४७४ ४७५

परिशिष्ट

क दो हरियानी लोक कहानी—खीचड़ी, एक राजा के छारे की कहानी—	४७६ ४८२
ख स्वरलिपि—	४८२ ४८४
ग शब्द-कोष—	४८४ ४९४
सहायक सामग्री—	४९५ ४९६

विषय-प्रवेश

रु लोकसाहित्य का अध्ययन : प्रवृत्ति-पृष्ठभूमि

ऊनवीं शताब्दि के मध्य तक लोकसाहित्य एक उपक्षित विषय था। महिलाओं द्वारा गाये गये गीता का ऊल चूल्, हुलियारे की हालियां और पागान अल्लाना, किन्नों का रिचमन की वाचालता और दतथात्रा का शुद्धाङ्गुर समझा जाता था। परन्तु आज हम उन्हें एक विशेष सम्मान और गौरव व राजप्राय निधि एव सांस्कृतिक यात्री के रूप में पाते हैं।

लोकसाहित्य एक ऐसा विषय है जिसका सम्यग् अध्ययन किये बिना हम निम्न दश की सम्यता एव सङ्कृति, धर्म व रीति रिवाज कला और साहित्य, सामाजिक ग्रन्थुत्य एव ग्रामाज्ञात्रा का सूक्ष्म अवलोकन नहीं कर सकते हैं। शास्त्र-सम्मत कला व साहित्य से हम किञ्चि देश विशेष की तत्कालीन सन्तुजत सङ्कृति का आभास भले ही मिल जाय, परन्तु अनुक सङ्कृति जैसे पनपी, रसना सन्त पाना कठिन कार्य है। जबकि लोकसाहित्य के द्वारा यह कार्य उदा सुलभ हो जाता है। अतः लोकसाहित्य का अध्ययन बड़ा आवश्यक एव महत्वपूर्ण है। डा० कृष्णदेव उनायान ने एक स्थान पर उड़े मार्के की नान मरी है कि लोकसाहित्य जनता की सम्पत्ति होने के कारण लोक-सङ्कृति का सङ्ग्रह है।

लोकसाहित्य व अध्ययन न सभार की आज एक विशेष प्रकार की जिज्ञासा, कौतूहल तथा आश्चर्यानुभूति में डाल दिया है। इस उपक्षित लोक-साहित्य सामग्री में हमारी विशाल सङ्कृति का पुनीत इतिहास व्यक्त है। हमारे सिद्ध साहित्य का उद्गम-स्रोत भी यहा लोकामिच्छा है और हमारे सन्तुजत साहित्य के विकास की जड़ें भा लोकमानस की भावभूमि से ही तत्वप्रदण बनती हैं। भारत-वासियों का भी जीवन सदा से कान्यमय रहा है और वह लोकसाहित्य से परिपूर्ण है। फलतः भारतीय जीवन के ढग-माल से हमें लोक-साहित्य के दशन हाते हैं।

लोकसाहित्य किम्ब एक व्यक्ति अथवा कुछ व्यक्तियों द्वारा बनाया नहीं जात। यह ता समन्त समाज का उल्लास और टच्छुनास होता है। इसने

निर्माण म समग्र समाज का हाथ होता है। यह एक पराम्परागत निधि है जिस लेखनी ने न कभी सजाया है, न सजाया है और न कदाचित् कभी इसे लेखनी को सहायता ही मिली है। यह तो प्रारम्भ से समाज की जिह्वा पर ही आसीन रहा है। सभ्यता और सस्कृतियों का उत्थान पतन हुआ, साहित्य बना और विगड़ा परतु लोकसाहित्य का स्थात कभी शुष्क नहा हुआ और आज भी उसकी धारा अविरल रूप से प्रवहवान है।

लोकसाहित्य का अध्ययन करनेवाले अग्रणी विद्वान् यूरोप के हैं। यूरोप में बहुत पहिले से ही लोकसाहित्य पुरातत्व (आरक्यालाजी) और नृ विज्ञान (एथापलाजी) के अध्ययन का आवश्यक सहायक रहा है। इस प्रसंग में, विशय परसी का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है जिहाने सत्रहवीं शताब्दि के मध्य में पार्श्वाल्य गीतों के एक प्राचान समग्र की खोज की। विशय परसी के उपरान्त प्रसिद्ध उपन्यासकार सर वाल्टर स्कॉट ने अंग्रेजी लोकगीत सोन्दर्य की ओर जनता को आकापत किया और अपनी रचनाया म यत्र तत्र उस सामग्री का उपयोग भी किया। इसी शताब्दि के उत्तरार्द्ध म अथात् सन् १६८१ इ० म जाहन ग्रोवे, महोदय ने 'रीमेस आव् जेंटिलिज्म एन्ड बुडाइज्म' पर जो विवेचना दी है वह यहूदियों तथा अन्य साधारणजन के विषय म उड़ी पते की बातें नतलाती हैं। १७७७ म जाहन ब्रॅड ने 'आवजेंशन ग्रान दि पोपुलर एंटीकुटीज आव दि ब्रिटिश आइल्स' पर एक पुस्तक लिखकर इस अध्ययन को आगे बढ़ाया। १८वीं शताब्दि में 'रेलिक्स आव इंगलिश पोइट्री' को लिखत समय विशय पीरी ने लोकगीतों को हा स्थान दिया है।

उन्नीसवीं शताब्दि विशय के लोकसाहित्य के इतिहास म एक क्रान्तिकारी युग है। इस शताब्दि में लोकसाहित्य के क्षेत्र म कितने ही प्रशस्त एवं विशद उद्योगों का सूत्रपात हुआ है। १८२६ इ० प्रकाशित 'होन महोदय' की 'पेवरी डे बुक' में भी लोकसाहित्य सम्बन्धी सम्मक् विवेचना भरी है। आगे चलकर ग्रिम-ब्रुथ्रों ने विशेष रूप से जेकनग्रिम ने भाषा विज्ञान (भाषाशास्त्र) और माइथालाजी (धमगाथा) के क्षेत्र में लोकसाहित्य के सिद्धान्त रूप म उपयुक्तता सिद्ध की। इस नव्य भव्य प्रयत्न के कारण जर्मनी के इन विद्वानों का नाम सदा स्मरण रहगा। इनकी दो पुस्तकें 'किंडर एन्ड हउसमार्वे' और 'द उल्सन माइथालाजी' क्रमशः सन् १८१२ और १८३५ इ० म प्रकाशित हुए। इन जर्मन विद्वानों ने अपने इस नये प्रयत्न द्वारा लोकसाहित्य जसी उपेक्षित सामग्री के अध्ययन का एक वैज्ञानिक रूप दिया। इनका दृष्टिकोण बड़ा एक एवं उदार था। ग्रिम-ब्रुथ्रों की प्रेरणाया, मान्यताया और धारणाओं उपरान्त इस अध्ययन का आरंभ अन्य अनेक विद्वानों का ध्यान गया और

जनता में भी एक उत्कट रुचि उत्पन्न हुई। इस युग तक योरप ने विद्वानों का परिचय संस्कृत के साथ हो चुका था। वेदों का अध्ययन ने इस ग्रार एक नया द्वार खोला। इस वैदिक अध्ययन के द्वारा साहित्य की प्राचीन ग्राम सामग्री को परखा गया और उसकी वैज्ञानिक छानबीन की गयी। अभी तक मैक्समूलर आदि प्राग्विद्या विशारदा का यह विचार था कि लोकजाता सम्बन्धी प्रत्येक वस्तु की वैदिक कसौटी पर परख हानी चाहिए परन्तु यह विचार आगे लोकजाता-शास्त्रियों को मान्य नहीं रहा। इसने विपरीत, उन विद्वानों ने यह प्रमाणित किया कि लोकजाता की व्याख्या के लिये वेदों की ओर देखने की आवश्यकता नहीं। इस प्रवृत्ति ने जनरु के आ ३० वी० टेलर और सर जेम्स फ्रेजर। टेलर महोदय का कार्य बड़ा महत्वपूर्ण था। स्वयं फ्रेजर महोदय इनके बड़े कृतज्ञ थे। उन्होंने स्वयं एक स्थान पर कृतज्ञता प्रकाश करते हुए लिखा है कि डा० "३० वी० टेलर के ग्रथा ने अध्ययन से मेरी रुचि समाज के प्राचीन इतिहास की ओर जाग्रत हुई और मेरे सामने उस लोक के दर्शन हुए जिसका स्मरण भी नहीं देखता था।" डा० अन्य महानुभाव, जिनका प्रभाव फ्रेजर महोदय पर पड़ा, श्री मनहार्ट और डबल्यू राइट्सन सिन्थ थे। इनकी प्रेरणा के फलस्वरूप १८६० ई० में फ्रेजर महोदय की 'दि गोल्डन चा' जा लोकवार्ता की 'घादविल' कहलाती है, प्रकाश में आई। इस ग्रन्थ ने कद भाग है जो लोकजाताशास्त्रियों के लिए बड़े महत्व का है। यही वह ग्रन्थ है जिसकी रचना ने लोकजाता के अध्ययन में एक नई दिशा दी। वैदिक अध्ययन का लोकजाता के प्रति जो आग्रह था वह न रह गया। इनके प्रयत्नों से यह सिद्ध हुआ कि लोकजाता की आदिम एवं मौलिक प्रवृत्तियों का सधान असम्भ्य, अर्द्धसम्भ्य, अशिक्षित एवं हन्शी लागा के आचार विचार, ऐतिहासिक-दर्शा आदि में होना चाहिए। फ्रेजर महोदय का मत इस प्रकार बड़ा स्पष्ट है —

“आर्यों के आदिम धर्म के शाघ का कार्य या तो कृषिजीवी लागा के अंध-विश्वासों (मूत्रग्रहों), विश्वासों और रीति-रिवाजों से आरम्भ होना चाहिए या उनका उपयोग करते हुए निरंतर उसका सशोधन और नियन्त्रण होना चाहिए। जीवित प्रथाओं की साक्षियों के समक्ष पूर्वकालीन धर्म का नियम प्राचीन ग्रन्थों की साक्षी का विशेष महत्व रहा है।” फ्रेजर महोदय का कहना है कि लिखित साहित्य के द्वारा विचार-पद्धति इतनी तीव्रता से आगे बढ़ती है कि यह साधारण जन के कठ से प्रचारित मत और

१ 'दि गोल्डन चा' की भूमिका लेखक श्री जेम्स फ्रेजर।

विश्वासा का बहुत पीछे छोड़ जाती है। प्रेजर महादय ने सतत तथा सफल उद्योगों के परिणामस्वरूप लोकवाता विशारदों की दृष्टि आर्यक्षेत्र के बाहर भी गयी और विस्तृत हुई। श्री ऐंड्रू लेंग ने इस अध्ययन चिन्तन को और भी दक्षिण प्रदान की। परिणाम स्वरूप अधविश्वास आदि धार्मिक तत्व इस आदिम समाज में आदिकाल से ही पोषित हुए। इनका अध्ययन मानव इतिहास की नींव तक पहुँचने में बड़ा सहायक सिद्ध हुआ है और हागा भी। यह नृ विज्ञान और समाज विज्ञान की उन गुरुविर्या के सुलभाने में समर्थ होता है जो अभी तक जन्मिल बनी हुई हैं।

उपरोक्त पार्श्वत्त्व प्रयत्नों के अतिरिक्त आर्य भाषा पश्चिम के विद्वान प्रयत्नशील हैं। इस आर सत्रसे अधिक सचेष्ट और सतत प्रयत्न आधुनिक काल में अमेरिका के कुछ अध्येवसायी विद्वानों ने किया है। उनमें प्रा० एफ० जे० चाइल्ड का नाम विशेष उल्लेखनीय एवं प्रख्यात है जिन्होंने इंग्लैंड और स्काटलैंड के एक एक लोकगीत को बड़ी छानबीन के साथ खोजा है और उनकी अन्य देशों के गीतों के साथ तुलना की है। इन प्रयत्नों पर अंग्रेजी साहित्य को गर्व है।

उपरोक्त वर्णन उन उद्योगों का है जिनके द्वारा योरप और अमेरिका में लोकवार्ता का कार्य बढ़ा और विकसित हुआ। सौभाग्य से इसकी लहर भारत में भी आई क्योंकि जिन दिनों लोकवार्ता सम्बन्धी प्रयत्न पश्चिम में हो रहे थे, भारत का सम्बन्ध भी पश्चिम से बढ़ रहा था। भारत की लोकवाता पर भी इनकी दृष्टि पड़नी स्वाभाविक थी। फलतः डॉड महादय ने 'एनाल्स ऑफ राजस्थान' लिखते समय राजस्थान के इतिहास के लिए बहुत-सी लोकवार्ताओं का आश्रय लिया तथा उसका भरपूर उपयोग किया। किन्हीं लिखित इतिहास के अभाव में बहुत सी मुगल-परम्परागत सामग्री को आधार बनाया गया। उसकी जाँच की गई और तथ्यपूर्ण सामग्री का यथोचित उपयोग भी किया गया। सामयिक विश्वासा एवं रीति प्रथाओं का पर्याप्त वर्णन डॉड राजस्थान में मिलता है। अतः पक्षपातरहित होकर यह कहा जा सकता है कि डॉड महादय ही भारत के सर्वप्रथम लोकवाता-संग्राहक हैं। डॉड के बाद लगभग ५० वर्षों तक भारत में इस दिशा में कोई स्तुत्य प्रयत्न नहीं हुआ। फिर सन् १८८४ में सर आर० सी० टेम्पल महादय (तत्कालीन पञ्जाब में कमिश्नर) ने 'लाजेन्स ऑफ दि पञ्जाब' तीन भागों में प्रकाशित कराके इस उपनिष्ठ सामग्री की ओर विद्वानों का ध्यान आकर्षित किया। इन्होंने एक विशिष्ट लक्षण एवं अध्येवसाय के साथ पञ्जाब भर के किस्सों का (गाथाओं और अनदानों का) संग्रह किया। इन पुस्तकों की भूमिका में सर टेम्पल ने बड़े

पते की बातें बतलाइ हैं । उन्होंने प्रथम भाग का भूमिका में लिखा है कि य अपनी आफिशियल ड्यूटी से समय निजालकर स्थानीय मैलों टेलों में जाते विवाहादि उत्सवों में सम्मिलित होते और रात-रात भर जागकर नौटकी ग्रंथ स्वार्गा को भी देखते थे । इन्होंने बहुत से किम्मे^१ कहनेवालों को महीना तक पैसे देकर लिखवाने का काय किया । सन् १८६६ ई० में रेवरेंड एम० हिल्लर के वे लेख का मध्यभारत की आदिम जातियों के सम्बन्ध में प्रकाशित हुए । सर टेम्पल ने सन् १८६८ में मिस फ्रेजर ने 'ग्रोल्ड टैकनडन' नाम का एक लघु संग्रह प्रकाशित कराया था । इसने तीन वर्ष पश्चात् सन् १८७१ में डाल्टन महोदय की 'डिक्लिप्टिव एथनालाजी ग्रान बगाल' का प्रकाशन हुआ । इही दिनां भारतीय पुरातत्व और इतिहास की सामग्री को लेकर चलनेवाली एक सुप्रसिद्ध पत्रिका 'इंडियन एंथ्रोपॉलॉजी' में बहुत-सा लोकवाता सम्बन्धी सामग्री छपनी आरम्भ हुई । रेवरेंड लालनिहारीदे का 'फोक्लेस आव बगाल' सन् १८८३ में प्रकाशित हुई । अगले वर्ष अर्थात् सन् १८८४ में टेम्पल महोदय के वे तीन ग्रन्थ निकले जिनका वर्णन ऊपर किया जा चुका है । सन् १८८५ में श्रीमती एफ० ए० स्टील की वे कहानियाँ प्रकाशित हुईं जिनका संग्रह 'वाइड अवेक स्टोरीज़' के नाम से हुआ है । इस पुस्तक के प्रकाशन का सौभाग्य भी सर टेम्पल का ही है । नटेश शास्त्री ने 'फोक्लोर इन सर्न इंडिया' लिखकर इस प्रयत्न में सहयोग प्रदान किया है । सन् १८९० में डब्ल्यू० कुक ने 'नाथ इंडियन नोट्स एंड क्वेराज़' नाम से एक स्वतंत्र पत्रिका निकालनी आरम्भ की । इनके साथ ही रेवरेंड ए० कैम्बल तथा रेवरेंड जे० एच० नोलीज के सहयोग से सधाला का और फारमीर की कहानियाँ पाठकों के सामने आईं । आर० एस० मुक्जी की 'इंडियन फोक्लोर', श्रीमती इकौर्ट का 'शिमला विलेज टेल्स', रेवरेंड सी० स्विनर्न का 'रोमांटिक टेल्स फ्रॉम पंजाब' लोकवाता की महत्वपूर्ण सामग्री से भरा पड़ी है । श्री जी० एच० बाम्पस और रेवरेंड थो० बौटिंग का नाम 'सधाला' कहानियों के साथ सदा स्मरण रहेगा । एम० कुलरु की 'बंगाली हाउस होल्ड टेल्स' और श्रीमती शोमना देवा की 'ओरिएंटल फॉल्स' का लोकवाता सम्बन्धी महत्ता किन्तु है, यह बतलाने की आवश्यकता नहीं । पापर महाशय द्वारा प्रकाशित 'विलेज फॉल्स आव सालान' २

१ 'किरसा' पंजाब का एक व्यापक शब्द है जो किसी कहानी, भाग, गायन और कथन आदि के लिए प्रयुक्त होता है । प्रायः लघु-गीत को छोड़कर शेष समस्त लोकवाता के लिए इसका प्रयोग देखा जाता है । गायन शब्द के लिए राग भी प्रयुक्त है ।

तीन भाग किस लोकगाता अभ्येता का ध्यान अपनी ओर आकर्षित नहीं करते ? पेंचर और टानी द्वारा प्रकाशित कथासरित्सागर लोकवाता के क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण स्थान का अधिकारी है। यह कथाशास्त्र का सर्वश्रेष्ठ ग्रंथ है। इस सम्बन्ध में भारत के लब्धप्रतिष्ठ नृ विज्ञानवेत्ता शरच्चद्र राय का नाम भी नहीं भुलाया जा सकता। इन्होंने अपनी खोज में प्राचीन कहानियाँ दी हैं। गिगसन महादय का नृ अध्ययन भी प्राचीन कहानियों के विश्लेषण का परिणाम है। 'इटियन फिल्लिस' के कता 'रामस्वामी राजू' का नाम भी उल्लेखनायक है। अपने इस सग्रह में उन्होंने सौ भारतीय कहानियों को स्थान दिया है। जी० आर० सुब्राह्मिया पतालु का 'फोकलोर आन् दि तेलगून' प्रोट तथा साहित्यिक आलाचना से पूर्ण एक अनुपम सग्रह है। मारिग लुम फोल्ड, नामन ब्राउन, रूथ नाटन, एम० जी० एमेन्यू आदि अमेरिकन लोकवार्ताशास्त्रियों का भी नाम इस ओर आता है। इन्होंने श्री उपशासकार स्कॉट ने जिसका उल्लेख प्रथम प्रश्न में हो चुका है, लोककथाओं और लक्षणाओं के अध्ययन की एक विलुप्त नवान तुलनात्मक प्रणालि स्थापित की है।

आजकल भारतीय लोकगाताशास्त्र के प्रमुख विद्वान नृ शास्त्री डॉ० वैरिय एलपिन हैं जिन्होंने मुडा और सथाल आदि आदिम जातियों पर विशेष का किया है। चाइल्ड और रिचार्ड महोदय का नाम और काम भी स्तुत्य है किन्तु इस प्रसंग में यह भी धारण रखने योग्य है कि उपरोक्त जितने भी उपाय एव प्रयत्न इस ओर हुए हैं वे सब अंग्रेजी का माध्यम बनाकर चले हैं। फिर भी ये सभी भारत में लोकवार्ता क्षेत्र के अग्रणी हैं और इनकी प्रेरणा से बहुत-सा कार्य हुआ है।

लोकवाता के अन्तर्गत लोकगीतों का भी सग्रह एव अध्ययन हुआ है सन् १८७२ में श्री सी० आइ० गोवर ने 'फोकसागन् आन् मदर्न इंडिया' का प्रकाशित कराया। श्री ताफदत्त का 'ऐंशियेंट रैलेइस एन्ड लीजेन्ड्स आ हिन्दुस्तान' सन् १८८२ में प्रकाशित हुआ। सर टेम्पल महोदय ने जिनका उल्लेख पहिले पृष्ठों में हो चुका है 'लीजेन्ड्स आन् दि पंजाब' में गीत हा सग्रहा किया है जो बड़े-बड़े गीत रूप में 'किस्सा' कहलाते हैं। चित्तिमोहन सेन का बंगला में 'दासगणि' नाम का सग्रह विख्यात है। 'मैमनसिंह गीतिका' में

* हरियाना में बड़े-बड़े गात किस्सा के नाम से पुकारे जाते हैं जिन्हें दूसरा नाम अबदान अथवा गाथा दिया जाता है।

मा जगला गीत ही सग्रहीत हैं । भूवेरचद मेघाणी द्वारा प्रकाशित 'राटियाली रात' ३ भाग, रणजीतराव मेहता के 'लोकगीत', नर्मदाशकर लाल 'शकर' व 'नागर चियों माँ गगतागोत' आदि गुजराती की महत्वशाली पुस्तकें हैं । सतराम ने 'पञ्जामी गीत' पञ्जाबी भाषा के गाता का उत्तम सग्रह है । भारवाड़ी भाषा के कई सग्रह प्रकाशित हुये हैं जिनमें मन्मलाल वैश्य की 'भारवाड़ी गीतमाला' निहालचद घमा के 'भारवाड़ी गीत' तथा ताराचद आभ्य का 'भारवाड़ी स्त्रीगीत सग्रह' विशेष उल्लेखनीय हैं । श्री देवेन्द्र सत्यार्थी ता इस क्षेत्र के प्राण हैं जिन्होंने भारतभ्रमण करने लानवाता की अमूल्य राशि का सग्रह किया है ।

हिन्दी में इस प्रयत्न का श्रीगणेश श्री मन्मलाल द्विवेदी ने किया । उनकी 'मरणरिया' पुस्तिका इस निशा की प्रारम्भिका के रूप में है । सखता में प्रकाश पानर सतराम जी के 'पञ्जामी लोकगीत' हिन्दी की निधि गने । इनके पीछे हिन्दी लोकगीतों के कर्मठ शोधक प० रामनरेश त्रिपाठी इस क्षेत्र में अग्रणी बने । कविता-बौमुदी के पाचवें भाग में उत्तर प्रदेश के समा प्रकाश एव रगों के ग्राम गीतों को स्थान मिला है । हिन्दी के क्षेत्र में त्रिपाठी जी का यह सबप्रथम व्यापक उद्योग था । इनके प्रयत्न से प्रेरणा पानर तथा इस आर उदती अभिरुचि का देगकर दिन्ना लानवाता के अनेक सच्चे सेवक उत्पन्न हुये और परिणाम-स्वरूप दिन्नी और उसकी बालिषा में पयात काय हुआ । राजस्थानी-गीतों के बड़े उत्तम सग्रह स्वर्गीय प्रा० सूर्यकरणी जी पाराक, टा० रामसिंह और श्री नरत्तम स्वामी जी के प्रयत्न स्वरूप प्रकाशित हुए हैं । टा० रामसिंह एव श्री नरत्तम स्वामी जी ने 'दालामारु रा दूहा' को लिपिबद्ध कर इस मरणासन्न निधि को अमर बना दिया है । स्वामीजी तथा प्रा० सहन कन्हैयालाल जी के सदुद्योगों से 'राजस्थान पत्रिका' अग्रज ने 'इंडियन एण्टक्वेरी' के नमूने पर निकल रहा है । इस पत्रिका में पुरातत्त्व के साथ लानवाता की भी चचा रहती है । विद्यापति के परचात् मिथिला की माधुरी का हिन्दी जगत् के समन लानेवाले की था 'म इकाल सिंह राजश इस आर अच्छे लानगीत सग्रहकता हैं जिनकी की 'मीथिला लानगात' पुस्तक दिन्नी-सम्मेलन में प्रकाशित हुई है । लानवाता की बहुत-सी सामग्री 'इम' और 'विशालभारत' पत्रिकाओं में इधर उधर छपी है । श्यामावरण दुब का 'दुनासगरी लानगात' इस विषय का सुन्दर सग्रह है । प्रा० कृष्णदेव उपाध्याय के 'भाजपुरी लानगीत', २ भाग हिन्दी साहित्य-मन्मलन में प्रकाशित हुआ है । इस सग्रह की एक विशेषता सर्वोपरि है कि गीतों की पान्चा बहा हा अनुपम ली गयी है । आदि में एक सारपूर्ण भूमिका ने प्रयो

का मूल्य द्विगुणित कर दिया है। डा० उपाध्याय को 'भोजपुरी लोक साहित्य' पर लिखे गये विशिष्ट निबंध (थीसिस) पर लगनऊ विश्वविद्यालय ने डाक्टर की उपाधि मिली है। यह निबंध डा० दानदयालु गुप्त के निदेशन में लिखा गया था। बुंदेलखण्ड में तो प० बनारसीदास जी चतुर्वेदी की प्रेरणा से बहुत सा कार्य हुआ है। शिवसहाय चतुर्वेदी जैसे महान् लोकवाता समग्रकार ने बुंदेलखण्डी लोकवाता का उद्धार किया है। इनकी बुंदेलखण्डी लोक कहानियाँ एक सुंदर भूमिका के साथ छपी हैं। श्री कृष्णानंद गुप्त के अध्यक्षताय एव प्रयत्न स्वरूप टीकमगढ़ (बुंदेलखण्ड) से 'लोकवाता' नामक प्रैमासिक पत्र, अग्रेजी की 'फोक्लोर मैगजीन' के आदर्श पर निकालना आरंभ हुआ था। डा० वासुदेवशरण अग्रवाल ने भी जनपदीय साहित्य के अध्ययन की आरंभ विशेष प्रेरणा दी है। उनकी 'पृथ्वीपुत्र' नामक पुस्तक इस दिशा की सर्वश्रेष्ठ पुस्तकों में से एक है। डा० अग्रवाल ने लोकवाता को भारतीय दृष्टिकोण से देखा और परखा है। स्वतंत्र पुस्तकों के अतिरिक्त डा० अग्रवाल ने अनेक ग्रंथों की भूमिका के रूप में भी अपने लोकवाता संबंधी विचार जनता के समक्ष रखे हैं। डा० सत्येन्द्र जी ने 'ब्रजलोक साहित्य का अध्ययन', ब्रजलोक कहानियाँ और इस विषय संबंधी अनेक लेखों द्वारा हिंदी लोकसाहित्य-संग्रह को समृद्ध किया है। डा० सत्येन्द्र जी के साथ ब्रज-साहित्य मंडल को नहीं मुलाया जा सकता। यह मण्डल ब्रजलोकवाता का विज्ञान सम्मत विवेचन एव अध्ययन करने में जुग हुआ है। इस प्रकार के साहित्य मंडलों की प्रत्येक देश व जनपद के लिए महती आवश्यकता है जो तद्देश जनपदीय लोकसाहित्य के संग्रह एवं सरक्षा का कार्य करें और उस संग्रहीत सामग्री के आधार पर एक विवेचनापूर्ण अध्ययन प्रस्तुत करें।

लोकवाता संबंधी इस संक्षिप्त सारणी से यह तो स्पष्ट है कि हिंदी की विविध गोलियों में लोकवाता संबंधी कार्य हो रहा है। जो कुछ लोकवाताएँ अभी तक प्रकाश में आई हैं उनसे अबलोकन से यह बात प्रतीत होती है कि सभी प्रदेशों में ग्राहिरी आवरण के पीछे एक मूल-स्व के दर्शन होते हैं। सभी लोकवाताएँ किसी एक स्थान पर मिलती दीख पड़ती हैं जिससे एकतरफ ही सर्वत्र प्रवहान है अथवा मानवीय ऐक्य का अनुमान सुलभ है। जहाँ तक समानता का संबंध है, हिन्दा ही की लोकवाता क्यों, समस्त समार की वाताएँ किसी एक ही दिशा की आरंभ आती-जाती दिखाई पड़ता है। लोकवाता का वह साम्राज्य है जहाँ न किसी धर्म की प्रधानता है, न किसी रंग आरंभ जाति का प्राबल्य। यह साम्राज्य यथार्थ में वह समुदाय निहीन (नैक्युलर) है जहाँ प्रत्येक बात मानव द्वारा मानव के लिए और मानव का उनकर कही

गया है। यहाँ विशुद्ध मानवता का शासन है। यहाँ नीच ऊँच, छाट-बड, गोरे-काल, पौरात्य-पाश्चात्य, उदीच्य एव दानशात्य सब एक समान हैं। लोकराजा ने पुष्ट कर दिया है कि मानव मानव का हृदय, विचार आ-भावनाएँ एक जैसा हैं विश्व के एक द्वार से दूसरे द्वार तक।

ख लोकराजा एव लोकसाहित्य

अ प्रयोग की समस्या

लोकराजा अग्रेजी के फोक लोर (Folk Lore) शब्द का पर्यायवाची है। हिन्दी में इसने प्रचार का अधिकांश श्रेय आ कृष्णानन्द जी गुप्त एव डा० वासुदेव शरण जी अग्रवाल को है।

उन्नीसवीं शती के पूर्वार्ध तक इस क्षेत्र के अध्ययन का नाम सार्वजनिक पुरातत्व (फोल्क एण्टीक्वरीज) था। सर्वप्रथम सन् १८४६ में आ विल्किंसन जाह्न यामस ने इसे नया नाम फोकलोर दिया। फोक शब्द ऐंग्लो-नैक्सन शब्द 'Folc' का विकसित रूप है। डा० वार्कर ने 'फोकलोर' को समझते हुए लिखा है कि 'फोक' से किता सभ्यता से दूर रहनेवाली पूरी जाति का बोध होता है या यदि इसका विस्तृत अर्थ लिया जाये तो सुसंस्कृत राष्ट्र के समा लोग इस नाम से पुकार जा सकते हैं। पर 'फोकलोर' के सदर्भ में फोक का अर्थ असंस्कृत लाग है। दूसरा शब्द लोर (Lore) ऐंग्लो-सेम्जन 'Lar' से निकला है और इसका अर्थ होता है वह जो सीखा जाये। इस प्रकार 'फोकलोर' का शाब्दिक अर्थ है 'असंस्कृत लोगों का ज्ञान'।

फोकलोर शब्द के पर्याय हिन्दी शब्द के ऊपर जब गभीर विचार करने हैं तो फोक शब्द के लिए हिन्दी में तीन शब्दों का प्रयोग मिलता है—लाक, जन और ग्राम। अग्रेजी फोक शब्द के लिए हिन्दी का 'लाक' शब्द बहुत प्रचलित है एव प्रिय है। पर हिन्दी 'फोकलोर' के प्रथम सप्रदर्भता प० रामनरेश त्रिपाठी 'फोकलोर' के लिए 'ग्राम' शब्द पर विशेष जल देने हैं। उन्होंने अपने साहित्य में सर्वत्र ग्राम शब्द का ही प्रयोग किया है। यथा—'ग्रामगीत, ग्रामसाहित्य आदि।' डा० माना चंद्र बी ने 'फोक' के लिए जनशब्द के प्रति आग्रह किया है।

१ देखिए डा० भोलानाथ त्रिपाठी का लेख 'लोकराजा और लोकसाहित्य' सम्मेलन परिचा, स० २०१०

२ देखिये जनपद खड १, धक १, त्रिपाठी जी का लेख।

गभीर विवेचन के लिए पहिले हम ग्राम शब्द को लेते हैं। इस शब्द में वस्तुतः पोक की विशाल भावना नहीं आ पाती। यदि इल्का आरण उठाकर देर तो नगर में भी पोक की स्थिति है। सुसंस्कृत राष्ट्र के सभी लोग इस नाम से पुकारे जा सकते हैं। इस प्रकार ग्राम और पुर का इसमें भेद नहीं है। दूसरा शब्द जन है। यह 'जनि' धातु से बना है जिसका अर्थ है उत्पन्न होना। इस प्रकार उत्पन्न होने वाले (जन्मने वाले) सभी लोगों का बोध इस शब्द से हो जायेगा। अति प्राचीन काल से यह शब्द रम अथ का धातक रहा है। पृथ्वीसूक्त में जन शब्द का प्रयोग व्यापक अर्थ में मिलता है यथा 'जन विभ्रती बहुधा विवाचसम्, जानपद शब्द से भी जन शब्द के व्यापक अर्थ की ध्वनि निकलती है। वैदिक युग में 'जानराज्य' जनता के प्रिय राज्य को बताया गया है। ब्राह्मणग्रन्था, पालि, प्राकृत तथा अपभ्रंश के साहित्य में भी जन शब्द प्रायः इसी अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। जनप्रवाद, जनपद तथा जनाश्रय आदि शब्दों में भी जन की वही ध्वनि है। पर साथ ही साथ जन शब्द का एक दूसरा अर्थ भी लगा चलता रहा है जो भक्त के अर्थ में आगे चलकर रूढ़ हो गया। महाभारत काल में गीता में कृष्ण के लिए जो जनादन विशेषण आता है वह इसी अर्थ का पोटक है। इस शब्द की व्युत्पत्ति दी गई है 'जन भक्त अर्दयति रक्षति' इति जनादन । उदाहरण— 'निहत्य धार्तराष्ट्रात् का प्रीति स्थाज्जनादन'। हिन्दी के भक्ति-साहित्य में तो जन शब्द 'भक्त' का पर्यायवाची ही बन गया है। 'हरिजन जानि प्रीति अतिवाणी' (हरि का दास) (भक्त) जानकर प्रीति बनी 'जन रजन भजन सनम्राता । वेद धर्म रक्षक सुरत्राता ।—(सुन्दरकाण्ड)

लोक शब्द का प्रयोग भी उन्हीं अर्थों में है। इस शब्द की व्युत्पत्ति धातुद्वय से 'लाहृ दर्शने' और 'रूचू दीप्ती' से सम्भव है। पर इस क्षेत्र में पाणिनी ब्रह्मण्य एव पाश्चात्य भाषाविज्ञान विशारदा में मतैक्य नहीं है। व्युत्पत्ति विषयक अर्थ को अलग रखते हुए प्रयोग से इसका एक अर्थ और भी मिलता है। इस शब्द का अर्थ स्थानवाची भी अवश्य है। ऋग्वेद में इसी अर्थ में इसका प्रयोग आया है। 'देहिलाकम्' का अर्थ है 'स्थान दो'। भुवन अर्थ में भी यह शब्द प्रयुक्त हुआ है यथा—इहलोक, तिलाक एव चतुर्दशलोक आदि। लोक का एक विशिष्ट अर्थ वेद विराधी भी है। 'लोने वेदे च' की बात उसी समय से चली है। किन्तु आगे चलकर 'लाक' वेदेतर सस्कृति की समुचित मीमा को ताड़कर ऊपर उठ गया है, उसकी भावना वैदिक और अतिसंस्कृतिक दानो तत्त्वा का सहज रूप से छूने लगी है। अतः वेद के तुल्य ही

यह शब्द स्वतन्त्र एवं सामान्य अस्तित्व का अधिकारा ही गया है। यथा 'लाक' समा' आदि शब्दां में अशोक के शिलालेखों के देखने में पता चलता है कि उस समय लोक शब्द से सामान्य जीवन का अभिप्राय लिया गया है। यह प्रयोग 'अनुवत्तर सर्वलोक हिताय' से सुस्पष्ट है। बौद्धधर्म के प्रचार के साथ ही 'लाक' शब्द में 'मानवमात्र' की भावना का उद्भव हुआ। प्राकृत एवं अपभ्रंश भाषा के 'लोकजत्ता' (लाकराजा), 'लो अप्पवाय' (लाक प्रवाय) आदि शब्द लोक की महत्ता प्रदर्शित करते हैं।

इस प्रकार हमने देखा है कि 'फोक' शब्द सीमित है, जब अपभ्रंश 'फोक' के निकट है परंतु 'लाक' में 'लोक वेद च' से लेकर 'लोक कि जं वडरा' तक शुद्ध 'फोक' का भावना मिलती है। निम्नर्पत लोक ही फोक का प्रतिशब्द ठीक प्रैठता है।

'फोक' के लिए भारतीय शब्द 'लाक' निर्णीत हो चुकने पर 'लोक' ने प्रायः भारतीय प्रतिशब्द का समस्या शेष रहता है। जैसा रूप कहा जा चुका है 'लार ऐंग्ला-सैक्सन (Lar) से निकला है और इसका अर्थ होता है 'जा साया जाये' अर्थात् 'ज्ञान'। इस प्रकार 'फोकलोक' का शाब्दिक अर्थ 'लाक ज्ञान'। साथ ही साथ 'जा सीया जाये' इस अर्थ की विवेचना करते करते 'फोकलार' के लिए अनेक शब्दा की उद्भावना हो आती है। यथा— 'लाकज्ञान, लाक-विज्ञान, लाकशास्त्र, लाकपरपरा, लाकप्रतिभा, लोकप्रवाद, लाकग्रन्थ, लाक विधान, लाकग्रन्थ, लोकपुराण, लाक आगम आदि'। पर 'फोक' शब्दों में किसी में भी मुकम्भिल भाव आद्यागत अनुभूत नहा मिलता। अतः इस समस्या का सुलभाने के लिए विभिन्न विद्वानों द्वारा प्रयुक्त शब्दों की विवेचन अपेक्षित है। सर्वप्रथम डा० वामुदेव शरण जी अग्रवाल ने 'फोकलार' शब्द का पर्याय 'लाकराजा' रखा है। उर्ह यह वाता शब्द 'वल्लभ सम्प्रदाय' में प्रचलित निजवाता, घरवाता, ८४ वैष्णव की वाता, दो सौ वाकन वैष्णव की वाता आदि में मिला है^१। इस शब्द के अपनाने में प्रति श्री कृष्णानन्द जी गुप्त का भी आग्रह है। उन्होंने सुन्दरलण्ड के लाकराजा पत्र में निम्न म लिखा है—“लाकराजा का अंग्रेजी में 'फोकलोक' कहते हैं। अतः यह कहिए कि फोकलार के लिए हमने लाकराजा शब्द का प्रयोग किया है। फोकलोक का प्रचलित अर्थ है जनता का साहित्य, आमाण कहाना आदि। परंतु

^१ डा० भोजानाथ तिवारी का लेख 'सम्मेलन पत्रिका' स० २०१०

^२ डा० सरवेन्द्र—अनलोक साहित्य का अध्ययन, विषय प्रवेश पृष्ठ १।

हम उसका अर्थ करते हैं जनता की वाता । जनता जो कुछ कहती है अथवा उसका विषय में जो कुछ कहा और सुना जाता है वह सब लोकवाता है । जिस प्रकार प्रत्येक देश (जनपद) की अपना एक भाषा होती है उसी प्रकार अपना एक लोकवाता भी होती है । जनता के मानस में लोकवाता का जन्म होता है ।”

परन्तु इस शब्द को स्वीकार करने में विद्वानों को कई आपत्तियाँ हैं । प्रथम, यह शब्द पयाप्त व्यापक नहीं है । लोकवाता में तो अधिक से अधिक लोककथा का भाव वहन करने की क्षमता है । देशीय प्रयोग में चिड़ी-पत्री की भौंति कथावार्ता का प्रयोग होता है जिससे यह स्पष्ट है कि कथा और वाता पत्राभ्याची शब्द हैं । उँगल में भी इस शब्द का यही स्थिति है । वहाँ पर भी भारत अथवा वारता का प्रयोग कथा के अर्थ में ही होता है । दूसरे, संस्कृत साहित्य में इसका अर्थ ‘अफवाह’ या ‘विचदन्ती’ भी मिलता है^१ । प्रसिद्ध संस्कृत कोशकार आप्टे महादय ने लोकवाता का अर्थ ‘पापुलर रिपट’ या ‘पब्लिक रूमर’ दिया है । परन्तु इस समस्या के सुभाव के लिए ‘ऐनसाइक्लापीडिया त्रिगानिका’ का मत भी देख लेना समीचीन होगा । इस विश्वकोष में ‘फोक्लार’ शब्द का इतिहास बतलाते हुए लिखा है कि “सन् १८४६ में डब्ल्यू० जे० थामस ने यह शब्द सभ्य जातियों में मिलने वाले असंस्कृत समुदाय की प्रथाआ, रीतिरिवाज तथा मूढ ग्रहों की अभिव्यक्ति करने के लिए गढ़ा था । शब्द के अर्थ परिभाषाओं द्वारा नियत नहीं होते, प्रयोग द्वारा होते हैं ।”^२ अतः परिभाषाओं और कोपनारा को छोड़कर प्रयोग देखना चाहिए । लोकवाता के संपादक श्री कृष्णाद जी गुप्त ने तो मुष्पट शब्दों में कहा है कि जनता जो कुछ कहती और सुनती अथवा उसने विषय में जो कुछ कहा और सुना जाता है वह सब लोकवाता है । इस रथापना को स्वीकार करते हुए लोकवाता शब्द बड़ा व्यापक बन जाता है और फोक्लोर का समीचीन पयाय हो जाता है ।

लोभायन शब्द फोक्लार का भारतीय प्रतिशब्द है । यदि इस शब्द को परखा जाय तो यह बड़ा सुंदर शब्द निकलेगा । इसमें ‘अयन’ शब्द रामायण की भौंति ‘घर’ अथवा ‘सर्वस्व’ के रूप में प्रयुक्त माना जायेगा और इसका अर्थ होगा—‘लोक का घर’ अथवा ‘लोक का सर्वस्व ।’ अतः इस शब्द की परिधि में वह सब कुछ आ जायेगा जो जनता कहती है, सुनती है अथवा उसने

१ श्री द्वारका प्रसाद शर्मा — ‘संस्कृत शब्दार्थ कोशुभ’ ।

२ ऐनसाइक्लापीडिया त्रिगानिका—पृष्ठ ४४६, वाक्यसूत्र ६ ।

निम्न में जो कुछ कहा और सुना जाता है। शब्दान्तरा में यह लाक का रामायण है। जैसे रामायण राम के सत्र कुछ का लकर चली है टीक उसी प्रकार 'लोकान्त' शब्द भी लाक के सवन्व का ग्रन्थ में समेटे हुए है। अतः यह शब्द भी लोकान्त का भाँति व्यापक एव ग्राह्य है। परन्तु लोकान्त शब्द हिन्दा में प्रयोग नल में अपना स्थान निधारित कर चुका है। नगरीन शब्दों के सुभाव और ग्रामद स लोकान्त प्रति धरि बनी हुई आस्था कम नहीं हो सकती। अतः सुविधा के लिए फाकलार शब्द का भारतीय प्रतिशब्द लाक-वाता हो सर्वश्रेष्ठ एव मान्य है। हमारे विचार से भी यह उपयुक्त एव ग्राह्य है।

अन्य अनेक विद्वानों ने भी इस दिशा में विविध सुभाव दिये हैं। उन पर निम्न दृष्टिपात करना भी अप्रासंगिक न होगा। प० रामनरेश त्रिपाठी जी ने 'फाकलार' के लिए 'ग्राम साहित्य' शब्द स्वीकार किया है किन्तु यह शब्द अव्यातिदाय दुषित है। डा० हजारीप्रसाद जी द्विवेदी ने इस प्रयोग में 'लाक सन्धति' शब्द का प्रयोग किया है। परन्तु यह 'फाकलार' का ही पदान बन सकता है 'फोडलोर' पृथक् रह जाता है।

माया तत्वविद् डा० सुनाति कुमार चटर्जी ने 'फाकलार' के लिए भारतीय प्रतिशब्द 'लाकान्त' दिया है। वे कहते हैं—“यान का प्रचलित अर्थ वाहन या सवारी है पर उसका एक अर्थ जाना या चलना भी है। सचयुक्त लाक चान फाकलार के साथ, उसका संहार और उस पर चलता है। इन दृष्टियों से 'लाकान्त' में बिना किसी प्रकार का खींचाताना के 'फाकलार' के अन्तर्गत आना वाला सभी नाम आजाती है।” किन्तु इस शब्द का परिधि में विरचान, राति-रिचान और अघरिचान (मूढप्राही) का हो समावेश हो सकता है। लोकान्त का विनाश इससे बाहर पड़ेगा जो फाकलार का एक मुख्य अर्थ है।

डा० सत्यद ने अपना भीसिस—'ब्रज लोक-साहित्य का अध्ययन' में लोकान्त शब्द का ग्रहण किया है। एक स्थान पर (आलाचना पत्रिका, अंक ४, पृष्ठ ३७) फाकलार के लिए दो अन्य शब्दों का ग्रहण करते मिलते हैं—'लोकान्त' एव लोकान्त। इनमें से पहिला शब्द अव्यापक है और दूसरा 'फाकलार' का पदान हो सकता है, फाकलार का नहीं।

१. जनपद खण्ड १, अंक १, पृष्ठ ६६।

२. 'राजस्थानी कथासंग्रह भाग पहिलो' म० २००६, मूद्रिका पृष्ठ ११।

आ लोकाता का क्षेत्र एव व्यापकता

फोकलोर शब्द के हिन्दी पयाय की राज करते हुए इस शब्द का परिभाषा एव इसके क्षेत्र के ऊपर भी कुछ विचार हुआ है। 'ऐनसाइक्लोपीडिया ब्रिटैनिका' में फोकलोर के इतिहास पर टिप्पणी देते समय इसने क्षेत्र विस्तार को भी छू लिया गया है। विश्वकाय ब्रिटैनिका के शब्द—“यह शब्द मध्य जानियो म मिलनेवाले असकृत समुदाय की प्रथाया, रीति रिवाजों तथा मूढ ग्राहों को अभियक्त करने के लिए गता गया था। अंग्रेजी परम्परा मे फोकलोर के क्षेत्र की काइ सूक्ष्म सीमा निधारित नहीं की जाती प्रयाग म साधारण प्रकृति इसके क्षेत्र को सकुचित अर्थ में सम्य समाजा मे मिलने वाले पिछड़ तत्वा की सकृति तक ही सीमित रखने की ह।” किन्तु शार्लट शोफिया बन की वैज्ञानिक परिभाषा म और भी अधिक स्पष्टता एव सत्यता है। उन्होंने अपनी पुस्तक 'हैंडबुक ऑव फोकलोर' म फोकलोर के इतिहास की रोज की है और एक मामिक मीमासा दी है। उनका एक विशिष्ट उद्धरण का अनुवाद डा० सत्येन्द्र जी ने अपनी थीसिस 'ब्रजलोक साहित्य का अध्ययन' में इस प्रकार दिया है, “फोकलोर शब्द, शब्दार्थन लोक का विद्या (दि लर्निङ्ग ऑव दि पीपिल) सन् १८४६ म श्री थामस ने पहिले प्रयाग में आने वाले (पापुलर एटोक्विटीज) शब्द के लिए गता था। (अब) यह एक जातिबाधक शब्द की भाँति प्रतिष्ठित हो गया है जिसके अन्तर्गत पिछड़ी जातियों में प्रचलित अथवा अपेक्षाकृत समुन्नत जातियों क असकृत समुदायों में अवशिष्ट रीति रिवाज, कहानियाँ, गात तथा कहावतें आती हैं। प्रकृति के क्षेत्र तथा जड जगत् के सवध में, मानव स्वभाव तथा मनुष्यकृत पदार्थों के सवध में, भूत प्रेतों की दुनियाँ तथा उसके साथ मनुष्यों के सवधा के विषय म, जादू, टाना, सम्मानन, वशीकरण, तानाज, भाग्य, शकुन, राग तथा मृत्यु क सवध म आदिम तथा असम्य विश्वास इसने क्षेत्र म आने हैं। और भा इसमें विवाह, उत्तराधिकार, बाल्यकाल तथा प्रौढजावन क रीति रिवाज तथा अनुष्ठान और त्यौहार, युद्ध, आग्नेय, मत्स्य-यवसाय, पशु पानन आदि विषयों के भा रीति रिवाज प्राग् अनुष्ठान इसम आते हैं तथा धमगायाएँ, अर्चदान (लाजेंड), लाक कहानियाँ, साक (बैलेड), गात, किम्बलियाँ, पहलियाँ तथा लारियाँ भी इसने विषय हैं। सक्षेप म, लाक का मानसिक सम्पन्नता के अन्तर्गत जा भी वस्तु या सक्ता हे वह मभी इसके क्षेत्र म है। यह किमान क हल की आकृति नहा जा लाक-गतातार का अपना आर आकर्षित करती है, किन्तु के उपचार अथवा अनुष्ठान हैं जा किमान हल को भूमि जातने के काम में लाने क समय करता है। जाल अथवा वशी

की उभावट नहीं, धरन् वे टोटके जो मल्लुआ समुद्र पर करता है, पुल श्रयवा निवास का निमाण नहीं, धरन् वह बलि जो उनके बनाते समय की जाती है और उसको उपयोग में लाने वालों के विश्वास। लोकवार्ता प्रस्तुत आदिम मानव की मनोवैज्ञानिक अभिव्यक्ति है, वह चाहे दर्शन, धर्म, विज्ञान तथा औषध के क्षेत्र में हुई हो, चाहे सामाजिक संगठन तथा अनुष्ठानों में श्रयवा विशेषत इतिहास, काव्य और साहित्य के अपेक्षाकृत बौद्धिक प्रदेश में।^१

उपरोक्त विवेचन से यह तो स्पष्ट है कि लोकवार्ता शब्द का विस्तार बड़ा महान् एव त्वशद है। इसके अन्तर्गत उस समस्त आचार-विचार की समृद्धि रहता है जिसमें मानव का परम्परित रूप प्रतिबिम्बित होता है। यद् मानव मानस की वह निधि है जिसमें परिष्कार तथा सन्कार अपेक्षित नहीं। डा० वानुदेय शरण जी अप्रवाल ने इसके क्षेत्र का परिगणन करते हुए लिखा है, "लोक का जिनना जीवन है उतना ही लोकवार्ता का विस्तार है। लोक में बसने वाला जन, जन की भूमि और भौतिक जीवन तथा तीसरे स्थान में उस जन की सन्धिति—इन तीन क्षेत्रों में लोक के पूरे ज्ञान का अन्तर्भाव होता है, और लोकवार्ता का सम्बन्ध भी उन्हा के साथ है"^२।

उपरोक्त समस्त विवेचन का सार हम इस प्रकार दे सक्ते हैं कि लोकवार्ता पुण्य सलिला मुग्धरिता के सदृश निपयगा है। इससे विपना को तीन प्रधान सन्धियों में बाँटा जा सकता है—१ कला २ विश्वास ३ अनुष्ठान। १ कला ३ क्षेत्र में, साहित्य (लोकगीत, लोकगाथा, लोककथा, लान्दान्य, लोकोक्ति, न्यक्ति तथा पहेली), चित्रकला, मूर्तिकला, सर्गीतकला, अभिनय कला, तथा नृत्यकला आदि हैं। २ विश्वास के क्षेत्र में वे समस्त मान्यताएँ तथा अवप्रिश्वास आदि जो विभिन्न बीवां, घमगाथा के चरित्रा (यथा—इन्द्र, अग्नि आदि) भूत, चुटैला आदि से सम्बन्धित हैं। ३ अनुष्ठान में वे कार्य-कलान आते हैं जो इन विश्वासों के कारण विभिन्न अवसरों पर अनिष्ट का परिहार करने तथा इष्ट की सिद्धि के लिए किये जाते हैं।

विन्त रूप में यदि लोकवार्ता के विपना की परिगणना की जाये तो एक लम्बी चौड़ा तालिका बन सकती है। श्रीमती वर्न ने उन्हने तीन उपनिभाग किये हैं और उनकी विन्त सूची की है। डा० सवेट्र ने उसका अनुना एव वर्गीकरण इस प्रकार दिया है।

१ डा० सवेट्र—'प्रज्ञ लोकसाहित्य का अध्ययन', पृष्ठ ४, ५।

२ डा० वामुदेय शरण अप्रवाल—'पृथ्वीपुत्र' पृष्ठ ८५।

१ ने निरवास और आचरण अभ्यास जो सम्बन्धित हैं—

- १ पृथ्वी और आकाश से,
- २ वनस्पति जगत से,
- ३ पशु जगत से,
- ४ मानव से,
- ५ मनुष्य निर्मित वस्तु से,
- ६ आत्मा तथा दूसरे जीवन से,
- ७ परमानवी ध्यक्तिया से (यथा देवता, देवी तथा ऐसे ही अन्य व्यक्तिया से),
- ८ शकुना अपशकुना, भविष्यवाणिया, आकाशवाणिया से,
- ९ जादू टोनों से और,
- १० गेर्गा तथा स्थाना की कला से ।

२ रीति रियाज—

- १ सामाजिक तथा राजनीतिक सस्थाएँ,
- २ व्यक्तिगत जीवन के अधिकार,
- ३ यज्ञसाय धंध तथा उद्योग,
- ४ तिथियाँ, व्रत, तथा त्योहार और,
- ५ खेलकूद (अखाड़ेनाजा) तथा मनोरजन

३ कहानियाँ, गीत तथा कहावतें—

- १ कानियाँ (अ) जो सब्बी मानकर कहा जाती हैं ।
(आ) जो मनोरजन के लिए होती हैं ।
- २ गीत (सभी प्रकार के)
- ३ कहावतें तथा पहेलियाँ ।
- ४ पद्यरुद्ध कहावत तथा स्थानीय कहावतें ।
- ५ साधारणतया, माटे तौर पर लाकनाता के निशाना की सूचिका इस प्रकार दा जा सकती है —

४ अभिव्यक्ति —

- १ साहित्यिक एव कलात्मक — नाकगोत, ताककथाएँ, लाकगाथाएँ, कदावतें, पहेलियाँ तथा मुक्तियाँ आदि ।
- २ शारीरिक अभिव्यक्ति — लोकरुद्ध, लाकनाथ्य आदि, बालक बालिकाओं के विभिन्न खेल, ग्रामाण्य खेल आदि ।

ख राति रिवाज, प्राचीन परम्पराएँ, त्योहार, पर्व, पूजा, तीर्थ, व्रत आदि ।

ग जादू टाना, टोटका, भूत प्रेत चुड़ैल सम्बन्धी विश्वास आदि ।

इस प्रकार पाठक देख पाये हैं कि लोकवाता का क्षेत्र बहुव्यापी है और सांस्कृतिक पक्ष उसका एक अंश मात्र है । परन्तु जहाँ पर विभिन्न विश्वास और नाना अनुष्ठान लोकसाहित्य सृजन में सहायक हैं वे भी लोकसाहित्य के ही अन्तर्गत आ जाते हैं । इस दृष्टि से लोकसाहित्य का क्षेत्र लोकवाता से व्यापक हो जाता है । परन्तु इस पक्ष में विद्वान एकमत नहीं हैं ।

(३) लोकवार्ता और लोकसाहित्य का सम्बन्ध

यहाँ तक पाकलोर (लोकवाता) के रूप, क्षेत्र और सञ्चादि पर विचार हुआ है । अब लोकवाता और लोकसाहित्य के सम्बन्ध का देख लेने की आवश्यकता है । श्रीमती जर्न ने अपनी विस्तृत मातासा से यह स्पष्ट किया है कि लोकवार्ता का लोकसाहित्य एक अङ्ग है, और इसकी परिधि में लोकगीत, लोककथा, लोकगाथा, कहावतें, पहलियाँ, सुत्तियाँ और लोकनाट्य आदि आते हैं । किन्तु डा० सत्यव्रत सिंहा का मत इसके विरुद्ध है । उनका कहना है कि लोकवाता स्वयं लोकसाहित्य का एक अंग है । लोकसाहित्य के दो भेद होते हैं—लोकगीत और लोकवार्ता । वार्ता शब्द में इतना व्यापकता नहीं है कि उसमें समस्त लोकसाहित्य का समावेश हो जाये । इस प्रकार वे लोकवार्ता को लोकसाहित्य का एक भाग नहीं मानते हैं । एक स्थान पर डा० सत्येन्द्र ने भी लोकसाहित्य को लोकवाता से अधिक व्यापक बतलाया है । उन्होंने लिखा है—एक दृष्टि से लोकसाहित्य का क्षेत्र एक अंग ही लोकवाता का अन्तर्गत आ सकता है । ऐसा भी लोकसाहित्य हो सकता है, नहीं होता ही है, जो लोकवाता नहीं माना जा सकता । लोकवाता में केवल वही लोकसाहित्य समाविष्ट होता है जो लोक की आदिम परम्परा को किसी न किसी रूप में सुरक्षित रखता है । इस साहित्य को हम आदिम मानव का आदिम प्रवृत्तियाँ का कोष कह सकते हैं । पर लोकसाहित्य का बहुत सा अंश ऐसा भी है जो पारिभाषिक लोकवाता के बाहर रहता है । यह वह साहित्य है जिसकी मौखिक परंपरा विशेष पुरानी नहीं है, जिसके निर्माण का काल अथवा समय जाना जा सकता है । जो तब विषयों पर नए उद्गारों के परिणाम स्वरूप रचा गया है और रचा गया है बिना किसी सम्पत्ति

* "हिन्दी अनुशीलन परिभा" पृष्ठ ४ अथ ४—डा० सत्यव्रत सिंहा का मत ।

चेतना के । इसके निर्माण में हृदय और मानस की वह सहज अकृत्रिम अभिव्यक्ति काम करती है जो लोकसाहित्य के लिए अपेक्षित है किन्तु किसी आदिम परंपरा की सुरक्षा नहीं है । अतः यह कहना अप्रगल्भ न होगा कि लोकजाता का सैन लोकसाहित्य की दृष्टि से कुछ असमुचित है । परन्तु ससार के सभी मनोपियों ने लोकजाता की व्यापकता एक स्वर से स्वीकार की है और वे सभी लोकसाहित्य का लोकजाता का प्रमुख अंग स्वीकार करते हैं । प्रस्तुत लेखक का मत भी यही है बिना संस्काररहितता के और आदिम परंपरा की सुरक्षा के बिना किसी साहित्य का लोकसाहित्य कहना ही व्यर्थ है ।

ग लोकसाहित्य के विविध रूप

अभी तक हमने लोकजाता के रूप को परखा है और उसके साथ लोकसाहित्य के सम्बन्ध पर विचार किया है । अब लोकसाहित्य के विविध रूपा पर दृक्पात करना अप्रासंगिक न होगा । माटे तौर पर हम इस साहित्य को तीन रूपां में प्राप्त करते हैं एक—कथा, दूसरा—गीत, तीसरा—कहावतें आदि । लोककथाओं की विभेदता भी तीन रूपां में मानी जाती है—धर्मगाथा, लोकगाथा (अवदान साने) तथा लोककहानी । धर्मगाथा (माईयालाजी) पृथक् अध्ययन का विषय है । शेष कथा के दो भाग रह जाते हैं लोकगाथा तथा लोककहानी । डा० कृष्णदेव उपाध्याय ने इन दोनों का पृथक्-पृथक् अस्तित्व स्वीकार करते हुए लोक साहित्य का चार रूपां में बाँटा है एक—गीत, दूसरा—लोकगाथा, तीसरा—लोककथा तथा चौथा—प्रकार्ण साहित्य जिसमें अश्लेष समस्त लोकाभिव्यक्ति का समावेश कर लिया गया है ।

वैसे तो धर्मगाथाएँ पृथक् अध्ययन का विषय हैं किन्तु लोककहानी और धर्मगाथा में जो विशेष अन्तर था गया है उसे समझ लेना अहितकर न होगा । धर्मगाथा अपने निमाण-काल में एक सीधी सीदी लोककहानी ही होती है परन्तु उस कहानी में धर्म की एक विशेष पुट लग जाती है जो उसे लोककहाना के वास्तविक आधार से पृथक् कर देती है । डा० मत्स्येन्द्र ने इस आश प्रकाश डालते हुए लिखा है कि धर्म गाथा स्पष्टतः ता होती है एक कहाना पर उसके द्वारा अभ्याप्त होता है किन्ती ऐसे प्राकृतिक व्यापार का बखन जा उसके सृष्टा ने आदिम काल में देखा था और जिसमें धार्मिक भावना का पुट होता है । ये धर्म गाथाएँ हैं तो लोकसाहित्य हा, किन्तु विनास की विविध अवस्थाओं में से होती हुई वे गाथाएँ धार्मिक अभिप्राय से सम्बद्ध हो गयी हैं । अतः लोकसाहित्य के साधारण सैन से इनका रथान बाहर हो जाता है और यह धर्मगाथा सम्बन्धी अश एक पृथक् ही अन्वेषण

का विषय है। अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'दि क्वीन आव दि एअर' में जान रस्किन ने धर्मगाथा की मीमांसा देते हुए लिखा है कि यह अपनी सीधी-सादी परिभाषा में एक कहानी है जिससे एक अर्थ सपृक्त है और जो प्रथम प्रकाशित अर्थ से भिन्न है।

लोकगाथाएँ (अवदान, किस्से या साने) वे काव्यमय कहानियाँ हैं जिनका आधार इतिहास है अथवा जिन्हें कालक्रम से ऐतिहासिक महत्व हासिल हो चुका है। लोक मानस की वे घटनाएँ जो कोरी कल्पना-जन्य हैं वह आगे चलकर ऐतिहासिक रूप प्राप्त कर जाती हैं। जिन जातियों का मानसिक विकास नहीं हुआ है उनमें थोड़े से चमत्कारपूर्ण कार्य करने वाले व्यक्ति युग पुरुष अथवा ऐतिहासिक पुरुष की नाई पूजे जाते हैं। ठीक इसी प्रकार का एक किस्सा (अवदान, गाथा) हरफूल जाट जुलाया वाले का है जिसने अपने जीवन का मानी लगा कर अधिक से (कसाइयों से) गानें छुड़ा ली थी। आज भी गोमाता के पुजारी प्रदेश हरियाणा की साधारण जनता हरफूल जाट के वीर रसात्मक किस्सा को गा-गाकर आनन्द मनाती है। अन्य जनपदीय जातियों में भी ऐसे अनेक किस्से आपको मिल जायेंगे।

किस्सों की परत से यह स्पष्ट है कि इनमें इतिहास के अवशेषों को ही मग्ने से नहीं बचाया गया है पर साम्प्रतिक पुरुषों के किस्से भी चमत्कृत रूप में मिले हैं। अतः सारे प्राचीन प्रवीरों और सिद्ध महात्माओं के ही हा ऐसी बात नहीं है, ये सारे सामयिक पुरुष सम्बन्धी भी हो सकते हैं, बल्कि होते भी हैं। यथा—'किस्सा हरफूल जाट जुलाया का', इन नये व्यक्तियों के सम्बन्ध में बड़ी अद्भुत कल्पनाएँ कर ली जाती हैं। सर आर० सी० टेम्पल ने 'लीजेंड्स आव दि पंजाब' में इन किस्सा को छु भागा में गँटा है। इन छु चक्रों में से एक चक्र उन कथाओं का भी है जो स्थानीय वीरों से सम्बन्ध रखती हैं।

हमने लोक गाथाओं को अवदान, साना, राग या किस्सा के नाम से अभिहित किया है। इस साहित्यिक विद्या का एक नाम रानस्थानी में ख्यात भी प्रचलित है। वे ख्यातें रासो से भिन्न वस्तु हैं। रासो साहित्यिक वीर कथाएँ हैं और ख्यातें भाग्यिक कथाएँ हैं। ये लोक गाथाएँ दो रूपों में मिलती हैं। एक प्राचीन पुरुषों की शौर्य की कहानियाँ हैं जिन्हें वीरकथा कहा जा सकता है। इन्हें ही 'पवारा' भी कहते हैं यथा 'जगदेव का पवारा'। इनमें पुराण पुरुषों का अस्तित्व निर्विवाद मान लिया जाता है। दूसरे—साने।

ये उन पुरुषों के शौर्य से सम्बन्धित हैं जिनके प्रति इतिहास मात्मी है। साने में जीना तथा शौर्य का विस्तार अपेक्षित है।

लोककथा निस्सदेष्टात्मकतया लोकगाथा से भिन्न वस्तु है। जो विद्वान् इन दोनों को एक लोककहानी के ही लक्षण और विशाल रूप कहते हैं उन्होंने उनमें मर्म का पहचानने का प्रयास नहीं किया। लोकसाहित्य के ये दोनों रूप आपस में भिन्न हैं। लोक कथाओं में कहानियों के दोनों तत्व—मनोरजन एवं शिक्षा पाये जाते हैं। जो कहानियाँ केवल शिक्षा के लिए ही निर्मित हुई हैं उनमें केवल शिक्षा नाम भी दिया गया है। इन कहानियों को भारतीय साहित्य में तत्राख्यान या पशु पक्षियों की कहानियाँ कहा गया है। अंग्रेजी में ऐसी कहानियों का नाम फेबिल दिया गया है। फेबिल को सम्झाते हुए 'टा फाउण्डेन' ने बड़ी प्रिय परिभाषा दी है —

“Fables in sooth are not what they appear,
Our moralists are mice and such small deer
We yawn at Sermons, but we gladly turn,
To moral tales, and so amused in yarn”

“काल्पनिक कथाएँ, वास्तव में, वैसी नहीं जैसी दिखाई देती हैं। हमारे धर्मापदेश्य चूह और मृगशावक भी हो सकते हैं। हम उपदेश सुनते सुनते जँघने लगते हैं, किन्तु शिक्षाप्रद कहानियों का प्रमत्ततापूर्वक पठने हैं और वर्णन का रस आनन्द लेते हैं।” भारतीय कथा साहित्य में इस प्रकार के आख्याना की कमी नहीं है। विष्णु शर्मा का पंचतन और हितोपदेश शश शृगाल-काका लूक के मध्य चलने वाले जीवनापयोगी आख्यान ही हैं। भारत के ये आख्यान सगर के श्रेष्ठतम फेबिलस् में से हैं। इनकी यही विशेषता है कि इनमें किसी न किसी प्रकार की शिक्षा अवश्य मिलती है।

यहाँ पर इतना ध्यान दे लेना चाहिए कि प्रत्येक वह कहानी जिसमें पशु-पक्षी किसी भी रूप में आये हैं तत्रमूलक अथवा नीतिमूलक कहानी नहीं कहला सकती। फेबिलस् के ही कहानियाँ हैं जिनमें नीति बतलाई गई है अथवा कोई सुनिश्चित उपदेश दिया गया है। बौद्ध जातका में आइ हुई वे पशु-पक्षी सम्बन्धी कहानी कदापि तत्राख्यान नहीं कहलायेंगी। कारण कि वे धर्मभावना को जाग्रत करके चुप हो जाती हैं और उनका आदर धर्म धरता से होता है। यही स्थिति वेदों में मिलने वाली उन कहानियों की है जिनमें पशु-पक्षियों का नाम आया है।

लोकसाहित्य के कथा भाग पर विचार कर चुकने पर लोक गीत और लोक कथाएँ, पहिलियों आदि रहती हैं। लोक गीत लोक मानस के वे अजन्म

एव निरङ्कुल प्रवाह है जिनका लोक प्रतिभा के द्वारा विभिन्न अवसर पर निमाण होता है एव गान होता है। सन्धेप में लोकगीत लोक द्वारा लोक-रूप लिए गाया गया गीत होता है। लोक गीत की सख्या उतनी हो सखनी है जितने जीवन के पहलू हैं।

प्रकीर्ण साहित्य में उस समस्त लोकाभियक्ति का समावेश होता है जो लोककथा, लोकगाथा और लोकगीत की परिधि से बाहर पड़ जाता है। इस प्रकार इनमें लोक के वे सभी अनुभव जो समय-समय पर होते हैं आ जाते हैं। पहेलियों, सुत्तियाँ, मुझौबल, कहावतें, जालों के चेलभूद के वाण विलास आदि सब इसके अन्तर्गत आ जाते हैं। इनका विवेचनात्मक वर्णन भी यथास्थान दिया गया है।

✓ (घ) लोकसाहित्य की विशेषताएँ

लोक साहित्य जिसके रूपादि का ऊपर वर्णन हुआ है उसकी विशेषताओं पर दृष्टांत करना अशक्य न होगा। लोक साहित्य को कुछ विद्वानों ने लोक श्रुति (वेद) कहा है। वेद का नाम श्रुति इसी विशेषता के कारण पड़ा है कि यह शिष्य परंपरा श्रुतिमूल से चलता चला आया है। लोकसाहित्य भी इसा कर्ण परंपरा से आगे बढ़ता है। वह दादी से पाता तक, नानी से घेवता तक श्रुति मार्ग से आया है। यही इसका प्रथम एव प्रमुख विशेषता मानी जाती है। इसके विपरीत प्रणीत साहित्य मौखिक परंपरा का अपेक्षा लेखनी परंपरा पर गव करता है। यदि लेखनशैली का वह गौरव लोकसाहित्य को मिल जाये तो वह एक प्रकार से निष्प्राण हो जायगा। लिपि का प्रसाद भले ही गीत, गाथा, कथा-कहानियाँ को मुग्धित रूप ले परन्तु उनकी अनुशासिकाशक्ति उसी क्षण नष्ट हो जाती है जब कि वे लेखना की नोक पर सवार हानर कागज की भूमि पर उतरना आरंभ करते हैं। उनको सुरक्षा, सौन्दर्य एव सम्मान भले हा मिल जाये किन्तु उनमें वह रसाभाविक समुच्च प्रवृत्ति नहीं रहती जिसमें वे लभ हैं, पनप हैं और पुष्ट हुए हैं। वह गमले के पाँदे की भाँति हवा भरा रहता हुआ भी अशक्त आर भविष्यत् की अनति से विमुक्त रहता है। प्रक सिद्धिक के ये शब्द जिनने तथ्यपूर्ण हैं कि लोकसाहित्य का लिपिबद्ध होना ही उसका मृत्यु है। बहुत लोकसाहित्य की मौखिकता ने ही उसे व्यापकता एव अनेकरूपता प्रदान की है।

इसा बात का प्रो० किटरेज ने 'इंगलिश और स्कॉटिश फोलेटम' का १०मिना में इस प्रकार कहा है—'लोकसाहित्य का शिखा से यह प्रकार

नहीं होता जब कोई जाति पटना सीख लेती है, तो सबसे पहिले वह अपना परंपरागत गायत्री का तिरस्कार करना साजती है। परिणाम यह होता है कि जो एक समय सामूहिक जनता की संपत्ति थी वह अब केवल व्यक्तिता का पेटुक संपत्ति मात्र रह जाता है।

एक दूसरी विशेषता, जो लोकसाहित्य के पाठकों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करती है, वह है उसकी अनलकृत शैली। शिष्ट साहित्य में सालकारता के प्रति विशेष आग्रह होता है। यत्र-तत्र अनलकृति भी क्षम्य है— 'अनलकृति पुन क्वापि' (मम्मट—काव्य प्रकाश, काव्य का लक्षण) पर लोक साहित्य में बनावट, सजावट, कृत्रिमता और अलकरणप्रियता का आग्रह नहीं है। यह तो उस वन्य कुमुद के सदृश है जो मिना सवारे हुए भी अपनी प्राकृतिक आभा से दीप्तिमान है। इसमें नैसर्गिक रुचता (खुरदरापन) है किन्तु है एक लाक्षण्य एवं सौन्दर्य से सयुक्त। यह तो लोक मानस की वे मदन तरंगें हैं जो सहृदयों के कलहस को आह्लादित करती हैं। यह तो जादवी की उस अजस्र जलधारा के सदृश है जो मानव के माथ अनादि काल से बहती चली आ रही है। सालकार काव्य से लोक गीतों का वैशिष्ट्य प्रदर्शित करते हुए प० रामनरेश त्रिपाठी ने ये शब्द चिरस्मरणीय रहेंगे— 'ग्राम गीत और महाकवियों की कविता में अंतर है। ग्राम-गीता में रस है, महाकाव्य में अलकार। ग्रामगीत हृदय का धन है और महाकाव्य मस्तिष्क का। ग्रामगीत प्रकृति के उदगार हैं, इनमें अलकार नहीं उबल रस है, छंद नहीं केवल लय है, लालित्य नहीं केवल माधुर्य है।' कितने सार्थक हैं त्रिपाठी जी के ये शब्द। दूसरे शब्दों में हम यह कह सकते हैं कि इनमें दडी का पद लालित्य, भारवि का अर्थ गौरव और कालिदास की अनूठी उपमाएँ न देखने को मिलें—वैशक, पर इनमें रस का एक पारावार लहरा रहा है जो सहृदय सवेद्य है।

सादगी लोक कविता का सर्वस्व है। साहित्यिक कविता में ऊहा और कल्पना के वे रंग हैं जो कालान्तर में छूट्टे जा जाते हैं। लोक कविता अपने नैसर्गिक रंग में मानव के उप काल से जीवित है और जीवित रहेगी। इस काव्य क्षेत्र में अलकार बहिष्कार की शपथ नहीं ली गई है। ये तत्व अस्तित्व एवं त्याग नहीं ठहराये गये हैं। अतः रीत्यलकार पारंगत अनावश्यक रूप से निराश व चिंतित नहीं हैं। उन्हें स्थान-स्थान पर बड़े भव्य एवं सुन्दर अलकार चारा आर विचारे मिलेंगे। हमारा कहने का अभिप्राय केवल यह है कि लोकसाहित्य में शिष्ट साहित्य की भाँति रीत्यलकारों के प्रति आग्रह नहीं होता। अहाँ अलकार आये हैं अनायास ही आ गये हैं। उनकी सख्या अल्प

अवश्य है किन्तु आये हैं ये समय के साथ । इन्होंने तथा अन्यान्य कारणों से लोक साहित्य को सर्वाप्रिन्ना प्राप्त हुई है । अनुपम सादगी और स्वाभाविक सरलता लोक साहित्य के आत्मीय गुण हैं ।

लोक साहित्य का तासरी प्रमुख विशेषता है रचयिता और रचना काल का अज्ञात होना । दादी नानी से चली आता हुआ दत्तक्यात्रों और गीता आदि का परंपरा किस युग से चली और किस कृती के पुण्यों का परिणाम है इसका हमारे पास कोई प्रमाण नहीं । यों तो सभी रचयिता किसी न किसी व्यक्ति की प्रतिभा का प्रसाद है किन्तु उसका व्यक्तित्व इस परंपरा में अज्ञातावस्था में है । वाल्मीकि, इन गीतादिकों ने कत्ता वे निरीह जन हैं जिन्होंने अपने नाम और गाम का चिंता न करते हुए समाज के लिए अपनी प्रतिभा का भेंट दी है । कालक्रम से अज्ञातनामा व्यक्ति विशेष की रचना में समुदाय ने भी अपना योग दिया और यह स्वाभाविक भी या क्याकि वह वस्तु समुदाय की है और समुदाय के लिए है । समुदाय का योग मिलना आवश्यक है । इसी से कविता के आराम पर विचार करते हुए कुछ विद्वानों ने कहा है कि आदि में कविता समस्त समुदाय के प्रयत्न से जना । किसी ने कुछ जोड़ा, किसी ने कुछ और एक पद जना । इसी प्रक्रिया से कविता आगे बढ़ी है । इससे एक कठिनाई अवश्य हुई है कि लोकसाहित्य का कोई मूल पाठ नहीं मिलता । यह भी कहा जा सकता है कि समस्त कोई निश्चित मूल पाठ रहा भी न हो । इसका एक निरीत परिणाम यह भी हुआ है कि कई लोगों को घाघ, मडूरी आदि की कथावर्तों को लोकसाहित्य कर्ने में आपत्ति हुई है । किन्तु इन लोक कलाकारों का व्यक्तित्व इतना व्यापक और महान् हो चुका था कि इनके नाम भी एक समुदायमाची बन गये हैं । इन्होंने 'सूल का रूप' ले लिया है । सच पूछा जाये तो इन नामों में नाम की गंध न रह गई है । ये तो आत पुरुष के रूप में गये हैं । भले ही वह पुरुष घाघ हो, मडूरी हो, या हो अन्य कोई लोक नाट्यकार दीपचंद्र जैसा व्यक्ति । लखमी हरियाने का लोक सागी इस रूप में है कि उसमें लोक नाट्यकार के लिए जिस सूक्ष्म, व्यक्तित्व और प्रतिभा की आवश्यकता होती है वे सब एक एक करने विद्यमान हैं । उसकी कल्पना इतना निराली और व्यापक तत्वों में समन्वित थी कि दशकचन्द्र 'बाह दादा, बाह दादा' कहकर पुकार उठते और रसानुभूति से उन्मत्त हो जाते थे । यहाँ पर डा० उपध्याय की वह रचना निम्नमें उन्होंने उद्धृत की आदि अनेक मन्त्रपुरी भाषा में लिखनेवालों का मन्त्रपुरी लोकसाहित्य निम्नानुक्रम में रचान दिया है कुछ पटकने वाली है । उद्धृत की का रूप तो एक उत्कृष्ट विवेचक और मौमासक का है उसमें भना जन गायक का रूप कहाँ आ सकता

है ? फिर लोक गेली या लोक भाषा में लिखी हुई प्रत्येक वस्तु लोक साहित्य के पावन सिद्धांत पर नहीं विराजमान हो सकती । इसने लिए उन परिस्थितियों की आवश्यकता है जो किसी वस्तु को लोकसाहित्य बनाने में सहायक होती हैं ।

लोकसाहित्य की अन्य विशेषता यह है कि यह प्रचार या उपदेशात्मक प्रवृत्तिना से अछूता है । विशुद्ध लोकसाहित्य में प्रचार, प्रापेण्डा अथवा उपदेश का समावेश रहता है । उसमें ता विरह, वीरता, कल्याणिक सांत्विक भाव भरे होते हैं जो जन जनको एक रूप से प्रिय एवं ब्राह्मण हैं । यहाँ पर यह आक्षेप किया जा सकता है कि लोककृतियों में भाषा तो उपदेशात्मक प्रवृत्ति है फिर वे लोकसाहित्य का प्रमुख अंग क्यों हैं ? विचारने पर प्रतीत होगा कि लोकसाहित्य का प्राण वह कोरा उपदेश ही नहीं है । लोककृति तो वह विद्वत् एवं चतुर्कार है जो शत शत अनुभवों के द्वारा प्राप्त हुआ है और किसी के मुख से चमत्कृत रूप में प्रसूत हुआ है । इसलिए लोककृति केवल 'अभिव्यक्ति' पर जीवित है उपदेश पर नहीं । उपदेश तो वहाँ एक गौण तत्व है ।

लोकसाहित्य की एक और विशेषता यह भी है कि उसमें साम्प्रदायिकता के लिए स्थान नहीं है । वह पक्षी व पवन के सदृश स्वच्छन्द है । उस शक्ति एवं वैष्णव की आलोचना से कुछ नहीं लेना देना है । उसे विष्णु भी उतने ही पूज्य हैं जितनी कि शक्ति या काली आराध्या । उसमें निगुण ब्रह्म में उतना ही आस्था है जितनी कि सीताराम, राधारूपा और शिव पार्वती में । लोकसाहित्य का इस उदात्त भावना ने निस्संदेह इसे अन्य सभी साहित्या से महान् बना दिया है ।

अतः मैं इस बात को समाप्त करते हुए हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं यदि कविता का कार्य पाठक को सचेतनशील बनाना, सोचने समझने का शक्ति देना और जीवन की रसमय व्याख्या करना है तो निश्चय ही शास्त्रीय कविताएँ अधिकांश में असफल रही हैं । लोकगीत चाहे जिस देश व जाति के हों कविता के वास्तविक उत्तरदायित्व को बहुत अंश में पूरा करते हैं, निमाते हैं ।

✓ (ड) लोकसाहित्य का महत्त्व

उपरोक्त विवेचन से हम उस काने पर पहुँच गये हैं जहाँ से सरलतया लोकसाहित्य के महत्त्व को आकाश जा सकता है । लोकसाहित्य का महत्त्व बहुविध है । विचार करने पर पाठक को धर्मगाथा (माइयालाजी), नृविज्ञान

(एनसापोजाना), जाति विज्ञान (एथनालोजी) और भाषा विज्ञान (फार-लालाजी) आदि क्षेत्रों में लोकसाहित्य की महत्ता, विशेष रूप में अनुभव होगी। यदि हम यह कि लोकसाहित्य ने सम्यक् विवेचन के बिना इन क्षेत्रों का अध्ययन अपूर्ण एवं अद्धपूर्ण होगा तो कोई अत्युक्ति न होगी। लोकसाहित्य धर्मशास्त्रादिका के अध्ययन के लिए आधारशिला का काम करता है। भाषा-विज्ञान के क्षेत्र में लोकसाहित्य की महत्ता सर्वविधित है।

निश्च और मानव की रदत्वमय पदवी को मुलभरने के लिए, उनके प्राचीनतम रूपों की खोज के लिए और उनके प्रथम स्वरूप को जानने के लिए जहाँ इतिहास के पृष्ठ मूक हैं, शिलालेख और ताम्रपत्र मलिन हो गये हैं वहाँ उस तमसाच्छन्न स्थिति में लोकसाहित्य ही निशा निश बरता है। लोकसाहित्य का गभीर अध्ययन जीवन और जगत का मौलिक एवं प्रामाणिक ज्ञान के लिए अत्यन्त आवश्यक है। आदिम मानव की आदिम प्रवृत्तियाँ ज्ञान के सबसे सरल, प्रामाणिक एवं रोचक साधन लोकसाहित्य ही तो हैं। इस तथ्य पर एक और बात भी विचारणीय है कि सम्यक् ज्ञान के बालों जातियों के वास्तुनिष्ठावादी (Realistic) लेखकों की भाँति अनेक असमृद्ध जातियों के मौखिक साहित्य में माग व लिप्या की दुर्गन्ध नहीं है। इनके गाथों में जीवन की निरूष दशा का ह्रास जीवन के रमणीय पक्ष का प्रदर्शन हुआ है।

मय, आरचन और विरासा हेतु मानव ने छन्दोबद्ध प्रथम छन्दोबद्ध वा लुद्ध भी कहा है वर सभी हमारे अन्वेषण, अध्ययन एवं मनन के लिए उपादेय है। उसमें वे सभी प्रकार के गीत, कथा, गाथा, पहेली, लोमटि, मुक्त्य आदि आरंभ विनय द्वारा मानव ने अपने हृदय के मूर्तियाँ का प्रवेश है, अनेक ज्ञान-भगा प्रसाहित की है। शिशु स्वागत के लिए गाथे गय हालक और लारियों भी इस साहित्य के अङ्ग हैं। उन समस्त अध्ययन बड़ा मनग्न एवं उपजागी है वा नाचे के विवरण में लक्ष्य है।

१ ऐतिहासिक महत्व

क्रिस्ता देश व समाज के प्राचीन रूप का भ्रम देव लेने में अनुभव साधन लोकसाहित्य है। जय आरंभ मात्र में चरन के रूप पर रेशम का रार से भूला डालने की माग हरिसारे की नरोदा करती है, बटुक (अतिथि, विशेषकर जानाता) के पधारने पर सने का बटुक में पूरियों उताने का बात फर्क जाता है ता वरयय मन समाज के विगत वैभव विलास की आ विव जाता है। मने हा ये समाज का आश कल्पनाएँ रहा हा किन्तु इन मानस

में ये वस्तुएँ रही अज्ञेय हैं। चन्द्रावल तथा अन्यान्य पतिपरायणा महिलाओं के आदर्श पातिव्रत को प्रदर्शित करने वाले गीत तथा कामाध यवनों के निरीह जनता के गार्हस्थ्य जीवन को पकिल करने वाले कारनामे किस इतिवृत्त से अधिक प्रभावशाली नहीं हैं ?

वर्णनात्मक दोहे जो ग्रामीण जनता के मुँह में आरीन हैं बड़ी पते की बातें बतलाते हैं और पिछले इतिहास पर प्रकाश डालते हैं। हरियाणा के विषय में गुरु गोरख नाथ के पर्यटन से सम्बंधित यह दाँदा—

‘कटक देश, कठोर नर, भैरव मूत्र को नीर।’

करमा का मारा फिरे, बागर बीच फकीर।

नाथ कालीन इस प्रदेश के इतिहास को अपने में समेटे हुए है। यह सस्कृत में प्राप्त उस वर्णन के प्रतिकूल है जहाँ हरियाणों को ‘बहुधान्यरभू’ कहा गया है। इस स्थिति में पाठक एक विचिकित्सा में पड़ जाता है कि राजाश्रित फ़िरी कवि की वह सस्कृतोक्ति सत्य है अथवा रमते राम बाबा गोरखनाथ का यह ठेठवाणी। सामयिक परिस्थिति एवं वातावरण को देखते हुए गोरख बाबा वाली बात ही यथार्थ प्रैठती है। ऐसे ही अन्य अनेक तत्व इतिहास की रोज में सहायक होते हैं।

पाश्चात्य विद्वानों ने भारतीय साहित्य में यह कमी बतलाई है कि इसमें इतिहास विषयक सामग्री का एक तरह से अभाव है परन्तु उनका यह आरोप शिष्ट और लोकसाहित्य दोनों पर लागू नहीं होता। लोक मस्तिष्क ने अपने इतिहास की कड़ियाँ अपने गीतों में, अपनी कथाओं में जोड़ी हैं। लोक गाथाएँ तो एक रूप से इतिहास की प्रचुर सामग्री से सम्पन्न हैं। उनमें अतिरजना भले ही हो किन्तु इतिहास के विचारार्थी को कुछ ऐसे तथ्य अवश्य मिल जायेंगे जो प्रसिद्ध इतिहास लेखकों की दृष्टि से छूट गये हैं।

२ सामाजिक महत्व

लोकसाहित्य का सामाजिक मूल्य बहुत अधिक है। समाज शास्त्र के समुचित अध्ययन के लिए लोकसाहित्य की महत्ता सुविदित है। भारतीय समाज का ढाँचा किस प्रकार का रहा है यह लोक गीतों, लोककथाओं और लोकाक्तियों से मली-भौति समझ में आ जाता है। सास गृह का कट्ट सन्ध, नन्द भाचाइ का वैमनस्य, विप्रयुक्ता तथा विधवा की दशा का मार्मिक एवं याथातथ्यपूर्ण वर्णन किसी लिपित रूप में उतना मार्मिक नहीं मिलेगा ! भाई बहा के निरीह निरहल कोमल प्रेम के उदाहरण क्या कल्हण की राजतरंगिणी,

अष्टादश पुराण और टॉड राजस्थान आदि महान ग्रंथों में देखने को मिलेंगे ? शिशु जन्म पर होने वाले सामाजिक कृत्यों के प्रति क्या इतिहास-लेखक का ध्यान कमी गया है ? इन सत्रके समीचीन अध्ययन के लिए लोक साहित्य ही तो एक मात्र साधन है ।

३ शिक्षा विषयक महत्व

ज्ञान एवं नीति की दृष्टि में यह साहित्य पर्याप्त समृद्ध है । ग्रामा - चाहे स्कूल, कालेज एवं उच्च शिक्षा का समुचित प्रबंध न हो, चाहे ग्रामीण जनता का अन्तर ज्ञान की कोई सुवधा न हो परन्तु जनता के ज्ञान में परावर वृद्धि होती रहती है । इस ज्ञान को ग्रामीण जनता श्रॉलों द्वारा न लेकर काना द्वारा ग्रहण करती है । इस प्रकार यह शिक्षा दिन और रात का, प्रात और मध्याह्न का, तथा सध्या व प्रदोषकाल का कोई ध्यान न कर सहज रूप में वायु और आकाश के परतों पर चढ़ नारद की भाँति जन-जन के द्वार पर अलख जगाता है । ग्राहक को इस शिक्षा के हृदयगम करने के लिए किसी विशेष वातावरण एवं परिस्थिति की आवश्यकता नहीं पड़ती । यह कहना अनुचित न होगा कि ग्रामा में मौखिक विश्व विद्यालय खुले हुए हैं । परस (चापान) और पूअर (अलाव) इस ज्ञान-वितरण के लिए बड़े उपयुक्त स्थल हैं । इन सस्याग्रों में शिक्षा के अलग अलग स्तर हैं जहाँ आभालवृद्ध को आयु के अनुसार शिक्षा मिलती है । शिक्षार्थी को समयानुसार सब चीजें साँखने को मिलेंगी । कोस (पाठ्यक्रम) आयु के अनुसार चलता है । बचपन में बाल सुलभ और जुटाप में वृद्ध सुलभ ।

इस शिक्षा विवरण के सर्वोत्तम साधन लोक-कथाएँ हैं । या तो बालक की शिक्षा जननी की गाद में ही आरम्भ होती है । वहीं से वह चणामामा, भूखू के म्याऊ के, आटे चाटे के द्वारा कुछ सीपता चलता है । कैसा मुदर टङ्ग है, शिक्षा की शिक्षा और मनोविनोद का मनोविनाद । घर पर में किडर गाउन और माटेसरा शालाएँ लगा होती हैं । माता-पिता, भाई-बहन, दादो-दादा, अकौसो-बकौसो अराध गलक का ज्ञान भाली में काद न काद रल निना मोंगे डालते रहते हैं । बालक कुछ घड़ा होता है ता दादा नाना का घरेलू कहानियाँ बालक को हुनारे के साथ कभी आश्चर्य, कभी उन्माह और कभी उदागता के पाठ पढाता चलता है । इन कहानियाँ में बालक के लिए परिचित टुत्ता, निल्ला, कौआ, मोर, ताता, मारम, गीण्ड आर लामकी आदि पात्र जीवन की व्याख्या बालक की मानृभाषा में करते चलते हैं । ये कहानियाँ धाना का सामाजिक व्यवहार का ज्ञान भी

देती रहता है। इन ग्रामीण घरेलू कहानियों में और पाठ्य पुस्तकों में स्थान पाने वाली आधुनिक कहानियाँ में एक मौलिक अन्तर है। स्कूली कहानियों में पारचात्य सभ्यता की सृष्टि लहरें लेती है जब कि घरेलू कहानियाँ का पट उहाँ तन्तुआ से निर्मित है जो पूर्णतया भारतीय है। वही—‘एक राजा था। उसका सात छोरे थे और सात छोरियाँ थीं’—आदि पूर्व परिचित बातें हैं।

बालिकाओं के दृष्टिकोण से देखें तो लोकसाहित्य बड़ा उपयोगी मिलेगा। उनसे लिए सामाजिक एवं कौटुम्बिक शिक्षा का समुचित प्रबंध यहाँ मिलता है। उदार जननी एवं सद्गृहस्थ बनना भारतीय पुत्रियाँ का प्रथम व पुरातन उद्देश्य रहा है। बालिकाएँ जीवन के आरम्भ से ही गुड़ियाँ के साथ खेल-पेल कर अपना मनोरंजन करती हैं और गृहस्थ के अनेक रहस्या को अनायास सीख लेती हैं, समझ लेती हैं। कुछ सयानी होता है तो गीता की दुनिया में पदापण करती हैं। यह ससार उन्हें पर्याप्त मात्रा में शिक्षित कर देता है। यहीं से उन्हें ऐसे असंख्य नुसखे (योग) मिलते हैं। जो भावी जीवन के लिए लाभप्रद एवं हितकर सिद्ध होता है। जिन बातों को ये गुड्डे गुड़ियाँ के रूप में कहती सुनती हैं उन्हीं से अपने भागी जीवन की दिशा निर्धारित करती चलती हैं। डा० बेरियर एलविन ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक ‘फोक्सगुट् आन्ड मंकलहिल्स्’ में एक स्थान पर लोक गीता की महत्ता को प्रतिपादित करते हुए लिखा है कि—‘इनका महत्व इसीलिए नहीं है कि इनसे संगीत, स्वरूप और विषय में जाता का वास्तविक जीवन प्रतिनिधित्व होता है, प्रत्युत इनमें मानवशास्त्र (सोशियोलॉजी) का अध्ययन की प्रामाणिक एवं ठाम सामग्री हम उपलब्ध होता है’। डा० एलविन के मत में एक सार है, एक तथ्य है।

४ आचारिक महत्व

लोक में आचार का बड़ा महत्व है। लोकसाहित्य में आचार सम्बन्धी बातें यत्र-तत्र बिखरी मिलेंगी। यहाँ आचार सम्बन्धी कितने ही अध्याय खुले पड़ें हैं जिनमें एक लोकोत्तर नैतिक एवं आचारिक अवस्था का वर्णन है। सतीत्व का कठिनता ऊँचा आदर्श यहाँ उपलब्ध होता है यह चन्द्रावल ने कथा-गीत में स्पष्ट है। लोक साहित्य में जिन उच्चादर्शों का वर्णन है जिन लोकोत्तर चारित्र्यों का वर्णन है उनमें राम कृष्ण शिव और सीता राधा पार्वती का नहीं भुला सकते। ये हमारे आचार के केन्द्र हैं। इन्हीं आदर्शों को अपनाकर भारत भारत रह सकता है।

५ भाषा वैज्ञानिक महत्व

यह सत्य बात है कि ‘भाषा शास्त्री’ के लिए शिष्ट साहित्यिक भाषाएँ

उतनी उपयुगी नश है जिनकी कि बालचाल की भाषाएँ। इसलिए लोक-साहित्य लोक भाषा की वस्तु होने के कारण भाषा-वैज्ञानिकों के लिए बड़ा मूल्य पुर है। यही वह धरातल है जहाँ पर भाषातन्त्रवेत्ता भाषा के परतों को उपाङ्गुर देवते हैं और गभीर से गभीर स्तरों में प्रवेश पाते हैं।

अथ परिवर्तन को समझने के लिए तथा शब्दों के इतिहास की खोज के लिए लोकसाहित्य सर्वाधिक उपादेय है। प० रामनरेश जी त्रिपाठी का यह कथन पूणतया सत्य है कि 'आधुनिक हिन्दी के जनजाता गाँव बाल हैं और उनका साहित्य इस भाषा को घटने के लिए टक्काल का काम दे रहा है। मन्दुत के शब्द किस प्रकार साधारण जन के लिए उपयोग मुचम हुए हैं यह सब इस टक्काल का ही परिणाम है।' अब एक साधारण प्रार्थना किसी नई वस्तु या किसी नूतन प्राकृतिक व्यापार का देखता है तो उसे अपनी समझ से कई नए नाम देना चाहता है। इसके लिए किसी पढित व पुरोहित का अपेक्षा उसे नहीं होती। उसने साइकिल देखा। बर्मी नहीं सोचा कि यह अप्रेची अथवा ऐल-नेक्सन भाषा का 'उ' है और उसने क्या माने हैं। उसने दस नवन एक नूतन व्यापार कि एक गाड़ी है और वह पैर से चलती है। अतः वह सदा कहें 'पैरगाड़ी'। यह एक साधारण शब्द है लेकिन कितना स्पष्ट एवं उपयोगी है। समस्त संस्कृत वा धुरधर नैनाकरण इतना सार्थक शब्द निर्माण कर सकता। यदि करता तो उस शब्द की दशा 'मयवानूल विदोवा दान' होती अर्थात् नननिमित्त शब्द मूलशब्द में मा टुहूँ होता।

लक्ष्मणस की शब्द निर्माण शक्ति वा परल्व प्राप्त क्रिया-विशेषण बनाने में सफलता हा जाता है। जैरे से गिरने के लिए 'घडान से गिरा' अधिक सार्थक एवं लक्ष्य योजक है आदि। यदि हम किसी प्रार्थनाजन को बोलता सुनता हम सहज ही ज्ञात हा जावेगा कि वह कितने ही ऐसे शब्द प्रयोग में लाता है जो भारतीय वातावरण में पनपे हैं यथा पौन (पवन) पौरल (पौरण) वा (वारि) आदि ऐसे शब्द हैं जिनके अन्तर्ग में भारतीय वातावरण हिलोरें ले रहा है। एक सगल निवचन में हम यह देख पावेंगे कि लोकभाषा शिष्ट भाषा न प्रसिद्ध साधन और जनता है। इसके अध्ययन में हमारी भाषा मन्दुत नये और सरल भी बनेगी। हरियाना लोकसाहित्य का अध्ययन ही जिनका उद्देश्य की पयात प्रभिष्टुदि करेगा। इस बन्ना के उपाचार (संग), लक्ष (Co-operative league) तथा गडै (पयात रूप ने) आदि ऐसे शब्द हैं जो जिनका वा भाव प्रकाशिका वा ब्यापने।

६ सांस्कृतिक महत्व

लोकसाहित्य का सांस्कृतिक पन बना नियम है। निरन की मन्दुतियाँ

वैसे उद्भूत हुई, कैसे पनपा, इस रहस्य की कहानी अथवा इतिहास हमें लोकसाहित्य के सम्यक् अध्ययन से मिलता है। सस्कृतियों के पुनीत इतिहास की परख अनेकारा म लोकसाहित्य से समव है। सच पृछा जाये तो लोकसाहित्य ही सस्कृति की अमूल्य निधि है। महात्मा गांधी के निम्नलिखित शब्द जिनम लोकसाहित्य के सास्कृतिक पक्ष की महत्ता प्रकट की गयी है, चिरस्मरणीय रहेंगे—‘हाँ, लोकगीता की प्रशंसा अवश्य करूँगा, क्योंकि मैं मानता हूँ कि लोकगीत समूची सस्कृति के पहरेदार होते हैं।’ गुजराती मनीषी काका कालेलकर ने लोकसाहित्य के सास्कृतिक पक्ष को इन शब्दों में व्यक्त किया है—‘लोकसाहित्य के अध्ययन से, उसके उद्धार से हम कृत्रिमता का कवच तोड़ सकेंगे और स्वाभाविकता की शुद्ध हवा में फिरने डोलने की शक्ति प्राप्त कर सकेंगे। स्वाभाविकता से ही आत्मशुद्धि समव है।’ अतः मैं यदि हम यह कहें कि लोक साहित्य जन-सस्कृति का दर्पण है तो अत्युक्ति न होगी।

सस्कृति की आधारशिला पुरातन होती है। इसके मूलतत्वा के सन्ध में जो तत्व सन्धसे महत्वपूर्ण एवं विचारणीय हैं, वह है विगत का प्रभाव। आज भी हमारा आदर्श हमारा अतीत है। भूला भूलते, चाकी पीसते, यात्रा करते हमारे आदर्श राम-लक्ष्मण के पुण्य चरित्र ही हैं। यही लोकसाहित्य का सास्कृतिक पक्ष है।



प्रथम अध्याय

अ हरियाना प्रदेश का इतिहास और क्षेत्र-विस्तार
आ हरियाना लोकसाहित्य के निधि रूप

३ अ हरियाना प्रदेश का इतिहास और क्षेत्र-विस्तार

१ हरियाना प्रदेश का इतिहास, नामकरण व प्राचीनता

विषय प्रवेश में हमने लोखवाता और लोकसाहित्य के रहस्य, पारस्परिक सम्बन्ध तथा लोकसाहित्य की विशेषताओं को जानने का प्रयत्न किया है। "हरियाना प्रदेशीय लोकसाहित्य का अन्वयन" नामक विषय पर पहुँचने से पहिले हरियाना प्रदेश की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर विचार करना अनुपयुक्त एवं अप्रासंगिक न होगा। अतः इस अध्याय के प्रथम अर्द्धभाग में हरियाना प्रदेश की प्राचीनता, उसका क्षेत्र विस्तार एवं सीमाओं पर विचार करेंगे और उत्तरार्द्ध में हरियाना प्रदेश में प्राप्त लोकसाहित्य के विविध रूपों का प्रश्न करेंगे।

हरियाना प्रातः का इतिहास एक रूप से उपरिष्ठित रहा है। प्रागैतिहासिक काल से लेकर अन्न तक का इतिहास इस प्रदेश के विषय में मूक बना हुआ है। शक, मालव आदि तक्षशिला को वेद बनाकर विकसित हुए। उनके समय में मथुरा नगर ऐतिहासिक प्रसिद्धि प्राप्त कर चुका था किन्तु तक्षशिला और मथुरा के मध्यवर्ती इस प्रदेश को कोई ऐतिहासिक महत्ता नहीं मिली। खेद का बात है कि जिस महान् प्रदेश को आज हरियाना के नाम से पुकारा जाता है उस प्रदेश का प्राचीन प्रथा में इस नाम से कहा वर्णन तक नहीं मिलता। ऋक् संहिता ६२२५२ में 'रजत हरयाणे' पाठ में एक शब्द मिलता अर्थात् यह है किन्तु यह शब्द देशवाची नहीं है। यह शब्द वहाँ पर एक राजा के विशेषण के रूप में प्रयुक्त हुआ है जिसका अर्थ है "सदैव यान (रथ) चलता रहता है जिसका।" परन्तु इस प्रदेश की स्थिति से यह सहज ही शत हो

१ निरुक्त—नैगम कांड, अध्याय ५, सूक्त १५, पृष्ठ ५०६ (दुर्गाचार्य की टीका)।

मूलपाठ—हरयाणो हरमाणयान । रजत हरयाण इत्यपि निगमो भवति । भाष्य—हरयाण इत्यनन्वगतम् । हरमाणयान इत्यवगमः ।

अत्रमुद्यत्तयायने रजत हरयाणे । रथ युक्तमसनाम सुधामणि—ऋक् संहिता ६२२५२

अर्थ—इसमें यान की स्तुति की गई है। घोड़ों से युक्त, चादों से मड़े धार सरल, सुन्दर गतिवाला रथ को हमने, यान सदैव चलता रहता है जिसका धार साम शोभायमान है जिसका ऐसे उद्यत्तयायन नामक राजा के यन्मान और महादत्त दाता होने पर, प्राप्त किया।

जाता है कि यह प्रदेश विगत युगों में आर्य सभ्यता का नेत्र रहा है। इस प्रदेश की परिमामा मनुस्मृति और महाभाष्य में वर्णित ब्रह्मावर्त, ब्रह्मर्षि, मध्य-देश तथा आयावर्त ने प्रचुर भूभाग को अपने म समेटे हुए है।^१ चाहे जो कुछ हो इतना तो स्पष्ट है कि मनुस्मृति, महाभाष्य, त्रैधायन धर्मसूत्र, वशिष्ठ धर्मसूत्र और विनयपिटक आदि में वर्णित मध्य देश तथा आयावर्त की पश्चिमी सीमा आधुनिक हरियाने की पश्चिमी सीमा रही है।^२ आज भी हरियाने की पश्चिमी सीमा पर सरस्वती तथा हृष्यवती (घग्गर) नगी रहती है।^३

उपरोक्त वर्णन से पाठकों को यह विदित हो गया है कि यह प्रात एक प्राचीन प्रदेश एव कइ प्राचीन जनपदा की लीलाभूमि रहा है। महाभारत में जनपदा का वर्णन मिलता है। उन जनपदों में कुरुवन एक विशेष र्याति प्राप्त प्रदेश था। आधुनिक हरियाना कुरुवन प्रदेश का वह भूभाग है जो कौरवा ने पाडवों को दिया था। इसी प्रदेश में पाडवों ने अपनी इतिहास प्रसिद्ध राजधानी हद्रप्रस्थ बसाई थी। हरियाना प्रदेश में ही पाण्डिप्रस्थ (आधुनिक पानीपत) शोण्डिप्रस्थ (आधुनिक सोनीपत) वे ऐतिहासिक स्थान हैं जिनकी माग पाडवों

१ (1) सरस्वती हृष्यवत्योर्देवनदोर्यदतरम् ।

त दवनिमित्त देश ब्रह्मावर्त प्रचक्षते ॥ मनुस्मृति २ १७

सरस्वती और हृष्यवती देवनदियों के बीच के देवताओं से बनाये गये देश को ब्रह्मावर्त नाम से कहा जाता है ।

(11) कुरुक्षेत्र च मत्स्याश्च पञ्चाला शूरसेनका ।

एष ब्रह्मर्षि दशो व ब्रह्मावतादतर ॥ २ १६

कुरुक्षेत्र, मत्स्य, पञ्चाल और शूरसेन देश ब्रह्मर्षि देश कहलाते हैं जो ब्रह्मावत से भिन्न हैं ।

(111) हिमत्रद्विव चयाम्भय यत्राग्निशनादपि ।

प्रत्यगेत्र प्रयागाच्च मध्यठश प्रकीर्तित ॥ २ २१

हिमालय और विंयाचल के बीच में त्रिशान नदी से पूर्व और प्रयाग से पश्चिम दश को मयदेश कहा जाता है ।

महाभाष्य—क पुनरायावत्त ? फिर आयावर्त कौन सा देश है ?

प्राग्दशानात् प्रत्यक् काजकवनाद् दाशयान हिमधन उत्तरेण पारियात्रम् ।
अदशन नती न पूर में, कालक वर कनकवन स पश्चिम में, हिमालय स दक्षिण और पारियात्र स उत्तर में आयावत्त देश है ।—

त्रिधिशेषप्रकरण षष्ठ्यन्भावप्रकरणम् ६, पृष्ठ २३७

२ इण्डियन ए गीब्यरी १६०२, पृष्ठ १७६ पर कविराज शेषर पर नोट ।

३ गङ्गोशिर जिला हिमाल—पृष्ठ ५, पर हिमाल की नदियाँ ।

ने पारस्परिक कलह की उपशांति के लिए की थी। इनके आसपास ही दो अन्य छोटे-छोटे ग्राम हैं, पाचना ग्राम इन्द्रप्रस्थ था।

इन्द्रप्रस्थ से पाडवों ने परिचम दिग्विजय प्रारम्भ की थी। यह प्रदेश एक समय उड़ा समृद्ध था। यहां के कई नगर प्राचीन युग में राजधानी रहे हैं। प्रारम्भ में चौबेयों ने रोहतक को अपनी राजधानी बनाया था जो प्रात सिक्कों से विदित है। उस समय इस प्रदेश का नाम 'उहुधान्यक' प्रसिद्ध था। होशियारपुर, भरतपुर और सहारनपुर से प्राप्त सिक्कों से भी यह प्रकट है कि यह प्रदेश उड़ा समृद्ध एवं सम्पन्न रहा होगा। पीछे से इस प्रदेश पर वर्धनवंश का राज्य रहा और हर्षवर्धन ने स्थानेश्वर (यानेसर) को अपनी राजधानी बनाया। अतः उपरोक्त विवरण से यह अवगत हो जाता है कि यह भूभाग चिरकाल तक भारताय इतिहास में उड़ा प्रमुख रहा है। इस प्रदेश के ऐतिहासिक मूल्य को जानकर भी हम उस युग तक नहीं पहुंच पाये हैं जिस युग में इसे 'हरियाणा' नाम से पुकारा गया। इस नाम का सर्वप्रथम उल्लेख बिन्धुम की चौदहवीं शताब्दि के अंतिम भाग में (१३८४) एक शिलालेख में मिला है। इसमें हरियाणा देश को पृथ्वी पर 'स्वर्ग सन्निभ' कहा गया है और यहां का 'अल्लिका' दिल्ली नाम्नी पुरी तोमरवंश द्वारा निर्मित बताई गई है।^१ एक दूसरे स्थान पर 'हरियानक' शब्द प्रयुक्त हुआ है। उल्लेख के राजत्वकाल के एक शिलालेख में यह शब्द आया है। यह शिलालेख उपरोक्त शिलालेख

^१ यह शिलालेख सुल्तान मुहम्मद बिन तुगलक के समय का है, जो दिल्ली से ५ मील दूर दक्षिण स्थित 'सारधन' नाम के गाँव से मिला है और इस समय दिल्ली के ग्यूज़ियम की ६ में रखा हुआ है। इस शिलालेख में तिथि स० १३८४।८२ विक्रमीय फाल्गुन शुक्ल ५ मंगलवार अंकित है। कुल १६ श्लोक हैं। यहाँ पर उद्धृत अंश तृतीय श्लोक है —

देशोऽस्ति हरियानास्य पृथिव्या स्वर्गसन्निभ ।

अल्लिकास्य पुरी तत्र तोमरैरन्ति निर्मिता ।

तोमरान्तर तस्या राज्य हितकृत्स्नम् ।

चाहमाना नृपस्य प्रजापालनतत्परा ॥

अ 'गठन पाल थाक हिन्दु इन्डिया'—मा० बी० पैथ, तृतीयभाग, पृष्ठ ६६।

आ 'कन्नड हिस्ट्री ऑफ इन्डिया' तृतीय भाग, पृष्ठ ५००, ५१०।

इ 'अप्रमान जाति का इतिहास' पृष्ठ २१ २२

उ 'पामासिका इन्डिया' भाग १३ पृष्ठ १।

उ पालमुहम्मद गुप्त स्मारक ग्रंथ पृष्ठ १।

से ४७ वष पुराना है। यह पालम की एक बागड़ी से मिला है और उसका समय विक्रम सम्वत् १३३७ दिया हुआ है। परन्तु यह शब्द काइ नूनन नहा प्रतीत होना वरच स्वार्थ म 'क' प्रत्यय करके 'हरियान' मे हरियानक शब्द बना लिया गीत जान पड़ता है।^१

एक अय स्थान पर इस प्रदेश के लिए 'हरिवाणक' शब्द का प्रयोग मिला है। यह शब्द जेला हिसार की नदानस्त रिपोर्ट सन् १८९३ म उद्धत एक श्लोक मे आया ह। वहा पर निदश है कि यह श्लोक प० धरनीधर हामीवाल ने अपनी पुस्तक 'अरुट प्रकाश' म इस प्रकार दिया है।

अभोजितोमरीरादी चोहाणस्तदनतरम् ।

हरिवाणकभूरेपा शके द्र शास्यतेऽधुना ॥

अर्थ यह है कि यह हरिवाणक देश आरम्भ मे, तोमरा ने और पाछे चौहाना ने अपन अधिकार म रखा और अत्र शके द्र इस प्रदेश के हाकाम है। इस स्थापना के अनुसार हरियाना—हरिवाणक अथवा हरिजन का परिवर्तित रूप है। इसी पुस्तक, 'अरुट प्रकाश' म हरिजन प्रदेश की पूर्व पश्चिम की सीमा भी एक श्लोक म दी हुई है —

पालम ग्रामपूर्वे तु कुशुभ ग्राम पश्चिमे ।

हरिवाणकभूरेपा मवसस्थादिवद्विनी ॥

पालम गाव अर्थात् हनेली पालम जिसके पूव म है और कुसुम गाव अर्थात् पटियाला रियासत का कोहन गाव जिसके पश्चिम म है, यह भूभाग हरिवाणक देश है।

उपरोक्त विवरण से हम इस निष्कर्ष पर पहुचते हैं कि यह प्रदेश सदा म धनधाय सम्पन्न रहा है और तोमर एव चौहान राजाश्री ने ८ वा शताब्दी से १३ वा शताब्दी तक इसे भोगा है।^२ अत इस प्रदेश के लिए यह नाम

१ एपीग्राफिका इंडो मुस्लिमिका—पृष्ठ ३५ पर दिल्ली क तुर्क सुल्ताना के शिलालेख पाठ—

अभोजितोमरीरादी चोहाणस्तदनतरम् ।

हरियानकभूरेपा शके द्रै शास्यतेऽधुना ॥

२ अनगपाल (प्रथम) ने सन् ७३६ इस्वी म जो तोमरवशाय सर्वप्रथम राजा है, दिल्ली को अपनी राजधानी बनाया। आगे चलकर ११५१ इ० म बीसलदेव प्रथम विग्रहराज ने (चौहानवशीय राजा) अनगपाल द्वितीय से दिल्ली को छीनकर अपनी राजधानी बनाया। दिल्ली क सिंहासन पर चौहानवशाय अन्तिम राजा पृथ्वीराज हुए जिनका स्युधु मोहम्मद गोरी के हाथों हुई।

इस्वी आठवा शताब्दी में प्राप्त हुआ होगा। हा, इसका उल्लेख, सर्वप्रथम, पाटक का एक शिलालेख में जो चौदहवा शताब्दी का है, मिलता है।

हरियाना प्रदेश जो दिल्ली से पश्चिम में पसर नदी से काठे तक चला गया है, तीन उपभागों में बटा हुआ है। एक—मूल हरियाना जो वर्तमान हिमाचल जिले के पूरु दक्षिण भाग में घघर नदी से पूरु में फैला हुआ है जिसे अन्तगत पूरु हॉवी तहसील, हिमाचल तहसील का पूरुभाग और पतहाणा तहसील का कुछ पूरु भाग आता है। दूसरा—बागड़ के नाम से बला और लिखा जाने वाला भूभाग है।^१ यह ऊंचा भूमि है जो अरब सागर की ओर की नदनेवाली तथा प्रगाल की गाड़ी की ओर बहने वाला नदिया के बीच जल-विभाजन (Water shed) का काम देना है। तीसरा और सबसे छोटा भाग जमना खानर के नाम से विख्यात है। खानर और बागड़ के बीचो-बीच ग्राट्टर रोड (G T Road) है। इन तीनों भूखण्डों को आज हरियाना के नाम से पुकारा जाता है। इस प्रयत्न के द्वारा हमारा उद्देश्य इसी प्रदेश के लोम्साहित्य का अध्ययन प्रस्तुत करना है।

आज हरियाना को वह समृद्धि तथा गौरव प्राप्त नहीं है जो उसे विगत युगों में मिला है। कदा चौदहवा शताब्दी के शिलालेखों के बखाने जिनमें इस भूमि को 'सर्ग सन्निभ'^२ कहा गया है और कदा आज का पिछड़ा हुआ हरियाना। आज परिस्थिति पुरतया विपरीत है। इस विपरीतता को जब हम विगत युगों का समकालता में रखते हैं तो आश्चर्य होता है। इतिहास की खोजों में यह प्रमाणित हो गया है कि यह भूभाग एक समय यौधेय वीरों का जनपद रहा है। यौधेयों के इतिहास की खोजना हमारा उद्देश्य नहीं है किन्तु इतना तो जान हा लेना चाहिए कि यौधेयों का प्रसङ्ग पाणिनीय अप्य्यायी में आया है^३ और यह एक प्राचीन जनपद है। इन्हीं यौधेयों की प्रभूत भूमि का वर्णन अथर्व श कवि पुण्डित ने अपने 'यौधेय भूमि वर्णन' में किया है।

१ 'बागड़' और 'बागड़' से मिल शब्द है। बागड़ वाकट या वाकड से माना जाता है अर्थात् वह प्रदेश जहा बकरियाँ अधिक हों। हिमाचल जिले का यह वह भूभाग है जो बीकानेर को सूता है। इस प्रदेश में बागड़ी जाति की आबादी है। हरियाना में देसवाल जाट अधिक हैं। बिग्रनोड जाति भी बागड़ में रमा है।

२ श्लोक ३५ (यही उच्छ्रवाम) पर पाद टिप्पणी (१)

३ अप्य्यायी "न प्राच्यभागादि यौधेयादिभ्य" ४ १ १३८। परिशिष्टि का समय ४ ५ शताब्दी ईसा पूरु माना जाता है।

पुष्पदत्त ने लिखा है कि यौधेय देश पृथ्वी (धरणी) पर दिव्य वेश धारण किये हुए है और वह प्रदेश धनधान्य से परिपूर्ण है । वहाँ के नगर, ग्रामादि सब बड़े शोभायमान हैं ।^१

रोहतक यौधेयों की राजधानी रहा है और इस रोहतक राज्य के दो भागों—मरु और गहुधान्यक—का स्पष्ट वर्णन आता है । कैप्टिन कन्ले के द्वारा प्राप्त यौधेयों के सिक्के गहुधान्यक टनसाल के हैं । महाभारत काल तक यह प्रदेश अवश्य सम्पन्न रहा है । नकुल दिग्विजय में आता है कि नकुल दिल्ली के पश्चिम की ओर गया और वह रोहतक होता हुआ मेहम (महेत्थ) और सिरसा (शेरीपक) तक गया है । उस वर्णन में भी इस प्रदेश को बहुधनवाला और धनधान्य सम्पन्न कहा गया है ।^२ प्राफेसर जयचन्द विद्यालकार ने नकुल की पश्चिम दिग्विजय का वर्णन करते हुए ऐसा ही कहा है कि नकुल खाटवप्रस्थ से बड़ी भारी सेना लेकर चला । उसे रोहतक सिरसा के समूचे प्रदेश में कुछ अश मरु और कुछ गहुधान्यक मिले ।

हरियाना प्रदेश की प्राचीनता, सम्पन्नता और समृद्धि का देखा लेने और समझ लेने के उपरांत यह विश्वास होती है कि इस प्रदेश का यह 'हरियाना' नाम किस आधार पर है । यद्यपि यह जानना अप्रासंगिक भी नहीं है ।

हरियाना नामकरण के इतिहास में समान प्रमाण तो अधिक नहीं मिलते परन्तु जो किन्दन्तिया प्रचलित हैं अथवा जो कुछ लिखा मिला है, उषी

१ 'हिन्दी काव्य धारा'—राहुल जी, पृष्ठ १६०

जोहेयउ यामि अथि देसु । य धरिणु धरियउ दिवदेसु ।

जहि नथधरणस्य परिपुण्यनाम । पुरणवर सुनामा रामसाम ॥

पुष्पदत्त महाराज कृष्णराज का दरबारी कवि था । इसका काल १०वाँ या ११वीं शती माना जाता है ।

२ 'भारतीय अनुशासन ग्रन्थ' हिन्दी साहित्य सम्मेलन से प्रकाशित, नकुल का पश्चिम दिग्विजय पाठ —

ततो गहुधन रम्य गयान्य धनधान्यम् ।

कार्तिभयस्य दयित रोहितरमुपाद्रवन् ॥ गभापर्व, अध्याय ३५

यह श्लोक कुम्भपोष्य संस्करण के अनुसार ३५वाँ अध्याय है और सुप्रसन्न शाखा के मन्त्रसंस्करण के अनुसार २८वाँ अध्याय है ।

को आधार माना जा सकता है। उनमें से कुछ का निष्कर्ष इस प्रकार है —

प्रथम — जिना हिसार की सीमा पर रियासत जाद में 'राम हृदय' नामक एक स्थान है जहाँ पर हिन्दुओं का एक तीर्थ स्थान (सरोवर) है। यह लोक विश्वास है कि इसी स्थान पर परशुराम ने क्षत्रियों का इकट्ठीस वार ध्वस्त (कल) किया था। अतः यह एक गलिभूमि है, जहाँ पर हरि (हरि के अवतार परशुराम एवं हरति प्राणानिति हरि भारनेवाला) ने आर (यान के अर्थ हैं स्थान या एकत्रित करना) क्षत्रियों का एकत्रित कर इकट्ठीस वार परशुघार पर उतार दिया था। इस आधार पर यह हरियाणा नाम पड़ा है। इसका शब्दार्थ यह हुए कि परशुराम जी द्वारा क्षत्रियों के गलिदान की भूमि।^१

द्वितीय — यह भी लोकाति है कि महाराजा हरिश्चन्द्र एक वार अपनी राजधानी अथवा या से परिभ्रमण करते हुए इस आर आये थे। उस समय यह समस्त भूभाग जंगल पड़ा था। उसने इसे आयाद किया। अतः हरिश्चन्द्र के नाम पर 'हरि (हरिश्चन्द्र) का आना से इस प्रदेश का नाम 'हरियाणा', 'हरियाणा' प्रसिद्ध हुआ।^२

तृतीय — एक प्रचलित किंवदन्ती है कि ब्रज से द्वाका का जाने के लिए हरि (कृष्ण) के यान का यही निर्दिष्ट मार्ग था। अतएव यह भूभाग हरियाणा कहलाया।^३ इसी से मिलता जुलता एक अन्य उक्ति है कि कौरवों और पांडवों के युद्ध में श्रीकृष्ण जय मम्मिलित होकर आये तो सर्वप्रथम इसी प्रदेश में ठहरे थे। उनकी सेना भी इधर ही एकत्रित रनी थी। इसलिए हरि (कृष्ण) के आना से यह प्रदेश हरियाणा > हरियाणा कहलाया।^४

चतुर्थ — यह भी कहा जाता है कि इस प्रदेश में जो जंगल या वन या उनका नाम 'हारयावन' प्रसिद्ध था। पश्चात्, उसमें आवासीय हो जाने के कारण इस प्रदेश का भी 'हरियावन' प्रदेश कहा जाने लगा। फिर यही हरियावन > हरियावन > हरियाणा हो गया।

पंचम — १० धरणाधर हावानाले ने अपना पुस्तक 'अण्ड प्रकाश' में इस प्रकार लिखा है कि इस पुस्तक का नाम 'हरियाणु' था। पांडु ने

१ व. गोयल रिपोर्ट, जिला हिसार सन् १८२३

२ व. गोयल रिपोर्ट, जिला हिसार, सन् १८२३

३ यालमुकन्द गुप्त स्मारक ग्रंथ—पृष्ठ १

४ व. शायल रिपोर्ट, जिला हिसार, सन् १८६३

उच्चारण भेद से यह 'हरियाना' हो गया। 'हरिगणक' शब्द का व्युत्पत्तिन्य अर्थ है जिस देश में हरि (इंद्र) की अधिक आकांक्षा हो। यागलुटि में यह शब्द प्रदेशवाची बन गया है। आज भी हरियाना पानी का बूँद के लिए तरसता है और इंद्र भगवान् की आशा भरा दृष्टि से दरुना है।

पाठ — जमा कि पहले कह चुने हैं, ऋग्वेद में 'हरयाण' शब्द वरु राजा के विशेषण के रूप में आया है।^१ परंतु 'वेद धरातल' के लेखक व्याकरण-आचार्य पंडित प्रवर गिरीशचंद्र जो अवस्थी इस शब्द का मन्त्र में हरियाणा प्रदेश के साथ जाड़ते हैं। उनका कहना है, 'ऋग्वेद' में 'हरयाण' शब्द एक राजा के विशेषण के रूप में आया है। 'हरयाण' नित्यकालमेवाभिप्रस्थितयान' अर्थात् जिसका रथ सदैव चलता रहे। इससे उस राजा का नाम हरयाण भी प्रसिद्ध था, यह प्रतीत होता है। फिर आगे चलकर हरयाण राजा के नाम पर उस प्रांत का नाम हरयाण पड़ गया जो आज भी पंजाब में 'हरियाना' नाम से प्रसिद्ध है। हरियाणों के बेल आज बड़े प्रसिद्ध हैं।^२ इससे पंजाब के 'हरियाना' का नाम पड़ गया है।

उक्त कल्पना का आधार यह स्पष्ट किया गया है कि एक ही स्थल पर 'हरयाण' और 'उत्तण्णायन' दो शब्द एक राजा वरु के विशेषण हैं। पं० अवस्थी 'उत्तण' शब्द से 'तत्रसाधु' ४।४।६८ सूत्र से 'यत्' करके उत्तण्णय शब्द व्युत्पन्न करते हैं जिसका अर्थ होगा 'पैलों के लिए कल्याणकारक'। अत्र उत्तण्णय अयनम् यह अस्य' इस विग्रह में बहुव्रीहि समास हाकर 'पैला के लिए कल्याणकारक है घर जिनका' इस अर्थ में उत्तण्णायन शब्द निष्पन्न होता है और यह राजा का विशेषण है, जिसका एक विशेषण 'हरयाण' भी है। अतः बहुव्रीहि समास से सदैव चलता रहता है रथ जिस प्रदेश में इस अर्थ में यह हरयाण शब्द भी देशवाची बन गया और इस प्रांत का नाम भी हरयाण पड़ा जो आगे चलकर 'हरयाणा' और 'हरियाना' हो गया। पुरुष के नाम से भी देश का नाम पड़ सकता है यथा, मन्तराजा भरत के नाम पर 'भारत' और महाराजा कुरु के नाम पर 'कुरु प्रदेश' पड़ा।

पं० अवस्थी का यह रथापना इस बात पर आधारित है कि दुर्गाचायण सायणाचार्य नेत्रल कर्मकांड तथा शानकांड का लेकर चलते हैं। उक्त

१ पं० धरणीधर द्वारा लिखित 'अमल प्रकाश' में हरिचाणक शब्द का इतिहास।

२ ऋग्वेद महिना ६।२।२५।२

३ 'वेदधरातल' — पृष्ठ ७७६, लेखक श्रीगिरिश चंद्र जो अवस्थी व्याकरणशास्त्र, प्रधानाध्यापक, सरकृत प्राय विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, १९१७।

भौगोलिक ग्राह्य नहा करनी थी, किंतु विद्वान् इस स्थापना को नवीभार करने में असमर्थ हैं ।

सप्तम — वामुदेव शरण्य ग्रामपाल ने प्राचीन आभीरायण (ग्रहीरा का घर या स्थान) शब्द में हरियाना शब्द की व्युत्पत्ति अधिक सम्भाव्य माना है ।
 ग्रामारायण > अहिरायण > हीराग्रन > हरियान > हरियान > हरियाना ।

ग्रन्थम — महापंडित राहुल जी का सुभाव है कि हरियाना शब्द 'हरिधायक' में हरिहानक > हरियानक > हरियानक > हरियान > हरियान > हरियाना आदि प्रक्रिया से आग्रश की चक्की में पड़कर बना है ।^१ इसी पुष्टि में यह कहा जा सकता है कि नहुल का पश्चिम दिग्गन्तव्य करते समय रातक में मत्तमयूग से भाषण युद्ध करना पड़ा था और उसने बहुधायक प्रदेश को अपने वश में किया था । प्रो० जयचं विद्यालंकार ऋधान्यक को राहतक राय का एक भाग मानते हैं । इसी बहुधायक भूभाग का नामान्तर 'हरिधान्यक' भी मिलना है । 'बहुधायक' शब्द का अर्थ है 'प्रभूत धनवाला' और इसी सादृश्य पर 'हरिधान्यक' का अर्थ होगा हरित एवं धनधान्यपूर्ण । यह प्रदेश प्राक्काल में हराभरा रहा होगा । यह सहज अनुमान लगाया जा सकता है जबकि सरस्वती नदी इस प्रदेश की हरातिमा तथा सुपमा बखेरता हुई रहती होगी । आज हरियाना निस्सदेह अपने उस रूप में नहीं है परन्तु फिर भी हमारा राष्ट्रीय सरकार इस प्रदेश को वहाँ पुराना हराभरा रूप प्रदान करने के लिए कटिबद्ध है । भाउका की नहरों का जाल अवश्य ही इस प्रदेश की कायाकल्प कर देगा और पुन एक नार कृष्ण की वशी की मृदुल स्वर्ण लहरिया हरियानी गौरा का मुनाइ पढ़ेंगी ।

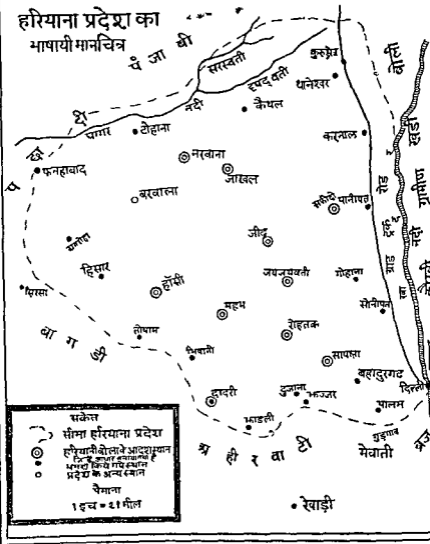
(२) हरियाने का क्षेत्र विस्तार

हरियाना प्रदेश का परिषामाएँ निर्धारित करना बड़ा कठिन है । क्याकि मध्ययुग से पूर्व हरियाना नाम से किस प्रदेश का वर्णन नहीं मिलता । मध्ययुग में जो 'हरियाना' नामक देश का वर्णन मिला है^२ उससे एक बात निश्चितरूप से समझ में आती है कि 'स्वर्ण सनिभ' यह प्रदेश 'दिल्ली' नगरी को अपनी परिधि में समेटे हुए है । किंतु हरियाने की साम्प्रतिक स्थिति को ध्यान में रखकर यह प्रश्न उपस्थित होता है कि 'दिल्ली' हरियाने के किस भाग में स्थित थी ? यह भी अनुमेय है कि तामरादि से संबंधित यह नगरी इस प्रदेश का राजधानी भी अवश्य रहा होगा । परन्तु राजधानी का देश की

१ यह सुभाव महापंडित राहुल जी ने लखक को मयूरा में लिखे गये एक पत्र के द्वारा दिया है ।

२ 'दशास्तित हरियानाम्य' आदि, पृष्ठ ३५ पर ।

हरियाना प्रदेश का भाषायी मानचित्र



सामान्य पर स्थित होना सुगन्ता के दृष्टिकोण से अच्छा नहीं है। ता फिर क्या
 जिला का 'हरियाना' का केन्द्र मान लें ? वह बात जैने तो 'दिल्ली नगर
 हरियाना' नामक जनसंख्या से पुष्ट हो जाती है। परन्तु इस स्थापना में
 आधुनिक हजियाने के साथ प्राचीन कुरु तथा शौरसेन प्रदेश भी सम्मिलित
 जायेंगे किन्तु यह अभी खोज का विषय है। अतः किसी निश्चय के अभाव में
 हम दिल्ली को हरियाना की पूर्वी सीमा मानकर ही आगे बढ़ेंगे। डा० त्रियम्बक
 ने माँ दिल्ली के उन मुस्लिमों की राजा का जरा देसवाली चमार राजा
 हैं 'चमरवा' नाम दिया है और इसे नागड़, हरियाना के अन्तर्गत माना है।
 इससे यह विदित होता है कि दिल्ली हरियाने की पूर्वी सीमा पर स्थित है और
 यह इस प्रदेश का प्रमुख नगर है।

जैसा कि पीछे कहा भी गया है, 'अखण्ड प्रकाश' पुस्तक को आधार
 मानकर जिला हिसार की १८६३ की बन्दोबस्त रिपोर्ट में हरियाना (हरिवाण्यक)
 प्रदेश का पूर्वी और पश्चिमी सीमाएँ इस प्रकार निर्धारित की गई हैं—
 "प्राग् (समवत हवेला पालम) जिसके पूर्व में है, और कुरुम प्राग
 (पटियाला इलाके का कोहन ग्राम) जिसके पश्चिम में है, वह विशाल भूभाग
 हरिवाण्यक (हरियाणा) है।" इसी रिपोर्ट में एक स्थान पर हरियाना की
 सीमाएँ इस प्रकार दी गई हैं—“पूर्व में कुरु व बहादुरगढ़ (जिला
 रोहतक) और पश्चिम में अगरोहा व नूना (जिला हिसार), उत्तर में जींद व
 सफेरी इलाका, राजा आद व कोहन इलाका, राजा पटियाला और दक्षिण में
 दादरा इलाका, राजा जाल” राजस्थान के इतिहास के सफल मर्मज्ञ पृथ्वीसिंह
 का महता हरियाने का राजस्थान के उत्तर में मिरसा ने पालम तक फैला
 मानत है। उनका कहना है कि मिरसा से पालम तक उत्तर पूर्वी सीमा
 पर हरियाने का नागर राजा है। डा० त्रियम्बक ने अपने 'भाषासूत्र' में
 हरियाना, नागर व जाट राजा का मानचित्र देते हुए गुडगांव जिले के
 परागनास व बल्लभगढ़ स्थानों का भी उसमें सम्मिलित किया है। परन्तु
 ये स्थान भासा, स्थानान्तरण पर परागनास यदि कृष्णा भी दृष्टिकोण से
 हरियाना का भाग नहीं माने जा सकते। अतः हमारा स्थापना को इस दृष्टिकोण
 के परिभ्रमण पर आधारित है यह है कि हरियाने का पूर्वी सीमा पालम
 नगर, बहादुरगढ़ और दिल्ली का जूता है। कि नद जैसा 'हुजाना'
 का जूता हुए गार्दी पहुँचता है। जहाँ न गंधा भिन्नानी, हाती, हिसार
 नगर और मिरसा का आर आगे नकर आगगा होती हुई टें गगा पहुँच

जाता है। वहा से कैथल, करनाला, पानीपत होकर दिल्ली आ मिलती है।^१

बदोबस्त रिपोर्ट जिला हिसार में हरियाने की लम्बाई नहादुरगढ से अगरोहा तक पूर्व पश्चिम '६५ कोस' (१०४ मील) और चौड़ाई जींद ने दादरी तक उत्तर दक्षिण ५७ माल दी हुई है। इस आधार से हरियाना का क्षेत्रफल ५६२८ वर्गमील बैठता है, परन्तु भाषा के रूप और शैली के आधार पर हमने अपने भाषायी मानचित्र में जो हरियाना का भाषायी क्षेत्र स्थापित किया है, उसका क्षेत्रफल इससे कई गुना अधिक है।^२

इस विशाल प्रदेश के रोहतक, मेहम, हासी, दादरी, हिसार, जाँद, सफीदो, कैथल और नरवाना प्रधान नगर हैं। इनमें रोहतक, मेहम और जींद केन्द्रीय स्थान हैं।

यह सामान्य धारणा है कि 'बारह कोस पर पानी और जानी' बदल जाते हैं। यह बात अन्य बोलियाँ की भाँति हरियानी पर भी चरितार्थ हाती है। वहा भी लोकसाहित्य सम्रहकर्ता को स्थान स्थान की बोली में भिन्नता मिलेगी पर तु इस स्वाभाविक बदल के तानजूद भी एक छोर से दूसरे छोर तक वही उच्चारण (लहजा), क्रियाओं के वे ही रूप, विशेषण एवं क्रिया विशेषण बनाने की वही प्रक्रिया बराबर मिलती है। सामाजिक दशा, परम्परा, रीति रिवाज सब एक ही जैसे हैं। इस प्रदेश की जनता का सबसे अधिक भाग देसवासी जाटों से मिलकर बना है। इहीं लोगों की संस्कृति के दर्शन हरियाना संस्कृति के रूप में पाठक को मिलेंगे। याँ दूमरा जातिया भी पर्याप्त माना में हैं किन्तु प्रधानता जाट जाति की है।



आ हरियाणा लोकसाहित्य के विविध रूप

हरियाणा प्रदेश के लोकसाहित्य के सग्रह का काम हमने स्वयं किया है। इस सग्रह-कार्य में हमारी अपना याचना रही है और अपना दग। हमने इस बीर भूमि का चम्पा-चम्पा छाना है। इस प्रयास में हमने लोकसाहित्य रूपी गंगादक प्राप्ति के लिए हरियाणा प्रदेश का न काइ तीर्थ-स्थान छोड़ा है और न काइ घर। हमारे सामने इस कच्ची सामग्री की एक विपुल राशि पडा है। उसमें से रत्ना का चुनकर उनके मूल्यांकन एवं पारगणन का अवसर इस पुस्तक के द्वारा मिला है।

आगे बढ़ने से पूर्व यह कटना भी अनुचित न होगा कि पाठक को हरियाणा लोकसाहित्य का अध्ययन एवं अवलोकन करते समय चाहे मैथिली लोकसाहित्य जैसा मात्र, मोजपुरा लोकसाहित्य जैसा गाम्भीय, अबधी लोकसाहित्य जैसा अर्थ-गौरव, ब्रज-लोकसाहित्य जैसी सरसता और अथ बहुलता, गुजराता लोकसाहित्य जैसा मज्यता और राजस्थानी लोकसाहित्य जैसा लोच न मिले, परन्तु इन गुणा के आशिक आकलन में उसे निराश होना नहीं पड़ेगा। हरियाणा लोकसाहित्य में बीर प्रसन्न भूमि की शौर्यपूर्ण जनता की उस आत्मविना भावना के दर्शन होंगे, जो रूत हाने हुए रचिकर एवं आकषक है।

हरियाणा प्रकृति पटगना द्वारा उपक्षित वह प्रदेश है जहाँ न तो मिथिला प्रदेश जैसे गसा के मृगनुटा में छिपी गिलहरियों के प्रेमालप हैं, न अभिराम कुसुमाग्रान, न मुचिप्रित पशु-पक्षा हैं। न यहाँ भरभर करती बलखाती नदियाँ का अठ बेलियाँ, न घान से हरे भरे लहलहाते गेता की क्यारियाँ हैं और न यहाँ भाजपुर प्रदेश के न हारत भरित मैदान, न पिक कलकूजन को जाएत काने गाल रमान के रम्याराम, न सरस फल सम्पन्न पवत उपत्यकाएँ हैं। यहाँ गदवाल जैसी तुषाराच्छन्न पान श्रेणियाँ मा नहा हैं और न यहाँ हैं ब्रजभूमि के कलित कुञ्ज। रासनास्ताआ का मृदु पत्रमति भी यहाँ नहीं है। यह भूमि एक कमभूमि है। यहाँ का अभिप्रिय जातियों ने सदैव भारत माग्य चक्र को गतिमान किया है। यहाँ के कुञ्ज जैने धार्मिक क्षेत्र, पानीपत के चन्नों तम पैत हुए रणक्षेत्र, आज मा यहाँ की जनता का कन्य के लिए आडान करते रहते हैं। यहाँ के जनवायु में ऐसे तत्व विद्यमान हैं जो शक्ति एवं उत्साह देते हैं। यहाँ का अतिरिक्त जनता सग में अपने बुजबन पर

कमर बसे रही है। ऐसे प्रदेश में किस प्रकार का लोकसाहित्य मिलेगा, यह पाठक अगले पृष्ठों में भाककर देखेंगे।

आज तक लोकसाहित्य का सर्वांगीण एवं सर्वमान्य लक्षण दे, काइ विवेचक कृतकार्य एवं सत्य-सफल नहीं था है। अतः यहाँ लक्षण देने का आग्रह छोड़, प्राप्त लोकसाहित्य के विविध रूपों की जाँच-पड़ताल कर उसका विवेचन हम करेंगे।

(१) लोकसाहित्य के मूलतत्त्व

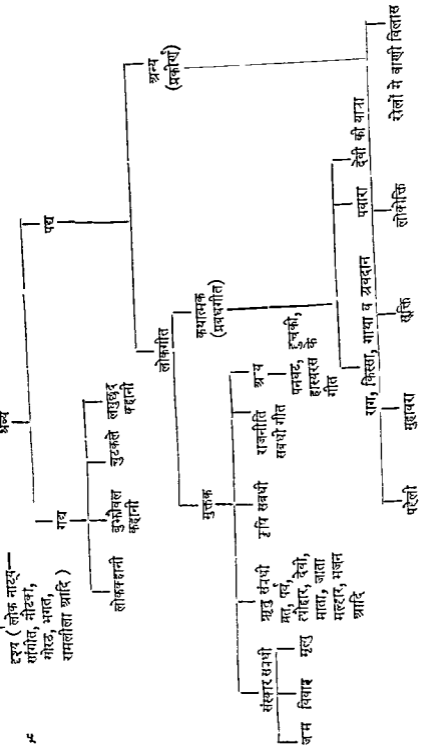
ग्रामीण लोगों की बोली में तो शीनकाफ से जड़ी सफ़ीह उर्दू होता है और न तो न तो सयुक्त पड़िताऊ संस्कृत। वे अपनी टूटी-फूटी, मीथो-सादी असंस्कृत बोली में सहज भाषा का जो स्वर-लहरी का रूप प्रदान करते हैं, वस वही सहज स्वाभाविक अभिव्यक्ति लोकसाहित्य की पदवी पा जाती है। इस साहित्य में जो तत्व मिलते हैं उनसे आधार पर हम इस निष्कर्ष पर पहुँचेंगे कि —

- १ लोकसाहित्य सतति परम्परा से चलता रहता है अथत् औलाद दर औलाद चलता है।
- २ लोकसाहित्य मनोरञ्जन, शिक्षा या ज्ञानवर्धन का सरल मार्ग है।
- ३ लोकसाहित्य लोक के संस्कार, ऋत पूजादि से सम्बन्धित है।
- ४ लोकसाहित्य ग्रामीण खेलों एवं वाक्प्रचार से सम्बन्धित है।
- ५ लोकसाहित्य में लोकजन मुलभ विश्वास, श्रद्धा आदि के लिए स्थान है।
- ६ लोकसाहित्य लोक भाषा में लिपटा रहता है और पूर्णरूप से लोक वातावरण से ओतप्रोत होता है।

इन बातों के गम्भीर विवेचना से पता चलता है कि लोकसाहित्य बड़ा उपयोगी है। यह हमारी राष्ट्रीय सम्पत्ति है। अतः इसका समुदायन के लिए राष्ट्र-यापी योजना होना चाहिए। हरियाने के लोकसाहित्य का क्षेत्र बड़ा विशाल है। उसने रूप निम्न हैं एवं अनेक प्रकार हैं। उनसे विभाजन का भी एक शौल्यो है। इन्हा मरवा हम आगे की पत्तियाँ में देखेंगे।

(२) हरियाणा लोकसाहित्य का वर्गीकरण

सबप्रथम, शास्त्रीय प्रणाली पर हरियाणा लोकसाहित्य का विभाजन कर हम निम्न प्रकार से उसका विस्तार प्रस्तुत कर सकते हैं —



विशेष आधारों इस प्रकार है —

अभिनयात्मक (दृश्य) लोकसाहित्य ने अतर्गत ग्रामीण राग, भगत, नौटकी और सोरठ आदि आते हैं। इन दृश्य रूपों के अभिनय के लिए किसान विशेष आडम्बर की आवश्यकता नहीं करते। वस, अभिनेता मडली, खुले मैदान में एक तरफ और साधारण से साज-आज की आवश्यकता है। इतने से ही ग्रामीण टकी का निमाण हो जाता है। नगाड़े में चोन पड़ते ही हरियानी ग्रामीण युवक सन उज्जर, टेरा साफा पहन, हाथ में लट्टे ले नगाड़े का अनुसरण करता हुआ चल पड़ता है। ऐसे मनोरंजन अवसर पर वृद्ध लोग भी दादा लखमी व ५० मागेराम का खेल देखने का लाभ अवसर नहा कर पाते और युवकों से भी आगे बैठे मिलते हैं।

अथ लोकसाहित्य के गद्य और पद्य दो भाग हैं। इनमें से कहानिया, चूटकले, बुभौल, लुत्तुद, कहानिया आदि सामान्यतया गद्य की वस्तुएँ हैं। पद्य के अतर्गत गीत (मुक्त व प्रबन्धात्मक), पहेलिया और मुक्तिया आदि गेय वस्तुएँ होती हैं। गीत—छोटे गीत और बड़े गीत—दो रूपों में विभक्त किये जा सकते हैं। छोटे गीत वे गीत हैं जो विभिन्न उत्सव, त्यौहार, विवाहादि शुभ कार्यों के अवसर पर गाय जाते हैं यथा—होनड (पुत्र व मने) लोरिया, माटा (विवाह के अवसर पर गाय जाने वाले गीत), जिकड़ी के गीत, गेला, दाता^१, देवी की यात्रा के छोटे छोटे भजन, महार (वर्षाकाल के गीत) तथा कार्तिक स्नान के गीत।

गद्य-पद्य के अतिरिक्त एक तीसरा विभाग 'मिश्र गीत' नाम से भी किया जा सकता है। लोकसाहित्य की इस विधा में वह सामग्री आयेगी जो बालक खेल खेलते समय-कुछ अर्थों में कहते हैं, शेष कुछ पद्य में। इसे हम छोटे गीतों में भी स्थान दे सकते हैं। ऐसे अवसरों पर उन गीत अर्थों में ही तो विशेषता है बाकी सब तो छूट है।

राग या प्रबन्धात्मक गाथाएँ भी गात ही हैं किन्तु अंतर इतना है कि गीत गेय-स्तन प्रधान होता है और आकार में लघु होता है। गाथा कथाप्रधान गान है और यह आकार में बड़ा होता है। कुछ गाथाएँ तो जैसे आल्हा, टाला मारू, निहालदे, गूगा का युद्ध, देवी की यात्रा इतनी विशाल हैं कि

^१ टोला घरो में महिलाएँ द्वारा भी गाया जाता है, जो आकार में कुछ छोटा होता है। किसी शुभ अवसर पर गीत समाप्त करत समय बियाँ टोला गाती हैं। 'टाला मारू' इससे भिन्न एक लोक प्रबंध है, जो आकार में बड़ा विशाल है।

गायक इनको पूरा गाने के लिए कई-कई मास का समय लेते हैं। राजस्थान में 'दाला मारू' का गाने के लिए दुलैया तीन-तीन मास लगा देते हैं। दाला गाने की एक विशेषता है। एक गायक पहिले गाता चलता है, फिर स्वैरान उसे श्रयाता है। इस प्रकार उसनी ब्याख्या हावी चलती है और गाने का विश्राम मिल जाता है। गीच-गीच में चिलम-तमासू का दौर भी आना बहुर्य होना है। एक गेटक में एक पड़ाव का समाप्त किया जाता है और दूसरे दिन दूसरे पड़ाव में प्रारम्भ करते हैं। इस प्रकार किन्न का निन्तार हो जाता है।

गाया ने अन्तर्गत विन गीतों की गणना की जाता है, वे हैं—अन्यान (एतिहासिक पुन्या के चरित्र का लम्ब चलने वाल किस्से) तथा अद् ऐतिहासिक अथवा काल्पनिक पुरुषों के चरित्र पर आधारित स्यातें, आल्बा, पवारा^१ आदि लोक-ग्रन्थ। देवी की यात्रा न गान भी उड़-उड़ गीत में ही स्थान पाते हैं। पुष्य शलाक सर आर० सी० टम्बल ने अथक परिश्रम में पञ्चान न पञ्च अनदान लेख-द मिलते हैं। इनन अतिरिक्त गहुत ने किन्ने अमी हरियाना की वृद्ध रचना न पाम है जा ईमिल लैने कमठ व्यन्त्रिया ने बरमान की प्रताप्ता न है। इन पत्तियां क लगन ने भी गहुत से किन्ने लेख-उद किये हैं जिनमें क ता नगीन हैं किन्तु गायनों न समोच तथा निरुधार मन न कारण बहूत-सी सामग्री हाथ न आ सरी है।

पहला, पय ने वे शानपूय गड है जिनन गल-जगत् की बुद्धि पर शान चन्दाइ जानी है। इन्हें बुभौवल भी कहत है। बुभौवल का अर्थ है जिज्ञासा। बुभौवल ने द्वारा दूसर सार्थी का शान-गठये का तलाशी ली जाती है। पहला को हरियानी चला में 'पाली' या 'गाहा' भी कहते हैं। पाली का तात्पर्य है वह प्रश्न जिन्ने पूछकर प्रश्ननवा तुरन्त उत्तर (फल) चाहता है। पाली कहने के लिए किसी श्रवसर-निशेष का आवश्यकता नहां। वस, दूसरे का बानकार की परीक्षा लेना हा ता पौरन पाला कद कर प्रश्न कर दीजिए।

^१ क पवारा (धीरगीत) धीर धीर शब्दों के साथ करण, अद्भुत और बीमन्म रम को लकर चलता है। हरियाना लोकसाहित्य में 'हर पूल जाट' एक प्रसिद्ध पवारा है। 'जगन्नेव का पवारा' तो हिंदी साक्यता की अपनी निरासी विभूति है। न ईलद को राजग्यानी में 'भ्याव' कहते हैं, यथा जयसिंह की म्याव। प्रसिद्ध राजाओं के नामों लिने जाते ये धीर बन प्रसिद्ध राजाधा की 'स्यातें' लिखी जाती थीं।

न स्लेट और पन्सिल की आवश्यकता है और न पपर तथा पेन का। यदि फाली या गाहा खुल गया तो वाह-वाह नहीं तो बध गये। डा० सत्येन्द्र ने पद्य का गीत और अगीत दो भागों में बाग है और अगीत के अन्तर्गत पहलियाँ, क्रमबद्ध कहानिया, परसाकले आदि रखे हैं।

सृक्तियां म ग्रामवासियों के शताब्दियों के अनुभवों का निचाइ एव सार भरा हाता ह। ये खेत क्यार ने मामले म तथा पशु पक्षी सम्बन्ध में यथोचित मार्ग-दर्शन कराती हैं और गुरु मन का काम देती हैं। घाघ और भड्डरी के नाम मे गहुन-सी सृक्तियाँ प्रसिद्ध हैं। इन सृक्तियां ने उस समय लोगों का अत्यधिक सहायता दी हागी जब कि देश में आज की भाँति अतरिक्त विज्ञान के केन्द्र न थे। यां ता आज भी इनका मूल्य कुछ कम नहीं है। इनमें बड़ी तथ्यपूर्ण एव रहस्यात्मक बातें भरी पड़ी हैं। दैनिक जीवन और उसम काम आने वाली बातों की गम्भीर जानकारां इनसे प्राप्त होती है।

ग्रामों म (लाक में) व्याप्त लोकसाहित्य का और कई प्रकार से भी बाटा जा सन्ता है। श्रीमती सोफिया वर्ग ने लोकजाता में अन्तधान होनेवाले लोक साहित्य की रूपरेखा इस प्रकार दी है — १ कहानिया, २ गीत, ३ कहावतें।

१ कहानिया—(क) वे जो सच्ची मानकर कही जाती हैं।

(ख) जो मनोरजन के लिए कही जाती हैं।

२ गीत तथा गाथायें (पैलेडम्)

३ कहावतें—तुक्कद कहावतें, स्थानीय कहावत तथा बुभौवल।^१

वन का उक्त विभाजन जाहरी नापजोय मात्र ही देता है और एक साधारण सी रूपरेखा प्रस्तुत करता है। किन्ती स्थार विशेष के लोकसाहित्य का पूरी परत क लिए यह विभाजन अपूर्ण ही रहेगा, पर इससे पृष्ठभूमि अवश्य तैयार हो जाती है।

हरियाना प्रदेश से नगरीत सामग्री के आधार पर हमने उसका विभाजन इस प्रकार किया है —

क गीत—^२ लघुगीत -- लोकसाहित्य में गीतां की ही प्रधानता है और गीत हां लोक साहित्य की अनुप्राणिका शक्ति है। हरियाना गीतों का विस्तृत वर्णन एव मूल्यांकन इस

१ वन हैं मुकु आर पीकलोर, पृष्ठ ४ तथा डा० सत्येन्द्र, मनलोक साहित्य का अध्ययन, पृष्ठ ७।

पुस्तक के तृतीय अध्याय में मिलेगा। वहाँ पर सभी प्रकार के गीतों की परत की गयी है।

२ प्रबन्ध-गीत—वे उड़े-बड़े गीत हैं जिनमें कथानक मुख्य होता है और वीरता, साहस या रोमांच का अभिन्न अंग होता है। इनमें मयूर पत्र प्रबल रहता है। हरियाना में राग रसालू और शीलादे का अंगान (किन्ना) सुनिश्चित है। रागा या चारुपीर राग की वीर-जनता व वीर-रसास का इष्टदेव है और 'निदाल' यहाँ का एक रोमांचकारी राग (किन्ना) है।

३ कथा—ये लोक कहानियाँ हैं जो बच्चे, बूढ़े और जवानों का एक समान मनोरञ्जन करती हैं। हरियाना का लोक मानत कथा के दृष्टिकोण में बड़ा संपन्न है। कहानी वह रोचक-साहित्य है जिसका शिशु के मन पर एकाधिकार है। शिशु ने इनके साथ परिचय पायी नानी की गोरी से ही प्राप्त किया है।

४ सांगीत—दस भाग में हरियाना के प्रमुख संगीत आते हैं जिनमें सामाजिक एवं धार्मिक चित्र बड़ी सुन्दरता में उभरे हैं।

५ प्रकाश—हरियाना प्रदेश में उस साहित्य का भी पलायन प्रचार है जो उपरोक्त विधाओं से जाहर पड़ता है जिसमें शिशुओं का वाग्मन-रसास पहलिया, सूचना और लघु छन्द कानिया (डाल्य) आदि मुख्य हैं।

उक्त विभाग का हम दूसरे शब्दों में लघु गीत, वृहद्गीत, सांगीत, अंगान एवं कथा का नाम देकर भी लिखना सकते हैं। डा० कृष्णदेव उपाध्याय ने मन्त्रपुरी लोकसाहित्य को इस प्रकार वर्गीकृत किया है—
१ लोकगायन २ लोक-गाथा, ३ लोक-कथा, ४ प्रकीर्ण।

आभन के आधार पर हरियाना के लोकसाहित्य का तीन बड़े विभागों में बाग का सकता है—
१—बाल लोकसाहित्य, २—युवक लोकसाहित्य, ३—वृद्ध लोकसाहित्य।

बाल लोकसाहित्य में आदि-बड़े अष्टमन-वचन, वदा माना आदि न लक्ष्य के वचन प्रयोग तथा पञ्चलिपा और बुन्दैरल तक का साहित्य सम्मिलित है। मनोरञ्जन कहानियाँ भी बाल-साहित्य का ही अंग जैगी। बाल्य में लाल लोकसाहित्य में वह सभी आ जाता है जिनके द्वारा अभि-मानक अरन अन्वय शिशु के ज्ञान-जागृता का परिचय तथा अंग करणता

है। चाहे वह पद्यबद्ध एव ताल लययुक्त हो, चाहे कोरी गद्य की शैली में कहा गया हो। बाल-साहित्य में खेल के गीता का, मनोरञ्जक कहानियाँ का और फाली का विशेष स्थान है।

युवक लोकसाहित्य में वह समस्त साहित्य आजायेगा जो यौवन की रगरेलियों एव अठखेलियों से पूर्ण है। इस लोकसाहित्य का पट वीर, शृङ्गार, करुण एव त्याग के विविध रंगों से अलङ्कृत है। वियोग-सयाग की सरस भाकिया इस साहित्य का विषय है। साग, नौटकी, पवारे, आल्हा, अचदान, सतौत्व के प्रहरी चन्द्रावल आदि गीत इसकी परिधि में समा जाते हैं। युवक लोकसाहित्य समस्त लोकसाहित्य का एक प्रमुख अंग है। जीवन का वैविध्य इसमें आप्यन्त परिलक्षित होता है। प० रामनरेश त्रिपाठी की 'नौजवानों का लोकसाहित्य' की व्याख्या करते हुए लिखते हैं कि "नौजवानों के कठ में जगनी की उमग को बगाने वाले प्रेम और शृंगार रस के गीत, पूर्वजा के सच्चे अनुभवों को बतलाने वाला नीति की कान्तें, स्वास्थ्य के लिए चुटकले और धनापार्जन के लिए सेती की कहावतें आदि शान-चर्दक पाठ सदा मौजूद रहते हैं।"

वृद्ध लोकसाहित्य में जीवन मध्या की वह शांति, पावनता एव निस्तब्धता भरी मलती है जो स्वतः स्पष्ट एव व्यक्त है। जीवन तथा जगत् का सुतोपभाग करने के पश्चात् आत्मानन्द प्राप्ति की जो अभिलाषा प्राणी को होती है वह समष्टिरूपेण वृद्ध लोकसाहित्य में व्यक्त मिलेगी। इसने विषय हैं—भजन, हरजस, तथा महात्यागी गोपीचन्द, भर्तृहरि आदि के उदात्त चरित्र का गान एव भक्त पूरनमल की लामोत्तर सदाचारिता की महिमा। घर घर अलक्ष (अलक्ष) जगाने वाले भिखमगे, इकतार पर भजन गाने वाले जागी तथा चिमग बजाकर जनता का ध्यान आकर्षित करने वाले माधु पदार इस साहित्य के प्रचारक हैं। वृद्ध साहित्य का प्रमुख रस शांत है। इद्रिया शांत, आत्माशांत, बस शेष है मनस् का उपशांति और नित्यश के प्रचार से यह भी पूरी हो जाती है।

लिंग-भेद के आधार पर भी लोकसाहित्य का वर्गीकरण किया जा सकता है। इस प्रकार इसने तीन उप-विभाग हान —

१ पुरुषों का लोकसाहित्य, २ महिलाओं का लोकसाहित्य, ३ बालकों का लोकसाहित्य। इसका विस्तार वृद्ध द्वारा इसका भक्ति समझा जा सकता है --

लोकसाहित्य

पुरुषों का लोकसाहित्य
राग रागनी, किन्हे,
वीर, शृङ्गार, रहस्य,
रामान्त का बड़ी
कथाएँ, बुझावल,
लोकलिया, आल्हा,
पवार शीरठ, साग
आदि ।

महिलाओं का साहित्य
समा धरेलू गीत,
जमविवाद, प्रत,
ल्यौहार आदि क,
वन उपवास आदि
की कथाएँ, हर-जम,
दाना आदि गीत ।

बच्चों का साहित्य

बालकाओं का साहित्य	बालकाओं का साहित्य
भाजा गीत, अन्य छंदों छाट गीत का मनोरञ्जक होते हैं और किसी ल्यौहार न सम्बन्धित होते हैं, बच्चों का लघु छन्दों का निर्माण आदि ।	दमू गीत, खेल में बाँपा विन्मर और छुगी-छुगी कानिया

१ पुरुषों के लोकसाहित्य में वह समस्त सामग्री शामिल है जो अपनी शक्तियों में सरसने को मिला है और समाज के बृद्ध गायक ने संगीत, इच्छाओं अथवा विमर्श बना कर जो प्रसारित की है ।

पुरुषों के गीतों—राग रागनियों—में अधिकतर वारता और नाति के भाव होते हैं । किसी रागनियों में—विशेषकर हरियाने के सुबक की रागनियाँ—रिचरों के प्रातः पार आकराने विश्वास पड़ता है । उनमें शृङ्गार रस छनछनाना है ।

पुरुष लोकसाहित्य में स्त्री लोकसाहित्य ने एक पाथक्य स्वरूप मिलता है । पुरुष न लघु गीतों को अर्थ नहीं दिया है । पुरुष पत्र के अनुष्ठान प्राप्ति का बहुत ही काय पुरहित शास्त्राय विधि से करा देता है । इस अनुरोध महाराजों का अपना पत्र समय गीत गा-भाकर ही पूरा करना पड़ता है । इसी से स्त्री के इतने व्यक्त हो गए हैं जितना पुरुष मानव जगत् । स्त्री प्रकृति के लिए जीवन का कई पक्ष अप्रत्यक्ष नहीं है । पुरुष लोकसाहित्य का सामर्थ्य—लोक प्रवच (लोक गीतों), वीरता और साहस का कल्पित शक्ति, आदर्श वीर, शृङ्गाररसपूर्ण शृद्ध गीतों का सृजन है । वृद्धावस्था के

आगमन पर भजन, हरजस, भक्ति के पद आदि पुरुषों के कथाभरण बन जाते हैं।

२ स्त्री लोकसाहित्य में गीता की प्रबलता है क्योंकि पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों ने अपने कामों में गीता की सहायता अधिक ली है। स्त्री-जगत् के गीत जीवन की प्रत्येक अवस्था का वर्णन करते हैं। इन गीतों में गुड्डे गुड्डियों की सृष्टि के मालमुलम गीता से लेकर, प्रिय प्रियाग तक के मार्मिक गीता तक का समावेश है। इस प्रकार न ही न हो उच्चिया उचपन से ही घर गृहस्थी व रहस्या की जानकारा कर लेती हैं। किस प्रकार मधुर व्यञ्जहार कथा का गृहरानी अथवा गृहलक्ष्मी बना देता है? किस प्रकार मधू सास समुर'की नाडला बन जाती है आदि ज्ञाते कन्याएँ सुन्दर व सरल रीति से इन गीतों द्वारा सीख लेती हैं।

स्त्रियों के लोकगीतों में प्रायः शृंगार और करुण रस ही प्रमुख मिलते हैं। परन्तु इन गीतों के विश्लेषण से यह आश्चर्यजनक तत्त्व एक अध्येता को अवश्य मिलता है कि ये गीत सास के जीवन को स्पष्ट करके ही चुप हो जाते हैं और उससे आगे नहीं बढ़ते माना सासपन ही स्त्री-जीवन की चरम परिणति है। स्त्री गीता में त्याग और वैराग्य भावना की राज तो एक दुराशामान है।

३ बच्चों के लोकसाहित्य में शिशु की कावली से प्रारम्भ होकर वयस्कता की छटा भरी मिलती है। यह वह साहित्य है जिसमें हृदय का निश्चल प्रदर्शन होना है।

अभी तक हमने लोकसाहित्य के वर्गीकरण की शैलियाँ के बारे में बतलाया है। अब हम हरियाना प्रदेश के लोकसाहित्य के विविध रूपों की परिगणना नीचे की पंक्तियों में कुछ विस्तार से करेंगे —

१ हरियानी लोकगीत

लोकगीता में वे सभी गीत समाविष्ट हैं जो भिन्न भिन्न अवसरों पर घरों में, कुर्चा पर और बावड़िया पर एत एत पल्लिआन में गाये जाते हैं। लोक साहित्य का यह वह अंश है जो कलात्मक दृष्टि से सभ्रान्त है। कहीं-कहीं तो ये गीत शिष्ट कविता के भाँकान काटते दिखाई पड़ते हैं। रतिगापन का यह कलापूर्ण उदाहरण किस साहित्य ममज्ञ को आश्चर्य सागर में नहा हुआ देगा।

गोरा सड़ मान की कहीं गइ, काइ कहीं लगाइ सारा रात,

ए री बनजारा, नगल बनजारा, टांग मेरिये।

राजा बने नेरु के रतजगा, को ए घड़ीं गवाड़े सारी रात,
 ए री बनजारा, नवल बनजारा, टाटा गेरिये ।
 गोरी ना तेरे हातन महदा रच रहे, को ए नाते रे नैना नौंर,
 ए री बनजारा, नवल बनजारा, टाटा गेरिये ।
 राजा महदा की विरियाँ मो गड, को ए न्यू ना नैना नौंर,
 ए री बनजारा, नवल बनजारा, टाटा गेरिये ।
 गोरा कालजा तेरा घडक रह्या, को ए पैर रहे थराय,
 ए री बनजारा, नवल बनजारा टाटा गेरिये ।
 राजा नाचत कालजा घडक रह्या, को ए पैर रहे थराय,
 ए री बनजारा, नवल बनजारा, टाटा गेरिये ।

इसी प्रकार का एक मे एक निराना मूक इन गीतों के आचल में पाठक को मिलगा ।

हरियाने में नितने प्रकार के गीत उपलब्ध हुए हैं उनकी समष्टि पर विचार करके हम उन्हें पहिले दो भागों में बांटते हैं — अ गीत (लघु गीत), आ प्रभाव गीत । इन गीतों का सम्बन्ध बहुत अधिक है । छोटे गीतों के अध्ययन के लिए हम ऊँह निम्नप्रकार में बांट सकते हैं —

१ सत्कार-सम्बन्धी गीत —

- क पुत्र-बन के सम्बन्ध में गाये जानेवाले गीत ।
- ख विवाह के समय गाये जानेवाले गीत ।
- ग मृत्यु समय गाये जानेवाले गीत ।

२ श्रुतु-गीत —

- ख तीर्थ, व्रत, परस्त्रोहार, देवा माता जाता आदि अवसरों के गीत ।
- ग सावन और फागन में गाये जानेवाले मल्हार आदि गीत ।

३ इतिहास — जैन, गौ, खेती (इन्क, कनास) वारा आदि में समर्पित गीत ।

४ राजनीति सम्बन्धी गीत — राजनैतिक प्रभाव के गीत ।

५ प्रत्येक गीत — बचे-बुचे गान ।

अ लघु गीत

१ सत्कार-सम्बन्धी गीत —

क पुत्र-बन के गीत — प्रत्येक प्रकार के प्रसन्न विरोधता है । हम अक्सर पर समस्त प्रकृति में एक विशेष उल्लास होता है, किन्तु हम

हरियानी लोकसाहित्य में इस अवसर को शुभाशुभ भावों से समन्वित पाते हैं। यहाँ पर पुत्र-जन्म के अवसर पर जो आनन्द उत्साह मनाया जाता है वह कन्या जन्म पर नहीं। इसके विपरीत कन्या-जन्म पर शोक का वातावरण छा जाता है और गीत आदि नहीं गाये जाते। पुत्र-जन्म पर अनेक प्रकार के गीत गाये जाते हैं। उनमें से कुछ इस प्रकार हैं—पिआइ, त्रै (वैमाता), स्यावट (सोभर), दाद, पालने के गीत, छठी, पीला, जच्चा आदि।

ख विवाह के गीत—सगाइ के गीत, लगन, हल्दी, तेल, बनडा, बनड़ी, घोड़ी, फेरा के गीत, गारी, कन्या की विदायगी के गीत। इसी अवसर पर 'भात' नाम के गीत भी गाये जाते हैं।

ग मृत्यु स्मरण पर भी शोकपूर्ण गीत गाये जाते हैं।

२ ऋतु गीत —

क देवी देवता तीज-त्यौहार सम्बन्धी गीत—महादेव जी, माता (शीतला माता), भैरा, सेदलमाता, हनुमान, पंचपीर, जहारपीर आदि के। इनमें से कई गीत रतजने के समय विशेष रूप से गाये जाते हैं। मागलिक अवसरों पर भी गीत गाने की प्रथा है। तीज गणगौर, होली, नगरकोट की यात्रा के गीत, पिंडारा की यात्रा के गीत, सिद्ध पुरुषों के गीत—गूगा, पंचपीर, भूमिया आदि के।

ख ऋतुआ के साम्मण, कार्तिक, होली, बारहमासा आदि के गीत।

३ कृषि-गीत—खेती, किसान और बैल गऊ आदि के गीत।

४ राजनैतिक गीत—देश प्रेम व गीत, युद्ध में भरती हाने के गीत आदि।

५. अन्य गीत—इस विभाग में शेष सभी बचे खुचे गीत आ जाते हैं—

१ पण्डिहारी के गीत—पण्डिहारी, कुआ, सरवर आदि के।

२ टुचकी गीत।

३ चरन और चाका पर भा जड़े भावात्मक गीत गाये जाते हैं। इधर हरियाने की वयस्काएँ चरना कातती हुई गीत गाती हैं—
“उड जा रे कामा औंधू तेरे लाग, जैए ता जण भ्रार तप के।”
आदि।

४ परभाती—भजन, हरजस, कृष्णलीला और रामायण सम्बन्धी पद जा शातरस से आत प्रोत हाते हैं।

५ धमालें—धमाल विशयकर फाल्गुन में गाइ जाता हैं। इनमें धार भृगार और शात रस दोना आ जाते हैं। जैसा समय

और जैसी अवस्था का गाने-वाला अथवा सुनने वाला होना है उसी के अनुसार घमाल का गान छिद्र जाता है।

- ६ हास्यरस — व्यंग गीत, छोटा, पति, खटमल आदि पर बने गीत।
- ७ नाट्य गीत — जिन्हें नियागात भा कहा जाता है और मनम हटाया सा अभिनय भी रहता है। वास्तव में अभिनयात्मक पक्ष ही इनमें प्रधान होता है। इनमें बिना ये निष्प्राण हो जाते हैं।
- ८ जिकड़ी के मचन व गीत — इनमें सार्थक एवं निरपेक्ष भावनाएँ एक स्थान पर निबद्ध होती हैं। इन्हीं आशय में इन्हें चकड़ा या जिकड़ी के भजन कहते हैं। ये आकाश में उड़ते हैं।

आ प्रबन्ध-गीत

हरिवाना में प्रबन्ध-गीतों की संख्या बहुत अधिक है। ये आकार में बड़े होते हैं और इनमें इतिहासात्मक तत्त्व प्रधान होता है। वैसे ऐसे मा प्रबन्ध गीत हैं, जिनमें ऐतिहासिक पुरुष को छोड़कर अनैतिहासिक पुरुष का आशय लिया गया जाता है। इन गानों में राजा रिसालू, गूगा, गागाचंद, मक पूजनल, निहालदे, रामकिशन गागल, जसपत, इगडूल और आल्हा आदि मुख्य हैं।

२ लोक कथा

लोमसाहित्य में लोक-गाता की प्रधानता होती है और पाठक का मन अधिकाधिक गीत-साहित्य में ही रस लेता है, परन्तु इतना जाने पर भी समस्त वाङ्मय की बननी क्या हो जाता है। चाहे उस कथा में कोई आश्चर्य व्यक्त हुआ हो, चाहे कोई पराक्रमपूर्ण कृत्य का रोमांचकारी वर्णन रहा हो, प्रथम किसी पशु-पक्षी का आशय लेकर वर्णन की कोई पहली सुलभाई गई हो किन्तु इतना निश्चित है कि कथा ही लोक अभिव्यक्ति की मध्यम बन गई है। गम्भीर विवेचन द्वारा जेने ता रं मद्ब हो शत्रु हो जायगा कि गीत आ पत्र गाथाएँ भी अपने मूल रूप में कहानियों या कथानों में प्रयोग हो गई हैं। इन कहानियों अथवा प्रसंगों का लोकप्रतिमा में छद्म, लय या पुष्टि किंवा ही प्रा- वे हो गीत और गाथा बन गई हैं। रहा विविध या प्रसंग लोक साहित्य, उसमें भी अलगाव-व्यक्त कथानों का ही दृष्टिगोचर होता है। सुनने वाला

कानियों ने सारभूत परिणाम हैं ही। गीत कथाओं में एक सूक्ष्म सी कहानी कह कर ही शेष भाग को गीत रूप में रना जाता है। अतः हमें यह मानने में को-प्रपत्ति नहीं होनी चाहिए कि कहानी ही लोकसाहित्य, क्या शिष्ट साहित्य की भी उत्पत्तिका शक्ति है।

हरियाने में लोककथाएँ प्रचुर मात्रा में मिलती हैं। ये कथाएँ लोक जीवन में व्याप्त हैं। इनके कहनेवाले भी अनेक समुदाय हैं। वृद्धाएँ बच्चों का क्या सुनाकर रात्रि में उनका मन-रहलाव किया करती हैं। वृद्ध किमान चौपाल पर या ग्वाड़ में पूर पर बैठे हुए आना प्रकार की सुन्दर कहानियाँ कहता सुनता है। बालक अपनी मित्र मडली में कहानी कहने हैं और स्त्रियों अतः पत्र पर कहानियाँ कता हैं। कई व्रत ता ऐसे हैं जो तद्विषयक कहानी सुनकर ही समाप्त होते हैं। अतः हम हरियानी लोककहानियाँ के कई प्रकार मिलते हैं —

क मनोरचनात्मक कहानियाँ — जैसे तो लोककहानियाँ में उपदेश और मनोरजन का ऐसे तत्व हैं जो अनाधिक परिमाण में सभी कहानियाँ में मिलते हैं किन्तु फिर भी कुछ कहानियाँ ऐसी हैं जिनमें मनोरजन तत्व की प्रधानता है। इनमें आश्चर्यजनक बातें रहती हैं यथा, परियों की कहानियाँ, दाने आदि की कहानियाँ, आदि।

ख उपदेशात्मक कहानियाँ — इनमें तत्रस्थान या पशु-पक्षी सम्बन्ध कहानियाँ आती हैं।

ग साहस एवं शौर्यपूर्ण कहानियाँ — हरियाने में इन कहानियों की संख्या बहुत अधिक है। इन कहानियों को 'जान जोखा की कहानी' भी कहते हैं। इनमें बुद्धि चातुर्य के साथ जान का हथेला पर रखने का साहस प्रदर्शित किया जाता है। इन कहानियों में भूत, डायन, और दाने आदि पात्र होते हैं। इनका उद्देश्य श्रान्ताओं में साहस एवं शौर्य भावना भरना होता है। घोर आपत्काल में भय तथा घबड़ाने से नहीं, रोदन एवं विलाप से नहीं अपितु अत्यन्त साहस से काम चलता है। ये कहानियाँ बच्चों के लिए नहीं होती। बुढ़का एवं जागरण पुष्पा के स्नायुजाल में अोज-संचार करना इनका काम होता है।

घ सुम्हावक कहानियाँ — सुम्हावक के कहानियाँ हैं जिनमें बड़े चातुर्य व रात पृच्छा जाता है। ये बड़ी रोचक, मनोरंजक एवं शान्तवर्धक कहानियाँ होती हैं। हरियाने में सुम्हावक के दो रूप मिलते हैं। एक—पहलाना, दूसरा—कानी का।

द ट्रेज विषयक कहानियाँ — इनमें किसी धार्मिक देवता का करतब दिखाया गया होता है। 'शिव पायता' की कहानी में पायता की उल्टा-ता दिखाइ गई है। वह शिव को विवश करता है किसी गृहस्थ का सकट हरने के लिए। शिव जा रात टालते हैं। अधिक आग्रह पर शिव सकट दूर करते हैं और दशन देकर अन्नधान हा जाते हैं। इस प्रकार का असख्य कहानियाँ यहाँ मिलता है।

घ व्रतात्मक या त्वाँहार विषयक कहानियाँ — ये वे कहानियाँ हैं ज व्रत या त्वाँहार के मूल और मूल्य पर प्रकाश डालती हैं। इनमें न रहुत-सा व्रत तथा त्वाँहारा का अग्र वन गई है। ये कहानियाँ हिन्दी में विशेषकर प्रचलित हैं। कइ व्रत ता कहानियों सुनने के उपरान्त हा समाप्त होते हैं। यथा, करवा चौथ तथा अहाइ-आठों का व्रत तद्विषयक कहाना सुनकर हा समाप्त हाता है। ऐसी ही प्रवृत्ति शनिश्चर व व्रत व सम्बन्ध में भी है।

छ विरसास सखी कहानियाँ — इनमें अधविरसास का अर्थ काम करता है। कइ स्थानों पर प्रवृत्ति के क्रिया व्यापार का रहस्य जानने के लिए कहानियों कहा जाता है। यथा, गौदड क्या राने है अथवा हरियाने में नया कृत्राँ राने समय हतुमान मटा क्या बनाइ चाती है, आदि।

ज पयवड अथवा छवु छुन्द कहानियाँ — ये कहानियाँ पयात्मकता लिए हाता है, यथा, हरियाने का 'रसमी और कीर' की कहानी। ये बहुधा दन्वा में प्रचलित हाता है।

चतुर्थ अध्याय में हमने हरियाना लोककहानिया के सभी में प्रभवा का पान का है और उनका विश्लेषणात्मक अध्ययन किया है।

३ अभिनयान्मक लोकसाहित्य

साग, नाटक, सारठ आदि साहित्य का यहाँ बहुत अधिक प्रचार है। मग के मूल का श्राव करना वास्तव में बडा कठिन है। किन्तु इतना ता कहा है का सकता है कि साग हरियाने में आकर मन्द हूआ है। हरियाने का साग अपना एक विशेषता रगता है। यह बडा प्रभावशाला है। सागियों क तप्यरूप उदियाँ साने में सुनने का काम करता है। हरियाने क साग उत्तर प्रदेश और राजस्थान में दूर-दूर तक पुनाय जाते हैं। इनमें वापचन्, लाना माग और घननन के साग बड प्रसिद्ध और शिक्षाप्रद हाते हैं। आइए अग्रथ इनमें यान प्पाल (Sex appeal) कता जाता है ता सागियों

४ प्रकीर्ण लोकसाहित्य

क बालकों के वाक् प्रचार —इसमें वे समस्त तुक्कदियाँ आयेंगी जो बालकों के मनोरजनार्थ दूसरे लोग कहते हैं अथवा बालक स्वयं खेल खेलते समय प्रयोग में लाते हैं। ये निरर्थक एवं सार्थक दोनों प्रकार की होती हैं। यथा—अटकन, उटकन आदि।

ख पहेलियाँ —हरियाने में इनको, 'पाली' कहते हैं। इनमें पूर्व पक्ष प्रतापर उत्तर पक्ष की आकांक्षा रहती है कहा-कहा तो गम्भीर समस्या ही रस प्री जाती है। 'गाहा, इनका दूसरा नाम है। यथा—

मासू की मैं सीसू लागू सुसरे की मैं मा।

मग पीय की दादी लागू इसका अर्थ प्रता ॥

कैसी विधमानस्या में पाठक पड़ जाता है

ग कहावतें और लोकोक्तियाँ —ये शाश्वत 'नाविक के तीर' हैं जो देगने में छूटे लगते हैं मगर गम्भीर घाव करने वाले हैं। हरियाने में अनेक सारगर्भित लोकोक्तियाँ मिलती हैं जो इस राज्या की समृद्धि को प्रमाणित करता हैं।

घ मुहावरे —मुहावरा उस सुगठित लघुपद समूह को कहते हैं किसी साधारण अर्थ के बजाय विशिष्ट अर्थ की प्रतीति होता है।

छ मुक्तियाँ —घाघ और भड्डरी की शानोक्तियाँ हैं।

द्वितीय अध्याय
हरियानी नोली ढा अध्ययन

१ भाषा-विज्ञान की दृष्टि से

पूर्व पीठिका

प्रथम अध्याय में हमने हरियाणा प्रदेश के साक्षर इतिहास का सिद्धावलाकन किया है। उसके लोकसाहित्य का सर्वांगीण अध्ययन हमारा मुख्य लक्ष्य है। परन्तु हरियाणा प्रदेशीय लोकसाहित्य के बीहड़ एवं अद्यावधि उपेक्षित बन प्राप्त में प्रवेश करने से पूर्व यह अनुपयुक्त न होगा कि उस बोली से परिचय प्राप्त कर लिया जाये जिस बोली की यह थाती है। अतः हमें यहाँ निम्नलिखित प्रश्नों पर संक्षेप में कुछ गहराई के साथ विचार करना होगा— भारतीय भाषाओं में हरियानी का स्थान, नामकरण, क्षेत्र विस्तार, तथा सामान्य एवं स्थूल व्याकरण आदि।

भाषा के अध्ययन से हम एक बात अच्छी तरह देखने को मिलती है कि बोली और लेखनी की दौड़ में लेखनी कदापि बोली के साथ कदम से कदम मिलाकर नहीं चल सकी है। बोली का स्वतन्त्र प्रसार और विकास हुआ है और लेखनी बोली का भाषा का रूप दे उसे पगु बना देती रही है। यह सत्य है कि लेखनी का प्रसाद जिस भाषा को मिला वम, उसनी प्रगति रुक गई, उसका विकास घोमा हो गया। उसे साहित्य की गद्दी (सिद्धान्त) अवश्य मिली परन्तु उसकी अनुप्राणिका शक्ति क्षीण हो गई। इस दृष्टि से जब हम मध्यदेशीय भाषाओं पर विचार करते हैं तो भाषा-विज्ञान की खोज इस ओर स्पष्ट संकेत करती है कि विक्रम की नवमी-दशमी शताब्दी में अपभ्रंश भाषाएँ साहित्य की सुगन्धशय्या पर निद्रा निमीलित हो रही थीं और बाल-चाल की भाषाएँ अपने-अपने जनपदों में स्वतन्त्र रूप से विकास प्राप्त कर रही थीं। अपभ्रंश भाषा से अलग हटती हुई बोलियाँ का यह स्वतन्त्र विकास ही हमारी आधुनिक आय बोलियों का आधार है। हिन्दी इस प्रकार मध्यदेश की विकसित बोलियाँ के समुदाय का नाम है।

मध्यदेश की शौरसेनी अपभ्रंश से विकसित पाँच बोलियाँ—रङ्गी बोली (कीरती), हरियाणा, ब्रज, कन्नोजा और बुंदेला पश्चिमी हिन्दी के नाम से पुकारी गई हैं। अक्षमागधी अपभ्रंश की तीन बोलियाँ—अवधो, बबेली और छत्तासगढ़ी—पूर्वी हिन्दी के नाम से 'भाषा सर्वे' में दी गई हैं। हमारी आलाप्य बाला हरियानी पश्चिमी हिन्दी की सबसे पश्चिमी बाली है।

डा० धीरेन्द्र जी वमा ने इस बोली को 'सरहदी' नाम से पुकारा है।^१ सरहदी से तात्पर्य म प्रदेशाय भाषा बंगलिया की पश्चिमी हृद की (सीमा को) बोली से है। यह एक विकृत प्रदेश की बोली है। इसका क्षेत्र दिल्ली, करनाल, रोहतक, हिसार, गुणगाव^२ जिला और पड़ोस के पटियाला, नाभा और जींद रियासतों के गाँवों में फैला पड़ा है।

उपरोक्त विवरण से यह ता-स्पष्ट हो गया है कि हरियानी बोली भारतीय आर्य भाषाओं की एक प्रमुख बोली है। इस बोली को किसी साहित्य महारथी की लेखनी का प्रसाद नहीं प्राप्त हुआ है, अतः इसके प्राचीनतम रूपा की खोज करना कठिन है। इसमें आज का साहित्य उपलब्ध है वह केवल गीत (घरेलू गीत), लोककथाएँ, अथवादान (साके) तथा लोकोक्ति आदि हैं। इस बोली में मुहावरों की एक अपनी विशेषता है जो आता का एक साथ अपनी ओर आकर्षित कर लेती है। इस बोली के मुहावरे बड़े सम्पन्न एवं अर्थगाम्भीर्य पूर्ण हैं। यथास्थान इनका वर्णन दिया गया है। लगभग पिछले २०,४० वर्षों से कुछ 'सागीत' की कितनी आवश्यक इस बोली में लिखी मिलती हैं जिनमें भी बोली का शुद्ध रूप नहीं आ पाया है। उर्दू फारसी के विदेशी शब्द जो जनमानस में अपनी पैठ नहीं कर पाये हैं, पर्याप्त मात्रा में इन सागीत पुस्तकों में मिलते हैं। स्वतंत्रता आन्दोलन को लेकर लिखे गये बहुत से नाटक भी मिले हैं जिनमें शास्त्री तारादत्त (हिसार) का 'ग्राम सुधार' नामक नाटक हरियानी बोली का एक सुन्दर उदाहरण प्रस्तुत करता है। आर्य समाजी दम पर लिखे गये 'भजन' भी भजनांक मढलियाँ के अलावा भट्टने का मिले हैं परन्तु इनमें विशुद्ध हरियानी बोली न होकर उर्दू अंग्रेजी के साथ हरियानी की लिचड़ी पकाई गई है। फिर भी सागीत, भजनों के साथ नाटक रचयिताओं की यह त्रिकसमान् बोली भाषा विज्ञान के विद्यार्थियों के लिए अध्ययन की खासी सामग्री जुगती है।

हरियानी बोली में भज, अथवा, मंथिली, गगला और भोजपुरी की वह सरसता एवं मधुरता भले ही न मिले परन्तु इस बोली का स्वर के उच्चारण की दीर्घता एवं फैलाव (Broadness) इसकी अपनी वस्तु है और अथवा श

१ डा० धीरेन्द्र वमा 'ग्रामीण हिन्दी' नवीन संशोधित संस्करण, १९५० का परिचय भाग पृष्ठ १६।

२ जिला गुडगाँव के उस भाग में हरियानी बोली जाती है जो पालम रेलवे स्टेशन से लेकर गुडगाँव के पश्चिम में पड़ा है और जिसमें दशवाली जात बसे हैं।

इसकी विशेषता कही जायेगी। हरियाना प्रदेश की शक्ति सम्पन्न जातियाँ का बलिष्ठ उच्चारण उनकी बाणी के प्रत्येक स्वर और व्यंजन से पूरा पड़ता है जो अपनी कर्कशता में भी आकर्षक एवं दीर्घता में भी मधुर है। आगे का विश्लेषण इस बात को स्पष्ट कर देगा कि इस बोली में कई ज्वनिया बड़ी प्राचीन हैं और कई अश एने हैं जिनमें अपभ्रंशकालीन अवशेष विद्यमान हैं जो शब्दों की प्राचीनता का इतिहास बतलाते हैं। इन्हीं सब प्रमाणा से यह कहा जा सकता है कि हरियानी बोली एक प्राचीन बोली है और अपना स्वतंत्र अस्तित्व लिए हुए है।^१

अ नामकरण

हरियानी बोली जो विद्वानों ने कई नामों से अभिहित किया है। यथा— बागड़, जाट, देसवाली या देसारी तथा चमरवा आदि। इनमें से हरियानी और बागड़ दो देश परक नाम हैं जो हरियाना और बागड़ देश के नाम पर पड़े हैं। यथा—बंगाली, मराठी, गुजराती आदि। शेष दो नाम जाट और चमरवा दो जाति—जाट और चमार—के नाम पर हैं। इन्हीं दो जातियों की प्रधानता के कारण इस बोली में इनके व्यक्तित्व, उच्चारण और संस्कारों की छाप है। देसवाली या देसारी भी जाति परक ही है। देसवाल जाटों की भाषा ही यह भाषा है। अन्य जाट बागड़ी हैं जो बीकानेर की ओर से आये हैं और बागड़ी बोलते हैं। उनकी सख्या नगण्य है और उनकी बोली पर

- १ डा० प्रियसन मीजूदा हरियानी को खड़ी बोली की ही एक शकल मानते हैं। परन्तु हरियानी खड़ी बोली से अधिक प्राचीन है। यहाँ 'तारीख जयान-ए उर्दू' के लेखक डा० मसूदहसन का एक विचारणीय है कि 'खड़ी बोली' हिन्दुस्तानी का अपना मयार स्तर (Standard) उस वक्त कायम होता है जब वह एक तरफ बख्त, लोट्टा और गड्डी (हरियानी व कौरवी) के बजाय बादल, लोण और गाड़ी को कबूल करती है और जोरी, लरी, लराड (मज आगरा, मथुरा की) के बजाय जोड़ी, लदी, लगड़ को कबूल करती है। अतः प्रियसन की खोजों के विपरीत यह माना जाना चाहिए कि हरियानी खड़ी बोली की एक शकल नहीं है, बल्कि इसके विपरीत खड़ी बोली, हरियानी और मज का विकसित रूप है। फिर 'खड़ी बोली' नाम भी तो बहुत पुराना नहीं है। 'प्रेमसागर' की भूमिका में सम्बन्ध १८६० के लगभग लखनूनी खाल ने सबसे प्रथम इसे यह नाम दिया है।

देसवाल जाटों की इस बोली का प्रभाव बढ़ रहा है। डा० सुनीतिकुमार चटर्जी ने इसे दो नाम दिये हैं—बागरू और हरियानी। डा० पी डी गुणे ने केवल एक नाम—बागरू से इसे अभिहित किया है। डा० घोरेंद्र वमा ने इसे तान नाम—बागरू, हरियानी और जाटू के नाम से पुकारा है। डा० मसूद हसन ने भी इसी अनुकरण पर इसे उपरोक्त तीन नाम दिये हैं। केवल डा० प्रियंसन ने इस बोली को उपरोक्त तीन नामों के अतिरिक्त एक नाम 'चमरवा' भी दिया है जो इस बोली के देहली के उन माहल्लों में प्रचलित होने के कारण जिनमें चमारों की आबादी है, इसे मिला है। परन्तु यह नाम प्रचलित नहीं है।

अब तक के विश्लेषण से एक बात स्पष्ट है कि डा० पी डी गुणे के अतिरिक्त सभी विद्वानों ने इस बोली का बागरू नाम देकर—जाटू और हरियानी इसके लिए दो नाम और दिये हैं। किन्तु यह नामकरण डा० प्रियंसन के भाषा-सर्वे के आधार पर ही हुआ है। सर्वे के प्रकाशन तक जिले के गजटीयरस् ही स्थानीय भाषा और इतिहास जानने के साधन थे। इसीलिए कनाल और रोहतक की ऊँची और सूखी भूमि जो बागड़ कहलाता है, उसकी भाषा बागरू कहलाइ और इस प्रदेश में जाटों की अधिक आबादी होने के कारण यही भाषा जाटू भी कहलाइ। हिसार जींद जिला के हरियाना खड की भाषा हरियानी के नाम से पुकारी गई। अतः दो भूभागों के नाम पर दो नाम भाषा को मिले—बागड़ खड के नाम पर बागरू और हरियाना खड के नाम पर हरियानी। इन दोनों खडों में जाटों की अधिक सट्टा होने के कारण उसे जाटू नाम भी दिया गया। परन्तु यह कल्पना उपयुक्त नहीं प्रतीत होती। खाज से पता चलता है कि हरियाना और बागर की सभी जातियाँ—बावरिया आदि एक-दो नीची जातियों को छोड़कर—एक ही बोली बोलती हैं। न्यूनाधिक भेद है अवश्य, परन्तु वह स्थानीय प्रभाव के कारण है और नगण्य है। दूसरे, देश के नाम पर ही बोलियों के नाम होते हैं परन्तु प्रियंसन की जाटू और अहीरी अपनी निचली खाज है जो सतार के भाषा चित्र में दूर से पटकती है। अतः जाटू नाम अनावश्यक (Superfluous) मालूम पड़ता है। बागरू नाम भी इस भाषा के लिए देना ठीक नहीं है क्योंकि जिस बोली का विवेचन हमारा लक्ष्य है वह बागर के बाहर भी बोली और समझी जाती है—पूर्व की अर भी और पश्चिम की अर भी। फिर बागर नाम भी जातिवाचक है। कई भी ऊँचा एवं सूखी भूमि बागर के नाम से भूगोल शास्त्र में पुकारी जाती है। इस प्रकार बागर खड कह हा सकते हैं और सब बागर खडों की बोली बागरू कहलायेगी। भूगोल के अध्ययन से शत होता है कि जैसी ऊँची और

सूची भूमि कर्नाल और रोहतक जिले की है वैसे ही बलिमा जिला (उत्तर-प्रदेश) में ऊँची और सूखी भूमि है। उसे भी बागर के नाम से पुकारा जाता है। फिर वहाँ की बोली भी बागरू कही जायगी। इस प्रकार यह बागरू नाम अतिव्याप्त हो जायगा। अतः हम स्पष्टता के लिए इस बोली को हरियानी बोली के नाम से पुकारेंगे। आज हरियाने की परिसीमाएँ खोजकर निश्चित की जा सकी हैं।^१ इस विस्तृत प्रदेश की भाषा, परम्परा एवं रीति-रिवाज प्रायः सब स्थानों पर एक से हैं, अतः हरियाने की बोली को हम हरियानी नाम से अभिहित करेंगे और बागरू को हरियानी की उप-बोली मानेंगे।

आ हरियानी का अध्ययन (आवरयकता)

किसी भाषा (बोली) का अध्ययन एक रोचक विषय है। आजकल इस ओर विद्वानों का ध्यान विशेष रूप से लगा है। वैसे आधुनिक मातृपीय भाषाओं के वैज्ञानिक अध्ययन का इतिहास भी बहुत पुराना नहीं है। आज से लगभग एक शताब्दि-पूर्व सर रामकृष्ण भट्टाकर और डा० बीम्स के अनुसंधानों से इसका श्रीगणेश हुआ। अनेक बालियों पर विवेचनात्मक अनुसंधान हुए हैं, परन्तु खेद के साथ कहना पड़ता है कि हरियानी बोली को अभी तक उपेक्षा भाव से देखा गया है। डा० प्रियर्सन के भाषा सर्वे में भी इस बोली के साथ तुलना की गई है। न इसके व्याकरण की पद्यात छानबीन करने व्यापक नियम निर्धारित किये गये हैं और न शब्द-सूची ही गम्भीर मात्रा के साथ तैयार का गन् है। श्री इ. जामेफ, आइ. सी. एस., डिप्टी कमिश्नर, रोहतक ने अवश्य जाटू बोली का स्थूल व्याकरण एवं विस्तृत शब्द-सूची (ग्लोसरी) दा है।^२ हमने हरियानी के 'स्थूल व्याकरण' नामक उपग्रह को तैयार करते समय इसे देखा है। इस दिशा में लेखक का जो कमी अनुभव हुआ उसे उसने हरियाना प्रदेश के पर्यटन काल में भिन्न भिन्न उपायों द्वारा प्राप्त साहित्यिक सामग्री से पूरा किया है।

इ हरियानी का क्षेत्र विस्तार

हरियाना प्रदेश कई भाषा बालियों का सधि-स्थल है। एक ओर यह प्रदेश पटियाला (पञ्जु राज्य)^३ के क्षितिज से सटा हुआ है और दूसरी ओर

१ 'अष्टक प्रकाश' का प्रमाण, पृष्ठ ३६ पर।

२ दक्षिण 'जनरल आव रोयल एशियाटिक सोसाइटी बंगाल' पृष्ठ २६, सन् १९१० पृष्ठ ६६५, प्रमृति।

३ पटियाला पञ्जु (Patiala and East Panjab States Union) अब वर्तमान पञ्जाब राज्य में विलीन हो गये हैं।

राजस्थान, अहीरवाल, ब्रज और कुरु प्रदेश की सीमाओं को छूता है। इसलिए हरियानी का भाषा-पट पूर्वा पंजाबी, बीकानेर की बागड़ी, राजस्थान की मेवाता और अहीरवाल की अहोरवाटी बोली, ब्रज की ब्रज बोली और कुरु प्रदेश की खड़ी बोली के घागों से निर्मित है। हरियानी लगभग ६,००० वर्गमील में फैली हुई बोली है। इसकी सीमात रेखाएँ किसी एक प्रांत की राजनैतिक सीमाओं से सबद्ध नहीं हैं। हरियानी के प्रधान केन्द्र रोहतक, मैहम, हासी, दादरी, दुजाना और नरवाणा हैं। हासी, रोहतक और मैहम की बोला आदर्श हरियानी मानी जाती है। डा० मसूद हसन के ये शब्द तथ्यपूर्ण हैं कि "शहर देहली सयोग से इन तमाम बोलियाँ के सगम पर स्थित है अतः भाषा का स्टैण्डर्ड एक दीर्घकाल तक स्थिर नहीं हो सका। परन्तु मीर अब्दुल वासि हासवी की 'गरायजुललुगात हिन्दी' (हिन्दी के विदेशी शब्दों का कोष) की रचना के पश्चात् हम कह सकते हैं कि हासी के इर्द गिर्द की हरियानी बोली स्टैण्डर्ड की मानी जाने लगी थी।" हरियानी बोली बोलने वालों की संख्या १६३१ की जनगणना के अनुसार २२ लाख थी।^२

ई हरियानी का समीपवर्ती बोलियों से पार्थक्य

भाषा बोलियाँ में सदैव आदान प्रदान चलता रहता है। भाषाएँ अपनी पास-पड़ोस की बोलियों से बहुत कुछ सीखती चलती हैं। इसके प्रतिफल या शुल्क में भाषाएँ भी बोलियों पर पर्याप्त प्रभाव छोड़ती हैं। अतः पास-पड़ोस की बोलियाँ में भी चाहे वे एक ही उद्गम की क्यों न हों स्थान, स्थिति, जल-वायु से उच्चारण एवं मूल ध्वनियों में अन्तर आ ही जाता है। कभी-कभी तो वह अंतर इतना स्पष्ट होता है कि उन बोलियों को एक ही जननी के दो सहोदराएँ कहते भी सकोच होता है। उनके रूप आदि सत्र परिवर्तित हो जाते हैं। अगले पृष्ठों में हम देखेंगे कि हरियानी का अपनी अड़ोस-पड़ोस की बोलियों से कितना साम्य अथवा वैपम्य है।

क हरियानी और पंजाबी

हरियानी पर सबसे अधिक प्रभाव पंजाबी और राजस्थानी का है। या तो

१ डा० मसूद हसन 'तारीख जवान ७ उर्दू' पृष्ठ ६०।

२ डा० धीरेन्द्र वर्मा 'ग्रामीण हिन्दी' पृष्ठ १६

१६५१ की जनगणना में पंजाब में विशेषकर पंजाबी, हिन्दी और उर्दू के आंकड़े पृथक् पृथक् नहीं दिये गये हैं। अतः प्राचीन रिपोर्ट को आधार माना गया है।

ब्रज और कौरवा भी समीपवर्ती बोलियाँ हैं किन्तु पारस्परिक एव अन्योन्य प्रभाव खानने के विचार से पहिले हम पञ्जाबी के साथ मिलान करेंगे —

हरियानी और पन्जाबी बोलियाँ बहुत-सी बातों में समान हैं। ध्वनि, स्वराघात और ध्वनि परिवर्तन आदि बातें दोनों में प्रायः एक-सी हैं। यथा —

१. दोनों में पुल्लिङ्ग चिह्न 'आ' और स्त्रीलिङ्ग चिह्न 'इ' का इतना अधिक प्रचार है कि कृदन्त क्रियाओं तथा विशेषणों के साथ ही ये लगाये जाते हैं। यथा—हरियानी—छोरा दौड़्या, छोरी दौड़्या। पञ्जाबी—मुढा दौड़्या, ऊड़ी दौड़्या। मा बोल्ला, बानू बोल्ला, लील्ली घोड़ी, लचट्टी घोती, 'लील्ला (घोड़ा) का अस्वार' चिट्टा कापड़ा आदि।

२. दोनों में सक्रमक क्रियाओं के भूत कृदन्तो (Past Participles) से बनी हुई क्रिया केवल कर्मवाच्य अथवा भाववाच्य में प्रयुक्त होती है। यथा—राम ने पैसा दिया, (पचावा) दित्ता, मन्ने इकन्नी दी। इन दो वाक्यों में 'दिया' (दित्ता) 'दी' इन क्रियाओं के वाच्य (Subjects) पैसा और इकन्नी हैं जो 'दिया' (दित्ता) और दी इन क्रियाओं के कर्म हैं। कर्म प्रयोग की विशेषता यह है कि क्रिया के कृदन्त अर्थ का लिङ्ग और वचन इसके कर्म के लिङ्ग और वचन के अनुसार होता है। क्रिया के कृदन्त भी एक प्रकार के विशेषण ही हैं^१ और इनका विशेषण प्रयोग बड़ा पुराना है। वैदिक भाषा में भा ऐते प्रयोग मिलते हैं। विस प्रकार विशेषण का लिङ्ग और वचन विशेष्य के अनुसार होता है,^२ इसी तरह कृदन्त का लिङ्ग और वचन भी वाच्य के

१ (अ) तत्पद परयन्ति दिवीव चक्षुराततम् । अक् १ मण्डल, १२२ सूक्त
They see that step like an eye fixed in haven
तद्विष्यो परम पद सदा परयन्ति सूरय । दिवीव चक्षुराततम् ॥

१ (ब) माकिनेश माकीं रिपन्भाकीं स शारि केवटे । अघारिप्याभिरा गहि॥
६५४ २०
Let none be lost, let none suffer harm, None incur fracture in a pit, but come back with them uninjured.
— Vedic Grammar
'Macdonel'

२ सस्त्रुत व्याकरण का यह नियम है—

तल्लिङ्ग तद्वचन वादृशी विभक्ति विशेष्यस्य ।
तल्लिङ्ग तद्वचन वादृशी विभक्ति विशेष्यस्यापि ॥

अनुसार होता है। भावे प्रयोग में सकर्मक धातु 'कर्मकर्तृ प्रक्रिया' के रूप में आती है, यथा—राम ने आगली तोड़ दी। राम ने आगली के तोड़ दी, आगली आपेह टूटगी आदि।

३ विशेष्य विशेषण प्रयोग में—विशेषण विशेष्य का विशेषक होता है और विशेषण विशेष्य से पहिले आता है। यथा—काला घोड़ा, चिट्ठी धोती, विशेष्य विशेषण प्रयोग में विशेषण ही विधेय होता है। यथा—घोड़ा काला है। दोनों बोलियों में एक-सा प्रयोग मिलता है।

४ विकारी कारकों के बहुवचन के रूप 'आ' लगने से बनाये जाते हैं। यह प्रक्रिया दोनों बोलियाँ—हरियानी, पंजाबी में समान हैं जबकि साहित्यिक हिन्दी में अन्तर है। हिन्दी में सब शब्दों के विकारी कारकों ने बहुवचन 'आ' से बनाये जाते हैं अथवा उनके अंत में 'आ' होता है 'यथा'—

	पंजाबी	हरियानी	
	बहुवचन	बहुवचन	
कर्तृकारक	विकारी कारक	कर्तृकारक	विकारी कारक
मुड़े	मुड़ेआ	माणस	माणसा
डाक्कू	डाक्कूआ	खेत	खेता
			“खेतों की रपाली बैठा सू”
धुपआ	धुरीआ	छार्या	छोर्या

साहित्यिक हिन्दी

बहुवचन

कर्तृकारक	विकारी कारक
लड़के	लड़कों ने
माली	मालियों ने, से, पर
बालक	बालकों ने
नदी	नादियों पर
माता	माताओं
बहु	बहुआँ आदि

५. स्वराघात —स्वराघात का प्रयोग प्रायः दोनों में एक जैसा होता है—

- (क) द्वयक्षर वाले शब्दों के यदि दोनों अक्षर स्वर वाले हों, तो स्वराघात प्रथम अक्षर पर होता है। यथा — हाथी भोली, डोली, माली आदि।
- (ख) व्यक्षर वाले शब्दों के यदि अत के दोनों अक्षर दीर्घ स्वर वाले हों तो स्वराघात प्रायः मध्यम अक्षर पर होता है। यथा — बिटोड़ा पुराणा आदि।
- (ग) प्रेरणार्थक धातु के (क्रिया के) अंतिम अक्षर पर ही स्वराघात होता है। यथा — करा, जगा, हगा, लिखवाओ आदि।
- (घ) द्वयक्षर वाले शब्दों का अंतिम अक्षर यदि दीर्घ स्वर वाला हो और स्वराघात मुक्त भी हो तो उससे पहिला अक्षर ह्रस्व स्वर वाला होता है। यथा — टका, मटा, शुदा आदि।

६ स्वर से आरम्भ होने वाले शब्दों से पहिले दोनों भाषाओं में कई बार 'हकार' का आगम होता है। यथा—

ससृष्ट	प्रासृष्ट	पजाधी व हरियानी
ओष्ठ	ओट्ट -	होट, हाट
अस्थि	अट्टि	हड्डी
अरघट्ट	हरअट्ट	हरट
		रहट (अक्षर विपर्यय से)

७ कर्ता और सम्प्रदान का क्रम से 'नै' और 'नू' कारक प्रत्यय पजाधी में मिलता है। हरियानी का 'नै' प्रत्यय दाना कारकों के लिए समान रूप से व्यवहृत है जबकि ररडी वाली में 'नै' का 'नै' रूप केवल कना के लिए रह गया है। यथा — राम ने मारा।

दानों में इतना साम्य होने पर भी कई स्थानों पर बड़ा भेद है। उस भेद का परखने का प्रयत्न निम्नलिखित पक्तियों में किया जायेगा—

(१) इन दोनों बालियों की कई ध्वनियों में पर्याप्त भेद है। इसी ध्वनि ने भेद का कारण एक रोनी का जानने वाले व्यक्ति के लिए दूसरी बाली के समझने में कठिनाई होती है और कभी-कभी समझ भी नहीं आती।

मूल ध्वनियों में भेद—घ, झ, ठ, ध, य, म का उच्चारण
GH JH, TH DH TH BH

दोनों में भिन्न है। इनके पञ्जाबी उच्चारण में (H) ह् की ध्वनि बहुत मद् होती है और प्रायः सुनाई नहीं पड़ती। एक पञ्जाबी सिक्ख जब भ्राता शब्द का उच्चारण करता है तो आदि भ्रा की ध्वनि 'भ्रा' या 'प्रा' की सी होती है। वही सिक्ख 'घर' को 'कूर' इस तरह उच्चारण करता है कि ह 'H' की श्रुति सूक्ष्म ध्वनि सुनाई पड़ती है। घरती शब्द 'दैरती' जैसी सुनाई पड़ती है। हरियानी में इन ध्वनियों की ज्यों की त्यों स्थिति है। इस बोली में चौड़ाव या पैलाव (Broadness) के गुण के कारण इन ध्वनियों का एक विशेष स्थान है।

हिन्दी की 'ढ' ध्वनि पञ्जाबी और हरियानी में नहीं मिलती। इसके स्थान 'ड' हो जाता है। 'ड़' की भी यही दशा है। उसके स्थान 'ड' हो जाता है। यथा—(हिन्दी) पढना (हरियानी पञ्जाबी) पढना (अध्ययन)
(हिन्दी) पड़ना (" ") पड़ना (गिरना)
यह 'ड' सदैव ही हरियानी में 'ड' हो जाता है जबकि पञ्जाबी में इसके दानों रूप 'ड़' और 'ड' मिलते हैं। यथा—जेड़ा (जिस), उडा दित्ता (समाप्त करना) आदि।

मूर्दान्य 'ल' हरियाना की अपनी विशेषता है। इसी प्रदेश से यह ध्वनि उत्तर भारत में फैली है। पञ्जाबी में भी मिलती है। यहाँ 'काला घोड़ा' के स्थान 'काला घोड़ा' बोला जाता है। इसी प्रकार 'गु' बहुल प्रयोग दोनों बोलियों में होते हैं। यथा—हरियाणा, 'खाणा' जाणा, पञ्जाबी में हुण आदि।

२ ध्वनि परिवर्तन—पञ्जाबी में सङ्कृत के ह्रस्व स्वर के पीछे आने वाले सयुक्त व्यञ्जनों के स्थान में द्वित्व दिखाई देता है और पूर्ववर्ती ह्रस्व स्वर स्थिर रहता है, वहाँ हरियानी में द्वित्व के स्थान में एक ही व्यञ्जन रह गया है और प्रतिभार में पूर्ववर्ती स्वर दीर्घ हो गया है। यथा—

सङ्कृत	पञ्जाबी	हरियानी
लक्ष	लक्ष	लाख
हस्त	हस्त	हाथ

१ लकार की मुद्रय ध्वनि 'अग्निमीले पुरोहितम्' आदि प्रयोगों में वैदिक काल से ही है और मराठी में 'तिलक' जैसे शब्दों में आज भी अपना अस्तित्व प्रयत्न रखती है, किन्तु उत्तर भारत की बोलियों में इसका प्रसार इन दो बोलियों के द्वारा हुआ है।

मस्तक	मर्या	माया
शुष्क	सुस्वा	सूस्वा
कर्म	कम्म	काम

यह द्वित्व प्रवृत्ति पंजाबी की अपनी विशेषता है और खड़ी बोली के सम्पर्क में रहने वाले व्यक्तियों का ध्यान अचानक अपनी आर आकर्षित करती है।

३ हरियानी में हिन्दी का भाँति सस्कृत 'क्त' प्रत्यय के 'त' का सँव लोप हो जाता है। पंजाबी में इसका लोप त्रिकल्प से होता है। यथा —

सस्कृत	हरियानी व हिन्दी	पंजाबी
दत्त	दिया	दिचा
सुत	सोया	सुचा
गत	गया	गया (गत्ता नहीं)
कृत	किया	कीत्ता

४ पंजाबी के विशेषण में विकार सज्ञा की नाईं होता है। यह प्रवृत्ति श्रीलिंग बहुवचन में बड़ी स्पष्ट दिखलाई देती है। वहा विशेषण में विशेष्य (सज्ञा) की भाँति विकार हो जाता है। हरियानी या हिन्दी में यह बात नहीं पाई जाती।

पंजाबी

एकवचन	बहुवचन
चिहा घोती	चिट्ठीआ घोतीआ

हरियानी या हिन्दी

काली घोती	काली घोत्तिया
	(कालीआ घोतीआ नहीं)

पुल्लिंग बहुवचन में दोनों में विकार होता है।

	एकवचन	बहुवचन
पंजाबी	मोट्टा घोड़ा	मोट्टे घोड़े
हरियानी	मोटा घोड़ा	मोटे घोड़े

५. 'ब' से आरम्भ होने वाले शब्दों में पंजाबी में 'बकार' शेष रह जाता है, जबकि हरियानी में वह अपभ्रंश की भाँति 'ब' में बदल जाता है। यही दशा खड़ी बोली की है। यथा —

पजाबी	हरियानी
बैर	बैर
विरोध	विरोध
वाट	वाट (पगडढी)
वारी	वारी (खिड़की)
वगा	वर्गा (सदश)
	(तेरे वर्गा हूर मिलैना भइय्या की सँ)
वेचणा	बेचणा
विरला	बिरला आदि

६ पजाबी से हरियानी में एक अंतर और है। सम्बन्ध कारक का चिह्न पजाबी में 'दा' है जबकि हरियानी में इसके स्थान पर 'का' का प्रयोग किया जाता है। खड़ी बोली हिन्दी में भी यही प्रयोग है। 'दा' का प्रयोग पजाबी की अपनी विशेषता है जो दूर से चमकती है। यथा —

पजाबी	हरियानी
चाच्चे दा मुण्डा	चाचा का छारा
भ्राता दी हटा	भ्राता की दुकान

७ व्यक्तिवाचक सर्वनामों के उत्तम पुरुष और मध्य पुरुष के रूपों में बड़ा अंतर है। हरियानी में ये रूप तुम (तम) और हम हैं और पजाबी में त्रुंहीं और तुसुं (तुसा) हैं। पजाबी के ये सर्वनाम प्राचीन लहदा के अवशेष हैं।

ख हरियानी और राजस्थानी

पजाबी और हरियानी के मर्म का समझकर अब हम राजस्थानी की ओर बढ़ते हैं। हरियानी पर राजस्थानी का प्रभाव कई रूपों में दृष्टिगोचर होता है। हरियानी बोली, उच्चारण, ध्वनि परिवर्तन, लिंग और वचन के दृष्टिकोण से राजस्थानी से पर्याप्त साम्य रखती है। उदाहरणों से पाठक सरलतया समझ पावेंगे।

१ पजाबी का 'दा' और हरियानी का 'का' दोनों संस्कृत 'कृत' से निकले हैं जो प्राकृत क्दिथों या क्दिथी की परम्परा से वर्तमान रूप का पहुँचे हैं। विशेष विवरण के लिए देखिए—डा० प्रियवंत "भाषा सर्वे" पजाबी भाषा अध्याय।

उच्चारण

१ हरियानी की भाँति राजस्थानी में भी 'ल' का उच्चारण दत्य और मूर्धन्य दोनों प्रकार का मिलता है। आजकल प्रायः मूधन्य 'ल' का दत्य 'ल' लिखने की प्रवृत्ति बल पकड़ रही है परन्तु यह भाषा शास्त्र की दृष्टि से एक हानि है। जिन शब्दों के आदि अक्षर मध्य में मूर्धन्य 'ल' आता है। बहुधा उस 'ल' को दत्य कर देने से अर्थ में यद्यपि कोई विशेष अन्तर नहीं पड़ता, यथा—काला और काला में तथापि उच्चारण की अशुद्धि तो माननी ही पड़ेगी। परन्तु बहुत से मूर्धन्य 'लकारात्' शब्द ऐसे भी हैं जिनको दत्य लकारात् कर देने से उनका अर्थ बिल्कुल बदल जाता है। यथा —

शब्द	अर्थ	शब्द	अर्थ
पाल	बाघ	पाल	विद्वाने का कपड़ा
माली	जाति विशेष	माली	आर्थिक (फारसी)
महल	रानी	महल	राज प्रासाद
खाल	परनाला	खाल	चमड़ा

(बहान)

२ इन दोनों बोलियों में 'ष' का उच्चारण 'स' होता है और 'श' का भी 'स' आता है। कहीं-कहीं पर 'ष' का उच्चारण 'ख' भी होता है। प्रायः राजस्थानी में ऐसा होता है। यथा—

संस्कृत	हरियानी	राजस्थानी
वर्ष	बरस	बरस
वषा	बरसा	बरसा, बरम्बा
भीष्म	भीसम	भीसम
शेष	सेस	सेस
केस	केस	केस 'तार कल्ले खिर केस'—मीरा
दुस्मन	दुसमन	दुसमन
धीण	धीन	धीण (यहाँ हरियानी में 'ध' का छू हो गया है जब कि राजस्थानी में 'झ' हुआ है। यथा—

“घूण्ट में गोरी बलै खीन पुरस की नार ।”)

३ हरियानी और राजस्थानी दोनों में 'य' का उच्चारण 'ज' और 'य' दोनों प्रकार से होता है। जब 'य' किसी शब्द का पहिला अक्षर होता है तब

इसका उच्चारण प्राय 'ज' किया जाता है और 'ज' ही लिखा जाता है। परन्तु जब 'य' शब्द के पहिले अक्षर के पश्चात् आता है तब वह अविकृत अवस्था में रहता है, यथा —

आदि यकार

मध्य यकार या अन्त्य यकार

सुद्ध—सुद्ध

काया

यात्रा—जात्रा

माया

यमराज—जमराज

और जाया आदि

वर्णागम और वर्ण प्रत्यय

१ हरियानी में 'ऋ' के स्थान में 'रि' सुना और लिखा जाता है। यह प्रवृत्ति राजस्थानी में भी है। कहीं-कहीं राजस्थानी में मूल रूप में भी मिलता है। यथा —

ऋषि

रिषा

ऋतु

रितु

ऋति

समृति (राजस्थानी में)

२ हरियानी में 'रेफ' का प्रयोग नहीं होता। यह रेफ पूरे 'रकार' में बदल जाता है। राजस्थानी में इसका स्थान्तरित रूप भी प्रयोग में है। यथा —

संस्कृत	हरियानी व राजस्थानी	राजस्थानी में स्थानान्तरित प्रयोग	
वर्ण	वरन		
दुर्लभ	दुरलभ		
धर्म	धरम	धर्म	ध्रम
कर्म	करम	कर्म	कम आदि

३ हरियानी और राजस्थानी में मुखोच्चारण के लिए शब्द के आरम्भ में कभी-कभी कोई स्वर जोड़ देते हैं जिसे स्वरागम कहते हैं। यथा —

हरियानी

राजस्थानी

रय अरय

याण आयाण

खवार (अखवार)

खण आरण आदि

(अस्वार) यथा —

लीली के अस्वार आदि

४ इन दोनों बोलियों में 'स' का 'छ' और 'व' का 'म' हो जाता है। यथा—

‘स’ का ‘छ’

‘व’ का ‘भ’

सुदामा छुदामा
तुलसी, तुलछी
सभा छभा

सावन सामण, सामन (मास)
रावण रामण
सुरावणो सुहामणो

५ इन दानों भाषाओं में शकार बहुला प्रवृत्ति पाई जाती है। नकारात् शब्द प्रायः शकारात् कर लिए जाते हैं। यथा —

कटना कहणा
गहना गहणा
रानी राणी
जीवन जीवण आदि

६ राजस्थानी में अकारात् पुल्लिङ्ग तथा अकारान् स्त्रीलिङ्ग शब्दों का बहुवचन अन्त्य स्वर में ‘आ’ लगाने से बनता है। यही प्रवृत्ति हरियानी में भी मिलती है। यथा—नर नरा, खेत खेता, रात राता, आँख आँखा, ‘आँखा नै क्यूँ फोड़े सै’—हरियानी।

राजस्थानी के आकारात्, इकारात् और ऊकारात् शब्दों के बहुवचन हरियानी और खड़ी बोली में प्रायः नहीं मिलते। यथा —

हिन्दी		हरियानी	राजस्थानी
एकवचन	बहुवचन	बहुवचन	बहुवचन
घोड़ा	घोड़े	घोड़ा	घोड़ा
घोड़ी	घोड़ियाँ	घोड़ीआ	घोड़्य
बढ़	बहुए	बहुआ	बहुवा

७ दोना बोलियों में ह्रस्वपन लाने के लिए अथवा प्रेम-प्रदर्शन के लिए अपभ्रंश का भाँति सहाओं के श्रव में ‘झ’, ‘झा’, ‘झा’ जोड़ते हैं यथा —

गोरी (सुन्दरी) गोरझा (अधिक सुन्दरी, एक रास सुन्दरी)
छोरी (लड़की) छोरझा (अप्रधानता छोटन के लिए)

उपर्युक्त विवरण से यह स्पष्ट ही अनुमान लगाया जा सकता है कि हरियानी और राजस्थानी में पर्याप्त साम्य है। इस अनुमान के लिए भी स्थान हो सकता है कि हरियानी राजस्थानी का ही एक रूप है किन्तु वस्तुस्थिति ऐसी नहीं है। राजस्थानी का प्रभाव अवश्य पड़ा है और यह कोई दोष भी नहीं है। भाषाएँ सभी एक-दूसरी से लेता देती रहती हैं। फिर इन दोनों बोलियों की धारक प्रतिभा, विचार, सर्वनाम और

क्रिया-विशेषण आदि में प्रचुर परिमाण में वैषम्य है। राजस्थानी का व्याकरण उसे अपनी पड़ोसी बोलियों से जुदा कर देता है। परन्तु भाषा विज्ञान के दृष्टि कोण से यह वैषम्य कोई चिन्ता का द्योतक नहीं है। इस वैषम्य में भी एक साम्य के दर्शन भाषा शास्त्री को होंगे। कारण कि राजस्थानी स्वयं अन्तर्वर्ती चक्र की भाषा है जिसकी हरियानी, ब्रज, पंजाबी, कौरवी और गुजराती आदि हैं। डा० ग्रियर्सन ने भाषाओं का विभाजन उच्चारण और व्याकरण के आधार पर किया है। उच्चारण क्षेत्र में इन दोनों बोलियों में बहुत कुछ समानता है किन्तु व्याकरण भिन्न है। हरियानी के व्याकरण का वर्णन हम आगे चलकर विस्तार से करेंगे। राजस्थानी के व्याकरण पर दृष्टिपात करना इस लेख का विषय नहीं है।

ग हरियानी और ब्रज

हरियानी और ब्रज पश्चिमी हिन्दी की शाखाएँ हैं और इन दोनों बोलियों की सीमाएँ भी एक दूसरी से मिलती हैं। इस विचार से इन दोनों में पर्याप्त साम्य की अपेक्षा की जा सकती है किन्तु वैषम्य के लिए भी स्थान है।

उच्चारण की दृष्टि से इन दोनों में कोई विशेष उल्लेखनीय अन्तर नहीं है। बस ब्रज में मूर्धन्य 'ण' 'ङ' और 'ल' का प्रयोग नहीं होता है जो इन दोनों बोलियों के खड़ापन और पड़ापन का कारण है। यथा—हरियानी—खाणा, ब्रज में खाना और हरियानी सड़क ब्रज में सरक बोली जाती है आदि। ब्रज में दत्य लकार के स्थान पर भी 'रकार' हो जाता है। यथा—बादर, मतवारो, करदारो आदि में रकार ही मुनाइ पड़ता है। 'श' व स्थान में 'स', 'य' के स्थान में 'ज' तथा आदि वकार को बकार की प्रवृत्ति दोनों में एक सी है। विशेष विवरण अपेक्षित है —

१ सर्वनाम

(अ) उत्तम पुरुष एक वचन में ब्रज में 'मैं' और 'हैं' दोनों का प्रयोग होता है। हरियानी में 'हैं' का प्रयोग नहीं होता। ब्रज का कर्म 'मा' और 'माहें' हरियानी में 'मभै' और 'मनै' हो जाता है। यथा—'मनै' के व्योरा भइ, (हरियानी) मोका पतो (ब्रज)।

(आ) मध्यम पुरुष (एक वचन व बहुवचन) ब्रज में 'तौ' 'तौं' के साथ-साथ 'तैं' 'तैं' भी आते हैं। हरियानी में 'तैं' 'तैं' मिलते हैं। हरियानी के 'तेरो' और 'घारा' ब्रज में 'तेरो' और 'तुम्हारो' हो जाते हैं। ब्रज में इसके दूसरे रूप 'तिहारो' और 'तिहारी' भी मिलते हैं। 'जायेगी लाज तिहारी'।

हरियानी के 'धमै' की जगह 'तुम्हौ' 'म्हारा' के स्थान में 'हमारी' और 'मेरा' की जगह ब्रज में 'मेरा' मिलते हैं।

२ वचन

संज्ञा का बहुवचन हरियानी में पञ्जामी, दक्खिनी और राजस्थानी की भाँति 'आ' लगाने से बनता है जैसा कि उपरोक्त उदाहरणों से व्यक्त है। ब्रज में बहुवचन 'न' के याग से बनता है।

हरियानी		ब्रज	
एकवचन	बहुवचन	एकवचन	बहुवचन
घाड़ा	घोड़ा	घोड़ा	घाड़न

“पैलन नाज, घाड़न राज”

(पैलों के द्वारा अनाज और घाड़ों के द्वारा राज कायम होता है।)

३ क्रिया

ब्रज में क्रिया का साधारण रूप धातु में 'बो' 'बा' या 'नो' की वृद्धि से बनाया जाता है। हरियानी में यह रूप 'णा' या 'ख' के द्वारा बनता है।^१ ब्रज का धातुएँ—करिबा, होना, बूझना, खानो, चलनो, फरनो आदि हरियानी धातुएँ—करणा, होणा, खाणा, जाना, कहण, जाण आदि (जाण लाग रहा सू आदि)।

सामान्य वर्तमान या हेतुहेतुमद्भूत (पेलमुजारा) बनाने के लिए ब्रज में धातु में 'अत' लगाया जाता है। हरियानी में खड़ी बोली की भाँति 'ता' लगता है। यथा, ब्रज—करत, परत, खात, खात आदि

हरियानी—करता, जाता, खाता आदि।

ब्रज में भूतकाल हरियानी का भाँति मारा या मार्या नहीं बनता बरन मारो या मार्या होता है। यथा, ब्रज—‘तोकू कौन नै मारो’

हरियानी—‘तन्नै कन्ने मार्या’।

ब्रज में भविष्यत् 'गा' के लगाने से बनाया जाता है। यही काल 'हा' की वृद्धि से भी बनता है। यथा, ब्रज—मिलूगा, साजँगा, खम्बूगा, चलिहाँ,

१ ब्रज और हरियानी में एक अन्तर यदा स्पष्ट है—ब्रज ओकारात् शब्द बहुला है और हरियाणा 'आ' कारात् बहुला है। यह विशेषता इसे व्यवहित धरित्र क कारण प्राप्त हुई है।

करिहीं। हरियानी में इसके विपरीत—सागा, करगा, चलागा, इन्वै चलागा (अभी चलते हैं) आदि में 'गा' लगाने से बनता है।

सहायक क्रिया के वर्तमान काल में हरियानी में 'सै' 'स' आदि रूप आते हैं। ब्रज में हिन्दी खड़ी बोली की भाँति 'है' के विभिन्न रूप प्रयाग में लाये जाते हैं। ब्रज में 'हूँ' का उच्चारण 'हीं' हो जाता है। यथा—जात हों बाबू (ब्रज) 'जाऊँ सू' हरियानी (में जाता हूँ)। हरियानी में भूतकाल के लिए 'था' के भिन्न रूप काम में लाये जाते हैं। ब्रज में 'हो' और 'हतौ' के रूप प्रयोग में आते हैं।

तू कइ गया था ? (हरियानी)

तू कहाँ गयो हो ? (ब्रज)

इस प्रकार हम देख सके हैं कि दोनों शालेयों एक सीमा पर मिलता हुआ भी कितनी भिन्न हैं।

घ कौरवी और हरियानी

हरियानी की पूर्वी सीमा पर जमना के उस पार कुश्न प्रदेशी की 'कौरवी बोली' बोली जाती है। जमना के खादर में कौरवी और हरियानी का मिश्रण रूप मिलता है। इन दोनों के मध्य में ग्राड टुक रोड बिछी है। निम्नलिखित अध्ययन के द्वारा हम इन दोनों 'बालियाँ' के अंतर एवं साम्य का भ्रमण सकते हैं —

ध्वनि

१ कौरवी में दो स्वर मध्यवर्ती 'ह' का लोप हो जाता है। हरियानी में यह प्रवृत्ति नहीं है। उसमें ता 'हकार' की अधिकता मिलती है। यथा, कौरवी में "सैर कितनीक दूर अँ ?"। यहाँ सहर (शहर) शब्द के बीच में आने वाली 'ह' ध्वनि का लोप हो गया है और वह 'ऐ' में परिवर्तित हो गई है। इस प्रकार तुमारी (तुम्हारी) में 'ह' का लोप हुआ है।

हरियानी में "आइँ तै सदर कितनीक दूर मै ?" में 'हकार' ज्यों का त्यों रह गया है। "हमलुक छिप आइँ हाण" आदि स्थला पर 'लुक' (लुक) एवं 'हाण' (स्नान) 'ह' का बहुल प्रयोग दर्शनीय है।

२ कौरवी में महाप्राण ध्वनियाँ बहुधा अल्प प्राण मिलती हैं। हरियानी में ये ध्वनियाँ सुरक्षित हैं।

यथा —

कौरवी में —	मुझे दो	(मुझे दो)
	तुझे	(तुझे)
	हात	(हाथ)
	जाव	(जाम) 'जीव मन्चलावै'
	देक	(दिल) "देक कै चल"
	बइ	(मई) "रहन दे बइ"

हरियानी में — मऊ के ? (मुझे क्या ?)

तऊ के चाहना सै ? आदि में महाप्राण ध्वनियों में कोई परिवर्तन नहीं आया है ।

३ दादा बोलियों म 'ड' और 'ट' साहित्यिक बाली की तरह 'इ' और 'द', नहीं बोले जाते, यथा — बड़ा । परन्तु इनके स्थान पर प्राय 'ड' और 'ट' ही मिलते हैं । यथा — बडा, गाडा आदि ।

घचन

१ कौरवी में सञा का बहुवचन ब्रज का भाँति 'न' जोड़ने से अथवा खड़ी बाली की भाँति 'आ' लगाने से बनता है, यथा —

नैलन पै मूल गैर दो ?

नैला पै मूल गेर दी ?

हरियाना में सञा का बहुवचन 'आ' लगाने से बनता है । यथा — बुलदा (नैला) का जोड़ी ।

२ इमारात खीलिग शब्द के बहुवचन केवल 'इकार' को अनुनासिक कर देने से बन जाते हैं । यह प्रवृत्ति अकर्मक धातुओं के कता के रूप में विशेष मिलती है । यथा — 'कितना घाड़ों हैं' । सकर्मक धातुओं के कर्मरूप में आने वाले शब्दों में 'न' लगाने से बहुवचन बन जाता है । यथा — घाड़ान नू पाना निला दा (कौरवा) । हरियाना में 'आ' लगाने से बनता है । यथा — घाड़िया न पाया पिलाया (हरियानी) ।

क्रिया

१ कौरवा की धातु का साधारण रूप हिन्दी की भाँति 'ना' का वृद्धि से अथवा 'ब्रज' का भाँति 'ना' के लगने से बनता है । यथा —

कौरवी — गाना < राना, जाना < जाना आदि

हरियानी धातु में 'रा' अथवा 'रा' के द्वारा रूप बनते हैं । यथा — खाया, जाया, देखा, कहा, मूला आदि ।

२ सामान्य वर्तमान या हेनुहेनुमद्भूत बनाने के लिए दोनों बोलियों— कौरवी और हरियानी—में 'ता' ञाड़ा जाता है । यथा—करता तो क्यू मरता ।

३ सहायक क्रिया के रूप में कौरवी में साहित्यिक हिन्दी की भाँति 'हे' के विभिन्न रूप प्रयोग में आते हैं । हरियानी की सहायक क्रिया की भाँति 'सै' 'सू' आदि रूप प्रयोग में नहीं आते । यथा—जाऊँ हँ, वह जा है आदि ।

सर्वनाम

१ इन दोनों बोलियों में सर्वनाम शब्दों की वहु रूपता मिलती है —

हरियानी	कौरवी
ममै, मनै	मुज, मुजको, मुजद्, मुजे
तमै, तनै	तुज, तुजको, तुजद्, तुजे

२ कौरवी में अय्य पुरुष 'वह' का बहुवचन विकारी और अविकारी दोनों विभक्तियाँ में 'उनन' आदि है । हरियानी में 'उहँनै' जनता है ।

३ परवाचक सर्वनाम और सम्बुच्चय बोधक अय्य 'और' में साहित्यिक लड़ी बोलियों में कोई भेद नहीं किया जाता, पर हरियानी और कौरवी में परवाचक सर्वनाम तो 'और' है तथा सम्बुच्चय बोधक 'अर' । यथा—राम अर स्वाम आदि ।

कौरवी में 'हो' का स्थान बहुधा 'इ' ले लेती है, पर हरियानी में 'ए' ही के स्थान में प्रयुक्त होता है । यथा —

आपी आप	(कौरवी)
आप्यै आप	(हरियानी)

इ दक्खिनी और हरियानी

हरियाना का समीपवर्ती भाषा बोलियों में सम्बन्ध जान लेना ही पर्याप्त नहीं है । इसका महत्व इस रूप में और भी अधिक है कि इससे सत्तर की दो महार भाषाओं—हिन्दी (लड़ी बोली) और उर्दू का उल प्रदान किया । यह हरियानी बोली ही इन दोनों भाषाओं की पायिका के रूप में रहा है ।

हिन्दी लड़ी बोली के ऊपर इसका सीधा उपकार है । इन दोनों का सम्बन्ध इतना घनिष्ठ है कि कहीं-कहीं ता अन्तर सूक्ष्म अवलोकन से ही शक्य होता

है। उर्दू को तो इस बोली ने दक्षिण में जाकर स्तन्य-पान कराया है और वहीं बली औरगावादी की कविताओं द्वारा इसे सजीवन मिला है। इस स्थान पर इन दोनों बोलियों—दक्खिनी और हरियानी—के विषय में कुछ माटा-मोटी बातें जानने का प्रयत्न करेंगे।

१ हरियानी और पुरानी दक्खिनी में कइ स्वर साम्य पाये जाते हैं। हरियानी में 'इ' और 'ट' के स्थान में 'ड' और 'ट' का प्रयोग पाया जाता है। दक्खिनी की भी यह प्रवृत्ति है। यथा—'कुतत्र मुश्तरी' में छाड > छाट, पडे > पटे, बडा > बटा, चटना > चटना आदि प्रयोग आते हैं।

२ हरियानी भाषा की साधारण प्रवृत्ति के अनुसार 'अ' 'इ' 'उ', 'आ' 'ओ' 'ई' 'ऊ' में परिवर्तित हो जाते हैं। यथा—रखे > राखे, लहू > लाहू, हडी > हाड आदि। दक्खिनी भाषा में भी ये सब शब्द प्रायः इसी रूप में मिल जाते हैं। इसी प्रकार अन्य उदाहरण—लगा > लागा, मिट्टी > माटी, चलें > चालें आदि दक्खिनी साहित्य में भरे पड़े हैं।

३ क्रियाओं के मूल रूप (Infinitive) में अनुनासिक की प्रवृत्ति टानी भाषाओं में पाई जाती है। यथा—चलना > चलना, खाना > खाना आदि।

४ स्टैंडर्ड खड़ी बोली में जहाँ शब्द के मध्य का दीर्घ व्यञ्जन ह्रस्व हा गया है और प्रतिफार में पूर्ववर्ती स्वर दीर्घ, वहाँ दक्खिनी में बहुधा व्यञ्जन दीर्घ ही पाया जाता है और पूर्ववर्ती स्वर ह्रस्व और हरियानी में इसका विपरीत स्वर भी दीर्घ हा जाता है और व्यञ्जन भा दीर्घ। यथा—

खड़ी बोली		दक्खिनी	हरियानी
हस्ता	हायी	हत्ती	हात्थी

१ डा० मसूद हसन—'तारीख जवान ए उर्दू' पृष्ठ २३२ प्रवृत्ति।

प्राचीन उर्दू से मध्ययुग चलताते हुए भाषायी खोजक मिलमिन म प्रो० जूलियस व्लाक ने अपने एक लेख "हिन्दी आयायी भाषाओं की कुछ समस्याएँ" में हरियानी का महत्व प्रदर्शित किया है—(युनैस्विन स्टूल आण्ड थोरियल रुडीज़ा पृष्ठ ११२म ३०) उन्होंने कहा है कि पूर्वा पञ्जाब के तिलों की भाषा फारियों के जरिये दक्खिन तक पहुँची है और इसने समय के व्यञ्जनों पर साहित्यिक भाषा का रूप ल लिया है। डा० जूरन अपना पुस्तक 'लिसानियात' (भाषा शास्त्र) में भी यही विचार व्यक्त किया है। उनका कहना है कि उर्दू पर बागद या हरियानी का भी प्रभाव है। प्रो० शराना ने हरियानी जवान को उर्दू की पुरानी शकल कहा है। इनका तात्पर्य यह है कि उर्दू हरियानी को मुख्य आधार बनाकर विकसित हुई है।

स्वर्ण	सोना	सुन्ना	सौन्ना
पीका		पिक्का	पिक्का, पाक्का

वचन

१ दक्खिनी और हरियानी में बहुवचन बनाने की एक ही रीति है। दोनों में हिन्दी खड़ी बोली का भाति 'ओं' के स्थान में 'आ' लगाते हैं। यथा —

हिन्दी	हरियानी व दक्खिनी
डुकड़ा	डुकड़ा
किताबों	किताबा
ऊटा	ऊटॉ
गरीबा	गरीबा

(ऐसिया, औरता, गातिर आदि १।)

२ स्त्रीलिंग सज्ञाओं की अविकारी विभक्ति का बहुवचन साहित्यिक एही बाला म 'ए', 'ऐ' जोड़कर बनाया जाता है, पर हरियानी और दक्खिनी में 'आ' ही जोड़कर रूप बहुधा बनाये जाते हैं यथा — किताबें > किताबा।

क्रिया

१ हिन्दी की क्रिया खाकर, जाकर, आकर, साकर ४ स्थान पर दक्खिनी में खाय, जाय, आय, सोय मिलते हैं। हरियानी में इनके रूप खाकै, जाकै, आकै, सोकै हैं।

२ सहायक क्रिया के रूप में हरियानी में 'सू' 'स' मिलते हैं परन्तु दक्खिनी में ये रूप नहीं मिलते। वहाँ 'हू' और 'है' ही मिलते हैं।

३ साधारण भूतकाल बनाने के लिए हिन्दी की तरह 'आ' के स्थान पर 'बा' लगाने से दोनों बोलियों में क्रिया बनती है। यथा —

धातु	हिन्दी	हरियानी, दक्खिनी
मारना	मारा	मार्या
चलना	चला	चल्या
कहना	कहा	कह्या
लगाना	लगा	लग्या

हरियानी में इनके दूसरे रूप मारा, चला, कहा, लगा भी मिलते हैं जिन पर खड़ी बोली का प्रभाव प्रतीत होता है।

सर्वनाम

हरियानी और दक्खिनी में सर्वनामों के रूप प्रायः एक जैसे हैं, यथा—

हरियानी	दक्खिनी
---------	---------

उत्तम पुरुष बहुवचन— हम, हमें	हम, हमें
मध्यम पुरुष बहुवचन— तम, तम्हें	तम

अन्य सर्वनाम भी दोनों भाषाओं में एक से हैं ।

परसर्ग

हरियानी और दक्खिनी दोनों भाषाओं में दीर्घ काल से 'ने' विभक्ति 'कना' और 'कर्म' दोनों को बतलाती है । हिन्दी में 'ने' केवल कता के साथ आता है और वह भी सक्रमक क्रिया के साथ ।

हरियानी — मने साहब ने मार्या (मुझे साहब ने मारा)	
(कता, कर्म का एक ही प्रयोग)	अथवा
	(मिने साहब को मारा)

दक्खिनी—कता—'हस खातिर जुलैगा ने क्या करी ।'^१

कर्म—'आदमी बरा अच्छे तो शराब ने क्या करना ।'^२

अन्यत्र

परवाचक सर्वनाम और सम्बुच्चयबोधक अव्यय 'और' में खड़ी बोली में, कोई भेद नहीं किया जाता पर दक्खिनी में परवाचक तो 'और' है तथा सम्बुच्चयबोधक 'हीर' । हरियानी में परवाचक 'और' एवं सम्बुच्चयबोधक 'अर' है । यथा, राम अर स्वाम दोन्नु भाइ भाई सैं ।

उ हरियानी और समीपवर्ती बोलियों के नमूने

गत पृष्ठा में हरियानी और समीपवर्ती बोलियाँ का साधारण-सा अध्ययन हमने किया है । अब इन बोलियाँ के नमूने दिखाकर इस अध्याय को समाप्त करते हैं जिससे पाठकों को भाषागत अंतर समझने में सुविधा हो ।

हम यहाँ हरियानी के प्रख्यात विद्वान् प० शम्भूयाल जी दादरीवाले के साहित्य स कुछ अश उद्धृत करेंगे । पंडित जी बहुभाषाविद् थे और उनकी 'हस्तखानी' भाषा सप्तक' इस प्रदेश में बड़ी प्रसिद्ध है । विशेषता यह है

१ डा० समूद हमन—'तारीख जवान प उद्दू' पृष्ठ ५६ (सब रम किताब)

२ डा० समूद हमन—'तारीख जवान प उद्दू' पृष्ठ १६ (सब रम किताब)

कि एक ही भाव को लेकर भिन्न प्रदेशों की महिलाएँ अपनी अपनी जाली में कृष्ण के प्रति अपने हृदयोद्गारों को व्यक्त करती हैं। कृष्ण बालचापल्य वश यमुना में स्नान करती हुई महिलाओं के घस्त्र लेकर समीपस्थ वदम्ब पर चढ़ गए हैं। महिलाएँ विवश अग्रस्था में प्रार्थना करती हैं —

१ ब्रज गोपिका—

तुम बस्तर दो ब्रजवासी, करो मत शामी, श्याम शारी दासी। टेक।
 रिसभरी भयै ब्रजवाल, कहा नदलाल बजावत बैन।^१
 पूजी था जमुना के तीर, हरयो मेरो चीर कपकर तैने।
 इक तू ही अनोखी छैल, भयो बद फैल लगा दुख दैने।
 चल डोर चरा दिन दैने, सखियन स जरा मत सैने।
 हम जल में खरी वेचैने।
 दई^२ मारे दुख दियो गाढो^३, चुराकर चीर कदम पै भडो।
 हूँ गयो ग्रासी^४ हूँ गयो ग्रासी, तुम बस्तर दो ब्रजवासी।

२ पनामन—

मुण्डे चक^१ कुरती कड़ अगिया, लखले सानु^२ नगिया खडा हसदावे।
 षड खेजां कस दे नाल^३ नददागवाल^४ तू की दमदावे^५।
 सखिया नु सुहावदी न गल्ल,^६ हरे तेरा बल नी नसनसदावे।
 मुण्डा हुये^७ लीं^८ दिन दमदावे, की अचल^९ बिच फमदावे।
 का चार्ण भोग रगरमदावे।
 त्वाडी^{१०} हुय गल्ला नहीं माग्दी, मुण्डे तनु पनामण समझावदी।
 छड़ दे बदमासी, छड़ दे बदमासी, तुम बस्तर दो ब्रजवासी। टक।

३ मारवारण (राजस्थानी)—

शु^१ धाधीनता रै सामो,^२ श्याम धाक^३ आगे वीनती करम्या।
 जो पई^४ छै श्हा^५ क ग्याल, लाल ना धुरै फाल दुग्मरस्या।

१ घाणा। २ दुभाग। ३ कपिन। ४ भयानक। ५ उटाकर, चुराकर।
 ६ हमें। ७ पकड़कर। ८ बम क पाम। ९ नद का पुत्र। १० कहता है।
 ११ घात, हरकत। १२ अभी। १३ तू। १४ मीत। १५ तरी। १६ हम
 १७ साथ। १८ तुम्हारे। १९ पड़ता है। २० हमसे।

हुआ कैय्या^१ नीर से न्यारी, धारी लाजारी भारी भरस्या ।
 अटै ऊमी^२ प्राण विमरस्यो, जल बाहर पगना धरस्या ।
 दर बाइ^३ जी रे दरम्या ।
 काइ मरोस्यो बाहो, माक्को^४ करवाटे पीव मै म्हा क्को^५ ।
 याहो काइ^६ जाम्मी, याहो काउ जास्मी तुम वस्तर दो । टेक ।

४ हरियाणी—

कृही^७ की मोही राम गाम तेरी दोही रे, दोहो^८ रे ।
 हम ल्हुक^९ द्विप आइ न्हाए जलोए कडें घ्राए टोही रे ।
 यो मै आखिर नै होर, बको बेपीर निरोघोही^{१०} रे ।
 बिरा या के तन्नै सोही रे, म्हारो कड को जल लोहीरे ।
 नामान्नै निमोही र ।
 तौ आहये म्हारै हेर,^{११} राएडका, किमीक प्यारु फेर,
 देष तन्नै सहास्मी,^{१२} तैव तन्नै सहास्मी, तुम वस्तर दो । टेक ।

५ अहीर वाटी—

तू पेंदा^{१३} के सोल्ला सा, जलो सोयो दोल्ला सा कह को ?
 बिरा मै सु अरण्य नाम, जना घू गाम जाम सा जह को ।
 त्या मेरो लूधो^{१४} देदे फेर चाहे बेसक भेदे पट्ट को ।
 यो जी^{१५} तव मै दिन छहको, मेरे पहेँ कालजे जै न्हको ।
 नू नाम लिया कर वहको^{१६} ।
 जा स्यू मतक हाक्का, छोट केँ खाड माक फाक्कामा ।
 काल की गास्मा,^{१७} कान को गास्मा, तुम वस्तर दो । टेक ।

६ पूरवन—

कैमे मन्द मन्द मुस्कान गान मज बन्द न्हे क हुँया^{१८} ।
 कहा लख^{१९} मरा यमरा मै शक पयरी^{२१} मै रही रे न्हेया^{२०} ।
 मोरे उन्न करजवा^{२३} पीर, घाल ना धीर नेक निरण्या ।

१ कैमे । २ अडा हुड । ३ नन्द । ४ मय्य । ५ म्हारे । क्या ।
 ७ सहुन त्रे मे । ८ दुहाडें हे । ९ लुक । १० निगुग । ११ प्रोर तरन ।
 १२ दही, मग्ग । १३ हम तरह । १४ छोन्ना । १५ जीन्न । १६ धइका ।
 १७ डम भगवान का । १८ ग्राम, लुकन । १९ लइका । २० विशेष
 स्वरगुणा । २१ पमन्ना । २२ निन्ध, त्रिमही ना भर गइ हो ।
 २३ कजेवा ।

एहो सुनही धेन खरिया, कहा धिरकत^१ ताता धैया ।
तेरी रोय भरंगी मैया ।
मैं ठाकी गरी कर जोरे, एहो रे सुन पाहि नृप^२ मोरे ।
तोरे तोहि फारसी तारे तोहि फारसी, तुम बस्तर दो । टेक ।

७ दिल्लीवाली—

हरम हजर रहते हैं दूर किम दम^३ जनाय के दम से ।
दम कौहें दमका महमान^४ ३ फिर ये जान मिलै आ हमसे ।
दमसा^५ बन मत चना, दिल आहना रहो इस दम से ।
मुश्क^६ मुश्ताक^७ कदम से गोया लौटी जान अदम^८ से ।
दे सत्रको फचन^९ एक दम से ।
दम पर दम शम्भु^{१०} रटे सरासर यम का सीना फटे ।
नटे चौरासी कटे चौरासी तुम बस्तर दो ब्रजवासी । टेक ।

आशा है इस तुलनात्मक अध्ययन से पाठकों को हरियानी बोली का विशिष्टता स्पष्ट प्रतीत हो गई होगी। यह बोली आने आप में समृद्ध एवं आकर्षक है।

ऊ हरियानी में साहित्य सृजन के अभाव के कारण

शौरसेनी अपभ्रंश की पश्चिमोत्तरा बोली हरियानी एक प्राचीन बोली है और दिल्ली के समीपवर्ती प्रदेश में एक सुग्रीधकाल से जनपदीय जनता के व्यवहार की भाषा रही है। इस बोली के प्रति इसने बोलने वालों का अगाध प्रेम है, परन्तु यह एक आश्चर्य की बात है कि इस बोली में कोई साहित्यिक कृति उपलब्ध नहीं है। इसका कई कारण हैं —

१ (क)—यह रोहतक, हिसार, करनाल, दिल्ली तथा जींद आदि जिलों की बोली है। यह प्रदेश दिल्ली राज्य के अन्तर्गत रहा है। मध्य युग में दिल्ली पर तामरवशीय तथा पीछे चौहानवशीय राज होने से इस प्रदेश की बोली को कोई गौरव नहीं मिला। राजपूतों के राजत्वकाल में राजस्थानी बोली राजभाषा के पद का मुशोमित करती रही और उसी बोली में तत्कालीन वीरगाथा साहित्य का सृष्टि हुई।

१ नाचना । कस । २ किसी समय तो । ३ धोखा । ४ दोस्त, मित्र । ५ प्रेमा । ६ परलोक से । ७ मौद्र्य, गति । ८ शम्भुदास जी, त्रिमाता ।

(ख) इतिहास साक्ष्य से प्रमाणित है कि हरियाना के सैनिक दिल्ली की नगरी में बहुत अधिक संख्या में रहते रहे हैं, परन्तु वे केवल सैनिक ही थे। अतः उनकी मातृभाषा जिसका प्रयोग वे करते होंगे, छावनी-क्षेत्र तक सीमित रही। उसे राजाशय न मिला और वह उपेक्षित पड़ी रह गई।

(ग) दिल्ली ने राजनैतिक परिवर्तनों का बड़ा गहरा प्रभाव इस इलाके पर पड़ा। फलस्वरूप इस इलाके का भाषा में कोई न्यायित्व न था पाइ और साहित्य-सृजन में बाधा पड़ी।

२ मुसलमानों ने जब लाहौर छोड़कर दिल्ली का राजधानी बनाया तो भाषा में इतिहास में एक नया अध्याय आरम्भ हुआ। दिल्ली ने राजप्रासादा (शाही महलों) से गहर 'उर्दू ए मुअल्ला' में एक अजीबोगरीब भाषा ने जन्म लिया और उसमें स्थानीय शक्तियों के साथ विदेशी शक्तों का मिश्रण आरम्भ हुआ। इस मिश्रण में हरियानी का बड़ा प्रभाव था। कहीं-कहीं पूर्वी पश्चिमी की छाप भी थी किन्तु नगण्य रूप में। हरियानी के प्राचीन अवशेष शक्ति के 'रानी औरगादी' का कविताओं में देखने को मिलते हैं। यह काल हरियानी के भाष्योदय का था। यदि इस समय यह भाषा दक्षिणी के रूप में मुसलमानों द्वारा बहुत दूर तक अपनाई गई होती तो आज हमें हरियानी का उड़ी सुन्दर सुन्दर शान्तियों मिल जातीं। परन्तु दिल्ली और लखनऊ के नरस शब्दावलि के प्रात विशेष रुचि रखने वाले लेखकों ने उस दक्षिणी पर नजर लगाना आरम्भ किया और परिणाम जो होगा था वही हुआ। हरियानी जो उर्दू की धार के रूप में थी उसे गवारू बोला कहकर बहिष्कृत कर दिया गया। इस प्रकार, हरियानी साहित्य के आसन के सदा के लिए पदच्युत हो गई।

३ धार्मिक आन्दोलन काल में ब्रजभाषा ने द्वारा साहित्यिक प्रतिष्ठा प्राप्त कर लेने में कारण हरियानी को फिर एक प्रबल आघात पहुँचा। इस प्रदेश में किसी धार्मिक परम्परा के आभाव में यहाँ की भाषा उपेक्षित रह गई। हरियाना प्रदेश के सतों ने अपनी वाणियों के लिए स्थानीय बोलियों का आशय न ले उम्मी साहित्यिक क्षेत्र में लब्ध-प्रतिष्ठ ब्रज और राजस्थानी की प्रथम दिया। गुरुप सम्प्रदाय इस और एक ऐतिहासिक कार्य कर सकना था परन्तु उस संस्था ने भा इस बोली को नहीं सकारा। यों इन सभी सतों की वाणियों में हरियानी का उगाहरण तो यत्र-तत्र निरतरे मिलते हैं परन्तु उनमें सम्यक् साहित्यिक महत्व का कुछ अनुमान नहीं होता।

४ यह भा विचारणाय है कि इस प्रदेश के किसी प्रभावशाली पद्य

प्रतापो नरेश का पता नहा मिलता । इस प्रदेश में अधिकतर ग्रामीण किसानों की ही वस्तियाँ हैं जो खेती-बाड़ी के काम में व्यस्त रहते हैं और साधारण एव सतोप का जीवन व्यतीत करते हैं । उनमें प्रतिभा का नवनवामेप कहाँ ? परिणाम स्वरूप किसी प्रतिभा सम्पन्न व्यक्ति का प्रसाद न मिलने से हरियाना का साहित्य समृद्ध न हो सका । ब्रज का सूर और निहारी का कला-वैभव प्राप्त था । श्रवधी का जायसा और तुलसा ने अध्व दिया । विद्यापति को पाकर मैथिली धन्य हुई और बगला को "कामलकांत पदावलि प्रदाता" चंडीदास मिला । राजस्थानों का चंद्र और नाल्ह के रूप में दो उपासक मिले । पजाबा को बुल्लेशाह के गोलों पर गर्व है । परन्तु हरियानी को न तुलसी की प्रतिभा प्राप्त हुई और न निहारी की वाग्बिभूति, न विद्यापति का पिकण्ठ और न चंडा दास का मधुर-पद विन्यास । ऐसी दशा में हरियानी का समृद्ध साहित्यिक भाषा के रूप में न पनपना स्वाभाविक ही है । हरियाना में ५० शम्भुदयाल जो जैसे प्रतिभा-सम्पन्न कवि अवर्य हुए परन्तु उनमें युग प्रवर्तक नेता ने महान् गुण न थे । उन्होंने अपनी प्रतिभा के प्रकाश के लिए लोभान्ध ब्रज भाषा को हा अध्व दिया ।^१ उनके 'स्विमयी मंगल' आदि ग्रंथ जो ब्रज का सम्पत्ति हैं, उत्तम ग्रंथों की कोटि में आते हैं । यही प्रतिभाशक्ति यदि हरियानी के सवारने में व्यय हाती तो इस भाषा का कितना उपकार हा जाता ?

परन्तु इन सबसे यह न समझ लेना चाहिए कि हरियानी में भाव प्रकाश की शक्ति नहीं रह गई है । इस बोली का लोक-साहित्य बढ़ा समृद्ध है । विशपकर श्रवदान (वैलेड्स) और किस्म जो यहाँ के जातीय गायकों के पास सुरक्षित हैं, सम्पन्न कोटि में हैं । उनसे इस बोली का अभिव्यजनशक्ति का यथार्थ ज्ञान ही जायेगा । वस्तुतः हरियाना के किस्सा (गाथात्रा) पर पृथक हा अध्ययन का आवश्यकता है ।

यहाँ तक ता बात हुई हरियानी में साहित्यिक कृतियाँ ने अभाव का, परन्तु इस स्थान पर यह भी देखा लेना चाहिए कि इस बोली में भाषा शास्त्र व विद्यार्थी के लिए बड़ी राबक सामग्री भरा पड़ी है । कुछ पुराने नमूने भी हैं । इम आरपटल कालच, लाहीर, मैगजान नवम्बर १९२१ और फरवरी १९३२ में प्रकाशित प्रा० शेराना न लेख मुख्य हैं । इनमें आंतरिक हमार

१ ५० शम्भुदयाल जो दादरी क रहनवाले थे ता रियासत जाद की लहसाल है और महाराजा जार्ज क राजकवि थे । इन्होंने तीन पुस्तकें ब्रज भाषा में 'रति शला' पर लिखी हैं । पुस्तकें हैं—१ स्विमयी मंगल, २ कृष्ण लोला, और ३ जोगन लाला ।

सामने हरियानी के कई प्राचान लेखकों के साहित्यिक नमूने भी हैं जिनमें शेख अब्दुला अन्सारी, शेख महबूब आलम, भूषर निवासी, अकरम रौहतकी उपनाम 'कुतबी', शाहअब्दुल हकीम, शाह गुनाम जीलानी रौहतकी के लेख उल्लेखनाय हैं।^१ उपरोक्त लेखकों के अतिरिक्त भाषायी दृष्टिकोण से सबसे अधिक माननीय लेख आलमगीर काल के मशहूर फारसी विद्वान् मीर अब्दुलगासै हासबी की 'समदगारो' और 'फरहग गराबुल लुगात' हैं। किन्तु ये सब भाषा विषयक सामग्री से पूरा कुछ लेख मान ही हैं। इन्हें ठुम स्थायी साहित्यिक कृतियों में स्थान नहीं दे सकते।

१ २१० समूहमन "तागीर जयान व उद्दू" पृष्ठ २३५

२ व्याकरण की दृष्टि से

हरियानी बोली का घर और क्षेत्र विस्तार जानने के पीछे अब उमका स्थूल व्याकरण देख लेना शेष है। इन पक्तियों में इसी की पूर्ति का प्रयत्न किया गया है।

उच्चारण

हरियानी बोली का समीपवर्ती भाषा बोलियों से शैली की दृष्टि से को-विशेष अन्तर नहीं है परन्तु स्वर एव उच्चारण की दृष्टि से यह इन पड़ोसी बोलियों से पर्याप्त मात्रा में भिन्न है। शब्द का आरम्भिक 'अकार' सदैव विलम्बित खिचा हुआ हो जाता है अर्थात् उसका उच्चारण खुला, मंद एव रुद्ध-सा हाता है। (a 'is pronounced with broadness' coarseness and with a drawl) हरियानी का निवासी 'अच्छा' शब्द का 'आच्छा' ही नहीं बरिक्त 'आऽऽच्छा' उच्चारण करता है। यह प्रवृत्ति मध्यम एव अन्तिम अकार में भी देखी जाती है। आनेवाले या व्यतीत स्नि के लिए जो 'कल' शब्द है वह भा 'काल' ही नहीं 'काऽऽल' बाला जाता है। पञ्जाबी भाषा में सुनाइ पड़नेवाला 'जट' यहा केवल जाट ही नहीं 'जाऽऽट' हो गया है। और देखिए, 'जम्ना' उत्पन्न होना 'जाम्ना', 'चल्ना' (बाना) 'चालना', और 'नहीं' निषेधार्थक 'नाहीं' हो जाता है।

स्वराघात युक्त दीर्घ स्वर के बाद के व्यञ्जन का इसमें द्वित्व हो जाता है। तब दीर्घ स्वर प्रायः ह्रस्व हो जाता है। इस प्रकार द्वित्व व्यञ्जन के पृथ के स्वर इ, ऊ, ए, आ क्रम से ह्रस्व इ, उ, ऐ, ओ म परिणत हो जाते हैं। इसका अपवाद केवल 'आ' है। यथा—गाड्डी, आपू, बुग्गा, मिग्गा (सीला), वेडा, रात्री।

अकार के अतिरिक्त दूसरे स्वर भी परिवर्तित हाते हैं। यथा 'पीछ' हरियानी में 'पाच्छ' हो जाता है। 'सीधा' शब्द 'सूधा' और 'उठना' शब्द 'ऊठना' हो जाता है। पञ्जाबी 'टन्वर' (बालक नहे) हरियानी में 'गवर' होता है।

हरियानी बोली में सङ्कृत तथा प्राकृत के शब्दों का प्रयोग बहुत हाता है। यह आश्चर्य हाता है कि रेतिहर किसान ने कितना श्रद्धा से अपने

पुराने शब्दों का पानी देकर हरा रखा है। भूमिहर के मुन्व में निवास करता हुआ बलद (बलिबर्द) तथा 'गोहृत्वा की रास ठाली के' में राम (राशि) शब्द का ही फूड अरु है।

क नाम प्रक्रिया

(अ) कारक विभक्ति

१ साहित्यिक हिन्दी की भाति क्ताकारक 'ने' लगाने से और सम्बन्ध कारक 'का' लगाने से बनता है किन्तु सम्प्रदान कारक की विभक्ति भी 'ने' है, हिन्दी की भाति 'को' नहीं लगती। अपादान कारक हिन्दी 'से' के स्थान में ब्रज का तरह 'ते' 'तैं' या 'के धारेते' के प्रयोग से बनता है। अधिकरण कारक का चिह्न भी ब्रज की तरह 'में' तथा 'प' है। 'पर' का प्रयोग नहीं होता। एक विचित्रता यह है कि कर्मकारक या तो कर्तृकारक की भाँति होता है अथवा सम्प्रदान कारक की भाँति जिसमें 'ने' विभक्ति लगी होती है। अतः ऐसे स्थानों पर जहाँ कर्म और करण दोनों कारकों में 'ने' विभक्ति का प्रयोग हुआ है वहाँ अर्थ प्रकाश में कठिनाई होती है क्योंकि क्रिया के कर्ता और कर्म का एक ही जैसा रूप होता है यथा—'मन्ने साहब ने माया'। इस वाक्य से पता चलना कठिन है कि किसने किसको मारा अर्थात् साहब ने मुझे मारा या इसके विपरीत मने साहब को मारा। इस स्थान पर श्रोता भ्रम में पड़ जाता है। यह कठिनाई एक प्रकार बच जाती है जहाँ सकर्मक क्रिया है वहाँ कर्म का कर्तृवत् और कर्ता का करण की भाँति रखना हाता है। यथा—'मैं साहब ने माया' अथवा 'छोरा साहब ने पकड़या'। उन स्थानों पर जहाँ क्रिया का अकर्मक प्रयोग है, वहाँ कर्म को सम्प्रदान रूप में और कर्ता को कर्तृकारक में रखें, यथा—'छोरे ने पोनास ले गई' आदि।

२ हरियानी में अपादान कारक को व्यक्त करने के लिए 'से' के स्थान में 'भेरेते' और 'भेरे धारेते लिया' में कुछ अन्तर नहीं है। जहाँ अपादान का भाव करणकारक द्वारा व्यक्त किया जाये वहाँ 'धारेते' का ही प्रयोग

१ इस स्थान पर एक घटना स्मरण हो आती है कि हरियाने में चालीमा काल पड़ा हुआ था और जानघर द्विबिजन में प्लेग की महामारी आई हुई थी। जनता घरों को छोड़ शिविरों में पड़ी थी। उम समय इस काल पीड़ित जनता को महायनाथ जानघर में ले जाकर लगाया। परन्तु वहाँ भारतीय एवं अन्तर्देशीय अधिकारों का उन्नी बात नहीं समझ पाते थे और यह उद्देश्य पूरा न हुआ जिसके लिए उन्हें भेजा गया था।

—'विज्ञान रोहितक गनेश्वर' भाषा विषयक भाग, मन् ११०

२ व्याकरण की दृष्टि से

हरियानी बोली का धर और क्षेत्र विस्तार जानने के पीछे अत्र उसका स्थूल व्याकरण देख लेना शोप है। इन पक्तियों में इसी की पूर्ति का प्रयत्न किया गया है।

उच्चारण

हरियानी बोली का समीपवर्ती भाषा बोलियों से शैली की दृष्टि से कोई विशेष अन्तर नहीं है परंतु स्वर एव उच्चारण की दृष्टि से यह इन पड़ोसी बोलियों से पर्याप्त मात्रा में भिन्न है। शब्द का आरम्भिक 'अकार' सदैव विलम्बित खिंचा हुआ हो जाता है अर्थात् उसका उच्चारण खुला, मद एव रुद्ध-सा होता है। (a 'is pronounced with broadness' coarseness and with a drawl) हरियानी का निवासी 'अच्छा' शब्द का 'आच्छा' ही नहीं बल्कि 'आऽऽच्छा' उच्चारण करता है। यह प्रवृत्ति मध्यम एव अंतिम अकार म भी देखी जाती है। आनेवाले या व्यतीत तिन के लिए जो 'कल' शब्द है वह भी 'काल' ही नहीं 'काऽऽल' वाला जाता है। पञ्जाबी भाषा में सुनाइ पड़नेवाला 'जट' यहा केवल जाट ही नहीं 'जाऽऽट' हो गया है। और देखिए, 'जम्ना' उत्पन्न होना 'जाम्ना', 'चलना' (जाना) 'चालना', और 'नहीं' निषेधार्थक 'नाहीं' हो जाता है।

स्वराघात युक्त दीर्घ स्वर के बाद के व्यञ्जन का इसमें द्वित्व हो जाता है। तब दीर्घ स्वर प्रायः ह्रस्व हो जाता है। इस प्रकार द्वित्व व्यञ्जन के पूर्व ङ स्वर इ, ऊ, ए, ओ क्रम से ह्रस्व इ, उ, एँ, ओँ में परिणत हो जाते हैं। इसका अपवाद केवल 'आ' है। यथा—गाइड़ी, बापू, बुभा, मिग्गा (सीन्वा), वेडा, राट्टी।

अकार के अतिरिक्त दूसरे स्वर भी परिवर्तित होते हैं। यथा 'पीछ' हरियानी में 'पाच्छ' हा जाता है। 'सीधा' शब्द 'सूधा' और 'उठना' शब्द 'ऊठना' हो जाता है। पञ्जाबी 'टन्नर' (चालक नहे) हरियानी म 'टन्नर' होता है।

हरियानी बानी में सट्टन तथा प्राङ्गन क शब्दों का प्रयोग बहुत होता है। यह आश्चर्य होता है कि रोतिहर किसान ने कितना श्रद्धा से अपने

पुराने शब्दों को पानी देकर हरा रखा है। भूमिहर के मुख में निगल करता हुआ बलद (बलिबर्द) तथा 'गेहुआ की रास ठाली के ?' में राम (राशि) शब्द का ही फूहड़ अर्थ है।

क नाम प्रक्रिया

(अ) कारक विभक्ति

१ साहित्यिक हिन्दी की भाँति कर्ताकारक 'ने' लगाने से और सम्बन्ध कारक 'का' लगाने से बनता है किन्तु सम्प्रदान कारक की विभक्ति भी 'ने' है, हिन्दी की भाँति 'को' नहीं लगती। अपादान कारक हिन्दी 'से' के स्थान में ब्रज का तरह 'ते' 'तैं' या 'के घोरेते' के प्रयोग से बनता है। अधिकरण कारक का चिह्न भी ब्रज की तरह 'में' तथा 'पे' है। 'पर' का प्रयोग नहीं होता। एक विचित्रता यह है कि कर्मकारक या ता कर्तृकारक की भाँति हाना है अथवा सम्प्रदान कारक की भाँति जिसमें 'ने' विभक्ति लगी होती है। अतः ऐसे स्थानों पर जहाँ कर्म और करण दोनों कारकों में 'ने' विभक्ति का प्रयोग हुआ है वहाँ अर्थ प्रकाश में कठिनाई होती है क्योंकि क्रिया के कर्ता और कर्म का एक ही जैसा रूप होता है यथा—'मन्ने साहब ने माया'। इस वाक्य में पता चलना कठिन है कि किसने किसको मारा अथवा साहब ने मुझे मारा या इसके विपरीत मने साहब का मारा। इस स्थान पर श्रोता भ्रम में पड़ जाता है। यह कठिनाई एक प्रकार बच जाती है जहाँ सक्मक क्रिया है वहाँ कर्म को कर्तृवत् और कर्ता को करण की भाँति रखना होता है। यथा—'मैं साहब ने माया' अथवा 'छोरा साहब ने पकड़या'। उन स्थानों पर जहाँ क्रिया का अकर्मक प्रयोग है, वहाँ कर्म को सम्प्रदान रूप में और कर्ता को कर्तृकारक में रखें, यथा—'छोरे ने पोलीस ले गइ' आदि।

२ हरियाना में अपादान कारक का व्यक्त करने के लिए 'से' के स्थान में 'मेरेते' और 'मेरे घोरेते लिया' में कुछ अन्तर्ग नहीं है। जहाँ अपादान का भाव करणकारक द्वारा व्यक्त किया जाये वहाँ 'घोरेते' का ही प्रयोग

१ इस स्थान पर एक घटना स्मरणा हो जाती है कि हरियाने में एक-एक काल पड़ा हुआ था और जालधर द्विचन में प्लेग की महामारी हुई थी। जनता घरों को छोड़ शिविरों में पड़ी थी। उस समय इस कठिन-पादित जनता को महायथाध जालधर में ले जाकर रखा गया। भारतीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय अधिकारी यहाँ उनकी यात नहीं मसक यह उद्देश्य पूरा न हुआ निम्नके लिए उन्हें भेजा गया था।

—'त्रिना रोहितक गजेपियर' भाषा विषयक

नहीं होता। केवल 'मेरेते' का ही प्रयोग होता है यथा—'भरे ते नाहीं हा सके' अथवा 'मेरे ते नाही दिया जा' आदि।

(३) (क)—'मारना' क्रिया के कर्म के साथ पुल्लिंग सम्बन्धवाचक विभक्ति लगाई जाती है। यथा—मने इस छोरे के मार्या, मने इस छोरी के मार्या, मने इमने थप्पड़ मार्या आदि।

(ग) यह अग्रस्था तत्र भी दिखाई पड़ती है जब द्विती सम्बन्ध सूचक विभक्ति 'उसके पास' के स्थान में पुल्लिंग सम्बन्धसूचक विभक्ति लगाई जाती है। यथा, इस प्रश्न के उत्तर में—'क्या तुमने मेरा प्लद देखा है?' उत्तर होगा 'मने इस पाली के देगा' अर्थात् मने इसे ग्वाले के पास देखा।

(४) कर्मकारक का चिह्न जहाँ दिशा का भाव व्यक्त हो, छिप जाता है यथा 'गाम गया', 'रोहतक गया', आदि।

(आ) सज्ञा के रूप या विकार

१ सज्ञा में विकार प्रायः हिन्दी की भाँति होता है। विशेष अधोलिखित है—

(क) विकारी कारकों (Oblique Cases) पुल्लिंग अथवा स्त्रीलिंग सज्ञाओं के बहुवचन के रूप 'आ' लगाने से बनते हैं, अतः म हिन्दी की भाँति 'ओ' नहीं लगता। यथा—

पुल्लिंग

छोरा (लड़का)

एकवचन

सम्बोधन—ऐ छोरे

विकारी } छोरे
कारक }

बहुवचन

ऐ छोरों

छोरा

स्त्रीलिंग

छोरी (लड़की)

एकवचन

सम्बोधन— ऐ छोरा

विकारी कारक—छोरी

बहुवचन

ऐ छोरा

छोरा

(ख) स्त्रीलिंग सज्ञाओं के कर्तृकारक में एकवचन और बहुवचन के रूप समान होते हैं, यथा—

एकवचन

कर्ता कारक— छोरी गई

बहुवचन

छोरी गई

आपने कितनी लड़कियाँ हैं ? उत्तर मिलेगा 'तीन छोरी हैं' । यहाँ 'छोरी' शब्द में विकार नहीं आया है ।

(ग) 'आ' लगाकर विकारी कारक बहुवचन बनाने की इस प्रक्रिया में एक अपवाद भी मिलता है । यथा—'घर जा', 'घर जाओ' में एकवचन में भी यद् विकार आया है ।

र सवनाम के रूप

पुरपञ्चक सर्वनाम्

सर्वनाम प्रक्रिया में हरियाना में हिन्दा से पर्याप्त अन्तर है । उत्तम पुरुष और मध्यम पुरुष के करण कारक और कर्म कारक एकवचन और बहुवचन में 'ने' विभक्ति का विकल्प से प्रयोग होता है । सम्भवत 'ने', 'में' और 'तैं' के अनुनासिक का ही श्रृंखल बन गया है, यथा—

उत्तम पुरुष

	एकवचन	बहुवचन
कर्ता कारक	मैं	हम
कर्म कारक	मैं, मन्ने	हम, हमने
करण कारक	मैं, मन्ने	हमा, हमने
सम्प्रदान कारक	मन्ने	हमने
अपादान कारक	मेरे ते, मेरे घोरे ते मत्ते	म्हारे ते, म्हारे घोरे ते, हमते
सम्बन्ध कारक	मेरा	म्हारा

मध्यम पुरुष

	एकवचन	बहुवचन
कर्ता कारक	तु, तू	तुम
सम्प्रदान कारक	तु, तू	तुम
कर्म कारक	तु, तू, तन्ने	तुम, तुम्ने
करण कारक	तैं, तन्ने	तुमा, तुम्ने
सम्प्रदान कारक	तन्ने	तुम्ने
अपादान कारक	तेरे ते, तेरे धार ते, तुत्ते	याम्ते, यारे धारे ते, तुमते
सम्बन्ध कारक	तेरा	त्यारा

हरियानी में 'तुम' के स्थान पर 'तम' और 'थम' दोनों बोले जाते हैं ।

सकेतवाचक सर्वनाम

(योह) (यह), ओह (वह)

यहाँ पर हिन्दी से विशेषता यह है कि कर्ता कारक एकवचन में स्त्रीलिंग सर्वनाम का रूप अपना पृथक् अस्तित्व रखता है । यथा —

योह (यह)

	एकवचन	बहुवचन
कर्ता कारक	योह पुल्लिंग } याह स्त्रीलिंग }	ये
कर्म कारक	क योह ख हीने, ईने	ये इनने
करण कारक	इसने, हीने	इनने
सम्प्रदान कारक	हीने	इनने
अपादान कारक	हीते हीं धोरे ते	इनते, इन धोरे ते
सम्बन्ध कारक	इसका, हीका ओह (वह)	इनका

एकवचन

बहुवचन

कर्ता कारक	ओह पुल्लिंग } वाह स्त्रीलिंग }	वे
कर्म कारक	क ओह } ख उसने }	वे
करण कारक	उसने	उनने
सम्प्रदान कारक	उसने	उनने
अपादान कारक	उसते, उसते धारे ते	उनते, उन धोरे ते
सम्बन्ध कारक	उसका	उनका

सम्बन्ध सूचक सर्वनाम

जो

कर्ता कारक

जा

जो

कर्म कारक	क जो	क जो
	ख जिसने, जीने	ख जिस, जिसने
शेष, मया—सकेतवाची सर्वनाम ।		

प्रश्नवाचक सर्वनाम

कौन

एकवचन 'कौन' सदैव सम्बन्धवाचक सर्वनाम 'जो' के साथ आता है ।
विकारी कारका में इसका रूप 'की' या 'किस' होता है ।

के (क्या)

कृता कारक	के
कर्म कारक	के
सम्बन्ध कारक	क्या का

अनिश्चयवाचक सर्वनाम

कोड़

इसका कर्म कारक का रूप 'काई' या 'किस्ते ने' होता है । विकारी कारक
'किस्ते' के साथ विभक्तियों लगाने से बनता है ।

विरोध १ कर्ण कारक में जब 'ने' विभक्ति के बाद में निषेधवाचक
शब्द हो तो 'ने' विभक्ति सर्वनाम में एकीभूत हो जाता है ।
यथा—किन्सा ना कहा । (यह किसी ने नहीं कहा) ।

२ हिन्दी 'किसी ना किसी' के लिए हरियानी में 'किस्तै ते किम्सै'
का प्रयोग होता है ।

३ कर्तृकारक में ही इसका बहुवचन होता है और किसी कारक
में नहीं ।

कुछ

इसके प्रयोग में 'वास्ताना' 'कुछ नहीं' से अच्छा माना जाता है ।

ग क्रिया-विरोध

हरियानी के क्रिया-विरोध अन्ना विरोध स्थान रखते हैं । यथा—
काल—(अनेकाला या मना हुआ दिन) हम्बे, धार, पाछे, इब (अब), जिन,
(जब, तब), कद् (कद) बदे (कहाँ) कित, कइ, जितोइ, कीप (दिपर) अदे,

आड़े, इत (यहाँ), इत, ईधे (इधर), उत, ऊड़े (वहाँ), उत (उधर), न्यु (इस प्रकार, अतः) ।

घ क्रिया (कर्तृवाच्य)

भाव्यवाचक (The infinitive)

अविकृत भाव्यवाचक क्रिया में (The uninflected infinitive) हिन्दी की नाइ 'ना' अत म आता है । यथा —सच बोलना ग्राह्य है ।

विकृत भाव्यवाचक क्रिया में अतिम अक्षर का लोप कर दिया जाता है और मधुरता लाने के लिए कभी-कभी अतिम 'न' से पहिले ह्रस्व 'अ' का आगम कर लिया जाता है । यथा —पीवन के लाइक पायी ।

खान जोग, मरन आला, सोअन आला, ऐह जाअन आला ।

भविष्यत्कृदन्त (The Future participle)

भविष्यत्कृदन्त बनाने के लिए विकृत भाव्यवाचक क्रिया में 'आला' जोड़ा जाता है । यथा — करना करन आला

मरना मरन आला

वर्तमान कृदन्त (The Present Participle)

वर्तमान कृदन्त के रूप में हिन्दी की तरह होते हैं, यथा —जाता, खाता आदि । आना क्रिया के रूप में अपवाद है । इस क्रिया के रूप होते हैं—आम्ता, आम्ते आदि ।

भूत कृदन्त (The Past Participle)

भूत कृदन्त बनाने के लिए घातु और अतिम 'आ' के बीच 'न' के स्थान पर 'य' कर दिया जाता है । यथा —

मारना मार्या

गाढना गाड्या

करना कया

सीमना सीम्या

इस नियम में अपवाद भी है, यथा, होना—'हुआ' कहीं 'होया' भी देखने को मिलता है । यथा —'राजा के पुतर होया' ।

देना दिया

लेना लिया

बाना गिया

आज्ञार्थक क्रिया (The imperative)

आज्ञार्थक क्रिया का एकवचन हिन्दी की मॉति शुद्ध घातु का रूप होता है।
यथा—मार, खा, जा आदि।

बहुवचन में भी हिन्दी जैसे रूप होते हैं। यथा—मारा अथवा मारो या मारिया।

सहायक क्रिया (The auxiliary verb)

वर्तमान

एकवचन	बहुवचन
मैं सू	हम सा
तु सै	तुम सो
आह सै	वे सें

भूत -

भूत सहायक क्रियाएँ हिन्दी जैसा हाती हैं, केवल इतनी विशेषता है कि
छालिग बहुवचन का रूप 'थी' होता है, न कि 'थी'।

सामान्य वर्तमान काल

इसके रूप होते हैं—'मैं करूँ सू' या 'मैं करूँ' 'हम चला सा' अथवा 'हम
चला'। ये हिन्दी के 'मं जाता हूँ' अथवा 'मं जाता' के ढंग के हैं।

निरिचत वर्तमान काल

एकवचन	बहुवचन
मैं कर रिहा सू	हमकर रिहे सा
तु कर रिहा सै	तुम कर रिहे सो
आह कर रिहा सै	वे कर रिहे सें

विशेष—यदि इस काल में से सहायक क्रिया को हटा दें तो सामान्य वर्तमान
का भाव इटकर पूरा वचनान का भाव आ जाता है, यथा—'ओ
आ रिहा' का तात्पर्य—'वह आ चुका है।'।

भविष्यन् काल

यह काल 'गा' जोड़ने से बनता है जैसा कि हिन्दी में होता है। उचन पुरुष
बहुवचन का रूप होता है, 'करोगे', 'करेंगे' नहीं होगा।

अपूर्ण भूत

मैं करूँ था	हम करा थे
तुम करे था	तुम करो थे
ओह करे था	वे करें थे

सभाव्य भविष्यत्

यह काल भी हिन्दी की तरह बनाया जाता है ।

क सामान्य भूत के प्रयोग द्वारा, यथा —

जे पछवा चल जाय तो समे की आस हो जाय ।

ख भविष्यकाल के प्रयोग द्वारा, यथा —

जे तू काट लेगा तो मैं मारूँगा !

इन रूपों के अतिरिक्त कुछ मुहावरेदार प्रयोग भी मिलते हैं जिनकी तालिका नीचे दी जाती है —

१ भूत कृदन्त का प्रयोग, यथा — मरे पाछे (हिन्दी—मरने के पीछे)
उसने गये ने कै साल हूप ?

२ लेना क्रिया अकर्मक घातु के साथ मिलकर अकर्मक क्रिया बन जाती है और इस प्रकार पूर्णता का अर्थ देती है, यथा —

क हो लिया (समाप्त हो गया)

ख आ लिया (आ चुका है)

३ प्रभावशाली बनाने के लिए मुख्य क्रिया के साथ 'रखना' जोड़ा जाता है । यथा — अर्धी दे रखना, बाड़ी बो रखना, मेज रखना, खोल रखना ।

४ आशय क्रियाओं के साथ दो नकारात्मक शब्द जोड़े जाते हैं । यथा —
मत ना चलियो ।

५ 'रखना' क्रिया का भूतकालीन रूप एक विशेष मुहावरे के रूप में प्रयोग किया जाता है जिसका अर्थ होता है—समाप्त होना, रुकना, या छोड़ देना । यथा—देखन ते बैठरिदे सँ (देखना समाप्त हुआ) ।

रुख होअनते बैठ रिहासे [होना (बटना) रुक गया है] ।

कहन ते बैठ रिहासू (कहना भी छोड़ा) ।

कर्मवाच्य

कर्मवाच्य का बनाना हिन्दी की तरह होता है । परन्तु हिन्दी का 'मैं मारा जाता हूँ' हरियानी में 'मैं मारा जाऊँ सू' हाता है ।

कर्मवाच्य का प्रयोग बहुत ही कम होता है। ग्रामीण लोग इस प्रयोग के स्थान में कर्तृवाच्य प्रयोग करते हैं। अपवाद स्वरूप एक दो स्थानों पर इसका प्रयोग आता है। यथा—मैं मारा किया। ग्रामीण जन इस वाच्य को 'वृत्त वायु द्वारा उखाड़ा गया, को कर्मवाच्य में नहीं प्रयोग करते बल्कि वे बोलेंगे कि 'वायु ने पेड़ को गिरा दिया' या वृत्त वायु से गिर गया आदि।

यह हरियानी बोली का स्थूल व्याकरण है। हरियानी बोली समझने में कुछ कठिन है। यह पैले उच्चारण के साथ विलम्बित गति से बोली जाती है। प्रत्येक व्यक्ति इसका अभ्यास नहीं कर सकता।



तृतीय अध्याय

लोक-गीत

अ लघुगीत

पूर्वपीठिका

हरियाना प्रदेश में लोक-गीत साहित्य प्रचुर मात्रा में मिलता है। उसका प्रसार एवं विस्तार इतना अधिक है कि जीवन का कोई पक्ष, भाव तथा व्यापार ऐसा नहीं हो जो लोक-गीतों के ज्वन में न आता हो। प्रत्येक भाव को बहन करने की क्षमता इन लोक-गीतों में विद्यमान है। परिष्कृत मेधा की उहापोह भले हा इनमें न दीख पड़े, पर कोमल से कोमल भाव इन गीतों के अंग बने हुए हैं। सस्कृत के एक विवेचक ने बिस बात की—

न स शब्दो न तद्वाच्यं न स न्यायो न सा कला ।

जायते यन्न काव्यागमहो भारो महान् कवे ॥—कहा है। वह हरियानी लोक-गीतों के ऊपर यथार्थरूप से घटित होती है।

लोक-गीतों की दुनिया की यह विशेषता है कि ये जीवन के साथ जुले-मिते हैं। शिशु नव अतिथि के रूप में आता है। उस समय से लेकर जीवन भर वह गीतों के सवार में खेलता है और अंत में गीतों में ही लिप्त कर अपनी ऐहिक लीला समाप्त कर जाता है। गीतों की इस समाप्ति का एक स्थान पर पूण गवेषणायुक्त अध्ययन इस प्रकार की चेष्टा है जिस प्रकार एक गगरिया में सागर भरने का प्रयास। फिर भी हम हरियाने के लोक-गीत साहित्य का स्पष्ट अध्ययन पाठकों के सामने उपस्थित करते हैं।

जैसा कि हमने पीछे कहा है हरियाने के लोक-गीतों के विभाजन की कई शैलियाँ अपनाई जा सकती हैं। सर्वप्रथम इन गीतों का हम स्त्रा समाजगत लोक गीत एवं पुरुषसमाजगत लोक-गीत—नाम से दो रूपों में बाँट सकते हैं। इनमें स्त्री लोक-गीत प्रायः सभी मुक्तक होते हैं तथा पुरुषसमाज में प्रचलित लोक-गीत अधिकतर कथामक हैं जो लम्बे-लम्बे होते हैं। अतः ह'न इनका अध्ययन मुक्तक और कथात्मक रूप से भी कर सकते हैं। यह विभाजन गीतों के रूप की दृष्टि से है। हमने पीछे यह भा बताया है कि गाता के विषय की दृष्टि से भी एक विभाजन किया जा सकता है। कुछ गीत ऐसे हैं जो सत्कारों के अवसर पर प्रचलित हैं। इनमें भी उद्देश्य के आधार पर कुछ तो अनुष्ठान के अंग होते हैं और शेष मनोरंजन, हर्षोल्लास एवं आनन्द का भावना सं पूर्य होने हैं। यथार्थ में, इन गीतों के बिना सत्कार पूरा नहीं होता। जो कहें तो और श्रद्धा हागा कि कई भी सत्कार उस शोभा, उस स्फूर्ति एवं उस हृदय-हारिता से

वचित रह जायगा जो अबसरोपयोगी इन गीतों के द्वारा सस्कार को प्राप्त होती है।

हमारे यहाँ शास्त्रों में पौडश सस्कारों का प्रतिपादन है। हिन्दू शास्त्रोक्त ये सोलह सस्कार मानव के पूरा एव सही-सही विकास के लिए अत्यावश्यक हैं। पर आजकल इन सस्कारों में तीन सस्कार—जन्म, विवाह और मृत्यु—विशेष प्रचलित हैं। परिस्थितिबश कई सस्कार विलुप्त हो गये हैं और कई सस्कारों का महत्व घट गया है। लोकगीता की दृष्टि से उपरोक्त तीन सस्कारों के अतिरिक्त 'मुडन' सस्कार का कुछ महत्व अवशिष्ट है। कणवेध और जनेऊ (यज्ञोपवीत) आदि ऐसे सस्कार हैं जो शास्त्रोक्त विधि विधान के सहारे खड़े हैं। उपनयन सस्कार के समय गीतों का प्रचलन हरियाणा प्रदेश में है परन्तु वे सभी गीत आयममाजी तग ने हैं जिनमें सुधारवाद की ही प्रधानता है। उनमें लोकगीतों के पावन तत्व प्रायः विलुप्त हैं। उनमें गुरुकुल और ब्रह्मचर्य की साधारण-सी महिमा वर्णित होती है। वस्तुतः, देखा जाये तो इन तीन प्रमुख सस्कारों में ही प्रकृति में क्रियाशीलता के दशान क्षते हैं, विकास और हास के द्वारा। इनमें भी प्रथम दो सस्कार प्रकृति के औत्सुक्य को लेकर बने हैं। अतः हमें जो गीत सम्पदा उपलब्ध हुई है वह प्रथम दो सस्कारों—जन्म और विवाह—पर गाये जाने वाले गीतों को ही अधिक है। अबसान अबसर के गीत भी मिले हैं परन्तु अल्प संख्या में और महत्व भी उनका नगण्य है।

उक्त गीतों के अतिरिक्त कुछ गीत वे हैं जिनमें सांस्कारिक भावना नहीं है, अपितु वे श्रुतु विशेष पर गाये जाते हैं। बहुत सी ऐसी बातें हैं जो अपने समय पर फवती हैं और 'जिन अबसर नीकी पै फीकी लगत'। भला, मल्हार और कजली की जा बहार सावन के मनभावना मास में है वह जेठ के छ्दाहों 'चाहती छ्दाह' के भीषण ग्रीष्मकाल में कहाँ? वृद्ध-वृद्धाश्रमों तक को मस्त बनाने वाले फाल्गुन मास में जो ओजपूर्ण एव उमत्त गाने गाये जा सकते हैं वह अघन-पूस के ठिठराते शीतकाल में कहाँ संभव हैं? कार्तिक मास में गंगा-यमुना स्नान के समय जो हरजस या परभानी गाई जाती है वे अन्य मासों में कहाँ शोभा देती हैं? चैत मास में छियों द्वारा देवी और देवताओं के दरबार में यात्रा और पूजा के रूप में जो परियाद भरे गीत गाये जाते हैं, उनकी अपनी निराली छ्दाह है। अतः हम इस दूसरी श्रेणी में उन गीतों का स्थान देंगे जो श्रुतु सम्बन्धी हैं। इन श्रुतुपरक गीतों में व्रत, पर्व, त्यौहार एव देवी देवताओं के गीत आते हैं। भारताय संस्कृति ही कुछ ऐसी है कि उसका रूप नाना व्रत पर्वों में निहित है। प्रत्येक श्रुतु का पट विविध प्रकार

के सांस्कृतिक एवं धार्मिक कृत्यां से निर्मित हुआ है और इन्हीं विभिन्न श्रुतियों में भारतीय सस्कृति का स्वरूप होता है ।

सस्कार एवं श्रुतु सम्बन्धी गीतों के अतिरिक्त एक तीसरा श्रेणी उन गीतों की है जिनमें किसान की आत्मा की झकार है और कृषि एवं घग्गी माता की दुहाई है । इन गीतों को हमने कृषि विषयक गीत नाम दिया है । एक बहुत बड़ा भाग जो बच गया है उसे अन्य नाम से अभिहित किया है ।

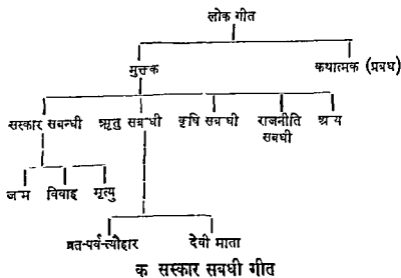
मुक्तक गीता के विभाजन की शैली को जानकर 'कथात्मक गीता' की प्रारंभ ध्यान जाता है । इस विभाग में जैसा ऊपर कहा गया है पुरुष समाज न गात है, जिन्हें पुरुष ने अपने रिक्त समय में मनारजन के लिए, विश्वरूप इतिहास की कहियों का जोड़ने तथा पौराणिक महापुरुषों की स्मृति का सज्ज करने के लिए गाया है । इनमें बड़े-बड़े कथागात—अवदान, पवारे एवं सान आदि आते हैं । कदा गीत तो इतने बड़े-बड़े हैं कि जिन्हें प्रसिद्ध गायक या महानों में गाकर समाप्त कर पाते हैं । 'निहालदे' ऐसा ही अवदान अथवा गायक गीत है । 'शालादे' या पनार लम्बा गीत है । आल्हा की प्रसिद्धि का अनेक निम्नार के लिए समस्त उत्तर भारत में है । आल्हा विशेषतः पावस काल का अर्नी वस्तु है । एक किन्दन्ता में उसने गाने के विषय में इस प्रकार कहा गया है, 'आल्हापवारा उस दिन गाया, जिस दिन भारी हो बरसाता' । आल्हा की समन्त कथावस्तु एक विख्यात वृत्त पर आधारित है जिसमें माहवे के पनापरियों का शौर्यपूर्ण बर्णन है ।

उपरोक्त विवरण को हम एक वृत्त की सहायता से इस प्रकार समझ सकते हैं ।

१ क साध किम्मा या गाया नाम से भी विख्यात है । इनमें ऐतिहासिक वीरचरित्र का बर्णन होता है तथा राजा रक्षादि आदि । विशेष प्रसिद्ध राजाओं की 'रासो' होती है ।

२ अवदान—पौराणिककृत्यों से पूरा कथा होती है । पया—गुरुगंगा, शालादे' निहालदे आदि ।

३ पवारा—भ्यानीय वीरों के किस्से जिनमें उनका अथवा बल विक्रम का बर्णन होता है । 'जगदव' का पवारा, तथा हरहृत्त जाट जुबायोबाबा, आदि ।



जन्म के गीत

यों तो बच्चे के जन्म से पहिले भी कई सस्कार—गमाधान, पुसवन एव सीमन्तान्नयन का शास्त्रों में वर्णन मिलता है पर वे आबकल, प्रचलित नहीं हैं। लोक गीतों में गमावस्था के नौ महीनों का सागोपाग वर्णन आता है जिनमें गर्भिणी की अवस्था, दोहद आदि की चचा होती है। समाज में उर्हीं स्त्रियों का मान होता है जो आशावती एव गर्भवती हो सकने की सामर्थ्य रखती हैं। इस प्रक्रिया में उन्हें वर्णनातीत यत्रणा सहनी पड़ती है परन्तु माता बनने की प्रसन्नता सब कष्टों को भुला देती है। इसके विपरीत बध्या स्त्रियों का वह आदर समाज में नहीं होता। उनका स्थान सामाजिक दृष्टि से कोई उच्च एव शुभ नहीं माना जाता। उनके जीवन में एक उपेक्षा एव नीरसता रहती है। इस प्रकार स्त्री जीवन की सफलता ही जननी बनने में व्यक्त हुई है। इस विवेचन में एक विचित्र बात यह दिखलाई पड़ती है कि कन्या का जन्म ह्य एव उल्लासदायक नहीं होता, अपितु कन्या की उत्पत्ति एक भार स्वरूप मानी जाती है। संस्कृत के कवि (पंचतन्कार) ने भी पुत्री-जन्म को एक सकट बतलाया है—

पुत्रीति जाता महती हि चिता,
 कस्मै प्रदेयेति महान् वित्तं
 दरया सुख प्राप्स्यति घानवेति,
 कन्या पितृस्य खलु नाम कष्टम् । मित्रमेद, कथा ५,
 × × × श्लोक २२२

जननीमनोहरति जातवती परिवर्धते सह शुचा सुहृदाम् ।

परसात्कृतापि कुर्वते मलिन दुरतिक्रमा दुहितरो विपद् ॥ श्लोक २४

हरियाना तथा उत्तरो भारत के सभी लोकगीतों में इस अवसर को शुभ नहीं माना जाता । ऋग्वेदोत्पत्ति पर पिता परदेश चलने की सीचता है । माता का निरादर होता है, न खाने को दिया जाता है । और तो और एक शाक-सा छा जाता है और कोई आनुष्ठानिक कृत्य भी नहीं होता । जहाँ पुत्रोत्पत्ति पर प्रथम १०-१२ दिन आनन्द उत्साह के दिन होते हैं, गाना-बजाना और आनन्द चघावा होता है वहाँ पुत्री-जन्म पर एक टेंकरा फोड़ दिया जाता है । हरियाने का छोरी ने इसी बात को एक गीत में इसी प्रकार कहा —

गहारे जन्म में बाजें ठेकरे माई के में घाली ।

सुहृदा की रोवें बुदिया की रोवें रोप हाखी पाखी ।

परिष्यामस्वरूप लोकगीतों की दुनिया में जन्म के गीतों में पुत्र जन्म के ही गीत मिलते हैं ।

गमिया की नौ मास की अवस्था तथा दोहद आदि का वर्णन इस गीत में चर्फी खूबी से हुआ है —

जी पहला मास जै लागिया दूध दही मन जाय,

मेरे अगया में अमला बोदिया ।

दूजा मास जै लागिया मेरा निबुघा में मन जाय,

मेरे अगया में अमला बोदिया ।

तीजा मास जै लागिया मेरा बेरों में मन जाय,

मेरे अगया में अमला बोदिया ।

चौथा मास जै लागिया मेरा बाडुआ में मन जाय,

मेरे अगया में अमला बोदिया ।

पचवा मास जै लागिया मेरा खीर पूड में मन जाय,

मेरे अगया में अमला बोदिया ।

छया मास जै लागिया मेरा गूद गिरी मन जाय,

मेरे अगया में अमला बोदिया ।

सातवा मास जै लागिया मेरा फलिया में मन जाय,

मेरे अगया में अमला बोदिया ।

आठवा मास जै लागिया मेरा घाखी में मन जाय,

मेरे अगया में अमला बोदिया ।

१ घाखा—मुने हुपे जी ।

नौवा मास जे लागिया मेरा होलड सबद सुणाय,
मेरे अगणा में अमला घोदिया ।

गर्भिणी की इच्छा को हरियानी में 'ओजणा' कहते हैं । इस दोहद (ओजणा) का एक दूसरा गीत है जिसमें गर्भिणी अपने पारिवारिक पुद्गों से—
श्वसुरादि से—हरी हरी किशमिश मागती है, परन्तु वे बात का टाल जाते हैं—
मुसरै तै अरज करू थी मने हरी हरी दाख मगादयो,
थारी प्यारी के ओजणा लाग्या ।

थम लाहू पदा खाल्यो, हरी हरी दाख नहीं सैं
थारी प्यारी के ओजणा लाग्या ।

इसी प्रकार जेठ देवर भी क्रमशः दूध मलाई, खीर खाने के लिए कहते हैं । अंत में पति के दरबार में 'विनय पत्रिका' पहुँचती है वहा उस पर अमल हाता है—

कथा तै अरज करू थी मने हरी हरी दाख मगादयो
थारी प्यारी के ओजणा लाग्या ।

सहरा में दाख घणी सैं, तमनै भावै उतनी खाल्यो,
थारी प्यारी ओजणा लाग्या ।

ठीक है इस यत्रणा का कारण भी तो पतिदेव है उसी को सहानुभूति होनी चाहिए ।

इस प्रकार चलते चलते एक दीर्घ प्रतीक्षा के पीछे वह दिन भा आ पहुँचता है जब आसन्न प्रसवा के गम से पुत्ररत्न का जन्म होता है । ठीक उस समय जब बच्चा होता है 'वे' गाद जाती है । यह 'वेमाता' विधिमाता ही है जो प्रजनन की अधिष्ठात्री देवी है । इस अवसर के गीतों में मातृकाओं से बच्चे की सुरक्षा के लिए प्रार्थना भरी होती है । हरियाना में 'व' का जो गीत गाया जाता है उसकी प्रमुख पंक्तियाँ इस प्रकार हैं—

"वे दीख्या वे दीख्या हरियल रू खजी, तरपना सी म्हारी माता वे वस ।
वे भरोस्मे में दास बलाल कानी ।"

प्रसव काल में, प्रसूता के लिए विशेष प्रकार के स्नान-पान का प्रबंध किया जाता है । सास 'चढ़आ' चलाती है । चढ़ मिट्टी का छोटा घड़ा अथवा कमोली होती है जिसमें जच्चा के लिए शीपघ डालकर पानी श्रोटाया जाता है । यह फाय साध करती है । सतिनाशह, जिसे हरियाने में 'स्यावड़' कहते हैं, के द्वार पर अग्नि प्रज्वलित रखी जाता है । घर की चूल्ही खी बराबर सतिका-

गद् की रत्ना करती है जिसने कोई हानिकारक प्रभाव नवजात शिशु पर न हाने पाये। इन गिना स्वावट में दिल्ली का जाना नडा निषिद्ध माना जाता है। निष्ठास है कि दिल्ली बच्चे का आर्ये निश्चाल लेती है। दिल्ली के रूप में शिशु का यमराज छू जाना है, यह विश्वास भा कहीं-कहाँ प्रचलित है।

पुन उत्तर हाने पर घर-बाहर सर्वत्र एक आनन्द की लहर दौड़ जाती है। गाना के निम्न फूट पड़ते हैं। स्त्रियों के श्रुतिमयुर स्वर चार भरे गीत गा-गात्र नशागुरु का स्वागत करते हैं। इस अग्रसर के गीता के प्रमुख गत 'स्वावट न गीत' जिन्हें हरियाने में 'दा', विहाइ अथवा हालड' नाम से अभिहित किया जाता है, गाये जाते हैं। इन गीतों का मावसट पुनगमना, पीडा, विविध नेग, माना की अभिलाषा और आनन्दबधावा आदि में निर्मित होना है।

कामना — भारतीय ललना की पुनरागति की साथ उसकी श्रद्धासमन्वित कामनाओं का मुख्य परिधान है। इस अवसर पर रमणीय गीता को सुना सुनाकर स्त्रियाँ बच्चा का मनोरदन किया करती हैं। कामना गीता में कई गान हमें मिले हैं। एक गीत में 'सत्ययुग की रानी' माना शातला ने पुत्रेहा का गइ है —

पैरी माता नू सतयुग की कहिय राखी, रमने में बाग लुगाया माता सतयुगकी ।
पादा तो फिर के नेगो रे लोगो अन्व अर नीवू भजन लागे माता सतयुग की ।
माना क राह में बाळ पुकारे माना नेहरा पुतर घरजाण माता सतयुग की ।
पादा तो फिर के नेगो रे लोगो पुतर चित्राणि घरजाण माना सतयुग की ।
कामना प्रापुतय है शातला माता, यह इस गीत में व्यक्त है।

एक दूसरे गीत में, एक स्त्री सन्तान के दुःख ने दुःखी है। जब उसकी सविया पूछती है कि क्या उस काम का दुःख है अथवा क्या प्रदित-विना है। तो यह उत्तर देता है कि उसे कुछ भी दुःख नहीं है, केवल 'कुर्नी का कष्ट' है। माना सविया उस नापिडा के मन को नहीं जान पाता और प्रभाव करती है कि वह अपना बदन के मात पुत्रों में ने एक उधाग ले ले। पर पुत्र उधाग कश मिलना है। वह मनाहत शकर लुहार ने हुरा घडाने प्रार अपनी भोग को चोरने का गत संचती है। वह भुय मराकर उसने आग लगा देने के लिए समुद्रव है। किन्तु एक मुणय प्रताचा के पाछे उने पुन-बल के दशन होते हैं—

क्या दुःखरा तन्नं माम का, क्या तेरे दिया परदेम ।
ना दुःखरा मन्नं साम का, काण ना मेरे दिया परदेम ।

इक दु पारी मनेँ कोख का, कोण या मेरे मारे सँ मान ।
 तेरे री ग्राहण केँ सात पुत्तर, कोण एक उधारा जै लेय ।
 सुनै री चाँदी मिलैसँ, उधारे, कोई लाल उधारे ना देय ।
 गेहूँ चावल मिलैसँ उधारे, कोण लाल उधारे ना देय ।
 मेरे पिछोकेँ^१ राती का, कोण ल्वाऊँ छुरीअ घडवाय ।
 चीरू अ फोड या कोखनेँ, या कोए मेरे मारे सँ मान ।
 खाल कड़ा केँ भुस भराऊँ, कोए भुस म दिलादयूगी आग ।
 बारह बरस में कोख बाढई^२, जनमे स अरजन सरजन से लाल ।
 सास बुलाऊँ नखद बुलाऊँ, कोए नेग दिलादयू जी ध्यान ।

यहाँ ग्रन्थात्त्व के कलक से छूटने में स्त्री की पुन वामना भलक रही है ।
 चन्धात्त्व से मुक्ति, फिर यदि पुनरुत्तन के रूप में मिले तो कहना ही क्या है ?

प्रसव पीडा — प्रथम प्रसव के अवसर पर गर्भिणी को विशप पीडा
 व चिंता रहती है । पूवानुभव के अभाव में ऐसा हाना स्वाभाविक ही है ।
 एक गीत में इसी प्रकार की पीडाजन्य चिंता का स्पष्टीकरण हुआ है —

घमड घमड आवँ पीड कदीऊँ तै कोइ जागेगी ।
 जागेगा सास ग्हारी याइ तै ग्हारे आवँगी ॥

एक अन्य गीत में प्रसव की पीडा से व्यथित गर्भिणी अपने पति से
 पाडा में भाग लेने के लिए कह रही है । पतिदेव मौन साधे बैठे हैं । अत
 कोइ उत्तर न प्राप्त कर वह घर छोड़ जाने की धमकी देती है । देवरानी और
 पिठाना सन हास परिहास के द्वारा उसे चिटाती हैं । उस समय सास
 ननद सात्वना देती हैं और प्रिय देवर दाइ को बुलाकर कष्ट दूर कराता है ।
 इस गीत में देवर को एक अन्ध्या पारितोषिक भी मिला है । नायिका
 कृतज्ञताम्यरूप अपनी कनिष्ठ भगनी से देवर का विवाह करायेगी —

कौइनी कौइडी बगइ बुहारु दद उग सँ कमर म हो राजीदा^३,
 इयना रहूगी तरे घर में ।
 दयार निगनी मेरी बोरली ओहला मारि नित्रकया सार्व थी बगल म हो राजीदा,
 इयना रहूगी तरे घर म ।
 सास नखद मेरा धीर बधावै होत आवँ से जगत में, हो राजीदा,
 इयना रहूगी तरे घर में ।

१ घर क पादे । २ लीथी सफ़्त हुइ । ३ राता साख्य पतिदेव से है ।

छोटा देवर खरा रसीला दाईं नै बुलावै इक छन में, हो राजीदा,
इबना रहगी तेरे घर में ।
छोटा देवर नै बाहण विवाहादयू, दाईं बुलाइ इक छनम, हो राजीदा,
इबना रहगी तेरे घर में ।

एक श्रय गीत है । आसन प्रसना को दर्द है । पति ने उसने कष्ट म
कोइ हाथ नहीं बटाया और न कोई सहानुभूति ही प्रदर्शित की है । प्रसव के
उपरत पति को पजीरी^१ खाने का लालच होता है । वह सामे की पजीरिया
खाने का प्रस्ताव करता है परंतु पत्नी का उत्तर बड़ा तथ्यपूर्ण एवं
स्पष्ट है —

मेरे उठे थी पीड़ तन्ने आवैधी नीद ठोस्सा^२ खाले,
ना दयू ना दयू पजीरिया ।
मेरे उठे था गुस्सा तेरा बाजै था हुक्का ठोस्सा खाले,
ना दयू ना दयू पजीरिया ।

हरियानी पति की करता का भीठा परिहास है । ब्रजनाला का पति तो एक
मीठी सहानुभूति प्रकट करता हुआ अपनी प्रेयसी का मन रत लेता है —

गोरी छापठ होइ उठाऊ, जने दस लाऊ, भैया दस लाऊ ।
गोरी जे करतार गठरिया, सग्निन बिचत्वोली,
जाय रामु छुड़ावै, जाय कृष्ण छुड़ावै^३ ।

बच्चा को उत्कट पीटा है । बच्चा हो नहीं रहा है । इस अवसर पर
कृष्ण नम का बड़ा सुन्दर गीत है जिसमें बच्चा अपना भय प्रकट करता है ।
उसे आश्वासन दिलाया जाता है कि सुत का पलग देंगे, मत्समल का गधा
निझायेंगे और प्यारा कृष्ण कह पुकारेंगे —

मैं पड़ीसू चीर को बंद लाख मेरी बंद छुआओ जी महाराज ।
मा मैं बयकर जम जे ल्यू ?
ठुट्टी गगड़िया पनी गुदड़िया, छोरदा^४ कह कै बोलो जी महाराज ।
जो बाला थम जाम ज ल्यो, सूतों क पलका मयमल के गहा,
डिरसन कह कै बोलें हर कह कै बोलें जी महाराज ।
आधी सी रात घर खुले हैं किनाइ पहरेंदार सोये जी महाराज ।

१ जस्सा का पौष्टिक भोजन । २ अगुन जो खाने के रूप म दिया
जाता है । ३ मा लोहमाहिर्य का अध्ययन—डा० सत्येन्द्र, पृष्ठ १३० ।
४ छोगे लड़का

इसी प्रकार ऋ प्रसंग गूगा के जन्म के विषय में भी आता है। मा बाच्छल को बारह महीने का गर्भ हो गया है। बच्चा उत्पन्न नहीं होता। गूगा गर्भ से कहता है कि मैं ननसाल में कदापि जन्म नही लूंगा। मुझे कलक लगेगा। जेवर बाच्छल को अपने यहाँ मगा लेता है और गूगा का जन्म होता है।

प्रसवकाल के अवसर पर हरियाना में 'दाइ' नाम का एक प्रसिद्ध गीत गाया जाता है। गीत लम्बा है। रानी का पीड़ा है। वह अपने राजा को, जो चौपट खेल रहा है, बुलवाती है और दाई के पास भेजती है। क्या हो रही है। पतिदेव छोड़े पर चूड़ दाई बुलाने जाते हैं। दाइ शर्त रखती है —

राजा जी जे थारै जन्मैगा पूत मोहर हम पचास लवा—हा जी हा।
जे थारै जनमेगी धीण, थोढा हम चुदडिया—हा जी हा।

इसी बीच होलड़ जन्म ले चुका है। दाइ आती है और अपना नेग मागती है —

राजाजी, कौल बचन करलो जी याद, मोहर पचास हम लेवा—हा जी हा।
दाइ आग्रह करती है तो उसे कैसे धता बताइ गई है —

दाइण ! पूत जनमा हमारी थार, तरा दाइ क्यारे ल १—हा जी हा।

पर दाइ भा उत्तर देने में चूक नहीं करती —

राजाजी ! दोण बरस की सै धात दाइ के पैरा फेर पजो—हा जी हा।

दाइ को बुलाकर लाते समय राजाजी १ अपनी छुत्ती से क्या का राजा था। अन्न चलते समय दाइ उसी अनुग्रह की प्रार्थना करती है तो उत्तर मिलता है —

दाइण ! दिन्न मिन्न बरस मेह, ओढो थारा १ धाधरी—हा जी हा।

अधेरी रात है, बादल छा रह हैं। दाइ का इच्छा है कि उसके घर तक पहुँचा दिया जाये। परन्तु स्वार्थी पुष्य कितना निमम है —

राजाजी ! मह अधेरो १ दा रात

धनर दाइ कैसे चल—हा जी हा।

दाइण ! काली कुत्ती दोण गेलकरा—हा जी हा।

प्रसूता की कारुणिक स्थिति में भी मग की सहलिया उपहास करने में नहीं चूकती। उपहास के बोल लीजिए—

जच्चा हाथ मँग्या, हाथ दँग्या करती फिरै,
 हाडी सा पेट घुमाती फिरै ।
 दाडं आवँ होलड जनावँ उसको नी नेग दिलाती फिरै,
 जच्चा हाथ मँग्या हाथ दँग्या करती फिरै ।

पुनरुल की उत्पत्ति पर हरियाना का गृहपति उडा स्वच करता है। इन भक्तियों में इसी प्रवृत्ति की ओर सन्त किना गया है—

कहियो कहियो री होलड के दादा नै,
 ज्योडा री जकोड्या आन स्वच,
 ग्हारे आन रद्या धाल हुया नदलाल,
 हुया नदलाल अर भूमी स्येदार ॥'

पुन जन्म के पीछे कई प्रकार के आचार होते हैं और उनके साथ-साथ नेगा का झुकी लग जाती है। यों तो नेग नाइ, ब्राह्मण और दाइ से लेकर देवगनी, जिठानी और सास तक सबको हाँ दिये जाते हैं पर नेग के गीतों में ननद को दिये जाने वाले नेगा का ही मुख्य वखन आया है। इससे पूर्व कि हम नेग के गीतों का विस्तृत वर्णन करें यह भी देख लेना अनुपपुष्ट न होगा कि ये नेग किस उपलक्ष्य में किस-किसका दिये जाते हैं। गर्भिया की उमा-सुभ्रगा के लिए परिवार के सभी लोग उद्यन रहते हैं। यदि साम चढवा चताती है ता जिठानी पलग विद्याती है। चोरानी परदा लगा रहा है तो बच्चा के स्तनों का धोकर शिशु के पाने योग्य करने के लिए ननद अपनी सेवाएँ अर्पित करती है। सबको कुछ न कुछ उपहारस्वरूप दिया जाता है। मगर प्यारी नएल' के लिए तो पहिले से ही बदनी हुइ हानी है। वह स्वर भगड भगडकर नेग लेता है। जब 'बदनी' की वस्तुओं के मिलने में देरी हाता है ता वह हठ भी करतो है। अधिकतर हरियानी नेग गीतों में ननद ने अभिनयित वस्तुएँ प्राप्त ता कर ली हैं परन्तु वे उसे बड़ी मँहगा पड़ी हैं। ननद मायब का वह सौदार जो प्रसव से पूर्व था, अत्र नहीं रहा है। कहीं-कहीं ता ननद को अपमान भा सइना पडा है। एक गात में परिवार के सभी लोगों ने बच्चा के प्रति कर्त्तव्य एव उष उपलक्ष्य में मिलनेवाले नेगा का वर्णन हुआ है—

दाइ आवै होलइ जनारै वानै धी नेग दिवावती फिरै ।
 जच्चा हाय मैय्या, हाय दैय्या करती फिरै ।
 सासइ आवै सधिया धरावै वानै धी नेग दिवावती फिरै,
 जच्चा हाय मैय्या, हाय दैय्या करती फिरै ।
 जिगानी आवै पलगा तिल्लारै वानै धी नेग दिवावती फिरै,
 जच्चा हाय मैय्या, हाय दैय्या करती फिरै ।
 दौरानी आवै धीवा बलारै वानै धी नेग दिवावती फिरै ।
 जच्चा हाय मैय्या, हाय दैय्या करती फिरै ।
 नखदल आवै दुद्धी पुलारै वानै धी नेग दिवावती फिरै,
 जच्चा हाय मैय्या, हाय दैय्या करती फिरै ।
 पड़ोसन आवै भीत गवारै वानै धी नेग दिवावती फिरै ।
 जच्चा हाय मैय्या, हाय दैय्या करती फिरै ।

किसी किसी स्थान पर इन कर्तव्या में भिन्नता भी मिलती है। सास का प्रधान कर्तव्य 'चरवा चढाना' है। एक दूसरे स्थान पर ननद का कर्तव्य साधिया लगाने का बतलाया गया है। दारानी का परदा लगाने का नेग मिलता है।

भावज ने पुनेहा में ननद को कई वस्तुएँ देने की प्रतिज्ञा की है। पान की बाली से लेकर 'डिंवे का सीवल', गले का कठला, कगनवा^२, फूलगजरा फूलडडिया, गले की तिलकी और टिकावलहार तक देने की बदन^३ हा गयी है। एक स्थान पर यह भी स्पष्ट कर दिया गया है कि यदि पुत्रा होगी तो ननद को कुछ नहीं मिलेगा। परन्तु भावज के सौभाग्य एव ननद की शुभाकांक्षा से यथाकाल पुत्र जन्म लेता है। भावज के मन में भेद उत्पन्न हो गया है। वह चाहती है कि अच्छा हो ननद को पुत्र जन्म का पता ही न लगे। अतः वह सग की सुहेलियों एव पाइ^४ पढ़ासियों को 'निहाइ' गाने से रोकता है —

सुणोरी ग्हारी पाइपड़ोसन, सुणोरी ग्हारी दौर जिगानी ।
 नखदी तै कोण मत कहियो धान ग्हारे होलदिया हुण ।

वह दोलिया से भी कहती है कि वह टोल न मजाये, पर बाल छिपेवाली

१ मूल्यवान् लहगा । २ आभूषण विशेष । ३ प्रतिष्ठा, ४ पड़ोस की स्त्रियों को ।

कहा है ? अन्त, नन्द भावज को उसकी प्रतिष्ठा को स्मृति कराती है । भावज अपने वचन से मुकर जाना चाहती है । वह अतुल्य भी बन गयी है —

पद्माया की दा नन्दभावज दोबों बनलावै

हीरावद चूड़ी जे ।

जे ग्हारी नन्ददा धी जणगे, री बाइ न्यू छाइ न्यू ए जा,
हारावद चूड़ी जे ।

जे ग्हारी नन्दगे पूत चणगे, री बाट, द्यागे टिकावलहार,
हीरावद चूड़ी न ।

वे नीर मम माम नन्ददी, होल सव मुणाय,
हीरावद चूड़ी जे ।

गया में आच्छा बँडा नन्द री,
नि भायबा, ग्हारी बाइ नै घो,
गऊ री बँडा ग्हारे धरी घणरा,
जो वचन भरया सोइ घो ।

ओच्छी, क्यागे टिकावलहार, क्यागे टिकावलहार,
हारावद चूड़ी जे ।

गँहा में आच्छी ओछी नन्दरी,
जिमायबा, ग्हारा बाट जीने घो ।

इसी प्रकार नन्द का एक बच्छेय, 'दूमा में आच्छी हमला 'श्रीर' म'रु में आच्छा रपचा' देने का प्रसोमन दिया जाता है । परन्तु नन्द इन वस्तुओं को नहीं लेना चाहता । वह तो वचन भरे वस्तु ही लेती । इस हद के कारण नन्द का एक अच्छा गंगा घनका सहनी पड़ी है —

ग्हार री आणय करको मगे उसकै रमम डोर ।

नन्द नन्दक कम के बाधु, दोला बाइ जीरोपीर ।

हीरावद चूड़ी न ।

बेचारी नन्द आधा रात निशीय बना में घर से भाग जाता है । 'लीली का अस्वार' माइ उसे सन्धिना देकर वापस ले आता है —

'ठे बने जो कील करया मोइ क्यों ।

परन्तु भार्मी का कथ अभी शाउ नहीं हुआ —

हार टिकावल लना नन्दगे,

पर मत्त छाय ग्हार धार जा—हारावद चूड़ी जे ।

इस समय वहन का आत्माभिमान सजग हा जाता है और वह सहोदर के स्नेहाचल को पकड़ कर वह उठती है —

आना री जावा अपना धीर कै
धारे गगरी^१ ची मारै जात री—हीराचंद्र चूड़ी जे ।

एक दूसरे गीत में भावज ने पुत्र होने पर ननद का गले की तिलड़ी देने के लिए वचन दिया है —

बेचे वै हम होलड़ जनागी द्यागी गले की तिलड़ी,
ओहो मन रजना ।

ननद के कथनानुसार पुत्र उत्पन्न होता है । ननद भाभी से गले की तिलड़ी मांगता है, परंतु भावज के निर्भय वचन हैं —

बे-बे तिलड़ी कहा से ल्याऊ,
ले जाओ न भतीजा उठाय—ओहो मन रजना ।

ग्लानि की कैसी अभियजना हुई है ? परंतु गीत की नणद बड़ी चतुर है । उसने वह उपहार स्वीकार कर लिया —

बा तो लेगी भतीजा ए गय—ओ हो मन रजना ।

भावज का मातृहृदय परास्त हो गया है —

उमड़ उमड़ जिया आवे—ओहो मन रजना ।
बे-बे दोष गहार हुलड़वा,
ले जाओ गले की तिलड़ी—ओहो मन रजना ।

परंतु यह पराजय अधिक काल तक नहीं रही है । कुछ दिन पीछे ननद अपने घर जाती है । उसने अन्य आभूषणों के साथ वह तिलड़ी भी पहनी हुई है । चलते समय भावज से गले मिलना एक आवश्यक्रीय आचार है । भावज को अक्सर की तलाश थी । उसने गले की तिलड़ी ताड़ ली है । उसने ननद से तिलड़ी ही नहीं ली इसने साथ कुछ व्याज भी लिया है —

भावज राणी नै मिलन सजोया, ओहो मन रजना ।
गले मिलती की तोड़ली तिलड़ी, ओहो मन रजना ।
पां पड़ती को काड़ली पाजेव, ओहो मन रजना ।

भावज पानेय लेकर प्रसन्न है । वह अपनी चतुराई भरी विजय की बात पतिदेव के सामने कहती है —

१ गुरहे पर ।

राचीन्ग, तेरो म्हारा चतराई, ओहो मन रजना ।
 मैं तँ दोन्नो काम कर लयाइ, ओहो मन राना ।

परन्तु भावन ही विजय क्षणिक रही है । उसके गर्व मृगशावक को एव
 तीक्ष्ण व्यग्रमाण आहत कर देता है और यह नाटकीय दृश्य इस प्रकार
 समाप्त होता है —

गोरी देगी तेरो चतराई, ओहो मन रजना ।
 तेरे पीहर में ऐसी होती आइ, ओहो मन राना ।

एक अन्य गान में ननद ने 'फूलडडिया' मागा है । ननद को वाद्वि
 वस्तु तो मिल गयी परन्तु उसे एक तीव्र अवमानना भी सहनी पड़ी —

हठीली नणद हठमतभाइ^१ या ल पूल डडिया,
 केरमत आइए मेरे गार ।

एक दूसरे गीत में नणद ने हठ की है । भाव्य उसकी हठ में खिन
 होकर बंद गई है —

जे मैं ऐसी जाण नणद हगेड़ी होगी,
 नणदल के वीरा सेत्ती कदाए न सोत्ती ।
 निष सोत्ती निष करव लेत्ती,
 नैणा तँ नैणा लगण गा देत्ती,
 छावी तँ छावी मिड़न ना देत्ती ।

दूसरा और हरियाना के नेग गीतों में जहाँ ननद की साथ पूरी कर ली
 गयी है वहा वह भाइ का शुभाया देने में भी किसी स पीछे नहीं रही है —

रे तेरे दूधी^२ वधियो बेल
 बीर ! मुने^३ रानी कर दई रे ।

नेग के इन गीता के पीछे साधारण नेग के गीत भी कुछ मिलने हैं
 जिनका वर्य-विषय इतना रोचक एवं भव्य नहीं है । एक गीत में गिननिया
 (गीतगान वालीयो) के नेग की बात आइ है —

मैं आई थी मीटिया की खालव,
 पीकी दे भुजादई ।
 मैं आई थी गेहुघा की खातर^४ ।
 यानरा की दे भुजादई ।

१ करना, जिद करना । २ दूध से । ३ मुम्हो । ४ लिण, कारण से ।

मं आईं धी घणिया की खातर,
दो दो दे मुलादईं ।

गीतगानेवाली अगढ़ पड़ोस की स्त्रियां का कैसा उपालभ है ? दो दो म
पणता का एक तीखा व्यंग्य है ।

इसी आनंद म अभिलाषा का भी स्थान है —

वा घडी सुभ दिन जाणूगी
मेरारी होलडिया अपणा दादा के घर जावैगा ।
दादा के घर जावैगा र, दादी हसहस लाड लटावैगी ।

इस गीत में माता की अभिलाषा का सजाव चित्रण हुआ है ।

पुन जन्म के इस आनंद उत्साहभरे समय म बधावे की बहार भी गाई
जाती है । एक बधावा गीत म कहा गया है कि आगत म बाजे बज रहे हैं,
भात की चर्चा है, 'पीला' ओटा जा रहा है आदि आदि । इस आशय का
गीत निम्नांकित है । गीत कुछ बड़ा है । गीत की भाषा ठेठ हरियानी है ।
समूचा वातावरण भी हरियानी का है —

म्हारे आगख बाग्जा राजियो जी म्हारा राज ।
मं तै नित उठ लिप्पा आगणों,
किण मोस्मर^१ लिप्पा पछली^२ पछीत,
बधावा म्ह सुण्यो जी म्हारा राज ।
म्हें तो नित उठ राधा रीचड़ो जी,
किण मोस्मर ओ सापवा जिदवा का भात,
बधावा म्हें सुण्यो जी म्हारा राज ।

❁ ❁ ❁

म्हें ता नित उठ आड्डा चूँदडी जी,
किण मोस्मर ओ मापवा पीला का भेस,
बधावा म्हें सुण्यो जी म्हारा राज ।

'स्यावड' क गीतों का यह एक सूक्ष्म-सा वर्णन है । पुन जन्म के इन
गीतों म आनंद और उल्लास का वर्णन होना स्वाभाविक ही है । इनके
अन्तगत जन्मा के हृदय को विभार कर देनेवाले भाव लजालम भरे होते हैं ।

आनंद उत्साह का यह क्रम पाच दिन तक चलता रहता है । छठे दिन
छुटी का संस्कार होता है । जन्म क संस्कारों म यह एक प्रमुख संस्कार है ।

१ कारण से । २ पिछली दीवार ।

उस दिन जन्चा और बच्चा स्नान करते हैं। घर लीपा-पोता जाता है और प्रातः काल मीठा दलिया बाटा जाता है। देवर उसी दिन जन्चा का प्रसृतिका-गृह से बाहर निजालता है। इसके लिए उसे नेग मिलता है। इस सस्कार के पीछे और लोग भी प्रसूता और नवजात शिशु के पास आ जा सकते हैं। इससे पहले अपवित्रता मानी जाती है। यह विश्वास है कि छुटी की रात का 'वमाता' नवजात शिशु का भाग्य लिखती है। उस रात को जन्चा और बच्चा की बड़ी सावधानी रखी जाती है। रात्रि भर जागरण होता है।

दसवें दिन नवागतक को उपयुक्त सामग्री भेंट की जाती है। खात्ती उसे गटनना लाना है, कुम्हार स्नान के लिए नाद, तां लुहारिन पेंजनी भेंट करती है। डूम नशावली गाता है और चमार तगड़ी प्रदान करता है। नाइ दूम लाकर पुन और पिता के सिर पर रखता है। इससे यह कामना की जाती है कि उनका वश दूबा घास की भांति बटे।

नवजात शिशु के स्वागतार्थ कैसा सुन्दर आचार व्यवहृत होता है? सभी उसे सम्मान, सहायता और सहानुभूति प्रदान करते हैं।

छुटी के दिन प्रसृतिका-गृह के द्वार के दोनों कौलों पर सातिये माडे (सातिये रखे) जाते हैं। यह कार्य सास करती है। कहीं-कहीं नखण भी करती है और उन्हें नेग मिलता है। दस देवताओं के गीता के पीछे 'विहार' गाइ जाता है। छुटी के श्रवण पर गाया जाने वाला एक गीत निम्नांकित है —

बड़ण बगदत^१ सती राणी नीसरी,^२ भर गोबर की हल^३ ।
 गोबर छिड़का भोली राणी भोंपड़ी,^४ धरती में हुवाए लिपात्र ।
 बड़ण बगदत सती राणी नीसरी, भर गोव्हा^५ की डेज ।
 गीत् बड़का भोली राणी भोंपड़ी, धरती में शरयो ए धीन ।
 बड़ण बगदत सती राणी नीसरी, भर लोटा जल नीर ।
 गन्वा तो छिटको भोंपड़ी, धरती हुवाए गिलाव ।

इन रे गाना के वीरा गोरव^६ लम्बा-लम्बी ए स्वजूर ।
 ने घड सती राणी सतलियो सुरग नैदै घर दूर ।
 मरा वीरा ए धीरा डोलिया गइरा डोल घनाय ।
 पीहर सुणियो वीरा साम ई छान्डी^७ नखमाल ।
 उतका तो एपाव वीरा चददा, उतका नागर पान ।

१ मुहता । २ निहली । ३ टोकरा । ४ भूमि पर गिर पड़ी । ५ गह ।
 ६ छिड़काव । ७ समोप । ८ प्रेमपूरक पाली गयीं ।

ओड़ सुहागण रानी चूदड़ी, चा-बो न नागर पान ।

मीलै री हुयो सापूतड़ी, तिह रै लिवाया म्हारा नाम ।

इस गीत में सत्ता देवी की प्रशंसा की गयी है जो बच्चा और जन्मा को आशीर्वाद देती है। सत्ती देवी (छुट्टी देवी) के स्वागतार्थ गोरु से स्थान लीपा जाता है। उस पर ग्रनाज के दाने छिड़के जाते हैं और पानी से छिड़काव किया जाता है। फिर सत्ती रानी ऊँचे गजूर पर से उपासका को शुभाशां देती है। यह ध्यान रखना चाहिए कि सत्ती रानी भाग्य निमातृ देवा है।

छुट्टी के गीत कोइ अलग नहीं हैं। सभी विद्वाइया, दाइया एव होलाइ इसके विषय हैं। इस दिन के गीता में एक गीत विशेष देखने योग्य है। इस गीत में बच्चे की तात्कालिक इच्छायों की माग तथा उसकी पूर्ति की बात कही गयी है —

जनम लिया नदलाल लाला मेरा घरी मागे जी राज ।

एक घूग दूजी चूची तीनी रै तैरा धाय लगादया जी राज ।

जनम लिया नदलाल लाला मेरा घूरी मागे जी राज ।

गीत की अंतिम पक्तियों में ननसाल के लोगों पर हास परिहास के छंटे भी आये हैं —

चल नाना के दरवार लाला तनै बनड़ी विद्वाया जी राज ।

एक नानी दूजी मामी तीजी तनै मौस्मो विद्वाया जी राज ॥

छुट्टी के दिन जच्चा के पिता के यहा पुनात्पति की सूचना भेजी जाती है। सूचना के मोल इस प्रकार है —

जीथम सोधो क जागो म्हारै पीहर धो तिल चावली जी ।

जीथम कहो तो मेनें नाइ का पूत नाहां तो परेवा^१ भेज दें जी ।

कुलवधू को उत्कठा है। वह यथाशीघ्र पुनोत्पत्ति की सूचना दे देना चाहती है —

जीवा नाइ का चलेगा ठुमरी^२ घाल,

परेवा चलेगा तावला जी ।

परेवा भेजा जाता है और वह वृत्तांत कह सुनाता है। सर्वप्रथम परस (चौपाल) में बैठे हुए जच्चा के बाप से कहता है —

जी धारी धीहड़ के जायो सै लाडलपूत,

बधाइ लै घर चाइयो ।

तटुपरात माता, भ्राता और भावज आदि का सूचित करता है। ये मत्र प्रसन्न होते हैं और संदेशानाहक का सम्मान करते हैं —

जी यारे दूध पखालें परेवा पाव,
चौकी चाबल यमनै बैग्या जी।

माइ अपनी बदन के लिए छूट्टक तैयार करता है।

जम के गातों में एक गात खीचड़ी नाम का है। जच्चा पर जच्चा का एकाधिकार है। पति भी इस रत्न में साभ्य चाहता है। पत्नी ने शन रखी है। अमुक-अमुक वस्तुएँ यदि लाकर दी जायें तो होलड में साभ्य मिल सकता है। शर्त की वस्तुएँ हैं खिचड़ी (यह जच्चा की दुर्बल अनाइया न लिए लामकारी वस्तु है), पीला (यह एक विशेष प्रकार का अ्रोदना की आति का वस्त्र है जिने प्रथम प्रसन्न पर, विशेषकर पुत्र-जन्म पर हरियाने की स्त्रिया आती हैं), गैर वस्त्र का गून्, अन्तरेय अजवायन, लडवे की लाइ, गुरभा वृत्त, खिचड़ी पकाने के लिए सास तथा खिचड़ी चखने के लिए छ्वाटी ननद आदि। गात के गाल इस प्रकार हैं —

हम घनी^१ की खिचड़ी की साध,
खिचर्य हाळ मगा हो जी।
खिचड़ा घ गोरी मायड^२ भावन पै माग,
हम पै मेरा मीपरा जी।

ॐ

ॐ

ॐ

हम घन जी पीला की साध,
पीला हाळ मगा हो जी।
पीला घ गोरी मायड भावन पै माग,
हम पै नौरग चूदडा जा।

ॐ

ॐ

ॐ

इस विशद शतावलि के पाँचे पला कथचित् पुन म साभ्य देने का बात साचना है —

इतनी जे म्हारी साध पजोय^३ विद होलड में मीर^४ था^५।

पर भले पति का उत्तर भी बड़ा मामिद है —

मूजी रो घय^६ अमजगवार,
होल्ड दारा म्हाग मीर का।

१ स्वामी, पति। २ माता। ३ पूरी करना। ४. माका। ५ पत्नी।

शायद पत्नी को पुनोत्पत्ति का रहस्य समझ आ गया है और वह चुप हो गयी है। यह गीत जच्चा के साथ उपहास के गीतों की शैली पर है। उनमें भी इसे स्थान दिया जा सकता है।

जन्म के इन आचारों के पीछे १०वें दिन या जैसी प्रथा हो आगे पीछे 'स्वावड़' निकाली जाती है। पुरोहित यज्ञ आदि कराता है। नामकरण भी इसी दिन किया जाता है। जच्चा के कठी बाधी जाती है। 'दशोदन' होता है जिसमें विशेषकर प्रथम पुत्र की उत्पत्ति पर कौटुम्बिक भाइयों को भाज दिया जाता है। शुभ मुहूर्त पर दसवें दिन अथवा किसी अन्य दिन जलवा^१ पूजन अथवा 'कुआ धोक्षण'^२ जिसे कुआ पूजा कहते हैं, होता है। इस अवसर पर पाला थोटना थोटा जाता है जो पुत्रवती स्त्रियाँ के लिए एक गौरव की वस्तु है। यह पीला जच्चा की माता के यहाँ से 'छूछक' के रूप में आता है। छूछक में जो भेंट दी जाती है उसमें वस्त्र, आभूषण, मिठाई और कुछ धन होता है। 'कुआ पूजन' के अवसर पर जो गीत गाया जाता है वह गीत पीला के नाम से विख्यात है। गीत कुछ बड़ा है —

पीला तौ ओइ म्हारी जच्चा सरवर चाली जा,
सारा सहर ससाही पति प्यारा जी,

पाला रगा दयो जी ।

पीला तौ ओइ म्हारी जच्चा मुडले घैट्ठी,
सास तणद न मुपमोत्या पति प्यारा जी,

पीला रगा दयो जी ।

क पाला तेरां माय रगाया

के नयसाला तँ चाया, पति प्यारा जी,

पीला रगा दयो जी ।

सासू का जाया भोली^३ बाइ जी का यीरा,

उन म्हारी माध पनोई, पति प्यारा जी,

पीला रगा दयो जी ।

आप्यां ना देखे जच्चा मुखई ना बोली जी,

कन रै निरासी नजर लगाह, पति प्यारा जी,

पीला रगा दयो जी ।

दिल्ली सरहँत साहना बेद बुलादयो जी,

जच्चा की नयन दिग्गादयो जी, पति प्यारा जी,

पीला रगा दयो जी ।

१ जल का स्थान, कुआ। २ पूजन। ३ बहन, तन।

झाड़ें तो झाड़ें वेदा रोक रूपाँया जी,
मुख तै बोल्ले मोहर पचीमी जी, पति प्यारा जी,
पीला रगा दयो जी ।

अपणा चढ़ण का साहया घुटला चरुस्यो जी,
जच्चा के जीव की बधाई, पति प्यारा जी,
पीला रगा दयो जी ।

तू रे वेदका बेठा बहुत टगोरिया^१ जी,
भोले हाकिम^२ नै टग लिया पति प्यारा जी,
पीला रगा दयो जी ।

यहा प्रामीण नायिका दृष्टिदोष (नजर) से हत हुइ है । दूर-दूर से वैद्य बुलाये गये हैं । दिल्ली शहर के वैद्य ने अपना महनताना बड़ा कराड़ा लिया है । एक दूसरे गीत में नायिका ने चूँदड़ी ओदी है । उसे नजर लग गई है । देहली से फिर वैद्य जुलाया गया है । इस वैद्य ने अपना पारिश्रमिक विलक्षण ही मागा है । वह न पाच रुपया चाहता है, न पच्चीस । वह चाहता है नायिका का 'यौवन' । उसा यौवन को शुल्क (पीस) म लेने का आग्रह वह करता है —

पाँच दे दूंगी पचीस दे दूंगी वेद का झाड़ो मेरी नजरिया ।
पाँच नहीं लेता पचीस नहा लेता
ह गोरदी^३ ! म तो लगा 'जोवनिया ।'

नायिका अपना बचाव करती हुए एक युक्ति स काम लेती है —

साम दे दूंगी ननद दे दूंगी,
हा वेद का झाड़ो मेरी नजरिया ।
सास नहीं लेता ननद नहीं लेता,
हे गोरदी ! म तो लगा 'जोवनिया ।'

नायिका का यौवन अपूर्व है ।

जम ने अनुष्ठान एव तत्संधी गाता का यह एक सक्षिप्त-सा अभ्ययन दिया गया है । ये आचार एव अनुष्ठान सामान्य परिस्थिति में उत्पन्न होने वाले पुत्र के जम से सम्बन्धित हैं । जम उच्चा 'मूल' नक्षत्र में जम होता है तो जम न आचार एव अनुष्ठानों में कुछ अंतर आ जाता है । मूल याति की

^१ छलिया, टग । ^२ पति, स्वामी । ^३ सुन्दरी के लिए प्यारभरा ।
सम्बोधन ।

जाती है। मूल का शांति के लिए विभिन्न आचारों का आश्रय लिया जाता है। उनका सन्निप्त विवरण यहाँ दिया जाता है।

मूल में उत्पन्न पुत्र का सुख पिता तब तक नहीं देखता जब तक कि मूल शांति नहीं हा जाती। इसकी शांति के लिए पिता सत्ताईस गेड़ा की ककड़ा एकत्र करता है, सत्ताईस ऋत्यों का पानी लाता है और सत्ताईसवें दिन हलकी हलस पर बैठकर उस पानी से स्नान करता है। फिर तेल में बच्चे की परछाई देखकर उसने मुख का देखता है। पीछे एक टाटी से जा फूस की गोलकुडलाकार बगाली जाती है, बच्चे को निकाला जाता है। पिता जैघड़ (जलघट) में मूसल मारकर भागता है जो सामने आ जाता है मूल उमी पर चढ़ जाते हैं और पहले के शांत हो जाते हैं।

यह विश्वास है यदि मूल शांत नहीं कराये जाते तो बच्चा बहुत हा क्रोधी होता है और उससे अनिष्ट की आशंका रहती है।

विवाह के गीत

विवाह के गीतों का अपना अलग महत्व है। विवाह-संस्कार पर गाये जाने वाले गीतों का क्षेत्र बड़ा विस्तृत है। इसमें एक परिवार नहीं अपितु कई परिवारों का आनंद सम्मिलित हाता है। इस संस्कार में अनेक आचार शास्त्रीय एवं लौकिक दोनों प्रकार के सम्मिलित होते हैं। अतः इस अवसर पर अनेक प्रकार के गीतों का प्रचलन पाया जाता है।

विवाह-संस्कार जीवन का महत्वपूर्ण अंग है। यह इतना व्यापक है कि सम्य-असम्य सभी जातियों में समान रीति से मनाया जाता है। इस उत्सव पर गीत गाने की प्रथा प्रायः सभार के सभी देशों में पाई जाती है। विवाह की धूमधाम महीना पहले से प्रारंभ हा जाती है। इसका विस्तार दसों ता वर के रोकने से लेकर बधु के सुसराल से पाहर लौट जाने तक हाता है। पूरा विवरण इस प्रकार है —

विवाह संस्कार का आरंभ घर को रोकने से होता है। इस प्रथा के अनुसार घर का और उसमें पिता को भेंट दी जाता है। फिर टीका भेजा जाता है जिसमें अगूटा और कुछ मिठाई वस्त्र आदि हाते हैं। इसके पीछे विवाह से एक-दो मास पूर्व पीली मिट्टी जाती है जिसमें विवाह की तिथि शाध कराकर घर के यहाँ भेज दा जाता है। विवाह ७, ९, ११ या १५ दिन पूर्व लग्नपत्रिका भेजी जाती है। लग्न चढ़ जाने के पीछे विवाह के कार्य गंभीरता से आरंभ हा जाते हैं। दानों पक्ष, घर पक्ष व कन्या पक्ष, में विवाह

से पूर्व के विभिन्न कृत्यह लगातवान, उबटण आदि होने लगते हैं। लग्न पत्रिका में ही नान, छेइ तथा फेरों आदि का निवरण दिया होता है। लग्न के पीछे किंगी दिन वर और कन्या की माता अपने भाई को विवाह का निमन्त्रण देने जाता है जिसे भात न्यातना (भ्रातृ निमन्त्रण) कहते हैं। फिर विवाह दिन तक इस प्रकार आनन्द एवं उत्साह मनाया जाता है। बरात (वर्याना) जाने से पहिले वर पक्ष में ज्यौनार होती है। भोज दिया जाता है। उसी दिन माणरोप (मटा गाडा) जाता है और भात लिया जाता है। यह एक प्रथा है कि लग्न आने के बाद से लेकर जब तक भात नहीं दे दिया जाता, भातइ अपनी नून के यहाँ नहीं आता। वह भात देकर ही घर जाता है और भोजन करता है। यथासमय, बरात चलती है जिसे निकाषी कहते हैं। इस समय कई आचार किये जाते हैं। वर मौड़ बाधकर घोड़े पर चढ़कर देवी देवताओं की पूजा के लिए चलता है। इमे घुदचणी कहते हैं। इस समय वह समस्त ग्राम की परित्रमा करता है। घुड़चटी पर बहन चानन बनेरती है। मा दुद्धा पिलाती है। इन कृत्या से माता और भगिनी का प्रेम प्रदर्शित किया जाता है। इस समय हरियाना में एक गीत गाया जाता है जो उड़ा हा मार्मिक है। इसी दिन अथात् विवाह वाले दिन कन्या-पक्ष में चाक-पूजन होता है। बरात निश्चित समय पर कन्या के यहाँ पहुँचती है और बानलवास (जनवामे) में ठहराई जाती है। यहाँ पर वर एवं बरात का स्वागत होता है। सन्या में दुकाव (वारीठी) सस्कार होता है। वर घोड़ी पर चढ़कर कन्या के गृहद्वार पर पहुँचता है। यहा पर साली आरता करती है। वर अपनी छड़ी से द्वार पर लगी ३, ५, या ७ चिड़िया को छुवाता है जिसे तारण चटकारा कहते हैं। यह एक युद्धस्थल का प्रतीक है। ऐसा विश्वास है कि एक पिता ने अपनी छोटा-सा कन्या को जात-जात में चिड़ा से ब्याहने की बात कह दी। कन्या बड़ी हुई। कन्या ने पिता को पुरानी जात स्मरण कराई और आग्रह किया कि यह उड़ा से विवाह करादेगी। चिड़े भी बरात लेकर आ पहुँचे। निणय हुआ कि जो शक्तिशाली हो वही कन्या ले जाये। अतः वर आजन्तक इन चिड़ियों से लड़ता दिगया गया है। यह प्रथा हरियाना प्रदेश में प्राय सभी जातियों में प्रचलित है।

लग्न जाने के पीछे से बरात पहुँचने तक कन्या पक्ष में भी तेलगान आदि निमन्त्रण होते हैं।

१. तोरण का अर्थ है 'द्वार'। पर इस मन्हार के लिये तोरण से अभिप्राय दिया जाता है—द्वार पर लगी एक काठ का चिड़ी लिये पर ३, ५ या ७ काठ की चिड़ियाँ लगा होती हैं। इनको रोग से रग दिया जाता है।

हुकाव के पीछे प्रधान सस्कार 'फेरों' की चारी आती है। यह सस्कार पौरोहित्य सस्कार है और पुराहित ही शास्त्रोक्त विधि में इसे सम्पादित कराता है। परन्तु लौकिक सस्कार भी होते चलते हैं। महिलाएँ श्रवणराचित गीत गा-गाऊ उस सस्कार प्रक्रिया को अधिक रोचक, मार्मिक एवं कारुणिक बना देती हैं। सम्भवतः जन से महिलाओं का वेद पठन-पाठन छूट गया था तभी से उसकी (छद्म की) पूर्ति उन्होंने अपने मुरीले गीतों से की। परन्तु गीतों की प्रथा तो और भी पुरानी प्रतीत होती है। निस्सन्देह, यह उतनी ही पुरानी है जितनी विवाह सस्था। ठीक भी है, आन दातिरेक में हृदय जन खिलता है वह गीतों की भाषा का रूप ले लेता है। फेरों के पीछे वर को 'देवघर' में ले जाते हैं। दस देवताओं का पूजन कराया जाता है। वर का भेंट मिलती है। दूसरे दिन ही बटार का दिन होता है। उस दिन कोई विशेष आचार नहीं होते। तीसरे दिन अथवा दूसरे दिन ही बैसी प्रथा हा, बरात कन्या को साथ ले वापिस जाती है। उस दिन भी कई आचार होते हैं। वर को घर बुलाकर टीका किया जाता है। बट खुलाया जाता है। वह भट्टी में पैर मारकर एक टूट गिरा देता है। इसके पीछे वह भट्टी काम में नहीं लाई जाती।

बरात जन कन्या को साथ लेकर वर के यहाँ पहुँचती है तो बधू का स्वागत किया जाता है। बन्नी से वर के दस देवता पुजवाए जाते हैं। श्रगले दिन गठचोड़े से वर अपनी दाना पिर ग्राम देवताओं को पूजते हैं और छुगी खेलते हैं। इन्हीं दिनों 'कागण जूझा' खेला जाता है। तीन दिन बन्नी अपनी समुशल में रहती है। इसके पीछे बरनी वर के साथ अपनी माता के यहाँ लौटता है। एक दिन के पश्चात् दोनों वापिस चले जाते हैं। इसे गीना कहते हैं।

इस समस्त आचार को लोकजार्ता तत्वा के विचार से इस प्रकार दिया जा सकता है —

मगाई (टीका) — १ चौक पूरा जाता है। एक कलसा पानी भर के रखा जाता है। वह उस चौक पर सादा रगता है जिसे नाइन लेती है।

२ टीका म जो सामग्री मिलती है वर उसे अपनी मा का गोद में देता है।

३ गीत गाया जाता है —

मुझ्या सार की तागा पा^१ का पोया,
पोता टीकिया^२ दाग डल्लुराम का कहिय ।
मुझ्या सार की तागा पा^३ का पोया,

१ रगम । २ टीकिया, निमका टीका चढ़ाया जा रहा है। विशेषण है पोते का ।

इस गीत को गाने के लिए स्त्रियाँ दादा के स्थान पर काका, साऊ, माइ शब्द लगाकर बड़-ऊई बार गाती हैं।

लग्न

लग्न के आचार एवं अनुष्ठान दो रूपों में मिलते हैं—कन्या पक्ष के तथा वर-पक्ष के। लग्न कन्या के पिता द्वारा मेजी जाती है, अतः कन्या-पक्ष के आचार मुख्य होते हैं।

कन्या-पक्ष—१ कन्या का सिर धुलाया जाता है। आभूषण प्रायः सत्र उतार लिए जाते हैं। केश खुले रखे जाते हैं। विदा समय ही 'बेणी सहार' होता है।

२ लग्न-पत्रिका जिसे पढित या पुरोहित लिखता है, उसमें २ सुपारी, इरी दूध, ५ या ७ हल्दी की गाठ और चावल होते हैं। राय में दो पैसे भी रखे जाते हैं। इस लग्न-पत्रिका को कन्या की गोद में रखा जाता है। वह इस पत्रिका को अपनी मा अथवा बूया को लाकर देती है।

३ प्रायः हसने के लिए निषेध होता है। हसना अपराधकर्म माना जाता है। ऐसा निश्वास है यदि लग्न पर कन्या हसेगी तो अकाल पड़ेगा।

४ गीत गाये जाते हैं। इस समय के गीतों में दइ-देवताओं के गीत श्रारंभ में गाये जाते हैं। एक गीत भूमिपा का यह गाया जाता है —

ऊँची तेरी खाइ ऊँचा नीचा कोट,
दाया^१ बस बाबा भूमिपा की ओट।
काहे का दिवला काहे की बात,
काहे का घी बलै सारी रात।
अगइ धदन का दिवला निर्मल बात,
सुरही को घी बलै सारी रात।
तेरी बाबा भूमिपा उद्यम जात,
तू जन्मो छट्ट^२ चौदस की रात।
बेनिया को बाबा माइयर बाप,
बहुधा को सै बाबा रिछपाल^३।

वर-पक्ष—१ लड़का का चौकी पर बैठाया जाता है। पण्डित मन्त्रोच्चारण के साथ लग्न-पत्रिका को लड़के की गोद में देता है। यह इसे अपने दादा की

१ ग्राम विशेष। २ टेन, टीक। ३ रिछपाल (रक्षपाल), श्री मयाग रगनेवाहा।

को दे देता है। फिर पड़ित उसे खालकर पदता है और सत्र पंचों को सुन देता है। तेल, वान, फेरे आदि का कार्य-क्रम इसमें लिखा होता है। उसी के अनुसार कार्य होते हैं।

२ इस अवसर पर भी गीत गाये जाते हैं। उनका प्रारम्भ भी देव विषयक गीता से होता है। एक गीत यह गाया जाता है —

वाहे की तेरी ओबरी^१, वाहे का जड़ाण क़िवाड़,
सच्चा हनुमान बली ।
अगड़^२ चदन की ओबरी, चदन नडाण क़िवाड़,
सच्चा हनुमान बली ।
करे चढ़े तेरे देहरे, केरे तुम्हारा भेंट,
सच्चा हनुमान बली ।
सवाण तो मण को रोठ से, सवाण रुपिया की भेंट,
सच्चा हनुमान बली ।
बंरादा^३ तो मारके दूरे करो, धारा के सिर से नीत,
सच्चा हनुमान बली ।

भात न्यौतना

१ बहन वन्नोइ भात का निमन्त्रण देने जात हैं। साथ में एक गुड की भेली, चावल और एक रुपया जाता है। इस सामग्री के साथ बहन चलती है। साथ में दोराना बिठाना भी जाती हैं।

२ घर से चलते समय गीत गाता है —

कोरो घड़ियों धीरा पाली हटदी नीतण आड़े भानइ ।
मेरे घर अइये धीरा मेरा माका चाया मेरे घर निरद^४ उपाइये ।
क्योंकर आऊ मेरी माही जाईं देर^५ पदा मेरी लामणी^६ ।
नैर जे धारा मरूर पदाद गादी लगा द डोवणी ।
मेरा घर अइये निरद उपाइये ।
क्यबर आऊ मेरी लामणी^७ जा^८ मेरे घर बाळक रोमणा ।

१ अगरी ध रूप में बताया गया धार । २ अगड़, एक सुगंधित पदार्थ । ३ शत्रु । ४ प्रशंसा । ५ मरूर, राजा कड़ी भूमि विस्तृत फलन बहुत बढ़ा जाता है । ६ परी धमका । ७ लामणा (पिना) की पुत्री अथवा सौतेला बच्चा ।

बालक री धीरा घाय लगा टू पल्ला ' घान् बारा मूलखा ।
 आती जाती वीरा भोगे लगा हूँ मेरे घर अइये विरद उपावणी ।
 मेरे घर अइये धीरा मेरा माका जाया मेरे घर विरद उपाइये ।
 क्यूकर आऊ मेरी माकी जाई मेरे घर नार सुनाम्वनी^२ ।
 अपणा वीरा न चारए विह्वान्यू दो गोरी दो सावली ।
 सावली तो धीरा तपे सोई गोरी टोले वीनया ।
 मेरे घर अइये धीरा मेरा माका जाया मेरे घर विरद उपाइये ।

३ वदन मग की अन्य महिलाओं के साथ भाइ के धाम में पहुँचती है ।
 उधर से तिनवाँ जलपूर्ण कलश लेकर स्वागत के लिए आती हैं ।

४ ग्रहन अपने भा' के घर पहुँचती हुई यह गीत गाती है —

क्या ते^३ नन धायन राजा,
 क्या ते नूतू काका ताऊ,
 क्या ते नूतू जाम्मण जाया वीर, तिमते मैं ऊजली^५ ।
 भेली नूतू बाबल राजा,
 बलाए नूतू काका ताऊ,
 मिथी री कुँने हजारी धीरा, तिमते मैं ऊजली ।
 क्यां चढ़ आवे बाबल राजा,
 क्यां चढ़ आवे काका ताऊ
 क्यां चढ़ आवे हजारी धीरा, तिमते मैं ऊजली ।
 धरथी^६ आवे बाबल राजा,
 बइलां आवे काका ताऊ,
 हाथी होई जाम्मण जाया, तिमते मैं ऊजली ।
 के धरमंगा बाबल राजा,
 के धरमंगा काका ताऊ,
 के रने धरम हजारी धीरा, तिमते मैं ऊजली ।
 रोक रपय्या बाबल राजा,
 टकाण धरम काका ताऊ,
 पीखडा^७ मौर^८ हजारी धीरा, तिमते मैं ऊजली ।

१ पाचना । २ कुचरप्या (स्यय मे) । ३ निमत्रण रना । ४ धरस्वी ।
 ५ रय, स्यदन । ६ पीखी, मुनहरी । ७ मौर = मोहर (धररधी) ।

कित उतरैगा यात्रल राजा,
 कितरै उतरै काका ताऊ,
 कितरै उतरै जाम्मण जाया, जिसते मैं ऊजली ।
 परसों^१ उतरै यात्रल राजा,
 पीलही^२ काका ताऊ
 महला म उतरै हनारी बीरा, जिसते मैं ऊजली ।
 वे जीम्मेगा यात्रल राजा,
 क रै जाम्मै काक ताऊ,
 के रैन जीम्मै जाम्मण जाया, जिसते मैं ऊजली ।
 दूध घतासा यात्रल राजा,
 किनव^३ काका ताऊ,
 सरस मलीदा^४ हमारा बीरा, जिसते मैं ऊजली ।

५ भात यौत कर लौटती हैं । गीत गाती हैं —

पीरा ये^५ दाम्मण^६ भल ल्याइयो,
 चुदही पर रतन जदाइयो ।
 ग्हारा रिमक^७ किमक भाती आइयो ।
 वेस्सर^८ ये भल ल्याइयो ।
 मुम्मर पर रतन जदाइयो ।
 ग्हारा रिमक किमक भाती आइयो ।
 चुदलो^९ ये भल ल्याइयो ।
 मोरले^{१०} ये रतन जदाइयो ।
 ग्हारा रिमक किमक भाती आइयो ।

हलदात घान

- १ चौक पूरा खाता है ।
- २ छोटा पट्टा या छोटी चौकी चौक पर स्थापित की जाती है ।
- ३ सात इल्दी की गाठ और थोड़े से जी लिए जाते हैं ।
- ४ सात त्रिषा के हाथ में, जिनमें कोई गर्भिणी नहीं होनी चाहिए, फलाया बाधा खाता है । उन्हें 'सात मुशगन' कहते हैं ।
- ५ पाँच सेर गेहूँ लिए जाते हैं ।

१ चौपाल । २ दुयारी । ३ यात्रल । ४ चूरमा । ५ तुम । ६ लहगा ।
 ७ शान क हाथ । ८ नय । ९ चूड़ी । १० माग पर पहना जानेवाला
 घाभूषण ।

- ६ सात मूसलों में फलावे बाध जाते हैं ।
- ७ ऊलल में जौ डाले जाते हैं और सात मुहागनों क्रम से सात-सात चोट लगाती हैं ।
- ८ दो-दो मुहागण मिलकर कारे माट में दा दो रान^१ जौ डालती हैं ।
- ९ वह ऊरल और सातों मूसल पारस में विवाह की समाप्ति तक रख दिये जाते हैं ।

रतजगा^२

- १ स्थान को पवित्र कर लिया जाता है ।
- २ कोरां भाल या मूण (बड़ा मटका या गोन) भरा जाती है ।
- ३ एक कारा घी का दीपक जलाया जाता है ।
- ४ इस दीपक पर घरवाले सवा रुपया डालते हैं । अन्य छियाँ दा-दो पैसे दीपक में डालती हैं । भूआ या बाहण आरता करने वाली उम धन को लेती हैं ।
- ५ सारी रात भूमिया आदि दई देवताओं के गीत गाकर प्रायः सभी अय गीत गा दिये जाते हैं । विवाह से पहिले वाले रतजगे में भूमिया, देवी, माता, देवता, घरवत गृहाधिष्ठात्री देवी), बघावा, दापक और मेंहदी तथा दातन के गीत गाये जाते हैं ।
- ६ थापे लगाये जाते हैं । शुभदिशा की ओर मुह करके, घर के यहाँ, घर घी का थापा लगाता है और कन्या अपने यहा मेंहदी का थापा लगाती है ।

उघटणा (तेल)

- १ चौक पूरा जाता है ।
- २ गाव या मोहल्ले में सूचना दी जाती है । सम्मिलित होने वाली स्त्रिया थोड़ा-थोड़ा अनाज साथ लाती हैं ।
- ३ घर या कन्या को बुलाया जाता है । चौक पर दो पटाडिया बिछाई जाती हैं ।
- ४ लक्ष्मण के साथ छोटा अनिवाहित लक्ष्मण बैठाया जाता है । वह कपारा लक्ष्मण विनायक या लोत्रडिया कहलाता है ।

१ ऊरल। २ रतजगा—घर के यहा दो बार होता है, तेल में पहिले घी और पट्टे घाने पर । कन्या-पक्ष में चाक-पूजन के दिन एक बार होता है ।

ख कन्या के साथ भी एक छोटी लड़का मिठाई खाती है ।

४. चौ का आटा और हल्दी मिलाकर रख ली जाती है । उसमें तेल डाला जाता है । दून से अंग स्पर्श किये जाते हैं ।

५. दो राखड़ी^१ बनाकर गडरनी खाती है । राखड़ी में लाहे का छल्ला, लाल का छल्ला, कौड़ी, कद का टुकड़ा और उस टुकड़े में नूखाइ होता है । ऊन की रस्सी (धागा) में बांध दिये जाते हैं । एक राखड़ी वर के बांध दा जाती है और दूसरी को घरात के साथ ले जाते हैं । ऊन की रस्सी वाली होती है ।

६. पंडित आकर सात मुहागणों के कलावे बांधता है । ऊपल और फलश को भी कलावा बांधता है ।

७. दून से सात मुहागन तेल चटाती हैं और फिर सार्ता हल्दी चटाती हैं । गीत गाती हैं —

जी गीव्हा को उबट्यो राय चमेली को तेल,
अत लाने बैठयो उबट्यो ।

मैल मूदे मूइ भँ^२ पड़े नूर चँ^३ गोरे अंग,
अत लाडो बैठयो उबट्यो ।

आ मेरी भायइ देपले तम देखया सुख होय,
अत लाने बैय्यो उबट्यो ।

आ मेरी भुआ भाययो^४ देखल्यो तमने आरतडा^५ रो चाव,
अत लाडो बैठयो उबट्यो ।

८. भुआ या बहण रेली से अथवा हल्दी से टीका करती हैं । फिर प्रार्था करती हैं । गीत गाया जाता है —

तेरो हरयो ७ पीपल सुपल फलियो बैलकी फलछाइयो ।

एक दूर देसा तँ मेरी भुआ ५ आइ कर बइ गोत्तण आरतो ।

एक दूर देसां तँ मेरी भाणल आइ कर मेरी माफी जाइ आरतो ।

एक आरता की मैं भेद न जाणू के विध का जो मैय्यो आरतो ।

एक हाथ लोगे गोद धेगे कर मेरी माफी जाइ आरतो ।

एक हाथ कसीदो गोद भताजो कर बइ गोत्तण आरतो ।

एक आरता की गाय लस्यो और न अलल^६ बड़ेरिया ।

उस गाय को हम दूधो रो पीवा अलल बड़ेरा म्हारो पिबचड़े ।

१ राखी, पहुँची । २ भूमि पर । ३ बहनो । ४ आरते का । ५ चर्गी, हट्ट-पुट्ट ।

बातो इतणो सो लँकै राई धरवी चाली ठे मेरो मा की जाइ अमीमदो ।
तम तो लदियो रे यधियो मेरी भाका रे जाया फलियो बडवा नीम जू ।
सेरी साम नथद रल वृभर लागो के रे ज लागो घहुअइ धारते ।
वै तो पान तो रे पचास लाग्या सुपारी तो लागी पूरो डयोइ सै ।

उबटना साधारणतया सौंदर्य-सज्जा का एक उपाय है, परंतु वैसाहिक कृत्वा में इसने आचारिक स्थान ले लिया है। पितृष्रवा अथवा भगना अपने भाई भतीने का उबटना लगाती हैं और हरे पीपल के वृक्ष की भाँति उसका घड़ने की आशा करती हैं। शुभ शकुन के लिए वे जलपूर्ण लोटा लेकर आरता उतारती हैं अथवा पुत्र को गोद में लेकर। इस उपलक्ष्य में उन्हें यथाशक्ति नेग दिया जाता है। प्रस्तुत गीत में 'अनल चन्देरी' नेग में दी गयी है। गाय भी नेग में मिली है जिसका दूध बड़ा पुष्टिकर है। बहन वाञ्छित नेग मिल जाने पर आशी देती है। वह अपने भाई को कड़वे नीम के सदृश अन्ता देवना चाहती है। लाकनाता में नीम ने अपना शुभ स्थान बना लिया है और उसका कड़वाहट दूर हो गयी है।

इस गीत की भाषा और लहजा ठेठ हरियानी है परंतु पड़ोस की अहीर-बाही का यत्किचित् प्रभाव भ्रमकता है जो नगण्य है। हरियानी का स्वरूप आदर्शरूप में इस गीत में आया है।

६. स्नान कराया जाता है।

विशेष —तेलों की सन्ध्या पठित बतलाता है। यह लग्न के दिन ही बनला दी जाता है और वरपक्ष के लिए लग्न-पत्रिका में लिख दी जाती है। तेल चंगाने के लिए शनिवार शुभ दिन माना जाता है। रविवार को तेल नहीं चंगाया जाता।

गोरवा पूजन — यह तेल वाले दिन ही पूजा जाता है। अपने घर के गारवे का न पूजकर सार्जनिक गोरवे को पूजते हैं। मनदङ्गा या मनदङ्गी को आग चू करके या चादर उठाकर ले जाते हैं। साय में यह सामग्री दाता है—चून का चाग्मुख्य वाला दीया, एक गुद की डली, हल्दी की सराइ, एक देसा और एक तङ्ग्या। यह सामग्री थाल में रखकर ले जाई जाती है।

२ गारवे पर पाणी छिड़ककर सातिया करते हैं। हल्दी से पूजते हैं। दीया प्रजलित करके घर बापिस आ जाने हैं। चावल चार दिशाओं में फेंकते हैं।

- ३ लौटते समय एक खाँच रेत उदड़ा या उदड़ी लाती है और उसे श्रोटोक (मुख से कुछ उच्चारण बिये बिना) भडारे में रख देते हैं । यह विश्वास है कि इस गोरवे के रेत के कारण भण्डारा एक बूझी की भाँति अक्षय हो जाता है और जय रहती है ।
- ४ दीया देइ हेवताया के सम्मुख रख दिया जाता है ।

मादा रोपणा^१

- १ बरात आने वाले दिन प्रातः काल पडित आता है । एक हाल^२ (हलस) मगाई जाती है । इसके साथ ही खाँची के यहा से तिखुटा^३ या चौखुटा बजारा जो लकड़ी का बना होता है, लाया जाता है । कुम्हार के यहा से पाँच सात सराई^४ और एक करवा^५ मगाया जाता है । दर्जी डोवटी^६ से मादा (मडप) बनाकर लाता है । दर्जी को नेग दिया जाता है ।
- २ हाल और बजारे को, जो लकड़ी का बना होता है, गेरु में रग दिया जाता है ।
- ३ चौक पूरा जाता है ।
- ४ लकड़ी बुलाई जाती है ।
- ५ नवग्रह पूजन होता है ।
- ६ कन्या के हाथ से मादा रोपण के स्थान पर तेल और चावल छुड़वाये जाते हैं ।
- ७ कन्या और उसका मामा दमा^८ से धरती सादते हैं ।
- ८ गढे में हल्दी की गाँठ, सुपारी, टका डाला जाता है । कुटुम्ब की शेष स्त्रियाँ गढे में मूग और चावल छोड़ती हैं ।
- ९ बजारे के साथ पडित तुली से बना धनुष बाण जिसका मुँह दक्षिण की ओर हो बाधता है ।

त्रिशोप—सराइयों को सपुटित करने ऊपर की सराइ का मुँह ऊपर को रखकर कलावे में बाधकर माडे की पृथ्वी तथी में बाध दी जाती है । वर के

१ गान्ना । २ हल का वह भाग जो लम्बी लकड़ी का बना होता है और जिसे पुशा से बाधते हैं । ३ त्रिशोप या चतुःकोण कटघरा । ४ मिर्द का पात्र । ५ खाल कपड़ा, कद । ६ धरती ग्योदने वाला लोहे का यंत्र ।

यहाँ केवल सराइया को सपुटित करके एक स्थान पर बाघ दी जाती है ।

भात भरना

- १ भातां एक साथ घर में नहीं जाते और न अपनी बहन से मिलते हैं । तभी मिलते हैं जब भात पढ़ना लिया जाता है ।
- २ निश्चित लग्न पर भातीं भात भरते हैं ।
- ३ बहन दूसरी स्त्रियों के साथ थाली में चौमुली दीपक (प्रबलित), हल्दी, चावल, लड्डू और जितने भाई हों उतने रुपये डालकर द्वार पर आता है ।
- ४ नाइन जलपूर्ण गड्ढा लेकर पढ़ी होती है । भातीं उसमें कुछ पैसे डालता है ।
- ५ जिस द्वार पर भात लिया जाता है । वहाँ एक चौक पुरा जाता है । उस पर एक पट्टा रखा जाता है । उस पट्टे पर ही भातीं आकर पढ़ा होता है । बहन तिलक करती है । भाई बहन को चूदड़ी उगता है । चूदड़ी का गीत गाया जाता है —

भान सोमा में रै धीरा जगमगो ।

आया री मेरी माका जाया धीर हीरायद ह्याया चूदड़ी जी ।

जैरै थोड ली हीरा कद पदै, दिव्ये घर लो करजै जी ।

सादी ली क्यू ना ह्याया चूदड़ी जी ।

भान बागा में रै धीरा जगमगो ।

आया मरी री माका जाया धीर, हीरायद ह्याया चूदड़ी जी ।

जैरै थोड ली हीरा कद पदै, दिव्ये घर लो करजै जी ।

सादी ली क्यू ना ह्याया चूदड़ी जी ।

इसी प्रकार—आज पगसा में ।

आज पोह्या में ।

आज चौक में ।

रै धीरा जगमगो ।

आया री मेरी माका जाया धीर हीरायद ह्याया चूदड़ी जी ।

जैरै थोड ली हीरा कद पदै, दिव्ये घर लो करजै जी ।

सादी ली क्यू ना ह्याया चूदड़ी जी ।

इस गीत में बहन का भयमिश्रित श्रोत्रुधन व्यक्त हुआ है ।

६ भारती यथाशक्ति धन बहन के थाल में डालता है। इस धन को लेकर बहन लौटती है। भाइ भी साथ ही घर में जाता है। दानों मिलते हैं।

७ भात की समाप्ति पर जब भाइ खूब लुट पिट लेता है तो उससे उपहास स्वरूप एक गीत गाया जाता है। आदि में भाइ की प्रशंसा है परन्तु अंत के गोल परिहासयुक्त हैं —

ऊबड़ी तो घर की पोल^१ नीच्चा रे घर का धारना ।

❁

❁

❁

जीम्मण लाग्या देघर जेठ दलक^२ पड़ा मेरो टोकणो ।
जीम्मण लाग्या भाई जाया बीर ठकन^३ पढ़यो मेरो टोकणो
सारो तो पीगयो भाइ जाया भाड मूतभरो मेरो ओररो^४ ।
भायो सँ टाटी^५ पाइ, मूसल मारयो कारव में ।

कैसी सासारिकता है 'पैठा रहा न पास यार मुख से ना बोली' ? मौके का मजाक है।

ब्याह का दिन (ग्र) घरपक्ष में

घुडचढी या निकासी

(१) चौक पूरकर उस पर चौकी बिल्लाई जाती है।

(२) स्त्रियाँ मिलकर स्नान कराती हैं। स्नान के समय गीत गाया जाता है —

हलबल^६ हलबल नदी बहसै रायजादा न्हाण सिजोया जी राज ।
गैर बखत मत न्हाओ रायजादा, "हाओ रायजादा कन्नि कगरो"
होय सै जी राज ।

सांभ बखत यम रायजादा न्हाओ,
रायजादा बात मुगन की होय सै जी राज ।
किमीयां को सँ रतन कचौड़ी,
किसियां का सै मोतीदारा^७ हार जी राज ।
समधी की सै रतन कचौड़ी,
याना नी का सँ मोतीदारा हार जी राज ।

१ दुयारी । २ रिक्त हो गया । ३ भर गया । ४ ठमारा, छप्पर ।

५ ट्टी । ६ छलछल करती । ७ घाट । ८ मोतियों का ।

हार सोहये हीवड^१ के ऊपर,
मोतीदा लेंगा फिज़ाराची रात ।

३ पडित वन पढ़नाता है और मॉड गधता है । मोड का गीत गाया जाता है । मुँद सेदरा भी पँघता है चिखवा गीत यह है —

कन्या की सै मालया धर कटे लाम्ना विनूर ण,
इय गूथ मालण सेहरो ।
गड दिल्ली की मालया धर टाणा म लाम्नी गिनूर ण,
इय गूथ मालण सेहरो ।

अत व गाल है,
तेर अत^२ जान सेहरो धार अड़िया^३ मै चारो राव,
इय गय मालण सेहरो ।
दिल्ली की अड़िया बादमाह धर साभर को मिरदार,
इय गय भागण सेहरो ।
चारो तो राव वाहदा^४ धर ग्याइ ल्यायो जैना का पूत,
इय गूथ मालण सेहरो ।

मुकुट और मेहरा बने व विशेष आमरण्य हैं । इनके द्वारा बने का सम्राट व रूप म चित्रित किया जाना है । प्रचुर गीत में मुन्दगी नायिका व लिए दिल्लीय तथा साभर नग्य भी अड़ टुए है परन्तु जैना के पुत्र के प्रताप व आगे सर मुक गय है और उहे लौटना पडा है । बने व गौरव का रत्नक एक मुन्दर उपाहरण्य है ।

४ मौड में ५ मुहयो चुपरे से लगा दी जाती हैं ।

५ छान करना—नाइ बर के टुकड़े का बर व ऊपर फैलाता है । इस त्रिना का छान करना करते हैं । नाइ का नेग मिलता है ।

६ भाया स्वादा लगाता है और आरता किया जाता है ।

७ मा या धर की प्रतिष्ठित आ कनेवा, विगमें भूत गाठ लगा हाती हैं, पढ़ता है । कनेवा पढ़ाने का काय मुदागन करती हैं । यह निरध^५ निगाइ व अतेम त्रि तरु पढ़ना हाता है ।

८ पुङ्कवा रती है और रन्ता घडा पर चम्प चबना है । इने विहाग भा करते हैं । इय समर अतक गाव गाये जाते हैं । उउ

१ छदप, पध । २ धरे जिन । ३ धरे हैं । ४ वाविम लण आय । ५ लयरा ।

गीतों का विषय वैवाहिक वातावरण के इर्द गिर्द घूमता है और उनमें कुछ सरसता होती है। कुछ में बनी की ओर से निमंत्रण भी गाया जाता है। माता और बहन के हृदय को छू-छू जानेवाले भाव भी एक गीत में आये हैं। इन गीतों का मार्मिक विवेचन आगे होगा। यहाँ हम केवल एक गीत जो हरियाने का जातीय निकासी गीत है, दे रहे हैं —

घुइजा^१ तै बल ल्याइओ, घुइजा रे चायक थाओ,
अनोखा लाइला हो राइ बर धीरे धीरे चाल,
मजलै मजलै चाल ।

करवा^२ तै बल ल्याइओ, करवा र रइकत थाओ,
अनोखा लाइला हो राइ बर धीरे धीरे चाल,
मजलै मजलै चाल ।

धूप पदे धरती तपै करू अढायो छाप,
मजल मजल टेरा दिया, तम्बू दिया ढलकाय,
मजल मनल कै चालणे, हो राई बर धीरे धीरे चाल,
मजलै मजलै चाल ।

धमड़ा^३ तै बल ल्याइओ समधी की पील बखेर,
अनोखा लाइला हो राई बर धीरे धीरे चाल,
मजलै मजलै चाल ।

महदी तै बल ल्याइओ बदकी रे हाय रचाए, अनोखा
काजल ये बल ल्याइओ बदकी रे उन धुलाए, अनोखा
गहणा ये बल ल्याइओ गहणा पाट^४ यलाय, अनोखा
बदकी ये बल ल्याइओ बदकी सँ हस बतलाय,
अनोखा लाइला हो राइ बर धीरे-धीरे चाल,
मजलै-मजलै चाल ।

इस गीत में बने के चाय का वर्णन है। श्रौतुक्य के कारण उसे त्यरा है। परन्तु गीत में इस प्रकार की उक्तुकता को समाचीन नहीं माना गया है। अतः बारबार प्रार्थना की गई है कि मध्यम गति से चला जाये।

६ दूल्हा घोड़ी पर सवार होता है। मा चूची पिलाती है। बहन हाथ में सींक लेकर भड़कती है और चावल बखेरती है। इस समय एक

१ घोड़ा। २ ऊट। ३ दाम। ४ रेशमी तागे से बलवाकर।

हृदयव्यशीं गीत माता और बहन की ओर से सवादात्मक रूप में गाया जाता है। कुछ पंक्तिया नीचे उद्धृत हैं —

दूधी की धार मारू, माता न कदे तू गुमानी^१ भूल नहीं जा।
याद दिलाऊ मू अक आवेगी इव नइ वहु रानी बेग भूल नहीं जा।
भाइ का सुली हो शरीर, जुग जुग जीवो मेरा वीर।
याद दिलाऊ सू अक मा जाइ को यामै निसानी बीरा भूल नहीं जा।

१० मंदिर में घाते हैं। पुजारी आशीर्वाद देता है।

११ मंदिर से लौटकर भूमिया धोकणे^२ जाते हैं। वही पुराहित मौढ़ खोलता है। बरत गाँव से चलती है। बहन या बहनोई बन्ने का मार्ग रोकने हैं। उन्हें नेग दिया जाता है। इसे 'बाग पकड़ना' कहते हैं।

१२ बरत चलती है और सब स्त्रियाँ मिलकर गीत गाती हैं —

बन्ना ए कित याजा रे बाजियो,
बन्ना ए कित धरारे निसान,
छोटा छैल उतरयो बाग में।
तेरी बद्दी रे बूके रे बन्ना,
छू ए सपेरी आय, छोटा छैल उतरयो बाग में।
बद्दी गहया घड़ावन मैं गया,
सुनरे^३ नै लाइइ बार रे छोंग छैल उतरयो बाग में।
बद्दा गहया घड़ाव तेरा दादा जी, तेरा ताऊ जी,
तू तढके ए तढके आय छोंग छैल उतरयो बाग में।
बन्नी कपडा रिमावण^४ मैं गया,
बयिया नै लाइइ बार रे, छोंग छैल उतरयो बाग में।
बद्दा कपडा रिमाव, तेरा बाबल^५ नी तेरा चाचा जी,
तू सग्देरी^६ ए सग्देरी आय छोंग छैल उतरयो बाग में।
बद्दी मेंहदी रिमावण, मैं गया,
पसारी ने लाइइ बार, छोंग छैल उतरयो बाग में।
बद्दा मेंहदी बियाव तेरा बीर जी, तेरा मामा जी,
त रे सग्देरी ए सग्देरी आय छोंग छैल उतरयो बाग में।
बद्दा बद्दी तो स्याहय मैं गया,

१ अभिमानी। २ पूजने। ३ सुनार। ४ शरीरना, स्पर्शना करना।
५ रिना। ६ मरह।

मेरे साथिडा ने लादइ बार छोटा छैल उतरयो बाग में ।
 बन्डी तो व्याहै तेरा वृणना बदवा,
 बन्हा तो याहै तरो वृणवा,
 तूरे सम्हेरी ७ सम्हेरी थाय छोग छैल उतरयो बाग म ।

सोडिया

बरात चला जाने के बाद घर पक्ष के घर में कई आचार होते हैं। उनमें एक प्रमुख आचार 'सोडिया' मनाने का है। यह घर के घर पर स्त्रियों द्वारा मनाया जाता है। इस आचार के द्वारा स्त्रियों कृत्रिम विवाह रचती हैं। विवाह के समस्त काया की आवृत्ति करती हैं। इस प्रथा से कई लाभ होते हैं —

- १ मनोरजन हो जाता है।
- २ जागरण होने से घर बार की रखवाली हो जाती है।
- ३ विवाह सम्बन्धी शिक्षा मिल जाता है।

इस आचार में लोकमार्ता व कई तत्व निहित हैं। आजकल भी ग्रामों में बंगाल का आदिवासी जातियों में यह प्रथा चला आ रही है कि कन्या बरात बनाकर घर न यहाँ जाती है। बहुत सम्भव है कि उसी प्रथा के अवशिष्ट चिह्न इधर भी इस रूप में बँधे हुए हैं।

यह ध्यान देने की बात है कि इधर बरात में कन्या का शामिल होना बुरा माना जाता है। यह हो सकता है कि समान में पितृसत्ता युग आने के बाद इस प्रथा को घर की चार दीवारी में बंद कर दिया गया हो।

बरात की पहुँच

१ बरात पहुँचने की सूचना बरात का नाह देता है। यह जाल (बुद्ध विशेष) की हरी टहनी के साथ कन्या के पिता व यहाँ जाता है। इस आचार को 'हरा डाली ल्याणा' कहते हैं। उसने पीछे बरात को जाबलाला (जननासा) में पहुँचा दिया जाता है।

२ डुकाण—गायका, घर छोड़ी पर चक्कर कन्या के द्वार पर जाता है यहाँ पर साला आरता करती है और उगका ती गालता है। तारा गालों से तात्वय लड़ने व बदन को देवता स्वाम्य आ करने से है। लड़ना अपने ही न द्वार पर लगा ४, ५ या ७ निरिधियाओं का आकाश का बना जाता है। ये रंगी रंगी हैं, हुमाता है। इसे 'डुकाण' कहते हैं।

व्याह का दिन—कन्या पक्ष में

१ माता पिता, ज्येष्ठ भ्राता, भावज सब व्रत रतते हैं । मटा रोपने के पाछ पानी पिया जा सफता है ।

२ भान्न लिया जाता है ।

३ मामा चाँदी की बाली (सुरकी) लाता है जिनकी सख्या चार होती है । ये लाहे की बालियों के स्थान में पहना दी जाती हैं । यह एक महत्त्वपूर्ण प्रथा है और इसे 'मामा बाली' नाम से पुकारा जाता है ।

४ मामा कन्या को चौला पहनाता है । चौला पीले रंजे का बना हुआ लँहगा और जुनी होती है । इसे 'मामा चौला' कहा जाता है ।

विशेष—यदि मामा निर्धन भी है तो 'चौला और बाला' अवश्य लाता है । लड़के के विवाह में 'मौड़' अवश्य देता है ।

५ चार धोक्या—कन्यापक्ष की क्रियाँ एक माली में कुछ मिठाइ, सवा रुपया, पानी का लाग, हरा दून, सराइ में भीगी हुई इल्दी और कलावा लेकर कुम्हार न यहाँ जाता है । चाक का टीका लगाया जाता है और सातिशा फाटा जाता है । मिठाइ और सवा रुपया चाक पर रख दिया जाता है । लौटते समय कुम्हारिन अपने सर पर मूण (गाल या रड़ा मटका) उसके ऊपर मिठा का करवा, साना या चाँदी का फठला मूण के गले में डाल कर चटागत न यहाँ लाती है । फठले को उतार लिया जाता है । मूण का माँटे की हलख (बाली) के पास रख देते हैं और उसमें सात मुहागण पवित्र पानी भर देता है । उसमें घाड़ा-सा गगाजल भी छुड़ा जाता है । उसने पास ही आम या पीपल की टहनी रख दी जाती है ।

६ जाजलवासा धोक्या (पूजना)—कन्या का भाइ अपनी पत्नी के साथ गठ जोड़ा करके कन्या को चादर उठाकर अपनी गाद में ले लेता है । लड़की अपने दोना हाथों में कुछ पीले चारल ले लेती है । फिर पीछे-पीछे क्रियाँ गात गाती हुई जाजलवासे के पास जाती हैं । यहाँ लड़की अपने हाथ से चारलो को छुड़ा देती है । इस कृत्य का तात्पर्य यह है कि लड़की ने लड़के को फरो के लिए श्राद्ध किया है ।

फेरे या चौर्री (भावर)

१ बेटेवाल को धार से सजने का सामान आता है । इसमें टिकना, बिन्दा, रंगी, दिगन्, सागा, रणड़ा (फगन), मेहदी, ग्राहपूड़ा, सात

कलावे (नाल), सात गदाम, सात छुहारे, सात पताशे, सात सिंघाड़े, सात टके (पैसे) आदि गठजोड़ा का सामग्री होती है ।

२ हस ली लाई जाती है ।

विशेष—दूजवर (दुहजरा) के विवाह में भावरों पर सोने या चादी की छोटी गला लाई जाती है । व्याहली को नथ के स्थान में पहना दी जाती है ।

कन्या पक्ष की सामग्री—१ पाणिग्रहण संस्कार कराने वाला पंडित निम्न लिखित सामान गेटवाले के यहाँ से लेता है । हसन की सामग्री, चावल, गोघृत, पत्थर का गण, छाज, रसील (लाजा), शमी पत्र, पग्या, चंदोवा जिसमें पाँच गज कद का कपड़ा, कुछ लड्डू, एक नारियल, सदा रुपया और चार गरकड़े होने हैं । इस चंदोवे को परिक्रमा के समय बेटी वाले की ओर से उनका पाणा (भाणजा या फूया का लड्डूका) और दूसरी ओर से लड्डूके वाले का ध्याणा लेकर गड़े होते हैं । उसने नीचे से वर-कन्या परिक्रमा करते हैं ।

२ कुम्हार चौरी का सामान लाता है । इसमें दो भांगली भाये) दस सराई, पाच मटकण्डे होते हैं । सराई मधुपत्र आदि में काम आती है । भांगलियों को वेदी की रक्षा के लिए संस्कार समाप्ति पर श्राधा मार देते हैं ।

३ गानी आहुति डालने के लिए सुगा, चार गूंग, पीपल, शमी अथवा पलाश की समिधाएँ लाता है ।

४ वर को बुलाने पर पटड़ा पर बैठते हैं । पीछे से व्याहली बुलाई जाती है । पहिले वर के दाहिने बैठना है फिर कन्या वामाग आ जाती है ।

५ कन्यादान—व्याहली के माता पिता का गठजोड़ा किया जाता है । फिर पिता लड्डूकी व दाहिने हाथ के अंगूठे को अपने दोनों हाथों में तोता है । साथ में यह सामग्री पान, सुपारी, दूध, सदा रुपया, शक्कर और फूल भी लेता है । पंडित कन्यादान का महत्त्व पढ़ता है । संकल्प में पश्चात् पिता यह कहकर कि दायिण्य रूप वर लक्ष्मीरूपिणा यह कन्या तुम्हें भाया रूप में देता हूँ, लड्डूकी का अंगूठा वर के दोनों हाथों में पकड़ा देता है । स्त्रिया हथलेना और फरों का गान गाती है । हथलेवे का एक गीत यह है —

हथलेगे, दादा की ण पोवा वर हथलेगे कराइयो ।

हथलेगे, ताऊ की ण वेग वर हथलेगे कराइयो ।

हथलेगे याजल)	वेगी)	} वर हथलेगे कराइयो ।
हथलेगे भाइ)	का ए भाण)	
हथलेगे मामा)	की ण भाणनी)	

कन्यादान की महत्ता को प्रदर्शित करनेवाला नीचे लिखा गीत है —
सौन्ना का दान, चान्नी का दान अर कन्या का दान दुहेला^१ हो राम ।
कन्या का दान म्हारे वमाराम देना जैकी छाती भारया जी राम ।

इस प्रकार दूसरे नाम जोड़कर गीत बढ़ाया जाता है ।

भावरों के समय एक गीत गाया जाता है । कन्या का घर के पास आते कुछ लज्जा है, कुछ विघ्नस्वरूप उसके पूर्वज तथा सैनक अर्द्धे हैं । इसी बात को इस गीत का विषय बनाया गया है । घर उसे आशा दिलाता है और कन्या का फरों के लिए बुलाता है —

गद छोड़ रक्मण बाहर आइ, चाँरी^२ तो छाड़ म्हारे सानना ।
इन सानना नै हम धाय दसा, चाँरी तो करसा लाडल निरोली ।^३
इन सानना नै हम दान देसा, चाँरी तो करसा लाडल निरोली ।
गद छोड़ रक्मण बाहर आइ, चाँरा तो छाड़ म्हारे वामया ।
इन वामया न हम नेग देसा, चाँरी करसा लाडल निरोली ।

इसी प्रकार नाइ, झूम और एातो को भी विविध नेग दकर अपना माग अकर्मित कर लिया जाता है । वरना के उत्साह सच्य कर लेने तथा घर के पास चलने पर सहलिया एक भीठा चुटकी लेने से नहीं चून्ती ।

हौल हौल खाल म्हारा लाउे इनेगा मुहेलदिया ।

मोः गा घतपाइ म्हारी लाने रात है घणरिया ।

इस गीत के बीचों में प्रामीण-बातावरण नडा पुल कर आया है जो चित्त आक है ।

६ भावरों के समय माता पिता आर ऊँचे रिग्ते के सभी पुरुष अलग हो जात है ।

७ छान भाई वर-कन्या के बीच में राडा हाकर दानों के हाथ में रखी देता है और लाजा-दोम कराया जाता है । इससे पीछे सब कार्य पदित अ करते हैं ।

फेरा के पीछे

१ घर कन्या भीतर घर में जाने हैं । वहाँ दइ देवताओं का पूजा कराया जाता है ।

२ गानाहेला (सलज) दोनों का मुँह मीठा कराती है ।

३ कर्मि । २ मन्प में । ३ निर्मित ।

- ३ वर से छुन कइलाये जाते हैं । एक छुन नीचे दिया गया है
 सड़क पै सड़क, सड़क पै इक्का ।
 एक तो ब्याह चले, दूसरी को देवे टिक्का^१ ।
 छुन पर छुन छुन पर आरसी ।
 थारी बेटी राज करेगी, हम पढागे फारसी ।

यह समय हासी मजाक का होता है । इन छुनों का विषय भी शृङ्गार से भरा होता है । किसी किसी छुन में तो बडा ही अश्लील बरान होता है ।

- ४ लडका घापिस चला जाता है ।

घदार का दिन

- १ गौर पूजन—(१) सात सुहागण अपना सिर घोती हैं और स्नान करती हैं ।
 (२) सात पत्तल मगाइ जाती हैं । उन सातों पत्तलां पर मेंहदी, बिदी, एक एक टका रखकर मढे के नाचे रख दिया जाता है ।
 (३) बटवाले के यहां में तेल^२, काजल, मिदी, महदी, कधी और सिर बाधन के धागे आदि लाये जाते हैं ।
 (४) वर बुलाया जाता है और बीच में कपडा देकर एक ओर दूल्हा और दूसरी ओर दुल्हन इलाइ जाता है ।
 (५) पीली मिट्टा के गौरा और गोरी (शिव पारती) बनाते हैं । पहिले कन्या उनका पूजन करता है फिर घर की सब स्त्रियां पूजती हैं ।
 (६) मढे नीचे लडका, कन्या और सात सुहागण घर के भीतर जिमाइ जाती है ।

२ पसोइ (कनर कलेऊ) के लिए वर और उसके साथियों का बुलाया जाता है ।

३ मध्याह्न की दावत के समय 'गस्तमगस्ता विधि' होनी है । सगसे वृद्ध बराती के मुह में गस्ता देते हैं ।

४ पत्तल घाघना भी होता है । पढित उसे किमी कविता से रालता है । उसे इसका नेग मिलता है ।

१ सगाइ करना । २ लहगा ।

पिता

- १ कन्या को शूद्रा करवाया जाता है, उसके बाल बाध दिये जाते हैं ।
- २ कन्या अपने पिता की देहली पूजती है । देहली पर लुहारे, बानाम, गजानी (गताशे) और पैम रखे जाते हैं । हल्दी का टीका लगाया जाता है । इन पैमों आदि का नाहन ले लेती है ।
- ३ लडके को बुलाया जाता है । उससे भट्टी में लात लगवाइ जाती है । लडके को नेम मिलता है ।

४ लडकी विदा होती है । गीत गाये जाते हैं । इस समय का बानाबरख करवापूर्य होता है । एक ओर कन्या अपनी माता, सहेलिया से गले मिलती है दूसरी ओर सक्की आँखें छोटे-छोटे करवा-ताल बने होने हैं । पिता माता का एक ओर कन्या के हाथ पीले करने की प्रसन्नता, दूसरे लडकी के सर्वदा के लिए पराई हा खाने की टीस हृदय को हृषोक का मीड़ाखन बना देती है । इस प्रकार शहनाइ की मधुर ध्वनि और माता-पिता, माई बधु तथा सहलियों की सिसकियों के बीच लाटा का अरम चल देता है । इस समय बहुत से छोटे-बड़े गीत गाये जाते हैं जिनमें कन्या की मनाव्यया व्यबित हाता है । इसका पूरा विवेचन आगे करेंगे । महा दा गीत देते हैं । प्रथम गीत —

गडा मेरा दादा गडा रहिप छाजकी रैन पहर शोण ।

अपणा अक से उठरंगी पार, घात नगर मुखम बसो ।

इसी प्रकार ताऊ, बाबल, चाचा, भाई और मामा का नाम लेकर गीत बन्ता चलता है । कन्या समझती है कि वह परकाय धन है और वह भार-रम्भ है । यहाँ कन्या अपने दादा आदि निवृत्त के लोगों का सात्वना दे रहा है ।

दूसरे गीत में सहलिया रम में दुल्हन का बिडाना है और परमश अबत्या में यह गीत गाता है —

‘परियया’ की जाने परियया छोड़ कहा खनी ?’

किन्ती कतरता है ? बालिका का मुकुद चिन्ता उत्तर देती है । “मेरे दादा ने जन्म प बल मावन घर हम चने” । यहा लाटा रैउन इसलिए दूसरे के दादा का रही है कि दादा जा ने बचन द लिये है । गंगा जा ने बचनों का पन्नन करना त पुत्रा का धन है । इस प्रकार यह ताऊ, चाचा, माई, मामा आदि का बचनबद्धता का कारण पराई हो रही है ।

५ लडकी का पिता कुटुम्बियां सहित गाव के छोड़ कर अथवा सीमा तक नरत को छोड़ने जाता है। लडकी का पिता यथाशक्ति ५ या अधिक रुपये ममधी को भेंट करता है और दोनों ओर से 'रामरमी' की जाती है।

वर के घर पहुँचने पर

१ नरत के आगमन की सूचना मिलने पर कुटुम्ब की सभी स्त्रियां मंगल-कलश के साथ रथ के पास आती हैं। वर की माता कनका नर से दूध के द्वारा वर-नया के ऊपर छाटे मारती है। स्त्रियां वरू का स्वागत करती हैं और गीत गाती हैं —

ढोले ते तले उतरिया हे बहुरप्र करके नीची नाइ ।
सासु जी क पाय निपु मै लिण चरण चुबनार ।
जीओ हे तेरे भाइ भतीजे, उणा रहो भरतार ।
मेरे घेठे की खेल बधाइ, जाम्मे हे राजनवार ।

एक दूसरे गीत में नवीन अतिथि का स्वागत करते हुए स्त्रियाँ कहती हैं :—

आइये बहुअइ इमवरा तेरी सासइ आइ सुसरघरा ।
आइये बहुअइ इसवरा तेरी जिठायी आइ जेठ घरा ।

इस प्रकार स्वागत के साथ घर की ओर ले जाती हैं। यह प्रवेश से पूर्व न द्वार रोकती हैं। नेग दिया जाता है।

२ पुत्रानेता होती है। लडके की भाभी वर को तीन बार और बधू को चार बार दलने जूए से तथा दूध धिलाने की नेती से नापती हैं।

३ सात उदागणों को मानन कराया जाता है। दइ देवताआ का पूजन कराया जाता है।

दई नेत्रता पूनन (घोंकना) और बहू नचाना

१ गठजोड़े ने बगान-बगानी मैया (भूमिया) पर जाते हैं। भूमिया की थोक लगाइ जाती है। पुजाप को कुम्हारिन लती है।

२ इसने पाड़े जाल की घटकियों (पतली पतली कमत्रियों) से बदडा बदडा आनम म मार मारकर नेनते हैं। वर का सामा भा बदडा की ओर से खेलती है। इस प्रकार आनद मनाकर घर को लौटते हैं। बहन द्वार रोकती है, नेग दिया जाता है।

कागण जूआ

१ बर-बरनी को गी पण्ड पर पूराभिनुय पैठा तिया जाता है। एक मिरी की बूँदी में लूध, पानी, दूध और सजा बना डालते हैं। बर की श्रूनी लेकर उला पानी में डाल दी जाती है। फिर बर-बरनी श्रूनी को हटते हैं। इस प्रकार यह दृश्य मग्न नर होता है। प्रार्थना का पुण्डित डालता है। गी श्रूनी को बार बार चुगने उसको जान माना जाता है। इस दृश्य से बर नरला की चतुता का जान हो जाता है।

२ परस्पर एक-दूसरे का कागण और सजा खानते हैं। उस कागण, सजा और पानी को बोहट या रुप में तिया दिया जाता है। पुण्डित और नार का नेग तिया जाता है।

३ खाना खानते समय यह गीत गाया जाता है —

शोल ऊवली की कागण, तेरी माण बाह्य का भागना।

शोल रानी क थोरिया, तेरी मा बाणु गोरिया।

नवागसुक प्रतिषि ते नडा कडुतम परिहास तिया मना है ।

दई देवता और माटा मिलाना

१ बेषियों का पिरी का लडकी का मामी अन्य तिया न माय परत में भरकर बरड में तिया आता है।

२ मौड़ को अपने घर में एक वर्ष तक सुजित रखा जाता है।

३ कुरी-कुरी मौड़ का भी तिला देता है। इसी श्रर लदन करण कुरि रहान ने करा है —

ममय पदे पै धौर है ममय पदे पै धौर ।

रहिमन भवता क परत, नडा विरायत मौर ।

यह हरियाणा प्रदेश के विराह-संस्कार के लक्षणों का वरीय न युक्त, अनुष्ठानों का गीत का नामान्य परिवचन है। देवता का भेद न कुरी-कुरी श्रर मा तिला ग्यता है।

इन परिवचन के पाठ्ये इन विराह-संस्कार सम्बन्धी गीतों का विवरण-प्रकार प्रकरण प्रस्तुत करते हैं। विराह-संस्कार का इन समय के पाठ न-नारता ने श्राव्य हुआ है। लन क दा लन बड़ महल क है। एक गान न बर श्रनी दुर्दिश क पाठ लन निबरने के लिए श्रर मना है पालु पवनुरला लादा लाब के भार में दनी हुए श्रनी विरगता प्रकृत कता है। नाना

प्रकार के प्रलोभन दिये जाते हैं परंतु लाडो का अतिम उत्तर बड़ा मामिक है। उसकी निश्छलता दर्शनीय है—“राय भर म्दानै लाजघयी आवै”। प्रलोभन की वस्तुएँ वही ग्राम की गुड़धानी, बतारो और ढोल नगारा रही हैं। ग्रामीण कथाएँ प्रकृति की गोद में पलती हैं। उनके हृदय है पर वह वाणी कहों जो भावभार को समाल ले ? एक दूसरे स्थान पर लाडो कुछ मुखर है। वह लग्न लिखवाने के लिए दादा जी द्वारा मुमुक्षु ज्वातिपी बुलवाती है “दादा जी म्दारा लगन लिखाय, सच्चा ल्याओ बासियाँ जी”। दादा जी लाडो की बात को मानते हैं पर एक बात और कह गये हैं—“सच्चा म्दारी लाडो सच्चा सरजनहार करम लिखा सो पाइयो जी”। दादा जी ने लाडो के विवाह में जी खीलकर व्यय किया है, मामा जी ने यथाशक्ति भात भरा है और पिता ने दुधार गाय एव बच्छेरा सहित श्रेष्ठ घाड़ियाँ दान में दी हैं। अंत में फिर सभी अपनी अपनी शुभकामनाएँ अर्पित करते दिखाये गये हैं—“मुड़ तुड़ म्दारी लाडो देव असीस, राज करो परिवार म जी”। माता पिता की यह इच्छा होती है कि उनकी सतान सदैव समुन्नत हो और सुखी रहे।

लग्न के पीछे और विवाह संस्कार के पहिले भी कई प्रथाएँ पाली जाती हैं, उनमें भात नौतना और भात भरना मुख्य हैं। बहन भाइ के अभिन्न प्रेम का उपमान ससार में नहीं है। भाई के ऊपर बहन का गव होता है। जब भी भाइ भार अथवा आपत्ति आती है, भट भाइ का आश्रय उसे मिल जाता है। भात के गीतों में भाइ-बहन के इसी पवित्र स्नेह की निधि मिलती है। बहन के यहाँ पुन पुनी का विवाह है। वह भात नौतने जाती है। समस्त प्रकृति उसका स्वागत करती है। गीत का कुछ पंक्तियाँ हैं —

ओ पिया आइ सू बाप मेरे कै वाग, कोयल सजद सुखाया।

ओ पिया आइ सू बाप मेरे की वाणी, बणी मगारे^१ मोरये।

ओ पिया आइ सू बाप मेरे कै गोर^२, गोर गऊँ छाइया।

शुभशकुना का यह सुन्दर वर्णन है।

एक गीत में बहन, भात में अतुल धनराशि देने वाले (बरसने वाले) भाइ के समक्ष इन्द्र को ललकारती हुई कह रही है ! हे इन्द्र ! आज इन्द्र-उधर परस ला। हमारे यहाँ तो मेरा भाई बरस रहा है —

बागा म महा घरसै, गरवर पै मेहा घरसै।

मन घरसै इन्द्र रागा, मेरी माका चाया घरसै।

१ पूरते हैं। २ ग्राम के समीप।

मालाम्पै रग बरसै, चम्पा पै रग बरसै ।
मत बरसै इन्दर राणा, थाली म बीरा बरसै ।

भाइ के बरसने में कैसी सुंदर व्यजना है ?

एक अथ प्रबन्धात्मक गीत है। हरनदी भक्त प्रवर नरसी की इकलौती पुत्री है। हरनदी के यहाँ विवाह है। दौरानी-जिठानियाँ के व्यग बाण चलने लगते हैं। इनसे श्राद्ध हो वह पिता के यहाँ भात न्याँतने सिरमागढ़ जाती है। विरक्त नरसी को पुन का अभाव खटकता है। वे पुत्री को धैर्य बँधाते हैं और निश्चित तिथि पर भात भरने के लिए चलते हैं। छकड़े में दो डठे तैल हैं। जूनागढ़ (हरनदी की सुसराल) पास है। इस समय भक्त को अपनी दयनीय दशा की स्मृति हो आती है। दीनबधु का स्मरण करते हैं। भगवान् उपास्यत हाते हैं और स्वयं भाती बन जाते हैं। जूनागढ़ की समस्त जनता को यथेष्ट वस्तुएँ प्रदान की गयी हैं। काष्ठी घावन के लिए सुरमा विशेष रूप से बरसाया गया है। इस गीत की एक विशेषता यह है कि इसमें ब्रज के 'भात गीत' की भाँति निपाद की रेखा नहीं आइ है—“भैना नै बैया पसारिये, और बीर न गये एँ समाय” आदि ब्रजगीत में एक ममाहत स्थिति का चित्रण हुआ है। यहाँ तो भक्त का मगवत्प्रेम मूर्तिमान् हो उठा है। परन्तु गीत में 'बहन को भाइ की कितनी प्रबल अपचा हाती है' सहज ही भलकाया है। पूरा गीत दे देना अनुचित न होगा —

ना मेरा सहा ना कोइ साथी ना कोइ वेग मैं भाती हो राम ।
धूँगी मैं पड़ूंगी बानू तलके मान्गी,
मैं सिरसागढ़ नहीं जागी हो राम ।
दुराणो जिगानी बाजुल बोला हो मारै,
के नरसी पत्थर ल्यावेगा हो राम ।
सानु तपदी बोली हो मारै,
ब नरसी छील पहराव हो राम ।
दर जेठ थाली हो मारै,
क नरसी माहर ल्यावे हो राम ।
तरा जमाह बोली हो मारै,
क नरसी धरधा म धार हो राम ।

१ 'मजलोक गीत साहित्य का अध्ययन'—डा० मायेन्द्र, पृष्ठ १६३ ।

काणी सा धोख्य बोलकी हो भारे,
 व नरसी सुरमा टयावे हो राम ।
 भेली हसार लेकर हरनदी चाजी,
 होली सिरसागढ़ की राही हो राम ।
 बुके सैं उसने हाला पाली,
 नरसी भगत कित पावे हो राम ।
 काका ताऊ के चाली हे चाइ,
 नरसी भगत अस्तल^१ में पावे हो राम ।
 कूय किसी के काका ताऊ,
 नरसी के भ जागी हो राम ।
 बुकी में उसने कुण का पण्डितार,
 नरसी के भ जागी हो राम ।
 दूर त हरनदी देगी आयतो,
 नरसी भगत गढ़े हागे हो राम ।
 दोनो हाथा सिर पुत्रारा,
 ह टरर तेरी माया हो राम ।
 येगी त रह राम का देदा भी दिण,
 आप मने घट्टन रन आया हो राम ।
 येये भी दड़ भाइ की दिण,
 आप मने भाती भा चाहिण हो राम ।
 दुट्टी सी गा १ घूडे से नार,
 आप नरसी गटयाला हो राम ।
 दूट्टगा गादी बैठगे तारे,
 सड़े लपारवे नरसी भगत हो राम ।
 धौले धौले नारे^२ बाजया सा रघ,
 आप कृष्णगढ़ बाजे हो राम ।
 कित ग्या ह हरनदी रातमाइ,
 कड़े सा रघ डटार्य हो राम ।
 चार घड़ा लग तील यरमी,
 पहरी भरी मयदा हो राम ।
 चार घड़ी लग मोहर यरमी,
 यरतो भरे देवर जठ हो राम ।

१ बेरागा सापुर्षों का स्थान । २ भवे-नवे शक्तिराक्षी बेल ।

घात घड़ी का पथर धरमे,
 महज बरामो मरो दुनिया हो राम ।
 घात घड़ी उग सुरमा धरमा,
 मरो बरामो पोबिन हो राम ।

हरनी के भात की मारणा पर सुन ही गई है परन्तु गीता
 दिवियों के हृदय में नरक का पाँव गिराना है —

दुखेराया जिन्दी दुखल लगी,
 कुलसा के इरादी तरा भाइ हो राम ।

हरनी हयानिरेक दुःख से बनना है —

घनों के घात भाइ भतीने,
 मेरे हृदय को घाये हो राम ।

गात का पृष्ठभूमि में आस्था, प्रास्तिकता एवं दय्यता की भावना
 दर्शनीय है ।

भात के भीतों का ताना-बाना प्रेम और मौशद से मिश्र कर बना है ।
 परन्तु कहीं कहीं लोभ ने उगकी तुकैमग भावना पर तुलारावत भा मिया
 है । एक गीत में बहन ने भारी नात की माँग की है । भाद-बहन के मन का
 दाह लेने का लिए कहा है —

“जिन के हें जिज्जी इतना ना हो, वे क्या घाय हें जिज्जी भातइ ।”

परन्तु बहन का स्वाभाविक मन उते कितना निभय बना गया है —

“अपयो रै बीरा अपयो जोयरा” ने येच तू साइये मेरे भातइ ।”

ऐसा प्रतीत होता है कि बहन समवत भाभी के दुर्व्यवहार का प्रतिरोध
 करना चाहती है ।

एक स्थान पर भाभी की उदासीनता की पराकाष्ठा हो जाता है । भात
 नोंतने बच नएद आती है ता भावज उसजे स्नागवार्थ उठती भी नहीं है ।
 नएद बच मिलना माँगती है ता उत्तर मिलता है — “री नएदल हन तें
 उठा ना बा, कौनी तो भरले धामनी जी” । इस कथन में मर्मगतक बचाव है ।
 स्वप्न के आलिंगन में सहज असोहार्द का भाव भरा है । बहन लौट पड़ती है,
 परन्तु भाइ ने बहन का मान रख लिया है —

री सुण कै डोलै डलते धीरा भाज्या,
हे वे-वे भात भराने पूरे सौ का, नारग ल्यावा चुदही ।

बहन को बेचल एक ही शिकायत है कि भावी ओच्छे (तुच्छ) घर की है और यह तुच्छ बातें करती है —

“हे धीरा ओच्छे घर की ओछी भा-ओ ओच्छो बोले बोलणे ।”

भात के गीता में कुछ उपहास की मात्रा भी मिलती है । एक भात की कतिपय पक्तियाँ आगे दी जाती हैं, इनमें हास्य भाव व्यक्त हुआ है —

सारो तो पीगयो माइ जाया माड मूतभरा भेरा ओवरा ।
भाज्जो से टाटी पाइ, मूसल मारयो कान्ब में जे ।
बाह्ण भाई जाया धीर, मुस्पल छोर जिठानिया का सीरका ।
थोरे ए वेवे की करया को बाग, और घड़ा ओ मूसल सीरका ।

भात समाप्त हो जाता है और भाई लुट पिट लेता है तो हँसी ठट्ठा की चारी आती है । गीत में मनोवैज्ञानिक सफलता दर्शनीय है ।

भात के गीतों में दौरानी जिठानी के भाइयों द्वारा दिये गये भात से तुलना करने का भाव भी रहता है । कभी-कभी यह एक तीखे व्यंग्य का भी कार्य कर जाता है और कौटुम्बिक कलह का कारण भी बन बैठता है ।

रतजगा

रतजगा, जिसमें रात्रि जागरण होता है, कइ अवसरों पर मनाया जाता है । विवाह सस्कार में इसका विशेष महत्त्व है, क्योंकि वर कन्या दोनों पक्षों में इसका मान है ।

रतजगे में एक साथ अनेक कृत्य होते हैं । स्त्रियाँ रत भर जागती हैं । इस प्रकार एक दीघकाल उन्हें गीत गाने के लिए मिल जाता है । अतः प्रायः सभी प्रकार के गीत रतजगे की रात्रि के घुप्प अधकार को चीरकर इधर उधर उड़ते रहते हैं । रतजगे के गीता में विवाह के बंदड़े, बंदही, घाड़ी और लाढो आदि विवाह के प्रतिदिन के साधारण गीतों से लेकर रतजगे के कृत्यों तक के गीतों का बखन होना है ।

हरियाना प्रदेश में सभी कृत्य दइ देवताओं के गीतों से आरम्भ होते हैं । रतजगा में इसका अपवाद नहीं है । हरियानी रतजगे के गीत घरवत (गृहाधिष्ठात्री देवी) के गीत से आरम्भ होते हैं । इसके पश्चात् दीपक गीत (दीवा गीत) गाया जाता है । एक घरवत गीत में रामचन्द्र जी गृहाधिष्ठात्री

देवी का स्थापना करते हैं। फिर 'गाताय' 'परया' भाग के लिए शायद लाता है जिसमें आगन में प्रकाश हो। गाता विविध यस्तुओं को लेकर चलता है। रामचन्द्र और लक्ष्मण के रतजगे में पहुँचना उगका लक्ष्य है। परया का गात एक लम्बा गीत है परन्तु उमें यहाँ दे देना उचित होगा —

- ए वा भरई मोत्रियो का धाज प^१त मूरुद पण गइ ।
 हो गहारा धर का पवन धवा सै मूरुत साम परवन माना सूये धरे ज ।
 ए वै भाई साईं बार पुवार धु^२र खीदस मद्रा खगया जे ।
 ए पूरयमासी पुन पुनम की बार दायज को दिन निरमलो जे ।
 ए वै चगा-चगा र भग^३ सुजाण गारया ^४पमड धलाइयो जे ।
 ए वै राज-राज ईटपयाय गज हयायो सुजाण का जे ।
 ए वै पाथणिया तो धतर मुगान उयजा धाजक येदन ज ।
 ए वै ध्याया गाइदी म धाज ह्या उतारी चौक म ज ।
 ए वै सादण लाग्या सै गाव वरण लाग्या सुनकी^५ जे ।
 ए वै डलरुण लाग्या लल सादण लाग्या गुइ डलो ज ।
 ए वै सुलाया जमरथ का रामधर ने भरनी घरवत सूये धरे जे ।
 ए वै चियो चिणाइ हुइ सजोग ता निण्यण भालो लादिये^६ ज ।
 ए वै लिण्य पासे धाज महरें हाथ धारा जसरथ पुन महु जे ।
 ए वै बिने मान्हे लिने कताइ मोर धारी लिदमन भाखली जे ।
 ए वै चिया चिणाइ हुइ सजोग कदा करत लोदिय जे ।
 ए वै काँधे जुहाइ धाज के यणराड जोइइ लीकइयो जे ।
 ए वै डम इस रोये यणराय यो स्वात्ती कित जाय सै ज ।
 ए वै म्हारे पिछोकेइ राम चन्दन को दस वो रात्ती के चित चदयो ज ।
 ए वै म्हारे इलीं धालो धूधरु लण मगरो मोर नचाइये जे ।
 ए वा चिणी चिणाइ हुइ सजोग खात्तय दोहो^७ क्याइये जे ।
 ए वा चूर्म सै नगरी का लोण या स्वात्तण कित जाय सै जे ।
 ए म्हारे रामधर के रातजगी या स्वात्तण उतनाय सै जे ।
 ए वा स्वात्तिका नै पिलग विद्यायो खात्तय धालो धेइयो जे ।
 ए वा रात्तिका वै पचगग पागयो^८ खात्तय मोरग चूइकी जे ।
 ए वा स्वात्तिका नै करो बिदा, स्वात्तण दिन दम रात्तयो जी ।
 ए वन भला स्वात्ती धर जा आपये खात्तय धदले का^९की जे ।

१ नवयुवक । २ गारा । ३ डोरी । ४ आवश्यकता है । ५ फूलमन्त्री स्थापना । ६ परादी ।

७ हम घड़ त्यागा दो ए रे चार अम्मी खात्तण ना मिले जे ।

ए वा अम्सो खात्तण दे सै असीस लधो बधो परवार में जे ।

७ तम लड़ियो बधियो जसरथ का घेटा पोत्ता फलियो कड़वा नाम ज्यो जे ।

घरवत माता की स्थापना के पश्चात् दीपक गीत गाया जाता है । इस प्रकार भवन निमाण और गृहाधिष्ठात्री देवी के संस्थापन एवं ग्राहान के उपरांत लौकिक अभ्युत्थान के प्रतीक दीपक का आराधना बड़ी उपयुक्त है । इन दो मागलिक गीतों के पीछे अन्य गीत आरम्भ होते हैं । यहाँ दीवा (दीपक) गीत देना भी अनुपयुक्त न हागा ।

दीवा क मण रे दीवा कैमण गाल्या लोहरे तो कैमण जाल्या कोयला जे ।

दावा नौमण रे दीवा नौमण गाल्या लोहरे दीवा दसमण जाल्या कोयला जे ।

घात्ते रे तेरे घात्त घाल्यू मवासेर की घड़ो ७ उजेऊ^१ तेककोजे ।

भर चास्म^२ रे भर चास्मू म्हारै शकर की धमसाल^३ घर प्यारे कै चादयो जे ।

भर चास्म रे भर चास्मू म्हारै रामसिंह की धमसाल घर रामसरन के चादयो जे ।

रात्रि के आरम्भ में मेंहनी, काजा आदि कृत्या का उल्लेख रहता है । इनका उपयोग रात्रि में होता है । महदी और काजल शृंगार के उपकरण हैं । विभिन्न त्यौहारों और उत्सवों पर सौभाग्यवता स्त्रियों अपने करतल और पदतल दोनों पर मेंहदी रचाती हैं । रमणिया का मेंहदी इतनी प्रिय रहा है कि उस पर नाना प्रकार के लोकगीतों की सृष्टि हो चुकी है । महदी इतनी शुभ एवं मागलिक माना गयी है कि विवाह मस्कार के पहिल दिन रतजगे म महदी का गीत अवश्य गाया जाता है । घात यहाँ तक पहुँची है कि महदा की गहरी रचानट बजा-बज ब दाम्पत्य प्रेम का प्रतीक मानी जाती है ।

मेंहदा के एक गीत में आगरा दिल्ली का मेंहनी अच्छी बताइ गयी है । अजमर भी इसका एक स्थान है । देवर देवरानी, जिठानी और नणद का वर्णन आया है । गीत का पक्तियों निम्न प्रकार हैं —

महदी बोइ दिहनी आगरे नी बोइ रत पात्यो आसैर, महदा रगभरी नी रात ।

महदी मीत्रण में गड नी बोइ छोटा त्वर माध, मेंहनी रगभरा जी रात ।

मेंहनी घोळण में गड नी बोइ त्योर निटाण्या माध, महनी रगभरा जी रात ।

मेंहदी लाणण में गड नी बोइ छोटा तण्णत माध, महदा रगभरी नी रात ।

छोटी वृक्के ७ बड़ा गमरहो रात की बात, महदा किमीक रची जी रात ।

महदी तो मैं लायलइ तू आइ ७ आधी रात महदा अधिक घर्षी जी रात ।

दुयोरे निगना सज बोइ आइ त नहीं आइ आधी रात महदा रगभरी जी रात ।

१ उडेलना । २ बालना, बलाना । ३ तलाना, पौना ।

स्तब्धों पर अतिरिक्त अन्य परंपर्योद्धारों पर भी मेरी रचनाएं जाती हैं। यह एक अलंकार तथा शुभ विद्वान् माना जाता है। बाल्यकाल यत्र एक गीत में माता अपने बच्चे के लिए मेहदी का हिरणा क दूध में घालती है। 'हिरनी भास' के दूध में मेहदी का रंग अच्छा गहरा हो जाता है —

मेरी मेहदी के चौद चौद पातर, योरा यारी यारी जा।
 मैं तो पीसूंगी चटन क पात्र रे, योरा यारी यारी जा।
 मैं तो घोलूंगी हिरणा के दूध रे, योरा यारी यारी जा।
 मैं तो लाऊंगी देवेन्द्र भाई के हाथ रे, योरा यारी यारी जा।

प्रातः काल के गीतों में 'गतन' का गीत मुख्य है। माता यशस्वी के रुक्मिणी की मे दातन माँगी है। रुक्मिणी आशान्तरण कर जाता है। उसे इस अवदलना का परिणाम भुगतना पड़ता है। 'गतन' का गीत एक लम्बा कथागत है जिसमें राजाकारी पुत्र एवं प्रियाप्रेम के व्यन्धन का सुन्दर भौंका देने का मिलती है। सम्पूर्ण गीत के दना समांर्चीन हागा।

हरनी उगाने ते परभात मात तमोदा दातल मागियो ज।
 बाहर ते आया द्विजन सुरार मात तो रंगे उमण भूमयी ज।
 माता क्यू घेरा मेला म भस क्यू तू रंग उमण भूमयी ते।
 बदा दातल मागी बरवार^३ बट्ट ए हटाजा दातल ना ट्ट ज।
 मात उपाऊ गगातल नार दातल लाऊ चारत केत की ले।
 बेदा या दातल रुक्मण ने हगोन तेरा तो नाग ते भोल्या हो गट ज।
 माता कहो तो द्यू रे बिहार कहो तो धानु धय न वाव रं ने।
 रुक्मण उगे न करो ए सिगार बिरवारगि^५ तेरे घाय के जे।
 हरा ना रुग तम मू^४ त योज सामण मागी तेरी बिराही।
 रुक्मण उठो न करो ए सिगार बेदा ते जायो तेरा धीर के।
 हरी ते द्य ता तम भोल्या मो माच आया^६ ते बहिण मेरी भावजे।
 हरा ते आप घोड़ अरावार रुक्मण ने पहल तुदाइ वाचथा जे।
 हरा ते रुक्मणो^७ मे माफल राज तिन उगायो सुनह सारर जे।
 रुक्मण म तेरा पीहरिया का रंग जे ध^८ तोगे आमण भूमयी जे।
 हरी जा कौल वाज कर नाय रू^९ हर आथो रारे पहानया^६ जे।
 रुक्मण सामण बरगो मह भरमादुं हरिया बन बगे।
 रुक्मण आयोच पितर सचोण कानक आवे ते गनुया जे।

१ उत्पन्न, आरम्भ। २ उगत। ३ चारवार, कड मार। ४ समाप्त।
 ५ बिराही। ६ गर्म। ७ चनन। ८ कय। ९ अनिधि, महमान।

हरी जी आया सँ स्वमण घाल आगण बैठया ऊमण धूमण जे ।
 मा मेरी क्या दिण घोर अधेर क्या दिन लागे आगण भिणभिणा^१ जे ।
 येहा बहुचां दिन घोर अधेर पोता रिण लागे आगण भिणभिणो ज ।
 हरी जी रभक्यो सँ मामल रात सूरन उगायो सुघड़ सासरै ।
 हरी जी दूध परवाल^२ धारा पाव चौरी तो घाले थमनै बैठणै ।
 हरी जी हस्थाएँ मूगा की सँ दाल चावल तो राधां हरनै ऊजला ।
 हरी जी बूरा की रेलमटेल^३ धी बरतावै हरनै टोकणी ।
 हरी जी जीमो न षड़बड़ गास स्वमण देगी हरनै थोरहणा^४ ।
 हरी जी वो दिन करल्यो न याद ऊभी^५ तो छोड़ी सीला बड़तले ।
 स्वमण धो दिन करल्यो न याद भात जसोदा दातल ना दह ।
 स्वमण तू मत घेदल^६ होय मैं मन राख्यो बुनिया माय को ।
 स्वमण तू मेरा माथा को मोड़ मात जसोदा सिरको सहरो जे ।
 स्वमण व्याहू तेरा वर्गी दो ए चार मात जसोदा वर्गीकुल म कोण नहँ ।
 स्वमण उठो न करोण सिगार तड़कै तो चालां अपणा दस नै ।
 मा मेरी खोला न अजड़ रिजाड़ मानल तो खोलो लोहा सार कीज ।
 माता महला तै नीचै उतर आये पाव पड़े तेरी कुल बधू जे ।
 येहा तम जीधो कोड़ बराम पाव पड़ेगी अपणी माय वै जे ।
 माता अजला सा बोल न बोल पाव पड़ेगी सासु नणद कै ।

रुक्मिणी पतिपरायणा महधर्मिणी क रूप में कृष्ण जी के साथ लौट आती है, पर यशोदा के मन में अभी 'हुकम अदूली' का गिला शेष है और वह उसकी सेवा स्वीकार नहीं करती। यहाँ पर यशोदा में फलहारी सास के स्वभाव की भौंका मिल जाता है। सास के ललाट में पुत्र व पुत्रधू दा नेत्र हैं परन्तु दोनों में इतना पक्षपात ? जीवन की वैसी विडम्बना है। इस गीत में कृष्ण के जीवन की एक और घटना का आर पाटक का ध्यान जाता है कि यहाँ रुक्मिणी बहू के साथ देवकी सास का वर्णन नहीं है यशोदा सास का है।

व्याह के रतजगे में, महदी रचाते समय (तिलका) गीत भी गाया जाता है। इस गीत के पूवाद् में ता नणद तिलकी खेती के निपय म वात्तालाप है, किन्तु अंत में भाद के परकाया प्रेम का शिकायत बहन से की गई है। अंतिम भाग इस प्रकार है —

१ उदास, निजन । २ घोर । ३ अधिकता । ४ उपालभ । ५ अकनी । ६ निराश ।

घरने घोरा नै घरजले मेरी नएदी घरजले झलपेली परपर चोरी जायें ।
 टवर हो तो घरजहया मेरी भायो घरजहया झलपेली, मइया न घरने जायें ।
 पर की खाइ किरकिली मरी नएदी किरकली झलपेली पर घर राखो चाटए जायें ।

इस गीत में माइ-बहन के समय के उस स्वरूप को इदनाया गया है
 जहाँ बहन का विशेष टलन नहीं है । वासनामयी चित्तशुक्तियाँ पर ता
 हृदयरवरी भारी का अकुश ही कार्य कर सकता है ।

आश्चयभाव समन्वित बकरी व बदे-बदे गीत भी इस रात में गा
 लिये बात है । इनमें कुछ बातें ता सार्थक एवं समझ न आने वाली हानी
 है, शय निरर्थक, फेवल एक आश्चयभाव का शान्ति उनने होती है ।

बकड़ा व गीत उन गीतों का कहते हैं जो अवसर-विशेष पर गाये जाने
 वाले गीतों के बीच-बीच में गा लिये जाते हैं । इस शैली के गीतों का
 आकार प्रायः विद्याल होता है और भाव-यत्न विरमयनर तत्त्वयुक्त होता है ।
 बकड़ा व इन गीतों में हासरस का भा सुन्दर समावेश मिलता है । अरलालना
 एवं यौन सन्तनुय गात भा इन्का परिधि में स्थान पा बाते हैं ।

आश्चयभाव की उद्भावना कैसी अनहाना बातों के संयोग से की गयी
 है, यह निम्नलिखित बकड़ा गात में दलिये —

मू नही बोलगी मू की मं म्दरिं भाय ।
 पानीपत ही मडक ऊपर मिडक बाँटूट वाय ॥ टेक ॥
 बिहा तो म्दरे दूध बिजाँरे,
 कुत्ता आवे गीतलेय, मिर पर घरके भाय ।
 बिडिया ता म्दरिं करे लायया मोरदावी दे ।
 मू नहा बोलगी मू की मं म्दरिं भाय ॥ टेक ॥
 क-दुया तो म्दरिं मंस घरारं पाली बयकं,
 मीडकी तो रोगी जेना बहु बयकं ॥ टेक ॥
 पहाइ पर व कीड़ी उतरी नौ मय पीगा लेब,
 मू नही बोलगी है मिर पर घररी रेल ॥ टेक ॥
 मरी पदा कीड़ी में सौ मन होगया बोझ,
 घायणिया पी घिसदी कोन्वा, घीमए चले घमार ।
 सौ जोड़े तो उत्ती बरग सान्ते कडं हवार ॥ टेक ॥
 कीड़ा तो या दिल्ली चाला मिर पर घरला मोने की हं ।
 सहर था बाणिया -मू टठ बोक्या लटग लगी या छोट ।

झू नहीं चोरलगी मूठ को सै म्हारै आण ।

पानीपत की सड़क ऊपर मिडक बाट्टे बाण ।

एक दूसरा गीत में अनमेल बृद्ध विवाह के पक्ष में विलक्षण एवं अतर्कित समाधान किये गये हैं। सोलह शृङ्गार करके एक युवती अपने हृदयेश्वर के पास आशा दीप सजाने जाती है। पतिदेव जर्जरकाय हैं। नवोटा पत्नी को निरपरा हाती है। वह आत्मघात की बात सोचती है। इस अवसर पर बृद्ध महाशय नाटक्य की विशेषताओं की परिगणना कराने लग जाते हैं। अथ विशेषताओं के साथ एक विशेषता यह भी बतलाइ गई है कि बृद्ध की उत्पादन शक्ति प्रमाणित है। इस जकड़ी में लोकमेधा की तक (दलील) की उद्दान दर्शनाय है —

श्याम मेरी री कर सोलहा सिंगार बूढ़ की सजा धारै गई ए मेरी मां ।
ज्यानी मेराओ, पहला उधाड़ने देर मिराहनै खडी पदमनी ओम्हारा श्याम ।
गोरी म्हारी ए टरामग हाले नाइ, गोडा में पानी पड़ रह्या ए म्हारी नार ।
अमां मेरी ए मरुगी जहर विष ग्या, बुड़े न वेगी ब्यू दइ ए मेरी मा ।
गोरी म्हारी ए छैल अड़े अड़े योल न बोल कदे तो कबड्डी ऐलता ए म्हारी नार ।
गोरी म्हारी ए छैल तो जाय परदश, बूढा तो सोवै सेज में ए म्हारी नार ।
ज्यानी मेराओ घर होती छैला नार इकजी में तो सो जाती ओम्हारा श्याम ।
गोरी म्हारा ए छैला न हाड बाक बूड़े के टावर रोल ए म्हारी नार ।
गोरी म्हारी ए दमड़ा की लोभा धारा बाप माया की लोभण मायकी ए म्हारी नार ।

जकड़ी के इन गीतों में जुआरी, गोग, काला और याखा (अल्पवयस्क) पति का भी वरण पत्नी की शिष्यायतभरी वाणी में हुआ है।

आश्चर्य के साथ हास्यभाव का एक चित्र हरियाणों की एक जकड़ी में अपूर्व छटा से आया है। इसमें एक भोले जाट को हास्य का आलम्बन उनाया है। चित्र में एफ सनीयता है —

मन तो पिया गगा हुमादे जारा मै सवार, हा ए जारा मै मसार ।
तन तो गोरी ब्यूकर नुमादयू हासब पदरो भैस, हां ए हात्तइ पदरा भैस ।

एक जतन पिया मैं बतलादयू —

गुनी पै मेरा दामण लटके खुदही छापेदार, हां ए खुदही छापेदार ।
ग्ये म मेरी नाय धरी मै पहर कादियो धार, हा ए पहर कादियो धार ।
बाहर तै इक मोदिया आया,

१ राज टपक-टपक कर पैरों पर गिर रही है ।

रुद्र गीत]

बन्ध मिटा डाल, हां ष बन्धे मिटा डाल ।
 बन्ध तो तरा न्हाणगइ मै,
 जीजा काँटे धार, हां ष जीजा काँटे धार ।
 सुग पाइगी जेइका सुहागा भावगी मै भैम, हां ष भावगी मै भैम ।
 दण लेंके पाई होलिया लैण गया था भैम, हां ष लैण गया था भैम ।
 गार्छी सुन्नगा परला उण्ण्या मूण फडाके लै, हां ष मूण फडाके लै ।
 गजिया मै था थरथा हो रही, देखी मुण्ड नार, हो ए देखी मुण्ड नार ।
 काण्ट चडके रुक मारि कोट मग भेज्जो न्हाय, हां ष कोइसठ भेज्जो न्हाय ।

उपरोक्त जकड़ी गीत छोटे आकार के हैं, परन्तु इन गीतों में एक प्रथम कथामय गीत भी गाया जाता है। 'रजमल' नामक राजकुमार अपनी सहाय्य 'गौरा' में विवाह का इच्छा करता है। सब लोग उसे इस अपहृत्य से विवृण्व करते हैं, पर वह अपनी पृथ्व इच्छा नहीं छोड़ता। गौरा स्वयं अपने सत की रक्षा करती है और कामाय रजमल को अपने पाप पर प्रायश्चित्त करने के लिए छोड़ जाता है —

एक राजा के बन्धे माल पुतर था ।

साता बिचाल हो ष थदय थीं ।

एक पास री एक रोटा थी पाई,

पोय पोय के लकैरे चाली ।

छुत्र भाइया नै रोटी था जीजा,

महा जीजा भैरे रजमल माइ री ।

क बेठा रे ठरे ताप चडो,

के बेठा रे ठरे सिर में दर्द ।

ना बाबू मरे सिर में दरद,

ना बाबू मर ताप घम ।

फरा दिवा न बाबू गोरा भाय मै ।

पेसी मल मोचै रजमल हुड ना जगत मै ।

कथा के उत्तर पद्य की मार्मिकता दर्शनीय है —

हस हस वै रजमल न्हाय मजोवै,

रो रो के वा गौरा न्हाय मजोवै ।

हस हस कै रजमल कपडा थी पहरै,

रो रो क वा गौरा करदा थी पहरै ।

हस हस कै रजमल पट्टा बहावै,

रो रो के वा गौरा सीस गुथा वै ।
 हस हस के रजमल घोड़ा पै बैठया,
 रो रो के वा गौरा अरयां में बैठ्ठी ।
 एक पैड चाला रजमल दो डग चाला,
 एक पैड चाली गौरा दो डग चाली ।
 लीजी पै मरीए तिसाई ।

ना इत कुधा ना इत जोहद, किती ल्याऊ जल भर झारी ।
 फाटगो धरती, समा गइ गौरा, खड़ा हे लखारै वा रजमल भाइ ।
 तेरी तो बेटी बापू सत की निकली, सत की निकली,
 फट गइ धरती समा गइ गौरा, समा गइ गौरा ।

गौरा के पावन चरित्र की कथा सताश्वरी साता के उदात्त चरित्र की परिधि को छू गई है। साम्प्रतिक इतिहास की यह वस्तु कितनी प्रभविष्णु है, यह अस्पष्ट नहीं है।

हरियाने का नययुवक पीज का धनी है। उसका दृष्टिकोण नयीन तथा आधुनिक है। उसकी ग्रामीणा कुलवधू को भी नई रोशनी का चरम लगा है। नई रोशनी के आग उसको पुराना वैभन पीका जँच रहा है। माड़ी, जफर और माटरकार का माह इतना तीव्र है कि वह अपनी पैतृक सम्पत्ति को भी बेच देने का सुभाव देती है —

उची ण्डी बूट दिलाती पहरन स्वात्तर ल्यादे,
 जे तरे बसकी यात नहीं तो म्हारे घरा खदा^१ दे ।
 बाग बरु दे बिरसा^२ बेरु दे मने रमझोल घड़ा दे,
 जे तरे बगकी यात नहीं तो म्हारे घरा रदा दे ।
 बँल बरु दे भैस बेरु दे माड़ी जम्पर ल्यादे,
 जे तरे बसकी यात नहीं तो म्हारे घरा खदा दे ।
 नौहरा^३ बेरु दे महल बेरु दे मोटरकार मगा दे,
 जे तरे बसकी यात नहा तो म्हारे घरा खदा दे ।

इस गीत की नायिका का नये पैशन का चाव दर्शनीय है। रतजगे के इन गीतों में कुछ काव्यमय गीत भी होते हैं। एक गीत में नायिका के प्रबुद्ध रतिगापन का एक रहस्यमयी कहानी आइ है। रतजगे के एक वर्णन से रतजगे का कहाना कदा जा रही है। यह नाचे लिंगे गान से प्रकट है —

१ भेन दे । २ अपनी भूमि का भाग । ३ घर ।

गोरी मइ साँज की बही गइ कोइ कहीं खगाई मारी रात ।

परी बनजारा, नखल बनजारा टांग गेरिये ।

राजा बहे जग के रतागा, कोइ घड़ी गराटे मारी रात,

परी बनजारा, नखल बनजारा टांग गेरिये ।

गारी न तरी हासन महण रघरो, कोइ ना तर नैनो नौद,

परी बनजारा, नखल बनजारा टांग गेरिये ।

राजा महदा की बिरिया म्ये गइ, कोइ न्यू ना नैनो नौद,

परा बनजारा, नखल बनजारा टांग गेरिये ।

गोरा कलेजा तरी घबक रह्या, कोइ पैर रहे घराय,

परी बनजारा, नखल बनजारा टांग गेरिये ।

राजा नाचत कतेजा घबक रह्या, कोइ पैर रहे घराय,

परी बनजारा, नखल बनजारा टांग गेरिये ।

लाङ्गमानस निस प्रकार रस ध्वनि समन्वित ऐसे कान्यमय अरों की उद्भावना कर लेता है, यह बात भी उक्त गात सं प्रकट होती है।^१ यहाँ विपरिचय प्रयोगार्थ एक समृद्ध श्लोक तुलना के लिये उद्धृत है —

नि शेषव्युत्पन्नमन्दन मन्दतट निमृष्टरागाऽघरो,

नेत्रे दूरमनचने पुलकित खरी तवय तनु ।

मिथ्यावादिनि दूषि बाधयजनस्याज्ञानपांशागमे,

याथा स्नातुमिनो गवामि न पुनस्तस्याधमस्यान्तिकम् ॥

हे तन्वा ! तेर स्तनतट चदन रहित हैं, अघरो का लाली दूर हो गयी है, आँखा से अजन पुझ गया है और गुम्हारा शरीर भी पुलकित हो रहा है। प्रतीत होता है कि तुम चायिका म स्नानार्थ गइ थीं ?

समृद्ध श्लोक की नायिका दूती से हार मान गयी है, परन्तु लारु-गीत की नायिका अपने प्राग्बल्लभ का बचहरी से भी छूट गयी है। उस पर दाप स्थापित नहीं हो सका है।

इस अवसर व गातो में एक गीत काली गारी स्त्री का अन्तर स्पष्ट करता है। भले ही पत्नी मुजाति, सुलक्षणा एव सुभूषिता हो, परन्तु उसका सुवशा हाना परमावश्यक है। इसी कभीटो पर गोरी काली नायिकाओं की परख हो रहा है —

१ यह गान लेखक को 'शिखा-सस्कार विहीन' चमारों के रक्तगो में मिला है।

बेकार उनका जीना जिनकी काली हैं लुगाइया ।
 जब वो काला पानी को चालीं काले काले कलसे उनकी काला हैं मुराहिया ।
 बेकार उनका जीना जिनकी काली हैं लुगाइया ।
 शावारा उनका जीना जिनकी गोरी हैं लुगाइया ।
 जब वो गोरी पानी को चालीं गोरे गोरे कलसे उनकी गोरी हैं मुराहिया ।
 बेकार उनका जीना जिनकी काली हैं लुगाइया ।
 जब वो काली रसोई म चालीं, काले काले बेलन उनकी काली हैं मुराहिया ।
 शावारा उनका जीना जिनकी गोरी हैं लुगाइया,
 जब वो गोरी रसोइया म चाली, गोरे गोरे बेलन उनकी गोरी हैं मुराहिया ।
 बेकार उनका जीना जिनकी काली हैं लुगाइया ।
 जब वो काली सेना में चाली, काले काले टायर^१ उनका कौन करे मुराहिया ।
 शावारा उनका जीना जिनकी गोरी हैं लुगाइया ।
 जब वो गोरी सेना में चाली, गोरे गोरे बालक उनकी हाल^२ करे मुराहिया ।

वैसा अचमूल्यन है मानव का । सगाईमान ही उसका चरम लक्ष्य बन
 गया है । यह रत्नगणे के गीतों का एक साधारण गणन मान है । वैसे इस
 व्यवसर पर गाये जाने वाले गीतों का बहुत विस्तार है ।

लाडो

विनाइ सगधी गीता में 'लाडो' का अपना एक विशिष्ट स्थान है^३ ।
 इन गीतों में कन्या के हृदय में उमड़ती हुई भावनाओं को शब्दों में चित्रित
 किया जाता है । जितनी रसात्मकता एवं सामान्यता इन गीतों में मिलती है,
 उतनी ही गीतों में गहरी मिलती । बनी की मनाइशा की जीवित मूर्ति इन गीतों
 में अंकित होती है । इनमें पुरानुराग से लेकर वर की छात्र, मातृना सुन्दर
 शहस्था की कल्पना और शिवा, शिव-यार्जना का पूजा आदि के गीत होते

१ बालक, यच्चे । २ तत्काल, फौरन ।

३ हरियाना में इन गीतों को 'सुहाग' और 'बदहा' या 'बनी' नाम से
 भी पुकारा जाता है । इन चारों नामों में से लाडो और सुहाग ही अधिक
 प्रचलित हैं । ये गीत कन्या-पक्ष में गाये जानेवाले गीत हैं । वर-पक्ष में जो
 गीत गाये जाते हैं वे घोड़ी, बाना, यद्गण अथवा बाना के नाम से विख्यात
 हैं । इन दोनों प्रकार के गीतों की रूपरेखा तथा त्रिपद सामग्री पूर्णरूपेण पृथक
 लेखनी है ।

है, यह कहा जा सकता है कि सादाग के गीत मौभाग्यकानिगा कन्या के मनेविज्ञान के शब्द चित्र हैं। कन्या के विवाहित जावन की शुभ कामना इन गीतों का उद्देश्य है। परिवार के लोगों को इन गीतों द्वारा कन्या का स्मरण कराया जाता है। यह गीत घर पर प्रति प्रार्थना एवं आकांक्षाओं से पूर्ण होते हैं, इनमें घर-घर पर सदस्यों से कन्या पर प्रति उदार एवं स्नेहपूर्ण व्यवहार की कामना का जाती है। विस्तृत विवरण आगे दिया गया है।

घोषन का उभार है। हरियानी पुत्री पिता से अपनी मनादशा का वर्णन करती है। यह नीचू तोड़ने के लिए उद्यान में गई है। उम गीत एकांत वातावरण में उत्कृष्ट मनस्कामना जाग्रत होता है। साथ ही सहलिया अपनी सुमरान में है, यह भाव उमेश और भी सुभता है। अतः, लज्जावरण में टकरी दया हरियानी कन्या कह जाती है —

धिर वायन हो खने के कह,
मन कहती नै आवै रहान^१, निनुआ तोड़न में गई।
भूरा जोडा की माम रे,
कोई हमने दे परखाय^२, निनुआ तोड़न में गई।
वेटा, धारी^३ रह मेरा धीयड़ी,
धीरा सब कुछ होय, निनुआ तोड़न में गई।
गाड़ी भर दूँ दायन^४,
तने भूरी दे दूँगा भंस, निनुआ तोड़न में गई।
बायल^५, आग लगाऊ तरे दायन,
भूरा नै ले जा खोर, निनुआ तोड़न में गई।
बायल या जोवन दिन चार का,
बायल घानीगर का खेल, निनुआ तोड़न में गई।

युवती पिता की शिक्षा की अकारना प्रकट करती है। उसे अपने अनायास उभरते जीवन का चिंता है। युवती की भावनाओं का मार्मिक चित्र है —

बायल, जे में जेमी जाणती, जोवन धरती निमाय^६,
मदगा करके बेचती, नूण मिरच क भाय, निनुआ तोड़न में गई।
बायल, चढता जोवन यू चढ़े,
जाणों, विणा की राय, निनुआ तोड़न में गई।

१ लज्जा। २ व्याह कर दे। ३ शात। ४ दहेन की वस्तु। ५ पिता के लिए सवोधन। ६ जमाकर रखती।

बाबल, डलता जोवन न्यू डले,
जाणु, घिणा की राम, निवुधा तोड़न में गइ ।
बाबल, जै मैं पेमी जाणती,
जोवन नै धरती निमाय,
महगा करक वेचती, नूण मिरच के भाज, निवुधा तोड़न में गइ ।

युवती का चिंता म विवशता मिली हुई है —

बाबल छौंके धरु तो डै पड़े,
बाबल, तलै धरु तो त्रिलिया स्वाय, निवुधा तोड़न में गइ ।

अपने यौवन को छीने पर धरती हूँ तो गिरने का भय है, यदि भूमि पर धरती हूँ तो बिल्ली आदि घृष्ट रसिकों द्वारा खाये जाने का डर है ।

लाडो या मुहाग गीतों की मार्मिकता उस स्थल पर अवगनीय है जहाँ पुत्री अपने पिता से मनोनाछित वर खोजने के लिए प्रार्थना करती है । इन गीतों का सबध उस युग से है अथवा ये गीत उस युग के अवशेष हैं, जब कि कन्या से स्वयंवर की स्वतन्त्रता छिन गई थी । परन्तु कन्या से उसकी हृदि अभिरुचि जानी जाती थी । कहीं कहीं पर स्वयंवर की प्रथा भी लोक गीतों के भीने पदों के पीछे भावकी प्रतीत हाती है । एक गीत में वर्यन्तर की विशेषताएँ कन्या अपने मुख से कह रही है —

अमरवेल उदय पर छाई जी राज,
जिस तलै म्हारा लाग्ने खेलण आद जा राज ।
कहो म्हारी लाग्ने कन्या वर बड़ै ?
काला मत डणे कुन नै लज्जानी राज,
भूरा मत दूणे चलताण पस्वी जै जी मन्तराज ।
लम्बा मत डडो म्हाण सागर^१ छोड़ै जी राज,
छोट्टा मत दूणे राय दिन खोट्टा जी महाराज ।
इसा वर दूणे करर कन्हैया जी राज,
करर कन्हैया मथुरा घन फ वासी जी राज ।

एक अन्य गीत म सुन्द गृहस्था के लिए आदर्श पार्ता की कल्पना भी उही अन्तर्ग है । इस गीत में राम की सुन्दमय गृहस्थी को ही लौकिक आदर्श माना गया है । कन्या के सहा मनोविशान का विश्लेषण इस गीत की सम्पत्ति है —

१ शमीशुष की पत्नियां ।

तरा ताऊ ७ तवदया हय मोड,
 लाग्ने हे कुपु मांग निण ।
 मरी सीता सी बने साम,
 मुमर मेरा जपरप सा ।
 मरा बालम गिरी भगवान,
 छोटा री दवर लक्ष्मन सा ।
 धनु या मी नगरी दी राज रती ॥

यहाँ राम व मानुषज में म कोशल्या, मुष्मिना तथा बंकी की छोड़ सनारी माता में साग की भावना की कल्पना अपूर्व है । किसी-किसी गीत म पाठ 'कोशल्या सी दुहा सात' भी आया है । यहाँ, इस गीत के ऊपर किसी टाका-टिप्पणी, ननु ननु का आवश्यकता नहीं । आर्य जाति के सरकार एवं उसकी परम्परा हा इसका एकमात्र आधार है ।

पंजानी लड़की ने भी इसा प्रकार वर के विषय म अपनी बात बही है —

बाबल ! इक्क मेरा कहना कीज ।

मिन् राम रानर दीज ।

इन गीता में वर के प्रतीक राम, देवर व प्रतीक लक्ष्मण और कन्या का आदर्श सीता माना गया है । समुर के लिए दशरथ की कल्पना है । इनमें गौरवमयी भारतीय सभ्यता, सृष्टि एवं मयादा के चित्र आकृत है ।

एक अन्य गात में सागले वर का देकर लाडो की छोम हुआ है । वह अपने दादाजी से शिकायत कर रही है । दादा जी उसे आश्वासन देने हैं ।

छजै तो बैग्नै लाड्डो ववर निरखं,

दादा हो वर सांजला ।

राहै तो विचालै लाड्डो ताल खुदादया,

न्याया तो घोया वर ऊजला ।

किन्तूरी मगादयां वर कै थग लगादया,

बम्पर प्यादयर वर नै खोल कै ।

लाड्डो की अत में वर भी बतला दिया गया है कि वर का सायलासन स्थानी नहीं अपितु अस्याइ एव सहेतुक है —

अरयां कै हलकै १ लाड्डा गरद उडै,

गरद ५ उडै वर सावजा ।

विभिन्न उपचारों से भले ही घर गौर न हो पर सामयिक सात्वना तो समुचित ही है। केवल इच्छामात्र से घर गौराग नहीं मिलता। भारतीय कन्या उसके लिए तपस्या करती है, साधना करता है। उसकी इष्ट हैं पार्वती जी। प्राक्काल से ही भारतीय पुत्री श्रेष्ठतर न लिए पार्वती जी की साधना करती आई हैं। सीता ने भी ऐसा ही किया था। हरियाना की लाड्डो भी गौरीशंकर की उपासना म रत हैं —

मेरी छोटी सी ब-दही पारवती शिव की पूजा करती है।
अपने बावल के यागा में जाती, फूल तोड़ कर लाती,
पूजा का द्वार बनाती शिव शंकर को पहनाती है।

इन 'लाड्डो' गीतों में कन्या को उपयुक्त शिक्षा भी दी जाती है। वह जीवन के नये मोड़ पर होती है। अतः उसे कुछ अनुभव बतला दिये जाते हैं। ये मुहाग गीत 'लगन' के पीछे नित्यप्रति इसी कारण से सम्भव गाये जाते हैं कि उनका प्रभाव 'न-दही' के मन पर स्थायी रूप से पड़ जाये। उदाहरण —

मैं समझऊ समझ मेरी लाडो अपना धर्म निभाया है।
भाइ भतीजे तेरे भाई रहजा, किसने रोकै सुणावै है।
जोहड़ विराणा, कुआ विराणा नीची नजर लगाया है।
घारी^१ मोणा बखतै^२ ऊठना, यो हे परण^३ निभाया^४ हैं।

हरियाना में पानी की एक समस्या है। जल के साधन पोगर और कुएँ मात्र हैं। उन स्थानों पर जाने आने के आचार की एक सुन्दर सीमा इन गीतों में दी गयी है और नगरधू के ऊपर ता सत्रका आधिपत्य होता है। उसे सत्रकी सेवा करनी होती है। अतः ऐसी सत्रा के लिए देर से सोना, प्रातः उठना लाभकारी होता है। जीवन-दर्शन की ऐसी अनेक व्याख्याएँ इन गीतों में यत्र-तत्र मिलती पड़ी हैं।

सुन्दर घराकान्तिणी कन्या को 'गेहूँ बाजरा' भक्षण की लाभ हानिया किस प्रकार हसी हसा में समझा दी गया है —

लाने बाजरे की रोगी मन रग सागन काले आवेंगे,
लाने गी-हा के भावर^५ काले रग सागन गोरे आवेंगे।

१ देर। २ शीघ्र, प्रातः काल 'घरली इन दि मोरनिग'। ३ प्रण, प्रतिष्ठा। ४ पाजन करना। ५ मोगी मोटी रोटिया।

एक कहान्त है 'बीजा माये अन्न देसा हा वा मन, बीजा पीर पना पैसी हा वा चाना'। परन्तु यहाँ तो धरती के अन्न-विशेष के भक्षण पर का कानाकन हाता दिगाया गया है। लक्ष्मी-गीतों की दुनिया में अन्न-विशेषों का भी विशिष्ट स्थान है।

धन्दा

धन्दा के गान चन्दा, बन्ना, लाटा, प्रथमा घोड़ी के नाम से पुकारे जाते हैं। पञ्जाबी गीतों में तो 'चन्दा-गीत' धन्दा के सभी गानों का प्रतिनिधित्व करते हैं। पर इधर इधराने में इन दो प्रकार के गीतों, चन्दा और चन्दा में कुछ अन्तर आ गया है। चन्दा का शिखर घर में स्वभाव, रूप, गुण, शिक्षा, कर्तव्य और नगरे आदि का लेकर चलता है। उसमें बराबर ही गणना भी इनके अन्तर्गत आ जाती है। घोड़ी में प्रायः सुखचर्चा ही समय के गीत होते हैं। इसी समय तेहरा या मौट के गान भी गये जाते हैं। सुखचर्चा के एक गीत में माता एव मगनी अपने लाडले बच्चे के प्रति अपने-अपने सचय की महत्ता प्रकट करती हैं। यह सवाणालक गीत बड़ा ही रुचक है। माता कहता है —

दूधी की मारु धार, गुमानी बेग मा न करे भूल नहीं जा।

याद दिलाऊ म् अक चावंगा नइ यहू रानी बेग भूल नहीं जा।

बहन भी इसी प्रकार कहती है —

गुड़िया में मारी मने लान,

बीरा बिलाया दिन रात, बीरा भूल नहीं जा।

'घोड़ी' मयुरा की थोष्ट प्रतलाइ गइ है। उसका मूल्य भी बहुत अधिक है। नौ लाख का वह घोड़ी है। दादा जी से एक ऐसी अनाया घोड़ी की माग निम्नलिखित गीत में की गयी है —

चपल घोड़ी चादयो मुयुरा तै चाइ।

ले म्हरा दाग जी मोल ले धारी होय चन्दाइ।

कै लख लीली का मोल कै एक लख चुकाइ,

दस लख बीली का मोल नौ लाख चुकाइ।

चद म्हरा अइलाग 'एड दे अय देसू तैगी चितराइ।

यह है ऐसी बहुमूल्य एव चपल घोड़ी पर वर की परीक्षा का अन्त्या अन्तर स्वप्ना गया है।

* लाला, दूल्हा।

एक अन्य घोड़ी में वर के सौन्दर्य की स्पष्ट भाँकी मिलती है —

घोड़ी ले दीजो दादा जी शूरा मोल है रस घोड़िया ।

अगल बगल भरी निनुआ सै,

बाजा हाथ रचा चोखी मेंहदी सै,

वाका नैण छुला चोखा सुरमा सै,

वाका तिलभर आया चागी बनडी सै,

ते सँ बारी सँ बारी बाजा जी थारा रूप से रस घोड़िया ।

घोड़ियाँ में वर की शृंगारमयी मूर्ति का खुला बणन आया है । इन गीतों में वर की समता साक्षात् कामदेव के साथ की गयी है ।

‘बदड़ा’ गीतों में ‘घोड़ी’ से कुछ अलग हटा हुआ बणन होता है । इनमें वर की सज्जा आदि का वर्णन आ जाता है । एक बदड़ा गीत में अल्पवयस्का बरनी की युवकवर से प्रार्थना है और साथ ही चेतावनी भी है —

हरियाला बाना ! काची कली मत सोड़िये माली को देगी मालिया ।

सहजादा बन्ना ! पाक्य दे रस होण्य दे तेरे ताई^१ नवा^२ दूगी डालियां ।

इस बदड़ा गीत में साफा, पाजामा, अगूठी का वर्णन है जो वर की सज्जा के लिए आवश्यक है, परंतु वर को इनसे भी बटकर एक चाहना और है । वह है बरनी का —

हरियाला बाना ! बदड़ी तो ले दू तेरी मौन^३ की,

पिलग चद पीदता^४ क्यू नादे ।

इस गीत में ‘कमसिन बाना की जवा होने तक’ की प्रार्थना का वात एक प्रतीक प्रयोग द्वारा सुन्दरता से कही गई है जो उड़ी प्रामगशाली है । इसके समक्ष अच्छे-अच्छे काव्य गद भी पीके लगते हैं ।

कुछ गीतों में आनुनिः प्रभाव भी आ गया है । ब्रह्मचर्य की महत्ता और गुरुकुल की विशेषता इनका निषय है—

चलती मोटर नै डाट्टै,

बायों से निमाना काट्टै,

साबल छोड़े भारी जी हमारा बनदा ।

गुरुकुल का महबारी री हमारा बनदा ।

१ और, प्रति । २ मुझा दूगी । ३ इच्छा की । ४ सोना ।

दुकाव

दुकाव जिसका नाम बारीठी भी रिया जाता है 'शुभ्रुयह प्रवेश' काव से संबद्ध है। इमे 'ठारण खगना' भी कहते हैं। इस अन्तर य गीतो य प्राय गालिपा ह'वी है। कही भा की दृष्टा ' मतलाया गया है, ता कही दूल्द को काला। देवर जेठ का नौकर कहा गया है। जिठाना दीरानी भा म्प्या का व्यजना भा एक गात में हुइ है।

उतरे यन्ना घोदियां माहेवादा यन्ना,
 यना की मायक हौनी माहेवादा यन्ना,
 हाय म्पेरन वृककी माहेवादा यन्ना,
 देइ मुनी को बगला चिवाइयू तो मेरा कामण म्पारवा ।
 सारा तो सारी जान बगइयू ता म्पारा कामण साचा,
 एसा तो कामण म्पारा राइ घर नै सोहे ।
 देइ मूग का वहां उताह तो मेरा कामण साचा,
 मारा तो मारा जान निमाइयू तो मेरा कामण म्पारवा,
 एसा तो कामण म्पारा राइ घर नै सोहे ।
 विण यदला को मंड बरमाइयू तो मेरा कामण साचा,
 सारी तो सारी राइ घर जान भिन्वाइयू तो मेरा कामण साचा,
 एसा तो कामण म्पारा राइ घर नै सोहे ।
 छोटग देवर पामे पोवै बड़ा भरंगा पायी,
 द्यौर निगयो मुन्मुल काके, यदकी घर की रायो ।

गीत में आश्चर्यजनक तर्का का उद्भावनना बड़ा रूची के साम हुइ है। 'देइ मूग का वड़ा' समस्त वनेत (जगत) का पयास है। अनौपी अत्रपूथ है।

दुका के एक गीत म वर का पौजी आफिसर के रूप में दिखनाया गया है —

याना रै नगाड़ा म्पारे रणनीव का जणु हाकस आया ।

अपना मोमण छोड़क बनदकी विवाहय आया ॥

एक दूसरे बारीठी के गीत में, जा हमें यमुना के खादर के मिला है, वर का काला और बरनी का चाद सूरज की भाति उजली दिनाया गया है। भाषा अलपता हरियानी नहीं है, खड़ी बोली है —

१ हान्नेवाला, अमराशीला । २ दहीबड़ा ।

नहा ब्याहू राधे नी कन्हैया तेरा काला ।
 तेरा काहा ऐसा काला, जैसा कमल काला ।
 मेरी तो राधे ऐसी जिसी चदा पै उजाली, सूरज पै उजाली ।
 नहा ब्याहू राधे नी कन्हैया तेरा काला ।
 छीन छीन दुग्ध राय मुलक का, मक्यन खा गया सारा,
 कैसे करेगा री मेरी राधे का गुजारा ।

काला काला मत करे ग्वालन मुक्कौ जगत उजाला,
 औरों क दो चार कहेया, मेरे तो एउ राम रे खिलौना ।
 नहीं ब्याहू राधे जी कन्हैया तेरा काला ॥

एक श्रय गीत म वर का भैसा जैसा काला और वरनी का कागज से भी धोली कण गया है । दोनों स्थानों पर उपमान लोक के सहज जीवन से लिए गये हैं —

फेरां पै ना जागी बाहण मेरा त्रिलकुल टाला सै ।
 बारांठा पै देख लिया मेरा दरया भाजा सै ।
 कागज त बी धोली बाहण, वा भोट्टे त काला सै ।
 फेरा पै ना जागी बाहण मेरा त्रिलकुल टाला सै ।

इस गीत में दुका प्रभा की उपयोगिता के विषय म भी सन्नत मिलता है । कया वर का फेरा सस्कार से पहिले देख लती है ।

फेरे

फर्ग पर गाय जाने वाले गातों म कया के विवाह मंडप में आने की कठिनाई आद का बर्णन है । वर बड़ी चतुराई से उन पुरुषों का प्रलोभन देता है जो वरनी के मंडप म आने में राधक हैं । वरनी के दादा का वह अपनी दादा देने की बात कहता है और ताऊ ने साथ ताई निनाहने की —

मैं क्यकर आऊ मेरा राय दुल्हवा आगे मेरा दादा अइ रह्या ।
 धरा दादा न अपणी दादी बिहावा चँरी' पै राकरा नरामगा ।
 मैं क्यकर आऊ मेरा राय दुल्हवा आगे मेरा ताऊ अइ रह्या ।
 धारा ताऊ न अपणी ताई बिहावा चँरी' पै राकरा जगमगी ।

फरों पर कयादान का शास्त्रीय त्रिया दाता है और कन्यादान का महत्ता का एक लोक गीत भी अवर्य गाय जाता है —

“माना को दान, चाँदी को दान और कन्या को दान हुरेला हो राम ॥”

एक गढ़वाली गीत में भा कन्यागतन कः सभी दाना से ऊँचा धतारा गगा हे —

दइवा युग जी कन्या को दान,
ठाना मा कृ दान होतो कन्यादान ।

गीत में आगे कहा है कि हाथ, मेला, अन्न, धन भूमि और गो गजान ता सब काह पर सकता हे, कन्यागतन का अन्नपर कठिनाह स प्राप्त होना हे । इस महा सकलर के बाद विवाह पूरा हो जाता हे ।

फरा के लोक-गातों में एक स्थान पर उस समस्त निया का लोकवाणी में आकृति हुइ हे जिमे पठित शास्त्राय रूप घ कगता हे —

पहला केरा गद्दा की पीतदिया,
दुगगा केरा साऊ की वेगदिया,
तीना केरा घावल की वेगदिया,
चौथा केरा चारज की वेगदिया,
पाँचम केरा भाइ की भणलिया,
छना केरा मामा की भाणलिया,
सतरे परे भाट्टी हुइ परायेदिया ।

इस गात में ‘सगा सप्तवामन, सा मामनुवता मन’ वाली सातरी प्रतिशा का उल्लेख हुआ है । ‘लाडा हुइ ए परा’ की मामिकता दर्शनाय हे ।

गाली

हरिवाना में गाला न लिए ‘सीटणा’ शब्द का व्यवहार हाता हे । ये सीटण्ये कह अन्नसरो पर गाय जाते हैं । उमटणा मलने के बाद स्नान करते समय समभन का गालिया दी जाती हैं । ग्राहियों की रात में गाली का प्रयोग होता हे । ‘छना’ में भी अश्लाल कथन के प्रथम होते हैं । हरिवाना में कुमुन्दा नाम का एक प्रकार का गाला बहुत प्रचलित है । रात का दास्य के समय अनेक गालिया दा जाता हैं । इन गालिया का कथापठ चहुरगा हे ।

विवाह क इन सीटणा में प्रेमातिरक का प्रकाश हाता हे । इनका यह विशयता हे कि जिसे गाली दी जाती हे, उसे भा रचती हे और सुनने वाल को भा अन्धी लगती हे । वस्तुत विनोद की पृथता इसी का नाम हे ।

जब भाग्य पड़ चुकी है और समाज ने उसे लक्ष्मी रूप में सम्मानित कर लिया है तो वह अपने कोटुम्बिक जनां स्नेह सिंचित पर औदासीन्यपूर्ण आश्वासन देती है —

ठाडा मेरा दादा ठाडा रहिये आज की रैन पहर दोप ।
अपणा कटक ले उतरगी पार, धारा नगर मुबल बसो ।
ठाडा मेरा ताऊ ठाडा रहिये आज की रैन पहर दोप ।

इसी प्रकार पिता, भाई और मामा आदि से कहा जाता है । इस गीत में नेराश्यपूर्ण भावनाओं का चित्रण हुआ है ।

इस गीत के भावपक्ष पर यह विवेचना भी दी जाती है कि विवाहोपरात क या का कार्य क्षेत्र विशद एवं विस्तृत हो जाता है । उसने लिए यह समीचीन हाता है कि वह यथाशीघ्र अपने पुराने स्थान का छोड़ दे । अतः वह बरात वाहिनी को लेकर चली जाना चाहती है ।

एक अन्य गीत में, कथा को अपने परिजन से बड़ा माह हो गया है । उसे संभवतः हार-जीत के गाम्भीर्य की अभी प्रतीति नहीं है । अतः में, विदा की चला म रहस्यमयी परिस्थिति का उसे ज्ञान हाता है । वह विविध प्रकार से उपयागिता की बात कहती है, परंतु पिता जिसे वस्तु स्थिति का पूरा ज्ञान है अपनी पुत्री की प्रत्येक बात का समाधानिक उत्तर दे रहा है । बेचारी चिड़कली विवश है । उसका जन्म का घर छिन रहा है । आज उसके मौलिक अधिकारों का काइ महत्त्व नहीं है । उसका सेवाएँ भा अपक्षित नहीं है ।
उदाहरण —

तुझिया का बगला हो बाबल चिड़िये खोल गिर्या ।
मेरा गाड्डा अग्न्या हो बाबल तेरा महल सलै,
दो इट कडादयां ह धीअद घर जा आपणे,
मेरा डोला अग्न्या हो बाबल तेरे बागा में,
दो पेद कगदया ह धीअद घर जा आपणे ।
तेरा पनघट सूना हो बाबल तेरा धीये विना,
म्हारा यहुअद भरंगी पानी हे धीअद घर जा आपणे ।
तेरा गोबर मुकरो हो बाबल तेरा टायां में,
म्हारे चूहधी भतेरी हे धीअद ! घर जा आपणे ।
में सो तुझिया भूली हो बाबल तेरा चाला म,
म्हारी पोछी खोलगा धीअद ! घर जा आपणे ।

यह एक 'उपेक्षा गीत' है। पुत्री विवश है क्या करे ? अन्त में प्रति-
स्पर्धी के शानमार में उसे क्षाम होता है और वह अपने अन्तर्गु ने बोल
गद है —

"तेरी पौत्ती मरियो हो बाधल । मेरी टौद लड ।"

ए पिता बी तेरी पाती मर जाये जिनने मेरा स्थान अपहरण कर लिया है।

अपन, एक गीत में विना होता हूँ पुत्री तथा जमाइ के शुभ गमन पर
प्रकृति में शुभ शत्रुना का भाग बड़ी ही उपयुक्त हूँ है। तीतर और कायन
में शत्रुनकारी एव मगीतमय शब्दाँ के लिए प्रार्थना है, तो मूल्य में प्रगर
क्रिपुँ समेट लने और बाल से 'भीनी क्या' का याचना है। वायु का
मद्गति का आदेश है ता टाले-दिने आदि का नीचा होने के लिए कहा गया है
जिनमें जमाइ का पचरग पाग दूर तर दारो। अत्रिक मगल कामनाओं से यह
गान मरा है —

२१५

तीतर है तू धामे गहने धोन, चढ़ते जमाइ का मूय मखाइये जी में का राव ।
कोयल ह तू बागा में जा बोल, पारत जमाइ न मबद मुखाइये जी में का राव ।
भुरज है तू बंदल में बढना, चढ दे जमाइ नै लार्ग पामदा जी में का राव ।
बादल रहे तू भीया भीया बरम चढती लाडो की भीने नीरग बूदो जी में का राव ।
आर्षा है तू भीयी भीयी बाल, चढते जमाइ का गरद भर कापड़े जी में का राव ।
दीनी है तू ऊची मोगी हो, चढते जमाइ की दीनै पचरग पागदी जी में का राव ।

लोकगीत की आत्मा का प्रकृति के साथ अनुपम तादात्म्य हुआ है।

दुल्हन का विनायगी पर गाये जाने वाले गीतों का रूपरेखा ऊपर दी
गई है। यहाँ एक गीत निम्ने 'सायण' के नाम से हरियाणा की समस्त जनता
कन्या की विदायगा पर गाती है, दे देना असंगत न होगा। यह गीत हरियाणा
का राष्ट्रीय गीत है जो विवाह के अतिरिक्त कन्या विनायगी पर सर्वत्र गाया
जाता है। 'छादरा' के जाने पर जब तक यह गीत न गा लिया जाये तब तक
कन्या की वह स्थिति नहीं उत्पन्न होती जे फल्यर को भी पियला दे। ऊट
पर अथवा अग्र्य आदि में बैठा होता है। वह लाडली और घरता पर नाचे
सहेलियों की एक विशाल बादिनी अपनी मूँ गभीर विरह व्याकुल धमि से
गातावरण को शोक समन्वित कर देती है। इस गीत में 'दब दब भग्याए
नैण' कैसी निश्चल अभिव्यक्ति है —

म्हारे री फर म आये री बटेऊ, सायण क लण बार ।

सायण बाल पदी री, मेरे दब दब भग्याए नैण ।

अपणी बहाण का करू चूरमा, करदयू मकर^१ कमार ।
 साथण चाल
 अपणी बहाण का मैं दाग्मण^२ सिमायडूँ, लायडूँ घोट्या की लार ।
 साथण चाल पड़ी
 अपणी बहाण की मैं चूदकी मगा डूँ दाहरी घोट्या की लार ।
 साथण चाल पड़ी
 अपणी साथण का मैं कुरता मिभाय डूँ, बग्था की ल्याडूँ लार ।
 साथण चाल पड़ी
 अपणी साथण ने सास रे खदादयू^३ करके भयोट्या^४ साथ ।
 साथण चाल पड़ी
 अपणी बहाण ने तावली^५ भगाल्यू, पालके^६ छोदला^७ वीग ।
 साथण चाल पड़ी री, मेरे डस डस भरथाये नेण ॥

विदा होती हुई कन्या के लिए यथाशाम बुलाने का आशानन बड़ा सतोपप्रद होता है। वह इसी आशा-सबल से अपने हुए का विनोदन करती है।

नीचे लिखे गीत के अन्तर्गत समस्त वैशाखिक कृत्या का समावेश हो गया है। एक प्रकार से यह गीत 'विवाह कृत्य गुग्गा' है अथवा या कहिए एक 'शलाकी विवाह संस्कार'। हरियाणा में विवाह में पालत सभी आचार, प्रथा तथा रस्मों का क्रमपूर्वक परिगणन इस गीत में हुआ है। गीत कुछ बड़ा है।

पान सुपारी पानों का रिड़ला, पान सुपारी पाना का रिड़ला ।
 उमराव घनी का घर डूण निकला, सरदार घनी का घर डूण निकला ।
 आग्य दूग पाछय दूनी दूनी गड गुजरात घणी ।
 एक सहर राजलधा था पाया, उमम दूहवा राव था दंसत सँ ।
 घाना सल जुड़ा घराता ऊ तेण्य में घन घणा ।
 मुणा राम मुण मेरी यतिया रावा घर बागा म आया ।
 घाना आया ग्हारे मनभाया फौयल सबद मुणा निया ।
 मुणा राम मुण मेरी यतिया रा तावर सोमा म आया ।

१ बडिया । २ सुन्दर लहगा । ३ भन डूँ । ४ यहनाइ । ५ यथारीघ्र ।
 भेनकर । ७ छोटे भाइ को ।

सीमां आया ग्हारे मनभाया निपजं सात्तौं मात्र घथा ।
 मुण्यो राम मुण्य मेरी बतियां राजावर गोरवै^१ आया ।
 गोरवै आया ग्हारे मनभाया लम्बा खरद^२ विद्या दिया ।
 लम्बा-लम्बा खरद विद्याया घोछा सजन बुला लिया ।
 मुण्यो राम मुण्य मेरी बतियां राजा वर महरो में आया ।
 सहरो आया ग्हारे मनभाया बतियां रींद^३ सराह्य दिया ।
 मुण्यो राम मुण्य मेरी बतियां राजावर सोरख^४ आये आया ।
 सोरख आया ग्हारे मनभाया खाती रींद सराह दिया ।
 छोटी साली बड़ा साली कर भारता सीम्य^५ सीम्य होय रही ।
 जगमग जगमग कर सेहरा मोती की लड़ लूम रहा ।
 मुण्यो राम मुण्य मेरी बतियां राजावर फेरों म आया ।
 फेरों आया ग्हारे मनभाया लम्बा खरद विद्या दिया ।
 लम्बा-लम्बा खरद विद्याया घोछा सजन बुला लिया ।
 चार भात की चारों खूनी काखो सूत पुराय लिया ।
 हयला^६ में हाथी दिया घर कन्वादान म उट दिया ।
 मुण्यो राम मुण्य मेरी बतियां राजावर जीमण्य आया ।
 जीमण्य आया ग्हारे मनभाया सोरख भाल परोस दिया ।
 छोटा लाडू बड़ा लाडू और मट्ठलू^७ घेर घिराली^८ कौन गिने ।
 मगोकी दबकौकी पापट धीर इमरती कौन गिने ।
 बड़ा-बड़ा पिहाण्य^९ परोस्सा दो दो आगल मिचं घणी ।
 मुण्यो राम मुण्य मेरी बतियां राजावर निदा पर आया ।
 निदा पर आया ग्हारे मनभाया लम्बा खरद विद्या दिया ।
 लम्बा-लम्बा खरद विद्याया घोछा सजन बुला लिया ।
 घदा टोकणा सब कुड़ दैदयो भटा बटा कौन गिणे ।
 देवगारा^{१०} धाली देदयो पहला बरला कौण गिणे ।

उपरोक्त गीत में विनाह का विशद वर्णन आया है। लाकमेघा अपनी अभिव्यक्ति के लिए किस प्रकार शब्द-निर्माण में प्रयाण है, यह 'घेर घिराली' आदि शब्दों से प्रकट है। लाक में इसके लिए कभी चिन्ता नहीं व्यक्त की गई कि श्रमुक वस्तु को क्या कहना चाहिए अथवा 'कापकार' श्रमुक

१ प्राम समीप । २ चोपट । ३ यतड़ा । ४ द्वार । ५ होड़ा होड़ी ।

६ हयनवा । ७ मँदा की राट लिपटी मिगट । ८ जलेनी ।

९ पहाड़सा । १० बड़ी धाली ।

वस्तु को क्या नाम देते हैं। यहाँ तो वस्तु का स्वरूपात्मक प्रतिबिम्ब शब्द व्युत्पत्ति का कारण बनता है। इसी कारण लोक में कभी भी शाब्दिक अभिव्यक्ति के लिए श्रद्धाचन नहीं होती। लोक ने पत्नी के सदृश एक वस्तु (हवाई जहाज) को आकाश में उड़ते देखा, सहसा बिना किसी के पूछे-ताछे 'चीलगाड़ी' नाम दे दिया। कितना साधक है यह नाम। इसी प्रकार, साईकिल का 'पैरगाड़ी' नाम देना, लोक की अपनी सूझ है।

मृत्यु-गीत (Elegy)

लोक प्रतिभा ने अपनी शक्ति का प्रकाश जन्म और विवाह के गीतों के रूप में अधिक किया है। इन दो सस्कारों एवं अवसरों के गीतों के आगे बहुत थोड़े गीत रह जाते हैं। मृत्यु जो अन्तिम सस्कार है, उस पर भी कुछ गीत गाये जाते हैं। मृत्यु शोक और विपाद का समय होता है, अतः इस अवसर के गीतों में शोकभाव ही भरा होता है।

मृत्यु-गीतों का उद्गू साहित्य में विशेष स्थान है। वहाँ 'मरसिया' नाम के गीत साहित्य की विशेष निधि है। मृत्यु-गीतों का वर्ण्य विषय मृतव्यक्ति के गुणों का परिगणन होता है।

हरियाणा में मृत्यु पर जो गीत गाये जाते हैं वे बड़े ही मर्मस्पर्शी एवं हृदय द्रावक हैं। 'जामाता की मृत्यु पर' एक गीत जो इधर मिला है, बड़ा ही शोकपूर्ण है —

जब तौ घर तँ लीकट्या गभरु^१ सेर जुआन,
 होगया साथ कसीण गभरु सेर जुआन, हाय हाय गभरु सेर जुआन।
 बाम्मे बोल्ली कोतरी दहयै योल्या काग, गभरु सेर जुआन, हाय हाय गभरु सेर जुआन।
 मारी क्या ना कोतरी तँ मारया कौ ना काग, हाय हाय वनदा पेच्चा थाला।
 कनघ तरी बाधा पालकी कनघ तेरा करया सिगार, हाय हाय गभरु सेर जुआन।
 भइया बाधा पालना भइया नै करया सिगार, हाय हाय गभरु सेर जुआन।
 मुसरा का प्यारा हाय, साला का प्यारा हाय हाय,
 चुड़ला की सोभ्या हाय, ताध की सोभ्या हाय हाय,
 मेरो येसर दूटो हाय, सासड़ का प्यारा हाय हाय।

कैसा व्यथा है? जो समस्त शृंगार का आश्रय था वह उठ गया। सामु जियने मुग सौविध्य के लिए प्राणपण से चेष्टा करती थी वह आस जगल

वासी हो गया है। किंतु जीवनसाथी हृदयेश के मूठ जाने पर तो विधा का सकार ही समाप्त हो जाता है। विगत परिस्थितियाँ आन्तरिक कष्ट का द्रुत ही जाती हैं। वियोग व्यथिता नायिका का अजत वियोग की स्मृति काँटे भी चुभता है।

‘विधा विनाय’ नामक नीचे दिये गये गीत में विधा का रेखाएँ उभरी हैं —

धरे मेरे करम पर धारे जल गये अरु मोभी दूदाभ^१ ।
 धरे मेरे करम क मुनरा भर गण, रू गये मतिहार ।
 यहू री मेरी मन रोंवै मुके लगारो लाल का गग ।
 मा धर धाले धाल पहरा कापड़े रादा मेर भरारै ।
 धरी धले गूठरा क मरी राध उठराणरे ।
 धरी देही जले जैसे काच की मही पचाये ।
 धरी विच्छू ने मारा डक लहर क्यू ना धारै ।
 धरी अपया मन समझायण लागी, दो मैना म भर धाया पायी ।
 ष सास्यू जय धसू महल में दरा विद्याना सूता ।
 बुद्ध एक दिनो की ना हूँ मुके सारे जनम का रोना ।
 धरे यार्या धी जय रही धाप क ममे सोच बुद्ध ना या ।
 इय बयू कँटे दिन रात ममे कोण एक टिा की ना सी ।

यान आश्रयान्त शोक के लाने-वाने से बुना हुआ है। “मेरी कचनप्रति मही के सदृश जल रही है, यमराज रुपी विच्छू ने डक मारा है!” ये शब्द पढ़कर किसका हृदय रगड़-रगड़ न हो जायेगा? ‘धरी विच्छू ने मारा डक लहर क्यू ना धारै’ कितनी मममेक उक्ति है। वियोग के क्षण ही जय क्लम हो जाते हैं तो जीवन पर्यंत का यह वियोग किनना ममान्तक है, पढ़कर रोमांच हो जाता है।

गहनदमी का प्रताप जय धर से उठ जाता है तो रङ्ग के गहनस्थी चौपट हो जाता है। उसरी आशा आकांक्षा धूल में मिल जाती हैं। जीवन म प्रेमचिन्तन समाप्त हुआ कि नीरसता छा जाती है। प्रेयसा के उरुभरण विधा चिनगारी को प्रज्वलित करने रहने हैं, उसने प्राणा को कचाटते हैं।

विधुर का अर्थ का दिग्दर्शन इस गीत म हुआ है —

दाल स्वगेत्ला बगद निच सोया,
 एक धार सुपने में आइये, प्यारी ष ।

पौराणिक एवं ऐतिहासिक विधुर राम तथा अज का विलाप साहित्य की विभूति है। श्रयाय कवियों ने भी अपनी विरह विदग्धा भावना का प्रकाश इस विधि से किया है। कविवर बच्चन का "निशा निमग्न" किस पाठक के अतस् को नहीं छू जाता है।

विवाहिता कया की मृत्यु पर गाये जाने वाला एक गीत यहाँ दिया जाता है —

हाय हाय बागों की कोयल ।

कन तेरी बाधी पालनी बाग की कोयल,

कन तेरा कर्या सिगार, हाय हाय बाग की कोयल ।

देवर जेग न बाधी पालनी, हाय हाय बाग की कोयल ।

दशैर निठाखिया न कर्या सिगार, हाय हाय बागों की कोयल ।

मार मडास्सा^१ ले गये बाग की कोयल,

विदरावन क पास हाय हाय बाग की कोयल ।

विदरावन की गोपनी यों कहै या कौण राखा जाये, हाय हाय बाग की कोयल ।

अपणा बावल की धीअड़ी बाग की कोयल ।

अपणा भाइया का भाण है बाग की कोयल, हाय हाय बाग की कोयल ।

बावल की घोअड़ हाय, भइयां की बाहण हाय ।

भाजना की प्यारी हाय, परहण^२ की प्यारी हाय ।

पीहर की प्यारा हाय, हाय हाय बाग की कोयल हाय, हाय हाय बागों की कोयल ।

माता पिता का आगना आन लाडली पुत्री के बिना सूना है। बाग की कोयल आज उड़ गई है। बिहल हृदय का कष्टना गीत के शब्द शब्द से ध्वनित हो रहा है।

सादर से प्राप्त 'विवाहिता पुत्री की मृत्यु' ने गीत में पुत्री की अगवधि का बड़ा आलंकारिक वर्णन हुआ है^३ —

भूगर्भी सा आगुली, हाय हाय बची सोने की चिड़िया ।

नाक सुण की चोंच, हाय हाय बची सोने की चिड़िया ।

होठ पीपल के पात से, हाय हाय बची सोने की चिड़िया ।

इस गीत की अन्तिम पंक्ति ये हैं —

थरा तेरा बावल फिर उदाम, तेरी अम्मां जोहे बाग ।

भैया तेरा लन आया, एक बार नहर जाय ।

१ साफ़ा । २ पति । ३ इस गीत को भाग खड़ाचोली है, हरियानी नहीं है ।

शाही ताड़ तेरी रोयें, उनको रोदन धाय ।
गहनों का डिब्बा भराधरा है, एक बार पढ़ा दिगाय ॥

लाटली की छवि श्रौंगों के सामने घूम रही है । अन्तिम पत्तियाँ में
माता का वेदना का बाँध टूट गया है ।

स श्रुतु-गीत

दूसरे प्रकार के लोक-गीत ये हैं जो भीमभी गीत के नाम से विख्यात
हैं । श्रुतुर्ण आ-आकर प्रकृति का शृंगार करती हैं । आरम्भ में तूतन पत्र,
पुष्प, फनादि में बसत नवकर्य का स्वागत करती है । प्रीप्स की भी अपना
छटा हाता दे, बग की अपनी चहार होती है और शरत् समय में फर पत्र
त्यौहार आकर इस श्रुतु की पावनता बढ़ाते रहते हैं । श्रुतुआ द्वारा मुग्धजिन
ऐसा हा पृष्ठभूमि में मानव मनावेग तरंगित होते हैं ।

जायन के प्रमुख प्रचलित संस्कारों—जन्म, विवाह और मृत्यु—पर प्राप्त
गीतों का अध्ययन विगत पृष्ठों में हुआ है । इस स्थान पर, श्रुतु सम्बन्धी
गीतों का परिचय प्राप्त करेंगे । ये श्रुतुगीत भी कई प्रकार के होते हैं । इन्हीं
गीतों में श्रुतु विशेष में जानेवाले उत्सव, पर्य, त्यौहार और देवी देवताओं के
गीतों की अन्तर्निहित हो जाती है । अतः हम भिन्न-भिन्न कालों में मनाये
जानेवाले उत्सव-पर-त्यौहारों की तथा देवता विशिष्ट के धोमने (पूजने) की
चर्चा करने आगे बढ़ेंगे । फलतः यह कहा जा सकता है कि श्रुतु-विशेष की
छाप तथा महत्ता इन्हीं उत्सवादि के रूप में मानव ने अपने जीवन में
अंकित कर ला है । जायन में लीज और भूले की सरसता एवं पाल्युन में
हाली की मादकता दशनीय है । स्पष्टता के लिए हरियाणा प्रदेश में आचर्य
मनाये जानेवाले पर्य उत्सवों का विवरण दे देना असंगत न हागा । सक्षिप्त
विवरण इस प्रकार है —

महीना

पर्य-त्यौहार

विवरण

चैत्र

१ नौदुसा

(अन पूजन)

चैत्र कृष्ण अष्टमी नवमी को व्रत रानते

हैं । महिलाएँ गीत गाती हैं और मन्दिर में
दुगा की पूजा करती हैं । देवी की यात्रा भी
इसा महाने में हाती है ।

२ गणगौर पूजन

अथवा

गौरी पूजन

चैत्र सुदा में हरियाणा म गणगौर पूजन

होता है । चैत्र शुक्ल ६ से पूर्व मिष्टी के
गौरा और गौरी मनाये जाते हैं, उनका प्रति-

दिन पूजन होता है। सभी गण्ड (मुहल्ले) की स्त्रियाँ मिलकर गीत गाती हैं। अन्तिम दिन ब्रह्माभरण से सजाकर नृत्य गीतादि के साथ उन्हें सर-सरितादि में बहा देते हैं। इस उत्सव व द्वारा बालिकाएँ पावती ने आदर्श पर शिव जैसे प्रतापी नर की कामना करती हैं।

ज्येष्ठ	निर्जला द्वादशी	ज्येष्ठ शुक्ल एकादशी के दिन मत रखा जाता है। खरजूबा, पत्ता और सुराही आदि दान देते हैं।
श्रावण	माता पूजन आदि	महीने के प्रति सोमवार को माता पूजा जाती है।
श्रावण	तीज या हरियाली तीज	यह बालिकाओं के विनोद का समय होता है। मेंहदी रचाई जाती है, चुड़ियाँ पहनी जाती हैं और भूला भूल कर सायकाल में तीज खेलती हैं। इसके लिए पहिले से भीगे चना को डलिया में रखकर सभी स्त्रियाँ शृंगार करके मिलकर गाँव के बाहर जाती हैं। इस बाहर जाने को 'बिरवा बोना' कहते हैं। वहाँ भीगे चने को कैर की डालियों में पिरोते हैं और महिलाएँ नृत्य इत्यादि करके ध्यान दे मनाती हैं। भीगे चना को एक दूसरे के मुँह पर मारती हैं। घर आ जाती हैं। चना को तेल में तलकर खाती हैं।
	रक्षा बन्धन या श्रावणी (गुरु पूर्णिमा)	राखी बांधी जाती है। घरों में उगाये हुए धौ की राखी सिर पर और कानों पर रखी जाती है। सूर्य (द्वार पर 'राम राम लिखे जाते हैं) काटे जाते हैं। श्रावणी का गुरुआ का पूजा होता है। दक्षिणा दी जाती है। यज्ञपत्रात बदल जाते हैं।
भाद्रपद	कृष्णाष्टमी	मत रखा जाता है। पल्लो में कृष्ण को बच्चा बनाकर भुजाते हैं।

- गूगा नौमी बगल से 'ऊगा' बाँधकर लात है। दीवार पर गूग का चित्र हल्दी से बनाया जाता है। उसपर सामने स्याहा से बाला चार बनाया जाता है। ऊगा को दीवार पर साथ रख देते हैं। पूजा का बर्तन है।
- अनंत चौदस "अक्षत" हाथ के बाजू में बांधा जाता है।
 तद्विन कनागत प्रथम '५' दिन कनागत के होते हैं।
- असोज) दशहरा शुक्ल पक्ष के प्रथम नौ दिन तक दुगा पूजन होता है तथा दसवें दिन विजयादशमी मनाई जाती है। अस्त्र और पुष्पों की पूजा होती है। लालटाच अर्थात् गहड़ स्या के दशन शुभ माने जाते हैं।
- साम्ने दशहरे तक साम्ना रणी जाती है। पूजा होती है। यह देवी का रूप है। गाँवों की सभी जातियाँ इसे पूजती हैं। निधन कियेँ साम्ने मागती हैं और गीत गाती हैं।
- शरत्पूर्णिमा चार बनाई जाती है। चाद की चादना में रखकर प्रातः खाते हैं।
- कार्तिक कार्तिक स्नान पूरे महीने प्रातः काल स्नान किया जाता है। स्वामी कार्तिकेय का पूजा करते हैं। गीत, भजन और हरजस गाये जाते हैं। तुलसी का पूजा होता है।
- करवा चौथ और अष्टादश आठे देव उठान कहानी हाता है, अष्टादश के दिन स्याह का कटला बनाते हैं।
 कार्तिक शुक्ल एकादशी को देवोत्थान होता है। राति में थाली बजाते हैं। देवताओं की पूजा होती है। गाने आदि से पूजे जाते हैं।
- मार्गशार्प पौष (मगसिर पौष) माघ स्नान और गीत तिल की लकड़ियाँ का जलाकर सेंकने हैं। तिलधानी खाते हैं।

सक्रांति

मकर सक्रांति हरियाणा का बड़ा भारी पर्व माना जाता है। इसकी पृष्ठभूमि धार्मिक पावनता से श्रोत प्रोत है। प्रातःकाल उठकर स्नान करते हैं। ब्राह्मणों के यहाँ सीदा देते हैं। तिल के लड्डू बँटते हैं। भित्तिारियों को पूड़े और गुलगुले खिलाते हैं। गौश्रों के लिए चारा डालते हैं। तिल की लकड़ियों से तापते हैं।

बसंत पंचमी

बसंत रखा जाता है। बसती कपड़े रगते हैं।

फाल्गुन

होली

होली का विशेष जोर उत्तर पक्ष में होता है। माघ सुदी पूर्णिमा को पंडित वैर का डडडा गाँव के बाहर कालर में गाड़ता है। एक महीने तक गाँव वाले उस डडे के चारों ओर लकड़ियाँ डालते रहते हैं। उत्तर पक्ष में होली गाड़ जाती है। इसी दिन रात्रि को टप बजाते हैं और मिलकर धमाल गाते हैं।

होली वाले दिन सायंकाल खियाँ श्रृंगार करके, साथ में जौ की बाल, कच्ची कूकड़ी, पानी का लोटा, चावल, हल्दी और गोबर की बनी ढाल तलवार आदि ले जाती हैं। होली के स्थान पर सभी बैठकर कच्ची कूकड़ी का तागा पूरती हैं और हल्दी चावल से पूजन करती हैं।

लडकियों दो दलों में बँटकर आमने-सामने खड़ी होती हैं। बीच में एक रेखा गींच ला जाती है। एक बार एक ओर की लडकियाँ कंधा पकड़कर गाती हुई रेखा तक आता हैं और फिर गाती-गाती वापिस लौट जाती हैं। दूसरे पक्ष की लडकियाँ भी इसी प्रकार करती हैं। रात्रि में शुभ लग्न पर होली बजाइ जाती है। अगले दिन 'धूल-डी' को

कियाँ ज्ञान में आग लाती हैं। हालाँकि ज्ञानों
मनय पुरुष ज्ञा का बाल भूतते हैं, परिक्रमा
कते हैं। गॉर्गोड का जय वाजते हैं।

यह प्रचलित तथा मन्त्रबद्ध स्वीकारों का साधारण विवरण मात्र है। अन्य
अन्य कम महत्व व स्वीकार भी मिलते हैं जिनकी स्थानाय प्रवृत्ति होता है।

१. दई देवता आदि के गाँव

व्यारम्भ में चैत्रमास में देवा देवताओं की पूजा का विशेष महत्त्व होता
है। हरिद्वारा व विभिन्न शहर व गाँव इन देवा देवताओं व स्थान हैं।
इन स्थानों पर चैत्रमास में मेल भरते हैं। याँ ताँ ये मेल त्रिपि-विशय पर
बद धर लगते हैं पर चैत्र का ज्ञा महत्ता देवी घण्टी का होता है, पर
किष्ठा दूसर महीने में नहीं होता। इन देवा देवताओं व दा रूप स्पष्ट दग्ने
में आते हैं—एक, रग सम्बन्ध देवा देवता तथा अन्य—शक्ति संपन्नता के
देवा-देवता।

रग सम्बन्ध देवता—ऐसे देवी देवता बिनका सम्बन्ध किसी रोग के
साथ होता है इन्हें शाकला, माता अथवा गण्वाली देवी, कटीमाता और
मन्थारा के नाम से पुकारते हैं। इनके पूजने के दिन चैत्र में सामवार और
कहीं-कहीं मंगलवार हैं। कहीं बुद्ध मी घण्टी के दिन होता है। जिनका
गुडगाव में ग्राम कुतवपुर में 'बुद्धामाता' का मेला प्रति बुद्धवार को भरता
है, जबकि गुडगाव का ललिता माता प्रति सोमवार का पूजा जाती हैं। चैत्र
के महाने में माता घोरने का विशेष माहात्म्य है। इस मास में इन स्थानों
पर विशेष मेल भरते हैं। राहतक जिले में बेंगल कम्प में बरा वाली माता,
विशका नाम भामेदेवता है, का बरा मास मेला चैत्रमास में लगता है।

इन विशेष माताओं व अतिरिक्त यह मंदिर सभने शुभ माना जाता है
जो चौराह पर बना है। ऐसे मन्दिरवाली माता चोगानवा अथवा चौरान्वा
माता कहलाती हैं।

शाकला एक सन्नामक रोग है और प्रायः बालकों का होता है। सारधाना
चरतन पर १५ दिन में स्वतः शांत हो जाता है। औषधोपचार न होने
से यह रोग देवता रूप माना जाता है। आरम्भ से लेकर अंत तक इसका
शांतन उपचार होता है, घर के अन्दर और बाहर पानी छिड़का जाता है।
भीनी बांधी राखी लाई जाता है। इसी शांतोपचार व कारण से माता का
नाम शाकला माता प्रचलित हुआ है। डा० ताणपुर वाला का मत है कि

मनुष्य की प्रवृत्ति होती है कि वह नीच तथा भयकर वस्तु को किसी सुन्दर नाम से पुकारने का प्रयत्न करता है। जैसे रसाई बनाने वाले ब्राह्मणों को महाराजा, (बहुत बड़ा राजा) कहकर पुकारते हैं। इसी प्रकार इस भयकर बीमारी को शीतला कहने लगे हों तो कुछ आश्चर्य नहीं। शीतला देवा का माता देवी भी कहते हैं।

शीतला देवी का वाहन गधा है और कुम्हार (जाति विशेष) देवी का भक्त और प्रिय पात्र समझा जाता है। माली मालिन भी देवी के भक्त और भेषिकाएँ बतलाई गई हैं। नीम के वृक्ष के नीचे माता का निवास माना जाता है। अतः भक्त नीम की टहनी से रोगी को भ्रातृता है जिससे शीतला माता प्रसन्न होती है। इस राग में परिवार वालों का भी कई प्रकार के नियमों का पालन करना पड़ता है। यथा—कटाई न चदाना और पूरी परावठा आदि न बनाना। भ्रातृ देना भी निषिद्ध माना जाता है। अधिक न बोलना हितकर हाता है।

हरियाना में धूलेंडी से अगले दिन बासोड़ा बनाया जाता है। बासोड़ा में पहिले दिन का ठंडा गाना खाया जाता है। माता पूजी जाती है। यह गीत गाया जाता है जिसमें वसन्ती माता की स्तुति गाई गई है —

माता किन तेरा याग लगाइया, किन तेरा साजा^१ न पेड़।

माली के नै याग लगाइया, मालण साजा मैं पेड़।

सोये सोये हे मजेन्दरा राणी नाद में।

माता बनतेरी डाल मुसाइ अरकन तेरा तोड़ा सै फूल,

माली का नै डाल मुसाइ, मेरी मालन तोषा फूल।

सोये सोये हे मजेन्दरा राणी नाद में।

माता ! बालक छैल गाल में रोले चढ़गा ताप।

माता ! लकड़ती माता न्यू लकड़ जनो याजरीय^२ की हुनियार^३,

सोयो सोयो हे वसन्ती राणी नाद में।

माता ! भरदी माता न्य भरै जयो पील्हा^४ की हुनियार,

सोयो सोयो हे गुमानण राणा नाद में।

माता ! दलदी माता न्यू डल राणो पाल^५ ज्यू भदजाए,

सोयो सोयो हे वसन्ती राणी नाद में।

माता से प्रार्थना की गई है कि यह बालक को मुहाता मुदाता कष्ट दे और भरती हुई ऐसे भरे जैसे पील (पीलु) के दाने में शने शने रस भरता

१ साचना। २ याजरे की। ३ सहश। ४ पील, पीलु वृक्ष का फल। ५ घेर क सूये पत्ते।

मनुष्य की प्रवृत्ति होती है कि वह नीच तथा भयकर वस्तु को किसी सुन्दर नाम से पुकारने का प्रयत्न करता है। जैसे रसोइ बनाने वाले ब्राह्मणों को महाराजा, (बहुत बड़ा राजा) कहकर पुकारते हैं। इसी प्रकार इस भयकर बीमारी का शीतला कहने लगे हों तो कुछ आश्चर्य नहीं। शीतला देवी का माता देवी भी कहते हैं।

शीतला देवी का वाहन गधा है और कुम्हार (जाति विशेष) देवी का भक्त और प्रिय पात्र समझा जाता है। माली मालिन भी देवी के भक्त और सेविकाएँ बतलाइ गई हैं। नीम के वृक्ष के नीचे माता का निवास माना जाता है। अतः भक्त नीम की टहनी से रोगी का भ्लाङ्गता है जिससे शीतला माता प्रसन्न होती है। इस राग में परिवार वालों को भी कइ प्रकार के नियमा का पालन करना पड़ता है। यथा—कटाई न चढाना और पूरी परावठा आदि न बनाना। भ्लाङ्ग देना भी निषिद्ध माना जाता है। अधिक न बोलना हितकर होता है।

हरियाना में धूलेंडी से अगले दिन बासोड़ा बनाया जाता है। रासोडा में पहिले दिन का ठंडा खाना खाया जाता है। माता पूजी जाती है। यह गीत गाया जाता है जिसमें वसन्ती माता की स्तुति गाइ गई है —

माता किन तेरा याग लगाइया, किन तेरा साँचा^१ से पेइ ।

माली के नै याग लगाइया, मालण सीजा से पेइ ।

सोवे सोवे हे मजे^२दरा राणी नाँद म ।

माता कनतेरो डाल भुझाइ अरकन तेरा तोड़ा से पूल,

माली का नै डाल भुझाइ, मेरी मालन तोड़ा पूल ।

सावे सोवे हे मजे^२दरा राणी नाँद में ।

माता ! बालक छैल गाल म रोलें चढ़गा ताप ।

माता ! लकड़ती माता न्यू लकड़ जनो बाजरीय^३ की हुनियार^३,

सोवो सोवो हे वसन्ती राणी नाँद में ।

माता ! भरदी माता न्यू भरे जयो पारहा^४ की हुनियार,

सोवो सोवो हे गुमानण राणी नाँद में ।

माता ! ढलदी माता न्यू तल जयो पालें^५ ज्यू भङ्गनाण,

सोवो सोवो हे वसन्ती राणी नाँद में ।

माता से प्रार्थना की गई है कि वह बालक को मुशता मुशता कष्ट दे और भरती हुई ऐसे भरे जैसे पील (पीलु) के दाने में शनै शनै रस भरता

१ साँचना । २ बाजरे की । ३ ररहश । ४ पील, पीलु वृक्ष का फल । ५ घेर के गूरे पत्ते ।

देवी के पर्वत चढती चौलण पाट्या ए मा ।
 के गज चौलण पाटया, के गज रह्या ए मा ।
 दस गज चौलण पाटयो, नौ गज रहिया ए मा ।
 काहे की तो सुइ री मंगाऊ, काहे को तागो ए मा ।
 सार की तो सुइ री मगाऊ, रैसम को तागो ए मा ।
 सीमै दर्जा को रो वे वे वहीत बिनाशी^१ ए मा ।
 पहरै ग्हारी आदमवानी सदा मनमानी ।
 धौला गढराखी भगता की ध्याइ ए मा ।
 देवी के नाक म बसर सोहे, मेरा मन लग्या ए मा ।
 ह्यावे सोनी का री वेट्टा वहीत बिनाशी ए मा ।
 पहरै ग्हारा आदमवानी सदा मनमानी,
 धौलागढ राखी भगता की ध्याइ ए मा ।

रतजमे वाले दिन जो गीत गाये जाते हैं वे लम्बे हाते हैं । उनकी रूप-
 रेखा कुछ विस्तार लिये हाती है । इन गीतों में वरुण की विशदता हाती है ।
 देवी के प्रति बलिदान देवी की महिमा मन्दिर की शाभा और ल्हौकड़िया
 (लागुर वीर) के पराक्रम का वर्णन रहता है ।

देवी के घामों में नगरकोट का निरोप महत्त्व है, वहाँ पर 'ज्वालाजी' की
 प्रधानरूप से मानता होती है । ज्वाला जी ही 'मन्त्रमया देवता' रूप से अत्र
 सभी घामों में दर्शन देती हैं और भगतों की साध पूरी करती हैं । हरियाना
 में बेरी^२ वाली भीमेश्वरी जगदम्बा ज्वाला जी का ही रूप मानी जाती हैं ।
 एक गीत में भक्त प्रार्थना करता है

मुझ सेवक की लाज राख जगदम्बा बेरी वाली हे ।

मात सत हितकारी करी तनै सिद्ध सगरी हे ।

छत्र सुवण साजै नगरकोट तत्र भेल क दिन बेरी आन विराजे ।

एक स्थान पर स्तुति में माता जगदम्बा भीमेश्वरी के दो सेवकों का वर्णन
 आया है । ये दो सेवक लौकड़ियाँ और मैरूँ जा हैं जो बड़े बलशाली हैं ।
 ये माना के इगित पर काय करने का तैयार रहत हैं —

धरणी सुदर गल में माल मात, बेरी सुदर मिह सगरी हे ।

सुदर लौकड़िया म्बदा तेरे सुदर भीरो धलकारी हे ।

१ चतुर । २ एक प्रसिद्ध घाम, जिसमें भामेरवरी देवी का मन्दिर है ।
 यह स्थान रोहतास के समीप है ।

आगे रुक सकें। यह भी एक विनयावनत भक्त की भाँति ध्वजा नारियल लेकर सम्मुख आता है। देवी का ऐसा तेजोमय रूप भक्त को श्रद्धावनत किये है। उदाहरण —

नगरकोट में बासा राखी,
तेरी कला कुल नम ने जाखी।
कथा बर्याणै बिरमा ज्ञानी,
दुआर तेरे पीपल री खदा।
मुगला उतर्या सतलन नही,
सूती हो उठ जाग री नही।
लौकड़ लहीं खन्या है कनी।
जिब जाला नै चकर चलायी,
पीज मुगल की काट बगाइ^१।
मुगल कहै मनै बकसो माई।
निब जाला की करी चढ़ाई।
रीर राड के थाल भरापु।
धजा नारियल लेकर आये।
मुगला भेंट ले कैरी आया।
जिब लौकड़ नै कथा मुनाइ।
सूती उठ जागरी माइ।
मुगल भेंट भवन तेरे में लहै^२ री खदा।
धजा नारियल भेट चढ़ाइ।
मुगल कहै मनै बकसो माइ।
लौकड़िया तरे अगवाणी रदा।

माता की आरती में गाये गये एक छंद में माता के भक्तों के (कृपापात्रों के) नाम आये हैं जिन्होंने देवी के तेज का परिचय प्राप्त किया है और माता के नाम पर अनेक अपूर्व एवं अलौकिक कार्य किये हैं। माता का परमम दर्शनीय है —

पहल सारदा तोहें मनाऊ तेरी पोधी अथरु मुनाऊ।
इतना बकसग्या भाइ, राजा चद भगत तरे भाइ।
अधबिच गेर्या भग नीच घर नीर भराया।
अरे भगत ने बकू^३ यड़ाया,
धर रे दीनानाथ पार तेरा ना छिमी ने पाया। १।

जल सूख घीर वह बिल आया कहा कै ।

घार दिसा का बोझ धर्या गिर ऊपर ष्ठा कै ।

कह पिरजो सुनो सत जी जहयो म्द का अर्थ लगा क ।

ऐसे ही लम्बे गीता में देवी के दर्शन के लिए यात्रा का वर्णन भी रहता है । यात्रा की कठिनाई यात्री का ध्यान विशेष आकर्षित करती है ।

देवी के गीतों में ल्हौकड़िया का वर्णन आया है । यह देवा का सेवक दिवाया गया है । इसमें देवी के प्रनाम में अनाखी शक्ति का समावेश हुआ है । ब्रज में प्रचलित नगरकाट की यात्रा से सम्बंधित रतजगे के छौ गीत अथवा भट मिले हैं उसमें बाल्मह्य भाव एवं पतित्व भाव दोनों के दर्शन होते हैं । ब्रज के इन गीतों में लागुर परपुरुष के रूप में भी आया^२ है ।

अनौखी मालिना मना करै तौ डरपै का एक ।

तरे हाथ को मूदरा लागर दियी गढ़ाइ । अनौखा मालिनी

तरे सिर की चूदरो, मेना लागुर दइ रगाइ । अनौखा मालिनी

हरियाणा के गीतों में ल्हौकड़िया के साथ मेवक रूप में भैरों भी आया है । यह अलौकिक शक्ति सम्पन्न देवी के गणों में से एक है ।

हिन्दू वपारम्भ के पहिले नौ दिनों में देवी पूजन होता है परन्तु इन नौ दिनों में भी तासरे दिन का महत्व विशेष है । इसी दिन गणगौर का त्यौहार मनाया जाता है । गणगौर की पूजा सामूहिक रूप से होती है ।

गणगौर का प्रथम धार्मिक दत्त कथाओं में आया है । एक कथा के अनुसार इन दिनों पावता का त्रिनाह हुआ था । कुछ लोगों की धारणा है कि इस दिन मुक्लावा (गौणा) हुआ था । आज भी बालिकाएँ गौरी के आदर्श को सामने रखकर आदर्श पति प्राप्ति के लिए कामना करती हैं और इसीलिए गणगौर अथवा गौरा का पूजती हैं । सुप्त-सोभाग्य की आकांक्षा इस उत्सव के मूल में है । आशुतोष गौरा अपने भर्ता की प्रार्थना को व्यर्थ कदापि नहीं जाने देता, यह बालिकाओं का अटल विश्वास है ।

वैशाख-शुद्ध ४ निर्मला एकादशी आदि एक दो व्रत ता होने हैं परन्तु आनुष्ठानिक कोई कृत्य नहीं होता । एकादशी माहात्म्य वाला एक गीत उदाहरण के रूप में नीचे दिया जाता है —

बरत करो छ राधा एकादशी को,

राम भी क नाम बिना मुक्ति बिभी को ।

पुरोपासन से मुक्ति मिलती है। पाप-कार्य बधन तथा अधम योनियों के कारण है। आगे की पत्थियाँ में बड़ा दत्तता से यह समझाया गया है कि एकान्ता व्रत न करने में पाप का श्रद्धि हनी रहती है और परिश्रमत नीची योनियों में जन्म मिलता है। मित्र-मित्र योनियों का हेतु भी कथा में दिया गया है —

गोन्दे धार पन्ना में बैठे,
 चुगली धारणी वो करमी।
 पेमा पेमी करणी में बर गन्धी,
 रात गलिया में वो फिरमी।

साध बसद की चोरी करसा,
 चोर चोर शुगचा' बाहू मारमी,
 एमा-पेमा करणी में धन निरदला' भित्ता पर वा फिरमी।
 अपप खेत में काकड़ा टूमा क गेत मूल्यासमी,
 एमा एसा करणी में वो गाहू बण गेता में फिरमी।

इन गीतों के साथ भजन भी गाये जाते हैं जिनका स्तान के साथ विशेष महत्व होता है।

आपाद माता धेकरा का महाना है। देवा-देवताओं के धामों की यात्राएँ फिर आरम्भ हाना हैं। शातना माता का विशेष पूजा होता है। प्रायः महीने के प्रति सोमवार का माता का पूजा होता है।

२. भिन्न-भिन्न मामों में गाये जाने वाले गीत

आपरा मास वष के अन्य महीना में अपना विशेष स्थान रखा है। इस महाने में मनासंग तरंगित होने लगते हैं और कामनियों के मधुर कठ से फिर गान सन पूरे पड़ते हैं। इनकी अपनी एक विशेषता यह है कि इनके गाने के लिए अधिक सान-बाज की आवश्यकता नहीं होता, कठ ही मधुर स्वर-सदरी उत्पन्न कर देता है।

क आरण

आपरा की मातृकता पशु-पक्षी, नाना नाना और प्रकृति पर प्रत्यक्ष लक्षित होता है। मेंढकों का टरटर, मधुर की पीचू पाचू और वन उपवन की निराली छुटा मन का मोह लेता है। समस्त प्रकृति उल्लासमय है। आपरा के गीतों

जल सूज चीर वह बैल आया कहा के ।

घार दिसा का बोम धरया सिर ऊपर ढा के ।

कहै पिरतो सुनो मत जी जइयो सद् का अर्थ लगा के ।

ऐसे ही लम्बे गाता में देवा के दर्शन के लिए यात्रा का वर्णन भी रहता है । यात्रा की कठिनाई यात्री का ध्यान विशेष आकर्षित करती है ।

देवी के गीतों में लहौकड़िया का वर्णन आया है । यह देवा का सेवक दिखाया गया है । इसमें देवी के प्रनाप से अनापनी शक्ति का समावेश हुआ है । ब्रज में प्रचलित नगरकाट का यात्रा से सम्बन्धित रतजगे के जो गीत अथवा भेंट मिले हैं उसमें वात्मल्य भाव एवं पतित्व भाव दोनों के दर्शन होते हैं । ब्रज के इन गीतों में लागुर परपुरुष के रूप में भी आया^२ है ।

अनौखी मालिनी मना करै तो दरपे का एकू ।

तरे हाथ को मूदरा लागुर दिया गड़ाइ । अनौखी मालिनी

तरे सिर की घूदरो, मना लागुर दइ रगाइ । अनौखी मालिनी

हरियाना के गातों में लहौकड़िया के साथ सेवक रूप में भैरव भी आया है । यह अलौकिक शक्ति सम्पन्न देवी के गणों में से एक है ।

हिन्दू वपारम्भ के पहिले नौ दिनों में देवी पूजन होता है परन्तु इन नौ दिनों में भाँतामरे दिन का महत्व विशेष है । इसी दिन गणगौर का त्यौहार मनाया जाता है । गणगौर की पूजा सामूहिक रूप से होती है ।

गणगौर का प्रसंग धार्मिक दत्त कथाओं में आया है । एक कथा के अनुसार इस दिन पावती का विनाश हुआ था । कुछ लोगों की धारणा है कि इस दिन मुक्लावा (गौणा) हुआ था । आज भी बालिकाएँ गौरी के आदर्श का नामने रखकर आदर्श पति प्राप्ति के लिए कामना करती हैं और इंगीलिए गणगौर अथवा गौरा का पूजना है । सुप्त सीमाग्र की आकाशा इस उत्सव के मूल में है । आशुतापा गौरा अपने भक्तों की प्रार्थना को व्यर्थ कदापि नहीं जाने देती, यह बालिकाओं का अटल विश्वास है ।

वैशाख-ज्येष्ठ में निर्जला एकादशी आदि एक दो मन ता हाते हैं परन्तु आनुष्मनिक कोई कृत्य नहीं होता । एकादशी माहात्म्य वाला एक गीत उदाहरण के रूप में नाचे दिया जाता है —

बरस करो छ गधा एकादशी को,

राम जी के नाम धिना मुनि किसी को ।

पुण्योपाजन से मुक्ति मिलती है। पाप-कार्य बधन तथा अधम योनियों के कारण हैं। आगे की पत्तियाँ में बड़ी दक्षता से यह समझाया गया है कि एकादशी व्रत न करने से पाप की वृद्धि होती रहती है और पश्चिमवर्त नीचा योनियों में जन्म मिलता है। भिन्न भिन्न योनियों का हेतु भी कथा में दिया गया है —

गोइडे बाध पच्चा में घंटै,
 शुगली चाट्टी वो करमी।
 ऐसा णसी करखो मैं बण गच्छी,
 रात्तु गलिया म वो फिरमी।
 साध बसद की खोरी करमी,
 खोर खोर बुगचा^१ याड भसी,
 ऐसा-ऐसी करणी में धन सियकली^२ भित्तां पर या फिरसी।
 अपण खेत म काइड़ी दूसरा क खेत सू ख्यास्मी,
 ऐसा ऐसी करणी म वो गाइड बण खेतों में फिरसी।

इन गीतों के साथ भजन भी गाये जाते हैं जिनका स्नान के साथ विशेष महत्त्व होता है।

आपाद माता धारुण का महीना है। देवी देवताओं के धामों की यात्राएँ फिर आरम्भ होती हैं। शतला माता की विशेष पूजा होती है। प्रायः महाने के प्रति सोमवार का माता की पूजा होता है।

२ भिन्न भिन्न मासों में गाये जाने वाले गीत

आषण मास वष के अन्य महीनों में अपना विशेष स्थान रखता है। इस महाने में मनोवेग तरंगित होने लगते हैं और कामनियों के मधुर कठ स फिर गीत स्नात पूर पड़ते हैं। इनकी अपनी एक विशेषता यह होती है कि इनके गाने के लिए अधिक साज-बाज की आवश्यकता नहीं होती, कठ ही मधुर स्वर-लहरी उत्पन्न कर देता है।

क आषण

आषण का मादकता पशु पक्षा, नदा नद और प्रकृति पर प्रत्यक्ष लक्षित होती है। मेंढकों की टरटर, मधुर की पीकू पीकू और वा उपवन की निराला छटा मन का मोह लेती है। समस्त प्रकृति उल्लासमय है। आषण के गीता

की सृष्टि इसी पृष्ठभूमि में होती है। इस मास में मिलनेवाले गीत इतने अधिक तथा अनेक रंगी हैं कि यदि इस मास को गीता का मास कहा जाये तो अप्रगल्भ न होगा।

श्रावण में भूले का विशेष महत्त्व है। छोहरियाँ तत्ते तत्ते पूड़ों से उसका स्वागत करती हैं और वयस्काएँ रेशम डोर और चदन डाल से। सभी महिलाएँ एव बालिकाएँ भूलने के लिए लालायित रहती हैं। ये भूले विशेष दृश्य दिवाते हैं। कहीं पग बटाई जाती है तो कहीं सहेलियाँ आपस में भूलती दीगती हैं। काली घटा का उमार, धनगर्जन और विद्युत्तजन विप्रयुक्त स्त्री पुरुषों के मनोजाक्रात हृदय में हृक उत्पन्न कर देता है। प्रोपितपतिष्ठा ललनाएँ इस सुहावने मास में अपने स्वामियों की प्रतीक्षा करती हैं।

श्रावण सयोग करनेवाला मास माना जाता है। इसी मास म पति परदेश से लौटकर प्रेयसी से मिलता है। बहिनें भाइयों के यहाँ समाहत होती हैं। माताएँ अपने पुत्र पुत्रियों का देख सुख अनुभव करती हैं। इस मास के गीत सयोग और वियोग के दो भागों में आन्दालित होते हैं। दोनों पक्षा का हृदयहारी वर्णन इन भूले के गीतों में आया है, परन्तु विप्रलम्भ की जो मार्मिकता बन पड़ती है वह सयोग की नहीं। वियुक्तावस्था की कारुणिक स्थिति श्रावण की सरसता एव उमत्तकारिता से मिलकर द्विगणित हो जाती है। मयूर, मजीर और पपीहा सभी कामियों के हृदयों को सालते हैं।

इस मास में प्राप्त हुए गीतों की संख्या अधिक है, इन गीतों के रंग भी विविध हैं। उन पर विल्लूत रूप से विचार करना आवश्यक है।

श्रावण के गीतों में ऋतु शाभा का वर्णन विशेष रहता है। रेशम पाट की बरही, चदन की पटरी, वर्षा की रिमझिम, कायली, मेघों का मुक्कमुक्क बरसना और चम्पा बाग में पजाली पाटक का विशेष ध्यान आकर्षित करती हैं। इन गीतों में यह विशेषता है कि इनका आरम्भ सदैव ऋतु शाभा से होता है।

हरियाना कृषि प्रधान प्रांत है। यहाँ की बहू जेटियाँ के हृदय में सावन की पुष्पार है परन्तु अत्यधिक कृषि कार्य उनका उत्साह भंग कर देता है। बाला के प्रस्तावों पर वज्रनात का एक उदाहरण नाचे दिया जाता है —

आया री सासद सावन माम, सावन मास येद यग दे री पोला पाट की ।
आया तो बहु मेरा आवण देय, जाय यगइयो नी अपणे बाप के ।
आया री सासद सामण माम, सामण माम, पन्दी घड़ा दे री चदन रग की ।
आया तो बहु मेरी आवण दे, हे जाय घदइयो री अपणे बाप के ।

भाया री सासड़ सामण मास, सामण मास हमनै खदा^१ दे री ग्हारे बाप ॥
इस कै तो बहुमारी मेती का काम, कातरु जह्यो री अपये बाप कै ।
तुय तौ बहु मेरी करेगा नुलाव^२ कोय जै पीसै घर का पीसणा जै ।

वस्तुतः इन नैतिक कायों की अधिकता ने मानव का हार्दिक सरसना से रहित कर दिया है ।

श्रावण की मन्हारों में कोरा बर्जन ही नहीं होता । यहाँ हृदयनन मा खुलकर आया है । साजन का महीना एक ही है परन्तु उगमें माता का दुलार और सायू के उपालम्भपूर्ण व्यंग्यनयन तापिसा पर दा प्रभाव झोंकते हैं । एक गीत में पीहर और सासरे का तुलना हरियानी बालिका अपनी मुग न कर रहा है । इस गीत की उपमाएँ बड़ी व्यापारिक हैं —

हरा ये जरी की हे मा ! मेरी खुदही जी,
हे जी कोइ दे मेजी मेरी माय इद राना नै भड़ी ७ लगा दइ जी ।
बला लो पला^३ ह मा मेरी घुघर^४ जी,
७ जी कोइ बीच मायदक ताद इद राना नै भड़ी ७ लगा दइ जी ।
धेनु तो बाँचे हे मा मेरा खुदही जा,
ए जी कोइ प्यारे मायदक के बोल, इद राना नै भड़ी लगा दइ जी ।
पीहर में बेटी हे मा मेरी न्यू रह जी,
ए जी कोइ ज्यू बिलखी बीच घी, इद राना नै भड़ी लगा दइ जी ।

चिन का दूसरा पक्ष

सामद नै मेजी हे मा मेरी खुदही जी,
ए जी कोइ दे मेनी मेरी सास इद राना नै भड़ी लगा दइ जी ।
बला लो पला हे मा मेरी छेकले^५ जी,
७ जी कोइ बीच सामद के बोल^६, इद राना नै भड़ी ७ लगा दइ जी ।
थोडू तो दीर्ये हे मा मेरी छेकले जी,
ए जी कोइ रद के मासद के बोल, इद राना नै भड़ी एक लगा दइ जी ।
सासरे में बेटी हे मा मेरी न्यू रके जी,
ए जी कोइ ज्यू रै कड़ाई बिच तल, इद राना नै भड़ा ७ लगा दइ जी ।

मा और सास की उड़ी मामिक तथा रहस्यपूर्ण तुलना इन पंक्तियों में का गई है ।

श्रावण शुक्ला तृतीया को बालिकाएँ 'तीज' श्रयना 'हरियानी तीज'

नामक एक विशेष उत्सव मनाती हैं। इस शुभ पर्व पर बहुधा कथाएँ अपनी माता के यहाँ जाती हैं। जो नहीं जा पाता उन्हें "सिंधारा" भेजा जाता है। एक ऐसे ही गाँव में भाई बहन के यहाँ सिंधारे की कोथली लेकर गया है। बहन उड़ी दुर्लभ है। भाई कारण पूछता है —

माट्टी तो कर देरी भोस्सी कोथली, सामण री आया गजता ।

जाऊगा री मेरी बे-बे के देस, सामण आया री गूजता ।

किसीया क हु र म बे-बे दूबली^१,

किसीयां न बोले स बोल, सामण आया गूजता ।

सामण के हु र में दूबली,

नणदी ने बोले सै बोल ।

भाई तत्काल ही उपाय बतलाता है —

नणदी ने भेजागा सासरे,

सासु ने चक्र^२ लगा राम ।

हरियाने की छारी का सास और नणद का दु र है। इसी कारण वह दुबली है, परन्तु उर प्रदेश की बाला के विरुद्ध तो समस्त परिवार ही है। उसे अपने प्रियतम से भा आशा रश्मि कभी कभी मिलती है। कौरवी बाला, अतः अपने भाई के समक्ष सत्र का खुलकर परिचय देती है —

सामू तो धीरा चूल की आग,

ननद भादों की बीगली ।

मारा तो धीरा काला सा नाग,

दर साप सपोलिया ।

जग तोरे धीरा यादू का टक,

उपले पाथन उग नाण जी ।

रागा तो रे धीरा मेंहदा का पेड़,

कदी रच रे कदी ना रच ॥

वास्तव में, अपना प्राणवल्गुन भ्रष्ट औदासीन्य पर अवश्य ही बाला का स्रोम हागा। नणदी के पड़ से प्रियतम की तुलना करने एक गभार मर्मभेदी पीड़ा की आर संकेत किया गया है।

एक नायिका सगिया के साथ मूल रहा है। उसका पति परदेश में है। वह मीले भेय से है। इसी बीच एक बगोही आता है और उस मृगीनी से

प्रस्ताव करता है कि वह उसने गाय चल—“नेर पुण्या लो नया म्हारी मृगानैजी चलो हमारी साथ ।” मगर लान के बोझ में दयी नायिका उसने प्रस्ताव का ठुकरा देती है —

लाग्नेगा पीहर मामरा लाडलडी नन्माल ।
लाग्नेगा धारल कमरी बटऊ । गेला राता देनी माय ।

इसा प्रकार वह परिवार ४ मभा लोगों के मान का रत्ना कती है । यह एक लम्बा गीत है । पर अत में जब श्राव होता है कि यह नायक था तो नायिका पर बलाघात होना है और वह पड़ताती रह जाती है —

भानू तो दीडू छ्दान मंग हल्ला दिया ना जाय ।
मुट्टी तो धानू सोन पै मुट्टी तो धारै रेत ॥

एक महार में नायिका ४ मान का चित्र बड़ी कुशलता से आया है । नायिका श्रावन के मनभावन समय में बाग में बगला छिपा देना चाहती है और नरगा ऐसा बनवाना चाहता है बिगम चन्द्र मूय का पचात प्रकाश पड़े । जब उसका इच्छा पूरी नहीं हाता तो वह रथ जुड़ा कर अपने पिता के यहाँ चला जाता है । जेट, दवर, सनुय मत्र उमे मनाने जाते हैं । वह उहे प्रलामन देता है, मगर अपने आग्रह पर अड़ी रहती है । अत में जब धनी (पति) जाता है और वचन पूरा करने का कइता है तो वह लौटती है । गीत कुछ बड़ा है —

बागों बगला दिवादे मेरे मारु नी रया दे रान ^१ चाद मूरन मोही धारया ^१ जी ।
बागा बगला ना दिवै गोरी म्हारा रै नही रातै रान, चाद मूरन मोही धारया जी ।
रया सुय अगय जुडाऊ मेरे मारु जी चली जाऊँ रात्र आपणे धाप कै नी ।
सुयर मनपय आया मेरे मारु नी चलो क्यू ना रान, चाल बहु धर आपणे नी ।
अपणे सुयरे न चादर दिवा ^२ मर मारु जी,
नहीं चानू रान नेरे बंटे सेती आलया ^२ जी ।
जेट मनावण आया मेरे मारु ना चालो क्यू ना रान, चाल बहु धर आपणे जी ।
अपणे बग नै घुइला दिवायू मरे मारु जी,
नहा चालू रान तरे धीरण सेता आलया जी ।
देवर मनावण आया मेरे मारु नी चलो क्यू ना रान,
चाल भागो धर आपणे जी ।
अपणे त्वर न बाहण विवाह दु मेरे मारु नी,
नहीं चालू रान धारे धारा सेती थोलया जी ।

सभी व्यक्तियों को उनसे उपयुक्त वस्तुओं का प्रलोभन देकर नायिका ने अपना पक्ष प्रबल कर लिया है। अतः मैं, पति देव स्वयं जाते हैं और मनाकर लाते हैं —

कथ मनावय आया मेरी साथियों, चलो क्यूं ना राज,
चाल गोरी घर आपणे जी ।

वागां बगला छिवा दे मेरे मारु जी रखा दो न राज,
चाद सुरन सौंही बारणा जी ।

वागा बगला छिवा दे गोरी मेरी री रखा दे राज,
चाद सुरज सौंही बारणा जी ।

यह लोक में तिरिया हठ का एक सफल उदाहरण है ।

एक गीत में पौराणिक मान का चित्र प्राया है। राधा ने मान किया है। उसे शिकवा है कि जिन सरियों को कृष्ण ने फूल दिये हैं उन्हा के पास जायें। कृष्ण वाग से पुष्प चुनकर लाये हैं। उन्होंने पुष्प गटे हैं, मगर राधा की उसका भाग नहीं मिला है। फूल पहिले ही समाप्त हो गये हैं। राधा को कृष्ण ने इस व्यवहार पर क्षाम हुआ है। वह उत्तर देती है —

ए जी जित घाटे झोलीभर फूल,
उड़े पड़ सो रहो भगवान् ।

कृष्ण प्रतिकूल परिस्थिति के प्रति राधा का ध्यान आकर्षित करते हैं —

ए जी रिमक्तिम घरसे सैं मेघ,
बाहर भीजें पकले भगवान् ।

इसी प्रकार कृष्ण अघेरी रात में डर की बात कहते हैं, पर राधा ने बड़े कौशलपूर्ण ढंग से उत्तर दिया है —

ए जी थारे धारै माथिया का साथ,
कैसे दरपो पकले जी भगवान् ।

इतना ही नहीं राधा को कृष्ण द्वारा घर की दीवारें छूना भी सह्य नहीं है उस भय है कि भिती पर की चित्रकारी भ्रष्ट हो जायेगी और चातरा पर चटने से यह उपद्रव आयेगा —

ए जी म्हरै चौंरै पग प ना देय,
लीप्या पोस्या ऊपड़ भगवान् ।

राधे के ये शरीर विचार कृष्ण का राज पाते हैं ।

ए जी इतनी सी मुय केने दिशन महिला ऊतरे भगवान् ।

राधा को पड़तावा हुआ । वह भी नृत्य कृष्ण की खोज में निकली । बहुत छानबीन के बाद कृष्ण छाते हुए मिले । दोनों पत्नी से अपना अपना कठिनाई एवं शिकायत पेश की गई । कृष्ण ने तर्क दिया —

ए जी एक चया होय दाल,
दले पाछे ना मिले भगवान् ।
ए नी एक दही दूजे दूध,
पटे पीछे ना मिने भगवान् ।
ए नी एक पुरुष दूनी नार,
छटे पीछे ना मिले भगवान् ।

राधा ने शर्पील की है —

ए जी एक चया दूनी दाल,
पिसे पीछे रल मिल भगवान् ।
ए जी एक दहा दूने दूध,
विन्नए पीछे रल मिले भगवान् ।
ए जी एक पुरुष दूनी नार,
मनाए पाछे मन ए भगवान् ।

अत में कातरावस्या राधा के मुँह में आर बाल उठी है —

एजी रोवै राधे जार बेजार,
आसू रोवै मोर ज्यु भगवान् ।
ए जी राधे रुसै धारदार,
दिमन रुसै ना सरे भगवान् ।

ठाक है, घर में भगड़े हो ही जाते हैं । दा भाड़े हाते हैं तो लटकते ही हैं । पर पनि-पली का सम्बन्ध बड़ा कोमल तथा निमल है, जो “किसन दसे ना सरे” उक्ति से और भी मार्मिक हो गया है ।

एक गीत में बड़ा मर्मस्पर्शी कल्पना है । पनिदेव ने मुन मुविधा की सामग्री एकत्र की है । छाया के लिए वृक्ष लगाया और दूध के लिए बछिया पाली है । बड़ी साधना व उपरान में चायें समर्थ हुए हैं, पर भाग्य का खेल कि उनके मिलसने के समय प्राणदेव परदेश चले हैं । कैसी करुणा है ?

लाय चले घे भवर हो पीपळी, हानी कोण हो गइ गहरी छाया ।

बैठन की रत चाले नाकरी ।

१ बिलोये जाकर ।

छोड़ घले वे भवर हो बाइड़ी, हाजी कोए हो गइ सागद गाय ।

दुहन की रत चाले नाकरी ।

पाच बरस की भवर हो व्याही, हाजी कोए हो गई सेर जुधान,

घालन^१ की रत चाले नाकरी ।

नायिका क्वी इस दयनीय दशा को सुनकर नायक काल-यापन की यक्ति पेश करता है —

घरखा लादु हे गोरी रग रगीला, हाजी कोए पीडी लाल गुलान ।

साधनों में पैठी गोरी कातियो ।

परन्तु नायिका को इससे सताप कहाँ ? वह कह गइ है —

घरखा तोदू भवर हो चौपग, हाजी कोए पीग क कट अगरह टूक

सग तै थारी चानगी जी ।

माखी बण बदन क चीप^२ चन जे, हाजी सगधारा चाल,

घर पर नहीं रहगी जी ।

नायिका अपना सर्वस्व एव अस्तित्व नायक के सुख सौविध्य के लिए अर्पण करने को उद्यत है —

लोटा भारी^३ भवर हो मैं थणू जे, हाजा काए बणज्या रेशम डोर ।

तिस लगे जब पिया हो पालियो जे ।

खाइ जेलथी भवर हो मैं थणू जे, हाजी कोए बणज्या कृट रुहाल ।

भूर लगे जब पिया हो खा लियो जे ।

यादल घीचली भवर हो मैं थणू जे, हाजी कोए बणज्या असल घटा ।

भूप पड़े जब पिया हो छा करूँ जे ।

एक गीत में नायिका से अनुचित प्रस्ताव किया गया है परन्तु उसने अपनी विलक्षण तदुद्धि से प्रस्तावक को निरंतर कर दिया है —

काला साँप का नादा घइया द,

अम्बर क सी चूदद रगवा दे

माखममार कुठा निमरादे,

याम लुगाइ का दूध मगयाद,

गुधारी कया का घोरा मगयाद,

गिद चालगी साथ हो मनरा ।

अनुचित प्रस्ताव की रत्न करते हुए प्रेमिका ने निम्न उद्धि कीयल मे

१ बिदा कराने की, मगाने की । २ विपन्ना । ३ मुराही ।

उसे हराया है, उसका पागल भी हमारे शिष्ट साहित्य में तो कम से कम नहीं है । मनसा की पगजय का निराण नीचे का प्रतिपाद म हुआ है —

ये दो जोड़ा हाथ हरे नींगरी मत्त चालो म्हारे गाय हरे नीटडी ।
ह्य क्यो जोड़े हाथ हो मनसा, ले चाकलो ना साथ हो मनसा ॥

भावण ये गाता में हृदय के गीत भी आते हैं । लहरिया पति के पाम गुलाबे का मदेश भेजा जाता है । परन्तु वह नाना प्रकार के बगने बनाकर गा टाल देता है । अतः में महामिष्ठा के भरण का वृत्तान्त सुनकर उते चिता हाता है । वह घर लौगता है तो रक्ष्य गुलता है —

मुक जाय बादला धरम क्यू ना जाय । टेम ।
उतक्यू ना धरसी बादनी नित म्हारा योरा रो टेम ।
उतमत धरमे प बादला नित म्हारा रिया परन्ग ।
तम्बू ती भीने रलकता तम्बू की रेमम डोर । मुक जाय बादली

विप्रयुक्ता ने निरानी युक्तिया प्रस्तुत की हैं, परन्तु नायक पर उनका कोई प्रभाव नहीं हाता ।

घार टका दें गाठ का जे कोण लमकर जाय ।
वे लहरिया से न्यू कडो धारी घर बाइण की ब्याह ।
काला पीला जी कापड़ा कोण कया घोय परथाय^१ ।
घार टका दे गाठ का जे कोण लमकर जाय । मुक जाय बादला
वे लहरिया ने न्यू कडो धारी माय मन्या घर धाय ।
माय न दायो धानूरेत में ऊपर सुल बरूल^२ । मुक जाय
घार टका दें गाठ का जे कोण लमकर जाय ।
वे लहरिया ने न्यू कडो धारे कुपर हुयो घर धाय । मुक जाय
कोण चायत धी घयो बेगी कचर खिनाय ।
घार टका दें गाठ का जे कोण लमकर जाय ।
वे लहरिया ने न्यू कडो धारी जोय मर्या घर धाय । मुक
जोय न दाबो चम्पा बाग म ऊपर साज हुसाल । मुक
नायक का अत्र गृहस्थी की चिता है —

जोय मरी घर खोमरो म्हारा कुणवा वाराबाट ।
कागद पटक्या जे चाँतरे वा उठ्यो धोती म्हाइ । मुक जाय
पुरयो राजा जी धारी चाकरी एण्यो धारा देम । मुक

१ विवाह कर देना । २ लोखे लोखे काटे ।

क दु ख छोड़ी सै चाकरी, कं दु ख छोड़ा सै देस ।

माय मरां छोड़ी चाकरी जोय मर्या छोड़ा देस । भुक जाय

चिताग्रस्त नायक घर लौटता है । पण्डिहारी गाँव की सीमा में मिल जाती है । कुशल शत करता है —

कुआ की पण्डिहारणी म्दारा घर की कुशल बताय ।

बालक भूल जी पालण थारी जोय रसोइया जी बीच ।

थारी मायड काँते जी कातणा, यहण कसीदा जी हाय । भुक

रहस्य खुल जाता है —

बै छलियाईं ने छल कर्या छल कर लिया मै मुलाय ।

छलकरा ना तो के करां थमछाया परदेस ।

भुक जाय बादली बरस क्यू ना जाय ॥

यह गीत एक दु ख-सुखात नाटक बन गया है । वियोग दु ख सयोग सुख में बदल गया है और सयोग सुख म आजीविका त्याग के दु ख अश मिले हैं ।

‘पण्डिहारी’ के गीतों में रोमास के चित्र आये हैं । हरियाने में सनेत स्थान कूपवापी जलस्थल ही हैं । इहीं स्थानों पर नायिका को नायक मिला है, परतु दुभाग्य से जन वह पहचानने में विलम्ब कर गई है तो उसे पछतावा होता है —

जैमं ऐसी नाणली ए सासद री,

ककडू थीं घोड़े की लगाम ।

नायिका ने नायक को खोजा है पर अरफल रही है —

पाया में छाले पद गये ए सासद री नैणा में रम आई नींद ।

पायां में मधा^१ लायले ए यहु हीरेलाल नैणा में सुरमा री सार ।

पत्नी का अगार पति ने आश्रय से है । अत वह निराश होकर उत्तर देती है —

किम पर मधा लायले ए मामद री किम पर सुरमा री सार ।

किम पर मंधा लायले ए यहु हीरे लाल मन पर सुरमा री सार ।

सास ने बधू का माल्यना दी है कि चित्त स्थिर कर लेने से सब ठीक हो जाता है । पर उस बाला का इससे सतोष कहाँ ? वह तो प्रिय ने नियोग में पागल हो गई है । उसे तो राट हा आश्रय प्रदान करता है —

घाल म्गोला दै पड़ी ए मामद री किता ए न पाये थारे लाल ।

यों 'दोपड़ा' में छितनी विनयता है ! कैसी बरपा ?

एक अन्य गीत में चाना बाग में पजानी पड़ा है नायिका माता के निरोध करने पर नी सवियों के साथ मूना भूलने जाती है। एक परदेश से चार श्रावें हा जाती हैं। विवाह का प्रसंग होता है और सरल अंगुष प्रामगना टगा जाता है। विवाह मठप में रहस्यदृष्टाटन से बज्रगत हाता है। नायक निधुर उत्तर देता है —

घोहरी^१ ! ना मेरा मर गया मर्यार बाप,
 ग्हारे मन धाई ग्हारी घर की नार,
 यम से कहिये दोषद^२ आगञ्जी^३ जी ।

पुत्री फिर अपनी माता की शरय जाती है —

भम्मा री ! मरू के जीवू मेरी मा !
 राजा के कहिए राणी दूसरी ।

माता शुभकानाएँ करती है —

वेगी रो तेरी मर ए बल्ला^३, राजा की मरिया राणी दूसरी ।

एक अन्य गीत में मनिहार से विलक्षण चूड़ियों की भाग की गद है जो पतिदेव के अंग प्रत्यग एव वज्राभरण से न मिलती हों। हरी श्वेत आदि साधारण रग वाला चूड़ियाँ के अतिरिक्त सरयता रग की चूड़ी नायिका पहरेगा। इन गीतों का 'मनरा' अथवा 'मनिहार' नाम मे पुकारा जाता है। इनमें पति सत्रघ की अनूठी व्याप या रहती है —

हरी ए ऋजीरी मनरा ना पहरू, मनरा हरा ए ग्हारा राजा जी का बाग
 सुलतानी जी का बाग ।

मनरा तो मेरी जान खुबला तो हाथी दात का ।

काली ए ऋजीरी मनरा ना पहरू, मनरा काला ए ग्हारा राजा जी का मिर,
 सुलतानी जी का मिर ।

मनरा तो मेरा जान खुबला तो हाथी दात का ।

धौला ए ऋजारी मनरा ना पहरू, धौला रे मनरा ! ग्हारा राजा जी का दात,
 सुलतानी जी का दात ।

मनरा तो मेरी जान खुबला तो हाथी दात का ।

पीली नंजीरी ए मनरा ना पहरू, पीला रे मनरा ग्हारा राजा जी का कपड़ा,
 सुलतानी जी का कपड़ा ।

मनरा तो मेरी जान चुबला जो हाथी दात का ।

मरवे^१ कनीरी ए मनरा म पहर, यो मेरा राजा जी का सब सुहाग ।

इस गीत में नायक को नायिक के चरित्र पर सदेह हो गया है। वह तीर से उसका घघ करके घर लोटता है, परन्तु उमका गृहस्था चौपट हो गई। उसके ऊपर आपत्तियाँ का जो पहाड़ टूटा है उसका अनुमान कर लेना समीचीन होगा —

मारकू घर न बाह्वड़ो, अनी एनी धँठो है बहुत उदाम ।

× × ×

घर घर दीवला चसरह्या, अनी एनी रडवा कै घोर अघेर ।

घर घर रसोड़ जो तपरड़, अजी एजी रखा कौ ढरणी में चून ।

घर घर पिलग विद्धरह्या, रडवा कै घोर अघेर ।

घर घर बालक खेल रहे, अनी एजी रडवा की कूड़ी में खाट ।

एक गीत में हरियाली तीज के अवसर पर लम्बे-लम्बे भोड़ा लेता हुई "मृगानैणी" का प्राणात हो गया है। परवा पड़वा वायु के सुन्द भोके नायिका को दीर्घकाल तक आनन्दित न कर सके हैं। पति की कातरता का एक चित्र इन पत्तियों में हुआ है —

एक घर मुन्व सँ योल मृगानैणी नार !

भावा रा मन का चीत्ता^२ हो गया ।

पति की पड़तावा है —

"धम न तो रोयेगा कौन मृगानैणी नार ! पीहर मरी ना सासरे"

किसी प्रिय की मृत्यु पर रोना स्वाभाविक है। इससे शोकाकुल हृदय हल्का हो जाता है पर यहाँ केशी करुणा है "पीहर मरी ना सासरे"। किन्तु रोप्य से उत्तर मिलता है —

इना तो रोई ग्हारी भाय निनकी छाडन घेटी भर गइ ।

इसी प्रकार वह अपने भाद के रागे की बात कहता है जिसका घट मुनी हो गई। अपने स्वसुललय में भी उने रानेनाले हैं ।

इमनै ना रोई ग्हारा सास, निनक मदर मुने हो गये ।

इमनै तो रोई ग्हारे राजा जी थाप, निनकी सेना सनी हो गइ ।

इसमें आगे गात नहीं बना है। शायद उमका कठ मनोम दिया गया है। करुणा की धारा इन मरु प्रदेश में शुष्क हो गई है।

लोक-गीता में कुलीनाओं का नीच लोगों के साथ प्रेम का बणन भी मिलता है। एक गात में नायिका का मन 'मनरा' पर आसक्त है। नाचे दिये हुए गीत में प्रेम का पात्र एक 'नट' है। हरिषानी नायिका नटयुवक पर मोहित हो गई है। वह उसके साथ चली जाती है। जब उसे पत्थर वास्तविकता का पता चलता है तो वह विलाप करती है, पड़ताती है। उस पूर्वसुख स्मरण आ-आकर पीड़ित करते हैं पर 'श्रव क्या हाना हात है जब चिद्विया जुग गइ सेत।' उसने स्वयं ही अपना मार्ग निधारित किया है। गीत का अन्त में पहुँचता है तो एक सज्जा एव विपाद की रेखा छोड़ जाता है —

नट को खोले बालुदे रवे हाथ कबूला काना गोखरु जी राज ।

देखो बाइ जी नटका को रुप धारा बीरा से दो तिज आगलो जी राज,
जाओ भाभी नटका की साथ ग्दारा बीराने परणाइया दूसरो जी राज,
परणाओ बाइ जी दो ए चार हमसरीखी कल में ना मिले जी राज,
ग्दारा बीरा चतुर सुजान तमसरीखी घदल काज की जी राज,
घद लोबाइ जी दो ए चार मुखद ना बोले काया काठ जी राज ।
दूसरा चित्र का दूषण पद —

जय नटका ने लीनी अट घड़ाय, जाय उतारी रिगन उनाइ में जी,
जय नटका ने लानी सर की तान, मनै छाया सहर आपणा जी याद ।
जय नटका छाया बासा टूक, मनै छाया भोजन आपणा जी याद ।
जय नटका लाया टूटी खाट, मनै छाया पिलग निवार का जी याद ।
जय नटका लाया फाटो गूदही, मनै छाया मौद गोंदरा जी याद ।
जय नटका लीनी बास घड़ा, मनै छाया राता आपणा जी याद ।

'मनरा' नामक गीत में नायिका की नीच पुरुषगामिता की प्रवृत्ति नायक को असह्य हो उठी है। वह नायिका को 'असिघाट' उतार दिया गया है, परन्तु यहाँ ऐसा काइ दुषण प्रहार नहीं है। आत्मग्लानि और पड़तावा हा ही सुधार व आदर्श रहें हैं।

सावन मास में भूला भूलता कन्याओं के सम्मुख चन्द्रावल का वार चरित्र प्रधान चित्र सहसा कौंध जाता है। चन्द्रावल उन वीरगणाशा का प्रताक बन कर आइ है, जिन्होंने विघर्षी शत्रुओं के पने में सँसकर भी अपने सत का आच नहीं आने दी। घटना इतनी ही है कि आवण के दिना में चन्द्रावल अपनी नणद के साथ पाना भरने जाती है। रास्ते में मुगल सिपाहिया का पड़ाव है। एक सिपाहा चन्द्रावल के अनुपम रूप सौन्दर्य पर मुग्ध

हो जाता है और उस अनिष्ट सौंदर्य को वश में कर लेता है। नायिका अपना सदेश पद्म द्वारा भवती है। स्वप्न, ज्येष्ठ तथा पतिदेव आते हैं, प्रयत्न करते हैं पर मुगल पर किसी प्रकार का प्रभाव नहीं होता। तब चन्द्रावल अपनी सहायता स्वयं करती है।

यह गीत सभी जनपदा में अपनी अपनी भाषा में मिलता है और गाया जाता है। बुन्देलखण्ड भाषा में 'मानागूजरी' इसी शृंखला की एक कड़ी है। बिहारी में 'भगवती का गीत' भारतीय नारी की सद्धर्मगाथा को इसी रंग में प्रस्तुत करता है। पंजाब में 'सुन्दर पतिहारिन' इसी भाव पर केन्द्रित है। राजस्थान की नारियाँ तो जाहिर करने में आदर्श हैं ही। ऐतिहासिक इतिवृत्त को लेकर चलने वाले ये गीत कुछ लम्बे हैं। इनके द्वारा भारतीय सांस्कृतिक पद की पयात पूर्ति हो जाता है।

हरियाना में प्रचलित 'चन्द्रावल' गीत दो रूपों में हमें मिला है। एक गीत में चन्द्रावल अपने पिता के यहाँ है और दूसरे में अपने सासरे के। एक गीत में पिता और भ्राता उसकी मुक्ति की चेष्टा करते हैं और दूसरे में समुद्र तथा जेठ। पति दोनों गीतों में दुखी नहीं दिखाया गया है। उपाय भी तम्बू जलाकर मुक्ति प्राप्त करना ही रहा है। एक गीत में पति चन्द्रावल के सत् को देखकर प्रभावित हुआ है और उसकी आँखें गीली हो गई हैं। दोनों गीतों को देना हम यहाँ उचित समझते हैं —

घड़ा प घड़ा पै देखी चढ़ो पाणी न जाय,
 धामे पौन मुगल पगन की चढ़ो पकड़्य लइ।
 आगली तै गैल चन्द्रावली याइ राजकार।
 उड़ती जाती चिड़कली एक सडेस्सो ले जाय।
 थाप मेरा न न्यो कहो, थारी धी परड लइ।
 उड़ता जावा चिड़कली एक रडेस्सो ले जाय।
 थीर मेरा नै न्यो कहो, थारी बाहणप कइ लइ।
 थापल सुण के रो पड़्यो भाइ जाये याइ मै पछाड़।
 कता^३ सुणके हस पड़्यो ब्याह्ये दो पचार।
 थापल ठठ्यो धोअलो^४ ह्यायो करवा^५ लखचार।
 घुइला ल्यो इये^६ मै करवा लखयो लखचार।
 वेग्य धोको चन्द्रावली याइ राजकार।
 नाख्यां घुइवा ह्यो^७ मै नाख्यां करवा लखचार

१ तिथिया। २ मंदरा। ३ पति। ४ मोर्धी, प्रनाया। ५ उ।

धेरी ना छोड़ें चन्द्रामली घाड़ राजकमार ।
 घर ना बाबल थापणे रामू पगली की लान ।
 घरना बारा थापणे रामू टोपपी की लान ।
 मांक पढ़ी दिना थापण्यौ इव क हो मेरी मा ।
 उर मुगत का छोहरा पाया भरलया ।
 मरै ७ तिमाइ चन्द्रामली घाड़ राजकमार ।
 ठरै ७ परा को पाया ना पीऊ जल जमना कोल्या ।
 मरै ७ तिमाइ चन्द्रामली घाड़ राजकमार ।
 मुगली कै पौन पिराड छो, तम्नुआ में ला दड आग ।
 तम्नु जल गया इयोन्मे गैर जली लग्यार ।
 बीच जली चन्द्रामली घाड़ राजकमार ।
 मेरा बारा डोलिया ई गहरा डोल बना ।
 सूर्य मेरा पीहर सामरो लाडलडी नदसाल ।
 सत का रहा चन्द्रामली दो कुन तारो जा ।
 वारा पीहर मासरा वार दइ नदमात ।

यह गीत एक श्रौर स्त्री-चरित्र की उदारता एवं स्त्री हृदय की पति के प्रति निमल भावनाओं का परिचय देता है तो दूसरी श्रौर पति की निमल निष्ठुर प्रतिक्रिया के दशन भा "कना मुण कै हस पड्या ब्याहर्वे दा ए चार" जैसी उक्तियां महा जाते हैं । परन्तु पातिव्रत धर्म एवं सती धर्म का प्रभाव पति पर पड़ा श्रवश्य है । दूसरे गीत के अन्तिम शाल है —

सुसरा जी मुड्डी^२ धुणै, जेठ जी नै खाइ सै पछाइ,
 थाप हतारी दोला^३ रो पडा इमी दुनिया म ना ।

चन्द्रावल के लोकोत्तर आत्ममलिदान की यह गाथा युग-युग तक भारतीय सत्रार के गौरव की प्रतीक बनी रहेगी श्रौर कामलालुप पतिया के समस्त एक आदर्श स्थापित करता रहेगा । दूसरा पाठान्तर इस प्रकार से मिला है —

नखद भीगाड दोनों जयी दोन्नों पायो नै जाय,
 पौन पढ़ी थी नथान की जामें मुगल पठान ।
 सुण आगली सुण पाछली ए सुण ले मेरा जवान,
 या तो गोरी म्हारै मनवसी हसनै छोड़ेंगे नाव ।
 सुण रे मुगल का छोहरा सुण ले मेरी रे बात ।
 बाइ जी कै पन्ले में रहूँ बाइ जी नै जाण ना द्या ।

उड़ती जाती कोयली एक सडेस्सो ले जाय ।
 मेरा सुसर नै न्यों कहो बहुर्य पकड़ी जाय ।
 उड़ती जाती कोयली एक सडेस्सो ले जाय,
 मेरा जेठ नै न्यों कहो बौहीदिया पकड़ी जाय ।
 उड़ती जाती कोयली एक सडेस्सो ले जाय,
 मेरा बालम नै न्यों कहो गौरी पकड़ी जाय ।
 सुसरो जी सुण के रोपयो जेठ जी खाई सै पद्याद,
 आप हजारी डोलो हस पद्यो व्याह्वै दो ए चार ।
 सुसरा जी हस्ती चद्या जेठ जी घोड़े असवार,
 आप हजारी डोला धरथ में धरथ हाक्वे धी जाय ।
 सुसरा जी उतर्या बढतलै, जेठ जी बढला की छाय,
 आप हजारी डोला बाग में, चाने नागर पान ।
 जाधो सुसर घर आपध राक्खू पगड़ी की लाज,
 खाणा ना खाऊ इस तुरक का बाइ राजकवार ।
 जाधो जेठ घर आपयै राक्खू पचा को लान,
 पाणी ना पीऊ इस तुरक का बाइ राजकवार ।
 जाधो बालम घर आपयै राक्खू सेना की लाज,
 सेक ना पोहै^१ इस भुगल की बाइ राजकवार ।
 जाइ भुगला का छोहरा जलभर भारी ल्या,
 बहुत तिसाइ^२ चन्द्रावली बाइ राजकवार ।
 ऊरा पराकौ पाणी में ना पिऊ जल जमना को रे ल्या,
 मरे ए तिसाइ चन्द्रावली बाइ राजकवार ।
 भुगलै नै पीठ पिराइ भो, तम्बू के खादइ भाग,
 खड़ी पलै चन्द्रावली बाइ राजकवार ।
 यम्बू बलगपा डोटमै डोर जली लपचार,
 थोच जलै चन्द्रावली बाइ राजकवार ।
 हाय हाय भुगला करे घोवा करे सै पठान्
 पकड़ी थी विलसी^३ नहीं बाइ राजकवार ।
 मेरा रे भाइ डोलिया गहरो डोल बजाय,
 पाहर सुणिये सासरे छाडलदी नदमाल ।
 मुमरा जो मुहड़ी धुरै, जेठ जी नै खाइ सै पहाइ,
 आप हजारी डोला रो पदा इती हुनिया में ना ।

यह एक ऐतिहासिक गीत है। चन्द्रावल का निर्दोष नारी-चरित्र ओसकण्य सदृश पावन एवं उज्ज्वल बनकर जनसमाज के लिए अनुकरणीय आदर्श उपस्थित कर रहा है। लोक-जीवन की यह श्रमर कहानी भारत के नैतिक आदर्श पर पयास प्रकाश डालती है। चन्द्रावल की तुलना में काव्य जगत् का केवल निर्दोष से निर्दोष पात्र ही आ सकता है। चित्तौड़ की पद्मनी तथा सखियों का जोहर अवश्य लोमहर्षक घटना है किन्तु जो अपूर्वता एवं लोकोत्तरता चन्द्रावल के आत्मबलिदान में आई है, जिस उच्च भावना तथा प्रत्युत्पन्नमतिव्य का परिचय यहाँ मिलता है, वह बहुसाधन सम्पन्न चित्तौड़ के बलिदान में कहाँ है ?

साध्वी चन्द्रावल का पावन चरित्र भारतीय नारी के सतीत्व का प्रतीक बन गया है। वह पापात्मा यवनों के वासना-च्युद् का ध्वस्त कर ध्रुवतारिका के सदृश नारी जगत् को चारित्रिक दृढ़ता एवं आचार की पावनता का संदेश दे रहा है। आज भी भारतीय नारी चन्द्रावल को अपना आदर्श मानती है। भूले के गीतों में समस्त प्रतिवर्ष इसीलिए महिलाएँ इस पावन गाथात्मक शतहास को गाती हैं। इन गीतों में ऐसे अनेकानेक उदाहरण मिलेंगे।

श्रावण के गीतों में 'बारह मास' का विशेष वर्णन आता है। ये गीत बहुधा वियोगावस्था का वर्णन करते हैं। जिनके लिए क्षण कल्पसम व्यतीत होते हैं, उन वियोगियों के प्रति वर्ष के बारहमास क्या बनकर आते हैं, यह दिग्गाना बारहमासे का काम होता है। श्रुतु विशेष में विरहिणी की प्रतिक्रिया की प्रतीति इन्हीं गीतों में होती है।

'बारहमास' गीतों में वर्ष भर के बारह महीनों में होनेवाले दुःखों का वर्णन होता है। अतः इन गीतों का नामकरण 'बारहमास' है। इसमें विरह जय वेदना का कथन रहता है। सावन के मनभावन काल में विप्रयुक्ताश्रा का विरह अन्त उत्कर्ष को प्राप्त हो जाता है, तब उसका प्रवाह बारहमास के रूप में फूट पड़ता है।

करुणरस प्रधान बारहमासे पावसकाल में विशेषकर श्रावण मास में गाये जाते हैं। वियोगाकुल रमणियों मैघाबलियों के स्वर में स्वर मिलाकर इन्हें गाती हैं और भूलती हैं। बारहमास की स्वाभाविकता, सरसता एवं सरसता दर्शनीय होती है। लाकसाहित्य के उद्भट विद्वान् डा० उपाध्याय ने इन गीतों की प्रवृत्ति को देखकर इन्हें 'विरहमास' कहा है जो सुतरा सत्य है।

बारहमास की शैली कितनी प्राचीन है, यह जानने का हमारे पास कोई साधन नहीं। बारहमास उतना ही पुराना है जितने वर्ष के बारह महीने

अथवा पङ्क्तुग्रा का संचार एव जितनी विरहिणा का वियोगविन्मथ हृदय की 'ग्राह'। हिंदी के महाकवि मलिक मुहम्मद जायसी ने भी लोक प्रचलित इस गीत की सरसता एवं प्रभावशालिता के बशीभूत होकर हा "नागमती विरह वरण" के लिए नारहमासा को चुना था। संस्कृत के महाकाव्या म तो पङ्क्तु वरण एक अनिवार्य लक्षण बनकर आया है। इससे इतना ता पता चलता है कि यह प्रवृत्ति साहित्य म चाइ अति प्राचीन काल से हो पर हिंदी में लगभग पौने चार सा वष मे इसका वर्णन प्राप्त हाता है। ऋतुग्रा की महत्ता महात्मा तुलसीदास ने भी स्नाकार की है। उनका वषा वर्णन हिंदी साहित्य की अनूठी वस्तु है।

हरियाना म जो नारहमासा प्रचलित हैं, उनमें से एक म विप्रयुक्ता राधा अपनी अशहाय परिस्थिति म नानाविध अभाव अनुभव करती है। उसे शुक शावक से शिकायत है कि उसने मिथ्या आशा बधाइ है। अत में, नायिका निराश हा करउसे मार डालने का धमकी देती है, परंतु शुक दैवज्ञ है और वह राधा का सात्वना देता है —

साठ जे मास सुहावणा सुधारे ! जे घर होता हर का लाल, में हाली मदावली ।
 सामण ज मास सुहावणा सुधारे ! जे घर हाता हर का लाल, में हिने^१ घलावती ।
 भादूदा ज मास सुहावणा सुधारे ! जे घर होता हर का लाल में गूगा^२ मनावती ।
 असौन जे मास सुहावणा सुधारे ! जे घर होता हर का लाल, में पितर समोदती ।
 फातर जे मास सुहावणा सुधारे ! जे घर होता हर का लाटा, में दिवाली मनावती ।
 मगसर जे मास सुहावणा सुधारे ! जे घर होता हर का लाल, में सौद भरावती ।
 पीह जे मास सुहावणा सुधारे ! जे घर होता हर का लाल, में सनरात मगावती ।
 माह जे मास सुहावणा सुधारे ! जे घर होता हर का लाल, में बसत मगावती ।
 फागण जे मास सुहावणा सुधारे ! जे घर हाता हर का लाल, में होनी खेलती ।
 चैत जे मास सुहावणा सुधारे ! जे घर होता हर का लाल, में गणगाँर पाती ।
 वैशाख जे मास सुहावणा सुधारे ! जे घर होता हर का लाल, में पथा मगावतो ।
 जेठ जे मास सुहावणा सुधारे ! जे घर होता हर का लाल, में जेन्दा मनावती ।
 धारहण महोना हालिया सुधारे ! सोढ मरोडू तरा पातड़ा ।
 जल म दूगा बहाय तरा सेवा न कर सुधारे ।
 म्हारी ता सेवा घे कर राधा ष जो हर धारंगा धान ।
 जोडू नगोडू तरा पातड़ा सुधार ! और शुगाऊ पाली दात, तरी सेवा में कर ।

नारहमासा प्राय आगत मास ष वर्णन से आरम्भ होता है और ज्येष्ठ

१ हिजेला । २ गुरगूगा ।

लोक-गीत]

मास के वजन से समाप्त होता है। बारहमासा का एक विशेषता यह भा है कि इनमें वर्ष भर व महीनों में होनेवाले सुख दुःख का वजन एक साथ आ जाता है, विरह-व्यथा का प्रतुभूति एक स्थान पर हा जाता है। इसा शैली पर 'द्विमासा' और 'त्रिमासा' भी होते हैं। 'बारहमासा' में विरहानल का जाना ही नहीं होता, उसमें पृथक् के वैयक्तिक जीवन का व्यापन भी होता है। राजस्थाना 'बारहमासा' में पृथक् के सादे जीवन का इतिहास आ गया है। उसका काम हा उसका सर्वन है। काम की सफलता उसे दरदर प्राप्ति का सा आनन्द देती है। पूरा गीत नीचे उद्धृत किया गया है —

साह महीने विरहा लगा, बानरियाँ रा बाह ।
 माऊ जा मारे भातो लारे, बाहरे माँ बाह ॥
 खाय महीने बानर लागी, नीनाया री नाह ।
 काचरिया री घेला टाला, बाह रे माई बाह ॥
 भादू महीने भूगा होगी, वीचरिया री बाह ।
 बानरिया री रोगे ख्या, बाह रे साँ बाह ॥
 आमोना में आसा लागी, हकाला रा बाह ।
 काठी बाने रोहा रहस्या, बाह रे साँ बाह ॥
 काठी महीने करवा मिट्टा, भाई इला ग्राह ।
 मिगवर महाने मोटा महत्ता, लम्बो लेमी साह ।
 लेय र देय' दूर रा होस्या, बाह रे माँ बाह ॥
 पोह महाने पालो पड़मी, गान्डी रो खाह ।
 खालडी रो ग्योह कीनो, बाह रे साँ बाह ॥
 माह महीने पालो पड़मी, पार्षी पत्यर ग्राह ।
 पापारो वो पथर कीनो, बाह रे साँ बाह ॥
 पागख महीने फाग खेल, गोपिया रो नाह ।
 महुड़े रो म' पीयो, बाह र साँ बाह ॥
 चैन महाने चपा मोरी, चबल मोरचा माह ।
 जिन वृा ही हरिया होमी, बाह रे माँ बाह ॥
 बसाया में भूय पड़मी, ता बड़िये री ताह ।
 पड़ दया में पडिया रहस्या, बाह रे साँ बाह ॥
 जेठ महीने भूय पड़मी, ता बड़िये री ताह ।
 रोड बाह र खोला साग्या, बाह रे माँ बाह ॥^१

१ 'राजस्थाना लोकगीत में बारहमासा'—पृष्ठ ६१, ६२, प्रो० सूर्यकरया पारीक, पृम प ।

कृषक के जीवन दर्शन की झलक अपूर्व भव्यता से इस छोटे से गीत में कह दी गई है। किसान को अपने स्वामी के प्रति कृतज्ञ दिखलाया गया है।

श्रापाद मास में बपा प्रारम्भ होती है, किसान खेत में काम करता है और उसकी मा उसे रोटी पहुँचाती है। भावण में बाजरा उगता है, खेल नलाया जाता है, और मतीरे की बेलें बचा दी जाती हैं। भाद्रपद में भुनगे बहुत होते हैं, शाक तरकारी अधिक होती है और नये बाजरे की रोटियाँ बनाते हैं। आश्विन (क्वार) में फसल की आशा हो जाती है और चैन-रक्षक चिल्ला चिल्लाकर चिड़िया उड़ाते हैं। कार्तिक मास में 'सिट्टे' खूब होते हैं, चाहे जिनो खाओ। बाह रे ईश्वर, तुम्हें धन्य है। मगसिर में साहूकार लेखा-जोखा करता है। किसान ले दे कर हिसाब साफ करता है। पौष में भयकर शीत पड़ता है जो चमड़ी तक को छील देता है। माघ में शीत के कारण पानी जम जाता है। फाल्गुन में महुवे का रस पीकर किसान मस्त रहता है। चैत में चपा फूलती है और मोर चंचल हो जाते हैं। वैशाख और जेठ में भयकर धूप पड़ती है, किसान अपना भोंपड़ी में अथवा वृक्ष के तले आराम करता है। हे ईश्वर! तुम्हें धन्य है जो प्रत्येक ऋतु और मास में किसान को नये-नये अनुभव और फल देता है।

बारहमासा की शैली सभी जनपदों में एवं सभी लोक भाषाओं में प्रचलित है। इसके तुलनात्मक अध्ययन के लिए बड़े विस्तार की आवश्यकता है। अतः हम पड़ौस के राजस्थानी बारहमासे को दिखाकर ही अपने इस विवेचन को समाप्त करते हैं।

२। भाद्रपद

भाद्रपद में जमाष्टमी का उत्सव मनाया जाता है। इस अवसर पर व्रत रखा जाता है। कृष्ण का बन्धा बनाकर पालने में मुलाते हैं, भजन गाते हैं। एक गीत में पुत्र कृष्ण के विनिमय का पौराणिक वर्णन आया है —

जबभरय देवकी जाय दशोदा रस्ते में मिली हरे ।

के दुग्दा ये ये साम नग्द का के बाले भरतार ये ये, क बाले भरतार,
दशोदा रस्ते में मिली हरे ।

ना दुग्दा बेय सास नग्द का ना बाले भरतार येये ना बाले भरतार,
दशोदा रस्ते में मिली हरे ।

एक दुग्दा बेये कोश जली का जिय मेरा मारा सै मान जिन मारा सैमान,
दशोदा रस्ते में मिली हरे ।

जै बड़े तेरे छोटा होना गोकुल दिये पुषाय बड़े गोकुल दीये पुषाय,
दशोदा रस्ते में मिली हरे ।

जै बड़े मेरे छोटी होगी पुत्रका बड़का पुत्रका बड़े पुत्र का बड़का पुत्रका,
दशोदा रस्ते में मिली हरे ।

कृष्ण जन्माष्टमी से अगले दिन नवमी को 'गूगानवमी' का बड़ा भाई उत्सव हरियाने में मनाया जाता है। गूगा जिसे 'बागडवाला' कहते हैं, जाहरपीर के नाम से भी प्रसिद्ध है। गुरुगुग्गा के विषय में लघु तथा प्रबन्ध दोनों प्रकार के गीत इधर प्रचलित हैं। जाहरपीर के रतजगे में प्रबन्ध प्रबन्ध गीत गाया जाता है और अन्य अवसरों पर या गूगा नौमी पर घरों में, साधारण रूप से, मुक्तक अथवा लघु गीत गा लिये जाते हैं। प्रबन्ध-रूपा गीतों में गूगा का शौर्य का लोमहर्षक वर्णन आया है जो यथास्थान प्रबन्ध गीत वर्णन में दिया गया है। यहाँ हम उसके जीवन का सचित्र वर्णन तथा महिला-जगत में प्रचलित लघु-रूपा गीत देते हैं।

गूगा का इतिवृत्त अंधकार में पड़ा हुआ है। गूगा हिन्दू और मुसलमान दोनों जातियों द्वारा समान रूप से पूजा जाता है। हिन्दू गूगावीर, गूगावीर अथवा गुरुगुग्गा कहकर इसकी पूजा करते हैं। मुसलमान इसे गूगापीर (सतगूगा अथवा जादिरपीर) जिसकी कला प्रत्यक्ष है, कहकर इसे पूजते हैं।

वास्तव में, गूगा राजपूत वंश त्रिभूषण है, परन्तु यह एक आश्चर्य है कि किस प्रकार चौहानवंशीय गूगा की धीरकथा पर मुसलमानी रंग का पैनाद-लग गया है। इस दिशा में एक घटना मुख्यरूप से कही जाती है। यह प्रसिद्ध है कि बीकानेर राज्य के अन्तगत ददरेठ स्थान पर गूगा ने भू-समाधि ला था। कथा है कि उसने अपने मौसरे भाई अरजन और सुरजन द्वारा उसके वध के पक्ष में को अक्षय्य कर दिया था और दंडस्वरूप उन दोनों का मार डाला था। इस अपृष्ट्य पर माता बाहुल ने गूगा की भर्त्सना की और आदेश दिया कि वह मुझ न दिखाने। इस घटना से दुःख हो गूगा ने भू-माता से अपने में लीन कर लेने के लिए प्रार्थना की। पृथ्वी से प्रत्युत्तर मिला कि हिन्दू होने के कारण उसे भूगणनास नहीं मिलेगा, यदि ऐसी इच्छा है तो पहिले इस्लाम में दाखिल होना चाहिए। वह कलमा सीखता है और मुसलमान बन जाता है। धरती मा उसे विलीन कर लेती है। विश्वास है समा में इसके हिन्दू एवं इस्लामी दो स्वरूप हो गये हैं।

मा बाहुल तथा उसकी घमण्डी सरियल (सरियल) का घोर पश्चात्ताप हुआ है परन्तु गूगा सरियल से नित्य प्रति रात्रि मिलता है। एक बार

तीर्था ने दिन विवश हाकर सरियल इस रहस्य को बाह्यल पर प्रकट करती है । परिणाम स्वरूप सास अधूरी दोनों पुन एव पति को सदा के लिए हाथ से लो बैठती हैं ।

ऐतिहासिक वृत्त के आश्रय पर गूगा अपने भाई अरजन सरजन को पंतुक सम्पति में से भाग मागने के विरोध में मार डालता है, पर एक गीत में इस बंध का कारण यह उतलाया गया है कि गूगा की अप्रतिष्ठिति में अरजन सरजन ने सरियल (गूगा की पत्नी) के साथ छेड़छानी की है और इस शिकायत पर गूगा ने उनको मार डाला है ।

प्रमाणाभावे में यह निश्चय देना कठिन है कि घटना का कौन-सा स्वरूप सत्य है, पर महिलाओं के गीत प्रायः उन्हीं देवताओं के ऊपर हैं जिन्होंने स्वयं मयादा की रक्षा की है अथवा नारी रत्नों का कष्ट के अन्तर्गत पर सहायता पहुँचाई है । पुराण काल में, कृष्ण ने द्रौपदी की लज्जा रक्खकर अपनी महिमा दिग्गद तथा राम ने सत्रायी सीता की गरिमा अक्षुण्ण रखी । महाकाल हनुमान ने नारी मयादा को ठीक आका एव शिव ने पार्वती की प्रतिष्ठा का पूरा किया । अतः मयादा पालक सभी देवता नारी अर्द्धा के पान रहे हैं । सरियल भी अरजन सरजन—राहु केतु दो दुष्टग्रहों द्वारा मसित थी और वीर गूगा ने इसी नारी मयादा सत्क्षण के लिए अपनी तलवार उठाई । इतिहास साक्षी है कि गूगा ने मध्य युग में आततायी यवनों से लोहा लिया और बागल देश को उनके भीषण आक्रमणों से बचाया । 'दि लीजड्ड्म आँव दि पगाव' में सर आर० सी० टेम्पल ने लिखा है कि "गूगा एक हिन्दू है और यह चोहान राजपूतों का नेता है जिन्होंने १००० ईस्वी में महमूद गजनी को रोक रखा था ।"^१ इसका घर धीकाँरे राज्य था । गिरखा से प्राप्त एक कथन में आया है कि गूगा की रक्षा में मुगल सम्राट् औरगजेन के समय १६१८-१७०७ में आया था ।^२ एक अन्य मत के अनुसार गूगा हरियाणा के चोहान राजपूत थे । सन् १३५३ में दिल्ली के गदशाह गिरानशाह द्वितीय के सेनापति अचूतकर से युद्ध करके वीर गति का प्राप्त हुए । इस प्रकार हम इस निश्चय पर पहुँचते हैं कि गूगा एक राजपूत है और बागल का वीर पुरुष है ।

हरियाणा से प्राप्त एक गीत में आया है कि गूगा अपनी धमनली की मोगल रक्षा के लिये अपने भीरे भाइयों का बंध करता है —

१ 'दि लीजड्ड्म आँव दि पगाव' प्रथम खण्ड, पृष्ठ १२१ प्रभृति ।

२ 'ग्लोसरी ऑव दि पगाव एण्ड एन० इन्डू० एण्ड पा० ट्राइ म' प्रथम भाग, पृष्ठ १०८ ।

गूगो रे मुत्तो जाल तले तमोदटीं ताख,
 पारी मेरा गोगा भल रह्यो,
 पारी मेरा सायर भल रह्यो,
 सरयल निकला पारो न, लेगी दोघड़ वाली माल ।
 अरजन मुत्तो जाल तले,
 भरनन सरवरिये की पाल, पारी मेरा गूगा भल रहियो ।
 अरजन परह्यो गूगो १,
 भरनन मरी छरले घानी ताथ ।
 थम नागो मेरे देपर जेट, राघो रे पट्ट की बहाज ।
 सरियल गड गूगा क पाम,
 थम मुत्ता गोगा नींदर्या ।
 छुटी रो री छरलेवाला नार ।

वीर गूगा इस श्रमयादित दुष्टत्व पर चुम्प हो उठता है और उन दोनों मोक्ष का बंध कर देता है —

अरजन नै मारया जाल तले,
 भरनन नै सरवरिये की पाल ।

माता बाहुल को जन इस घटना का पता चलता है तो वह विह्वल हो जाती है —

उरम कर्या रे मेरा लाडेता,
 मारयो रे मास्मी का पूत ।
 मुहा पदया विलोत्रणा २, छाड़्यारी फिर फिर जा ।

परन्तु सरियल को इस शीघ्रपूर्ण घटना पर गर्ज है, उसने अपमान का प्रतिहार ही गया है —

मुहा पदया विलोत्रणा, छाड़्यारी भर भर जा ।
 पारी मेरा सायर भल रहियो ।

माता की भर्त्सना पर गूगा आत्म-बलिदान देता है और भूगर्भ में समाधि लेता है । माता को पुत्र के इस गमभार निश्चय पर आत्म-ग्लानि होती है, पद-चात्ताप होती है और वह पुत्र से कम से कम एक तार वापिस लोटने की इच्छा व्यक्त करती है । वह प्रति वर्ष मात्रय कृष्ण नरमी का आता है । इस वृत्त को लेकर एक गीत हरियाने की जनता का कथामरण बना हुआ है — —

खीला सा घोड़ा गोरा गाबरू धरती में गया समाय,
 जा राया एक बर घर था ।
 धरती माता लेया मांगे के हिन्दु के मुस्लमान,
 जा राया एक बर घर था । १
 आज खग तो मेरा हिन्दु जन्म था आज हुआ मुस्लमान,
 जा राया एक बर घर था । १
 परसा^१ में तेरा बाबल^२ जिरवै^३ कित गया बैठनहार,
 जा राया एक बर घर था । १
 तौ मत जिरवै बाबल मेरा मैं आऊगा बैठनहार,
 जा राया एक बर घर था । १
 रसोई में तेरी माता जिरवै कित गया जीमनहार,
 जा राया एक बर घर था । १
 तू मत जिरवै मायद मेरी मैं आऊगा जीमनहार,
 जा राया एक बर घर था ।
 सासरिये तेरी बाह्य जिरवै देख जिठानी का बीर,
 जा राया एक बर घर था ।
 तू मत जिरवै बाह्य मेरी आऊगा तेरा लेनीहार,
 जा राया एक बर घर था ।
 पीहरिये तेरी गोरी जिरवै देख बाह्य का न्याय,
 जा राया एक बर घर था ।
 तू मत जिरवै गोरी मेरी मैं आऊगा तेरा खैनीहार,
 जा राया एक बर घर था ।
 साठ १ आऊ सामया न आऊ आऊ भादूदे मास ।
 सातम ना आऊ आह्यम ना आऊ, आऊगा नौमी की रात ॥

गूगा हरियाना अथवा बागड़ का सर्वप्रिय नेता रहा है। उसकी यह प्रसिद्धि एक स्थान पर इस प्रकार व्यक्त की गई है —

“गूगा मरग्या सतम^४ गुजरग्या बागड़ पदग्या सोग ।”

एक तीसरे गीत में नाटकीय दुःखात परिस्थिति का मार्मिक चित्रण हुआ है। गूगा अपनी प्रतिष्ठा के अनुसार नित्य लौटता है। सरियल को उसकी उपस्थिति का विशेष सुग्न है, परन्तु दुर्दैव विनाक से भायण की हरियाली

१ खीला, घंटा । २ पिता । ३ जाया हो रहा है, दुपल है, ४ प्यार है ।
 ४ शुभ, आपत्ति ।

तीज उसके लिए बन्न तीज बनकर आई है। उस दिन विवश होकर वह रहस्यार्थान्न करती है और सदैव के लिए विरह विद्युत्ता रद जाती है --

श्राम की शाली पड़ी प पजाली मूलन श्रम रनवास मियाँ ।
साम् तो मूले री बाकी बहूण लम्बाई लोग करे चरचाव मियाँ ।
उठ उठ मूगा^१ बादी महला में जइये सिरयल हाल^२ बुलाय मियाँ ।
बागां तै उठके बादी महला में आई, उठो उठो रानी बागां भ चालियो,

बादल रहीण बुलाय मियाँ ।

कहो तो बादी मेरी सब रग पहरू पचरग पहरू कहो तो चन् मीले भेस मियाँ ।
हमके जायो रानी पचरग पहरो सब रगपहरो हमके जायो मीले भेस मियाँ ।
बाल बाल ते मूगा भोती पिरोधे माये में त्रिदा नैनों में म्याही मुखदे

में विदला लाय मियाँ ।

हरी हरी बुदियां अनय बुदुआ भर लिया सोलह विगार मियाँ ।

महला से चली रानी बागा भ आई पड़्यात परवा मासू पजन चले ही,

मुखते तो उठो हे रमाल मियाँ ।

वा रनवासे में चरचा चली हे यो कैमो राडा का भेस मियाँ ।

बागा में जाओ बादी सटी ह्याओ मार उधेइ या की खाल मियाँ ।

चदती पजाली साम् बुद्ध मत कहिण महला में लीने समभाय मियाँ ।

वहाँ का तो चली रानी महला में आई, खुट्टी धरो तो रानी चाकर,

उनारो मार उधेइ तन की खाल मियाँ ।

तेरे तो लेये साम् मरयो गये हैं, चले धी गये हैं मेरे तो चाव नितरोन मियाँ ।

अपके तो आवे यहू हम री बतओ कोइ तनक सुरत दिखाय मियाँ ।

आयो सी रान भर मुकी हे अघेरी कोइ जाहर आय हे मटार मियाँ ।

और दिना तो गोरी दिबला बले हे थाज कैसे घोर अघेर मियाँ ।

और दिना तो रानी हसी यी खुसी ही न्हाइ धोइ आज कैसे मीलो भेस मियाँ ।

अम्मा तुम्हारी रे सास हमारी मार उधेइ तनकी खाल मियाँ ।

दिन निकला जब चिदिया चौकी कोइ जाहर हुण घोड़े अस्वार मियाँ ।

सोवै के जागे री मरी बैरन साम् महला के चोर भागे जाय मियाँ ।

खडा तो रहिए रे मेरे दूधा ते पाले गोद खिलाये कोइ तनक सुरत दिग्याय मियाँ ।

पीड़े तो फिरके देख मेरी माता महला में लग रही आग मियाँ ।

महला की आग वेडा जलसू बुझैगी मायइ की लोभन आग मियाँ ।

साम् दखन लागी कोइ घोड़े सेन्ती^३ गये हैं समाय मियाँ ।

हम सूबी खोया साम् ! अपसूबी खोया चने गये हैं हाय मियाँ ।

कथा बड़ी ही दुःखात एव मर्मांतक है। पुनः बधू की विवशतापूर्ण फातरता "हम खनी खाया खाऊ ! अणतूनी खोया" के रूप में शोकसागर बहा रहा है।
ग क्वार

क्वार मास म साजी मागी जाती है। यह दुर्गा का रूप है। बालिकाओं की यह आराध्या है। साजी विषयक गीत देवी की साकारोपासना भावना के प्रतीक हैं। इन गीतों में सरपभाव के ऐसे अनूठे तत्त्व मिलते हैं जो अण्डलाप के कवियों की स्मृति करा देते हैं। निरीह बालउपासका के उपयुक्त ही साजी माइ का उत्तर है —

म्हारी साम्नी ए ! के ओढगी के पहरैगी क्याए की माग भरावैगी ।
मिसर पहरगी स्यालु ओढगी मोतीया की माग भराउगी ।
म्हारी साम्नी ए के नीमैगी के मून्गी क्याए की चलुए^१ भरावैगी ।
लाडु नीमूगी पेडा मून्गा इष्टत की चलूए भराउगी ।

बालिकाए सभी का मातृरूप म पृजनी हैं। प्रातः सध्या म आरती करती हैं और नैवेद्य आदि से उसका पूजा भी करती हैं। यह एक आश्चर्य की बात है कि सभी सभी जातियाँ—हिन्दू अहिन्दू और मुसलमानों म समानरूप से मनाइ जाती है। वही आरती और मिष्ठान से पूजन सब जातियों में चलता है। लोक जीवन में मानों एकरूपता आ गई है।

साजी देवी को घर की भित्ति पर बनाया जाता है। मिट्टी के सब अणु प्रत्यग बना लिये जाते हैं और उन्हें गोबर के आश्रय से भित्ति पर चिपका दिया जाता है। यह मूर्ति माता दुर्गा से मिलती है, इन्हे 'सध्या माता' भी कहा जाता है। बालिकाए 'साम्नी माइ' का आरता करती हुई अपने गृहस्थ कुटुम्ब को नहीं भूलतीं। कथाओं को गारे भाइ भावी का बड़ा शोक है —

आरता हे आरता साम्नी माइ आरता,
आरते की पून भूचेलन खेल,
इतने से भाइयो में कुयसा गोरा ।
चदा गोरा मूरन गोरा गोरा क नयण कचल भर गेरे ।

नवरात्रि तक यह आराधना चलता रहता है। विजयदशमी वाले दिन सध्या में सम्मानपूर्वक साम्नी माइ को जल में प्रशुद्धि कर दिया जाता है।

घ कार्तिक

कार्तिक मास लोक-गीतों एव लौकिक आचार विधानों की दृष्टि से एक महत्त्वपूर्ण मास है। इस मास में प्रातः स्नान का विशेष माहात्म्य है।

लोम-गीत]
महिलाएं सर-सरिताओं में स्नान कर प्रमाती और हरजस गाती हैं, तुलसी की पूजा करती हैं।

कार्तिक के गीत बड़े ही मधुर तथा भावपूर्ण होते हैं। राधा-कृष्ण एवं शिव-पार्वती की प्रणय कहाना इन गीतों में प्रतीकरूप में छान रहता है। गंगा-स्नान का विशेष पर इस भाग में आता है। गंगा-स्नान के लिए सा पुण्या में विशेष उत्साह एवं आस्था के दृश्य होते हैं। लोग गंगा पुलिन पर क-दिन तक निवास करते हैं और पुण्यार्जन करते हैं।

हरियाणा ने प्रातः कार्तिक गीतों में एक गीत ऐसा है कि हरियाणी कृपण बाला कार्तिक स्नान करना चाहती है। उसका हृदय कार्तिक स्नान की महत्ता से अभिभूत है। माता-पिता तथा माद भावज विविध यद्दाने प्रकार इष्ट धार्मिक प्रवृत्ति से उसे रोक्ते हैं। उनकी दृष्टि में समभवत भावस्वरूप घर्म का कोई महत्ता नहीं है, महत्ता है तो स्थूल नैतिक कार्य का —

परस बन्ता अपना बायज घुम्का, कहे तो कात्तक 'हाव्य' हो राम।
कात्तक 'हावा' वेगे यदाये दुहेरजा^१, लाइयो यागप्रतीचे हो राम।
दूध घमोइता^२ अपना मायइ युग्मी, कहे तो कात्तक न्हाव्य हो राम।
कात्तक न्हावा घेटी यदाण दुहेरजा, मिन्जे घरम की क्यारी हो राम।
गर कन्ता अपना बायज युग्मा, कहे तो कात्तक न्हाव्य हो राम।
कात्तक 'हावा' वेजे यदाए दुहेरला, लेकले न गोद मवीना हो राम।
पीमणा पीमनी अपनी भावा ओ युग्मी, कहे तो कात्तक 'हाव्य' हो राम।
कात्तक न्हावा नणदल यदाण दुहेरला, कादो हो ना कमीन हो राम।

इस गीत में साधारण नैतिक कर्तव्यों ने धार्मिक भावना पर तुष्टारपात किया है। भला, वणिग् वृत्तियाले जग में क्या आशा का जा सकती है? स्वार्थमय सार में 'काम प्यारा है, चाम प्यारा नहीं है।' फन्या प्रत्येक दिशा से काय हा कार्य की दुहाइ सुन रही है, उमे किघर से भी आशा रश्मि नहीं मिलती। कैसी कातरता है? कायाधिक्य ने मनुष्य के विवेक को भी आजात कर लिया है।

कार्तिक स्नान माहात्म्य में तुलसी की पूजा का विशेष स्थान है। तुलसी ने एक दीर्घ एवं अनन्य भक्ति के उपरांत विष्णु जैसा वर प्राप्त किया था। आज भी फन्याए तुलसी की उपासना कर उसने आदेश को श्रव्य देती हैं —

मान मुहेली न्हाए चाली तुलमा कूठ बुलाइ हो राम।
नेग भी ले लिया भारी भी ले ली तुलमा न्हाए चाली हो राम।

सात सुहेली न्यू उठ बोली तुलसा थौड^१ कवारी हो राम ।
 लोटा भी पटक्या म्कारी बी पटकी रोवदडा^२ घर थाई हो राम ।
 के बेटी तुलसा भूता डराइ के भाइया नै दुदकारी^३ हो राम ।
 ना हो मेरा दादा भूता नै डराइ, ना भाइया नै दुदकारी हो राम ।
 सात सुहेली न्यू उठ बोली तुलसा थौड कवारी हो राम ।
 के बेटी चाद बर डूके के बेटी मूरज बर वूटो हो राम ।
 सूरज हो थाबल तपी धनेरी चदा की रैन अपेरी हो राम ।
 हमने थाबल ऐसां बर डूके सीस उपावै धधा ल्यावै हो राम ।
 कवर कन्हैया हो राम हो ५ घरबारी हो राम ।

पुराय प्राप्ति के साथ यदि सदृष्टहस्ती भी मिल जाये तो क्या हानि ?

कार्तिक के एक दूसरे गीत में कृष्ण जी राधा से प्रस्ताव कर रहे हैं कि पुरायप्रद कार्तिक मास है गंगा-स्नान की तैयारी करनी चाहिए । पर घर में वृद्धा सास है उसे कैसे एकाकी छोड़ा जाय ? कृष्ण को तत्काल उक्ति सूक्त आती है —

“रे राधा प्यारी ! बुढ़िया नै खरखे बडाय, वैसे छोड़ो पन्ना हो राम ।”

क्या चरला गंगा सदृश पवित्र नहीं है ? कृष्ण ने समजत “मन चगा तो कठौती में गंगा” बहा दी है । कैसा लोक सुलभ उपाय दूट लिया गया है ?

कार्तिक में गंगा-स्नान का एक विशेष महत्त्व है । हरियानी जाट नायिका पति से श्राप्रह करके गंगा-स्नान के लिए चली जाती है । घर पर उसकी हात्तड़ भंस है । उस हात्तड़ (एक हत्थी) भंस ने पतिदेव की बड़ी दुर्दशा की है । जाट की इसी दशा को एक हास्यजनक चित्र का रूप मिला है । यह कैरीवेचर (Caricature) लोकमेघा की एक श्रनूठी सूक्त का परिचय है । जहाँ विशेष के साथ सामान्य का समावेश भी हो गया है —

मनै तो पिया गंगा न्हुवादे जारी सै ससार, हा ७ जारी सै ससार ।
 तनै तो गोरी क्युकर न्हुवाद्यु हात्तड़ पाकी भंस, हा ७ हात्तड़ परड़ी भंस ।

एक जतन पिया सै बतलाद्यू ।

छगे प मेरा दामण^४ लकै खुदड़ी छाप्पेदार, हा ५ खुदड़ी छाप्पेदार ।
 टने म मेरी नाथ घरी सै पहर काठियो धार, हा ७ पहर काठियो धार ।
 बाहर सै हक मोदिया आया, येव्ये भिसा डाल, हा ७ ये-वे भिसा डाल ।
 ये-वे तो छेरी न्हाय गइ सै, जीग्जा काडे धार, हा ७ जीग्जा काडे धार ।
 खुग पादगी जेउदा^५ तुदागी भाजगी सै भंस, हा ७ भाजगी सै भंस ।
 टडा लैके पाई होलिया, लैया गया था भंस, हा ७ लैया गया था भंस ।
 गाती सुलगी पल्ला उदग्ग्या, मूछ पदाके लै हां ७ मूछ पदाके लै ।

१ इवनी । २ रोती हुह । ३ पटकारा । ४ लहगा, धागरा । ५ रस्सी ।

लोक-गीत]

गलिया में जो चरचा हो रही, देखी मुछड़ नार, हां ७ देवी मुछड़ नार ।
कोदरै चढ़के रक्क मारे कोप मत भेजो न्हाय, हा ए कोण मत भेजो न्हाय ।

प्रामोण वृषरु के मतिमाय का एक सजीव ध्यय चित्र इन पंक्तियों में
हुआ है । “गलियाँ मैं जो चरचा हो रही, देखी मुछड़ नार, हा एक देवी
की सचाई का प्रमाण है ।

कार्तिक मास के गातों में प्रमाती, हरजस अथवा भजन का भी विशिष्ट
स्थान है । कई प्रकार के सुन्दर-सुन्दर भजन कामिनो कलकठ के आभरण
बनते हैं श्री वातावरण को घमंमय बनाते रहते हैं ।

इसी मास में समृद्धि का प्रतीक दिवाली (दीपमालिका) उत्सव मनाया
जाता है । यह वर्ष भर मनाये जानेवाले श्रेष्ठ उत्सव व पनों से अधिक सुभाग
एव सुन्दर है । लौकिक कामनाओं की पूर्ति का एक मात्र आधार अर्थ है
श्री अथपूजन का विशेष लक्ष्य इस उत्सव के अन्तर्ग में है ।

करवा चौथ तथा अर्द्धौ आठें मत हैं । इन अवसरों पर कई प्रकार के
लोकाचार हाते हैं और दोनों मतों की समाप्ति कहानी सुनने के उपरांत
होती है ।

देव उठान (देवोत्थान) का पर्व भी इसी मास की शुक्ला एकादशी
को मनाया जाता है । इस अवसर पर मंत्रपाठ का तरह एक गीत गाया जाता
है जिसमें एक साधारण स्थिति का साधारण सा वर्णन आया है —

उठूँ सूँ रे उठावा सा, छीकके हाथ घबलावां सां,
छीकके घरी चार कचौरी, आप खा के माहण दीजे,
आप खा लाहा हो, माहण दीजे बहा हो,
माहण ने दीने बुझी सी गा, आंग पिच्छोकड़ मूले वाह ।
इस गीत का पाठांतर भी हमें मिला है । विशेष अंतर तो नहीं है,
आदि अंत के अशों में अवरय ध्वल्य है । आरम्भ और अंत के बोल

इस प्रकार हैं —

उठो देवो जागो देवो, उठासा उठावा सा ।

गये थे हम माठ के माह, आये सा हम कात्तक माह ॥

भापा दोना गीतों की अन्तर लिए हुए है । दूसरे गीत की भाषा में

सादगी है ।

१ लाम ।

देवो-धान एकादशी की शुभ तिथि पर गाव के पाली (ग्वाले) एकत्रित होकर घर घर भागते हैं । विशेषकर उन लोगों के पास जाते हैं जिनने यहा पुनोत्पत्ति होती है अथवा विनाहात्सय होता है । वे एक लग्ना सा गात गाते हैं । गात की शैली षव राय कुङ्कु कुङ्कु केमूरा के गीता से मिलता है । एक गात नाचे दिया जाता है —

गोइ गोइ गोइ रे,
भस काण्डा गोइ रे,
राजा जाण मेदी^१ में सोया, राखी आय जगाया रे ।
ठठो राता धारी फीन पलटन आइ रे ।
आइ से तो थायण्डो, ग्दैं गुरु का भाई जी ।
कोइ वृद्धा को^२ वागडा कोइ वृद्धा ग्राइ रे ।
वृद्ध पइया गुजर का वेग, नाँ सौ गऊ छुड़ाइ रे ।
नाँ सौ गऊणा में, एक दुधा धाया^३ बैठा,
पानी का तियाया रे ।
उरली गगा गारा पार्या, पर ला जाण दुगाया^४ रे ।
अठ टट्या, उठे दूट्या, जायण्णा म पाया रे ।
पाता पीता हट्या नहा तो, मार परड़ा हगाया रे ।
गो मय का भरा बरदी टग, दम मण लोह जड़ाया रे ।
अइरु ह १ धइरु हटी, तारा अम्यर छाया रे ।
नाओ मेरी मोइ रे, मोइ मोइ मोइ रे,
भैस काण्डा गोइ रे ।

इस गीत का भावपक्ष समुन्नत कोटि का नहीं है, परन्तु पाठक ऐसे गीतों के भावपक्ष पर विचार करने में पूर्व यदि प्रवक्ता की पारस्थिति पर ध्यान दे लें तो निराश न जाना पड़े । गाल-बालों का कल्पना कर्पाती से ऊँची उड़ान की आशा व्यर्थ है । यहाँ तो निरर्थक शब्दजाल ही हाथ लगेगा ।

अग्रहन पृष म काण्डा पर्व उत्सव नहीं मनाया जाता है । समभवत शीत के प्रकाश से अमव भा मद् पड़ जात है । यात्रा आदि भी नहीं हो पाती ।

भाष के आरम्भ में उत्राति का महोत्सव विशेष रूप से मनाया जाता है । हरियाना जनता उमे पड़े उत्साह के साथ मनाती है और उनकी दृष्टि में इम पर्व की महत्ता सर्वोपरि है । यह हरियाने का परम पावन एवं

^१ मन्ल । ^२ किले की दामार चगीरा । ^३ दूध पीकर भोग बना हुआ बधिया मल । ^४ पट्टुगया ।

लाक-गीत]

कल्याणप्रद पथ माना जाता है। प्रामीण जनता में इसकी महत्ता विशेष दर्शनीय है। ब्रह्मसूक्त में स्नान किया जाता है, पशुधर्मा को चारा खिलाया जाता है और भूषा को भोजन। नगों का कमल आदि बन्ध बाटे जाते हैं।

माघ शुक्ल पंचमी का वसंत की स्थापना की जाती है और इसने पश्चात् लाक में गाता का पुन गान आ जाती है। लाक गाता का यह पार ग्रहरह वन्ता हुआ पाल्गुन पूर्णिमा तक जा पहुँचता है।

ह पाल्गुन

हरियाना व अरुणाचल प्रदेश में होली का अथवा पृथक् अस्तित्व है। यह गाना, नगाना और हंगी का उत्सव होता है। वसंत स्थापना तथा पाल्गुन के प्रारम्भ से ही होली व संगीत की मद गभार वेगवती धारा अविरल रूप में उदने लगता है।

जमन जब यौवन पर होता है, प्रकृति नगाना के सदृश स्वयंभू टुकल न मुर्ता जा हा जाता है। किसान के खेत गरमा के उत्पुल्ल शमता पुष्पों न भरे हाते हैं तथा गेहूँ आर जों का फसलें दगी सारी पहलें हाती हैं। ऐमा मास्क बला म फाम का बहार आती है।

पाल्गुन की पूर्णिमा का हास-परिहास और उल्लास उल्लाह से पूरा होलिनगव मनाया जाता है। हरियाना में इसकी छवि आगुठी होती है। फाम एव हालता गाद और नगाइ जाती है। जनता परस्पर हाली टोलकर अभिन्न प्रेम प्रकट करती है। यह पर्व आचार के दृष्टिकोण से नडा अनुपम है। हाली का यह उत्सव आतृभाव, मित्रभाव एव प्रीतिभाव का सज्जनकर मानमिक मलीनता को नष्ट कर देता है। नर नारी, आबालवृद्ध सभी रग विरग जनकर और नाच-नाच कर इस महोत्सव का मनाते हैं।

पाल्गुन में होली के अवसर पर जो गान होता है वह फाम अथवा होली के नाम से पुकारा जाता है। इन होलियाँ अथवा फामों में शिष्टहास्य, मनोरजन और नगोत्साह का लजीबता विद्यमान रहती है।

हरियाना में होली के अवसर पर 'धमाल' राग भी गाया जाता है जिसे इतिहास, पुराण, शृंगार एव घरेलू वातावरण के रग भरे हाते हैं। एक पौराणिक चित्र नीचे दिया जाता है —

लिङ्गमन के दे बाण लगा है सक्ती लिङ्गमन के।
नेसा है होय कोइ धीरा नै जिजाले,
आधा राज सवाइ धरती। लिङ्गमन के ।

कै तो जिवाले सीता रे सतवती,
 कै तो जिवाले हनुमान जती । लिङ्गमन के
 क्या तै जिवाले सीता रे सतवती,
 क्या तै जिवाले हनुमान जती । लिङ्गमन कै
 सत नै जिवाले सीता रे सतवती,
 वृत्ती तै जिवाले हनुमान जती । लिङ्गमन कै

घरेलू एव ग्रामीण वातावरण भी इन धमाला का विषय बना है । ग्रामीणों अपने श्रोत्रने त्रयवा चुन्दी को नाना प्रकार के कसीदा से सुशोभित करती हैं । इन कमीदों म मयूर आदि पक्षियों की सुन्दर-सुन्दर आकृतिया बनाइ जाती हैं और शीशे के लघु-लघु खड भी लगा दिये जाते हैं । इस बात का वर्णन एक धमाल में आया है —

रे चुन्दी तेरा जुलम कसीदा ।
 कुण्य सै महीने बोल्लै मोर परैया ?
 कयसी चमकै सीसा ? रे चुन्दी तेरा जुलम कसीदा ।
 सामण्य महीने बोल्लै मोर परैया
 फागण्य चमकै सीसा ? रे चुन्दी तेरा जुलम कसीदा ।
 कौण्य सी नणद नै काड्या सै कसीदा ?
 कौण्यसी नै गोदूया सीसा ? रे चुन्दी तेरा जुलम कसीदा ।
 छोटकी नणद नै काण्य सै कसीदा,
 बडली नै गोघा सीसा । रे चुन्दी तेरा जुलम कसीदा ।

आज की प्रयोगवादी कविता के लिए अच्छा उदाहरण है । साधारण से साधारण वस्तु को काव्य का विषय बनाना लोक में न जाने क्या से चला आ रहा है ? आज हम जिसे नूतन धाद एव नई रूफ कहकर पुकारते हैं, लोक में वह चिरकाल से प्रचलित है ।

एक दूसरी धमाल में कृष्णमाला के खेत रखाने-सम्पन्धी कार्य का वर्णन आया है । खेत के मचाण पर किमान की छारी गोफिया लिये गालिया नामक पत्नी-विशेष को उदा रही है । गाला (गोफिया) चलाने में उसे कष्ट हो रहा है —

गोलिया तरा गदन काली ।
 कौण्य से दस त घला रे गोबिया,
 यागइ देस त घला रे गोलिया ।
 जे गोलिया तेरे मारू से गोल,
 दूखे रे भाष धरबाळी । रे गोलिया तेरी गदन काली ।

हरियाना के एक गीत में होली के 'आगमन' की चर्चा आर है। होली पत्र से उतर है और बट वृद्ध के पीछे आकर बैठा है —

बावै^१ दूगर^२ स्पू होली उठरी,
आप उठरी बटवै^३ हेठ।

बृद्ध प्रदेश में होली के आगमन की चर्चा निम्नलिखित प्रकार से का गई है —

होली आई हं गजर मत खा कै।
वह तो जाणगी फल बटवा कै ॥

एक ऐतिहासिक घटना है कि हरियाना पर मुगलों के प्रशासन के बाद मरहटों का राज्य रहा और उहीं से अंग्रेजों का महा का आधिपत्य मिला। उहीं दिनों के ऐतिहासिक वातावरण की भनक एक होली में मिलती है। होला मनोरंजन का उत्सव है। वह मनोरंजन कभी-कभी चार्चविक दुर्जनताओं तक पहुँच जाता है। इसका सजेत एक स्थान पर मिलता है —

होली या खेले दपवी बजा के गलिया में उडए गुनाल।
कहियो मुरैण्य मै होली खेलए आवै नवाब।
हमलो घडावै फिरगी को लदको कलौ घडावै नवाब।
कहियो मुरैण्य तै होली खेलए आवै नवाब।
पेमा होली खेलो मिरगानैपी न्हारा साफा की रखियो लहाज।
कहियो मुरैण्य तै होली खेलए आवै नवाब।
लहगो मिवावै फिरगी को लदको, स्पालू मिवावै नवाब।
कहियो मुरैण्य तै होली खेलए आवै नवाब।
बावू घडावै फिरगी को लदको, लूपा जडावै नवाब।
पेमा होली खेलो मिरगानैपी न्हारा साफा की रखियो लहान।

प्रनाभन से बचने के लिए आदेश एव प्रार्थना इस गीत के प्राण हैं।

हरियाने के फाल्गुन के लोकगीत सयोग विभाग के ताने जाने से बुने हैं। फाल्गुन का उमत्त मास बिरहोन्वडिता नायिकाओं तथा मुहागिनियों की दृष्टि में अपनी पृथक्-पृथक् आभा लेकर उतरा है। सौभाग्यवती बियाँ के प्रति फाल्गुन एक आनन्दोपमाग का सदेश लेकर आता है। वास्तव में एक मुहानना समय होना है, न अधिक शीत, न अधिक गर्मी। प्रकृति में उल्लास, सर्वत्र आनन्द। ऐसे शाभनीयकाल में ही सौभाग्य की सफलता है। एक चित्र देखिए —

१ बाया हाथ, २ पडाव। ३ बटवृद्ध के पीछे।

फागन के दिन चार री सजनी, फागन के दिन चार । देख ।

मध जोवन आया फागन में,

फागन भी आया जोवन म ।

माल^१ उठै सँ मरे मन म,

जिनका धार न पार री सजनी, फागन के दिन चार ।

प्यारा का खदन महकन लाग्या,

गात का जोवन लचकन लाग्या,

मस्ताना मन वहकन लाग्या,

प्यार करण नै त्यार री सजनी, फागन के दिन चार ।

गाधो गीत मस्ती म भर कँ,

जी जाधो सारी मर मर कँ,

नाचन लागो छमछम करक,

उन्न दो झुझार री सजनी, फागन के दिन चार ।

चदा पोहचा ध्यान मितर म,

हिरणा ना पोहचो अम्बर म,

मूनी सेज पही सँ घर में,

मानन करँ तकरार री सजनी, फागन के दिन चार ।

वृद्ध-वृद्धाश्रम म भी मस्ती का मन फूक देने वाला फाल्गुन मास वैसा रगरगाला है, यह एक हरियाना के एक गीत में पढ़िये । पहिले बात कितो सच्चे निगच्छण से भरे है —

काचो अम्यली गदराड सामण में,

धुनी री लुगाइ मस्ताई फागण में ।

इस तथ्य निरूपण व पश्चात् गात विरहपीडिता नरोत्तम का श्रार झुक्ता है —

कहियो री उम समुर मेरे नै तिन घाला^१ लेना फागण में ।

कहियो री उम बहुण म्हारा नै चार वष टट जाय पीहर में ।

कहियो री जग मेरे नै तिन घाली लेना फागण म ।

कहियो रा उम बहु म्हारी नै चार वष टट जा पीहर में ।

कहियो री उम देवर मेरे नै तिन घाना लेना फागण में ।

कहिया री उम भावन म्हारा न चार वष टट जाय पीहर म ।

फाल्गुन की मदिराम शामा जग वृद्धाश्रम म मस्ता का सचार कर देती

१ ज्वाला । २ भेना दुइ ।

हे ता विरहोच्छ्रिता उन्नतपौवनाना नय परिणताश्रो की क्या तथा हागा यह सहन अनुमानगम्य है। उपरांत गीत में ऐसी ही एक विरहविशेषा हरियानो नायिका प्रयाग उल्लसन का प्रस्ताव करती है कि कम से कम पाल्गुन में तो उसे जिना भेने ही ले जायें, परन्तु शत्रुघ्न, जेठ आदि ने एक रात्रि—चार वर्ष तक प्रतीक्षा करने का मुझ्ज मिलता है। प्यारा देवर भा उपदेश देने लगता है। एक ही आशा थी वह भी मिली ही गई।

यह गात रेगिस्तानी नदी की भांति नीच म हा शुरु हा गया है, आगे नहीं बना है। निराशा का अलङ्कार न उल्लेख म हा लुप्त कर दिया है। कैसी कल्या है, कभी असहाय अस्या है? हृदय का बात का स्पष्ट कह देने म लोकजन कितने कुशल हाते हैं, यह ऐसे उदाहरणों से गमभा जा सकता है।

एक गीत में चेतन मेधा (Conscious Mind) की भूलक मिलती है। विरहात्कठिता प्राणितपतिना नायिका को पति के परदेश गहने हुए बजमार पाल्गुन के आने का धुष्टता विनुग्ध कर रही है। इतना ही नहीं चन्द्र-कौमुदी क प्रति भी उसे शिखा है —

जय साजन ही परदेश गये, मस्ताना पागण क्यू आया।
 नय सारा पागण बीत गया, त घर म साजन क्यू आया।
 छम छम नाच सय नरनारी, मैं बैग दुखा की मारी।
 मेरे मन म नय अघेर मचा, तै बाद का बाद क्यू आया।
 इव पाया आया, जागियाना, जय ती आया पा मित्वाना।
 साजन दिन नोयन क्यू आया, जोवन दिन मानन क्यू आया।
 मन की तै अर्थी यधी पड़ी, आया म लागी हाय भड़ी।
 जब फूर मरे मन का सूक्या, लनमारा पागन क्यू आया।

गीत की अन्तिम पंक्तियों में नायिका की कातरावस्था की अवनारशा दूर है “मन का लै अर्थी यधी पड़ी, आया में लागी हाय भड़ी।” पति क जिना आने प्रतीक्षा करती-करता रा रही है, मर गया है। धार निराशा है।

एक दूसरे गात म उमादी बसत ने डेरा िया है, पर ऐसे मादक काल में निर्मोही पति ने परदेश यात्रा की ठाना है। नायिका को इस बात पर चाम है। नापक नाना युक्तियाँ देता है। पर पति जिना पाल्गुन की कल्पना भी व्यर्थ है।

नायक अपनी अनुपरिपति म नायिका का सात्वना दे रहा है कि व-

चला कातकर अपना समय बिता ले । किसी प्रकार की कोई चिंता नहीं है । घर में समस्त सामग्री है किंतु नायिका को सतोप क्यों ? पीहर भी उसे रोचक नहीं लगता, वहाँ भावजन के व्यंग्य बाण हैं । अंत में, नायिका अपनी श्रवस्या की कैफियत दे रही है —

भैल जुड़ा द्यू हे गोरी म्हारी बाजणो बैट्टी पीहर जाय ।
 मो बिदला मेरे मन बसा ।
 खड़ीण^१ पिघारी हो पिया बाप क थारै विन आदर न होय ।
 मो बिदला मेरे मन बसा ।
 बड़ी जै सूखू कदवज चरिए न डागर डोर,
 मो बिदला मेरे मन बसा ।
 कदव निमाणा^३ हा पिया टै पड़े हम पड्यो ए न जाय,
 मो बिदला मेरे मन बसा ॥

नायिका विपत्तिसंस्था में है । पितृव्य का असम्मानपूर्ण वातावरण उसके मर्म को वेध रहा है । चरी व सदृश सुख जाऊँगा जिसे पशु भी न खायेंगे । फिर भला आपके योग्य कैसे रहूँगी । ज्वार का पौदा मुककर गिर जाता है, मिट्टी में मिल जाता है, पर मुझसे मरना भी नहीं जाता ।

चैत्र कृष्णा प्रतिपदा को होली जलाई जाती है । उसी दिन धूल खेला जाता है । हरियाना में 'हालिका' द्वारा भक्त प्रह्लाद के जलाये जाने के प्रयत्न को लेकर एक हरजस (भजा) गाया जाता है । इस हरजस में बड़ी विलक्षण कल्पना की गई है कि होलिका का शीलवन्त्र ताम्र पवन ने भक्ता से उड़कर भालभक्त प्रह्लाद पर छा गया है और भक्त का प्राण रक्षा हा गई है —

गोदी क आदर भगत रामराम रह्या टेर । टक ।
 जन सँ चरचा सुणी थी हर ना, रामनाम की लगी लगन ।
 समझाया था एक नै माना दरसन की या लगी लगन ।
 हरियाकम नै नाय सुहाया मोघ की अग्नि लगी जलन ।
 निभय हो के भता भगत नै भय की भूतणी लगी भगन ।
 होलका ले गोदी म रंगी फूक जलादय डेर ।
 गोदी क आदर भगत रामराम रह्या टेर ॥
 होलका का एक साल यस्तर या लोम रिखी से लिपा था ।
 निममें अगनी परवेम हुच न यो ही कथा में गाया था ।
 पहिले नी या सगी हुइ था यो ए थोड मुग छाया था ।

हृद के देर कर्या हर मेती नहीं हुया मन चाहा था ।
 सील बन्दर के अन्दर बड के लागी थी व करण भधेर ।
 गोदी के अन्दर भगत रामराम रह्या डेर ॥
 चागरदे के चिता चिपा के निमक यौव में टह अगन ।
 जद वा अगन जारी हुइ थी बदन लडकी लगा जनन ।
 चागरदे के अमर फिर ये जिनके हाथ में मद्ग नगन ।
 जगहां नहीं था कहीं निकलप नै अमर रहे ये घेर ।
 गोदी के अन्दर भगत राम राम रह्या डेर ।
 मुलतान सहर के मव सवना नै अगनी में माला गेर दई ।
 दीनानाम बचा लडक नै पा सनों नै डेर दई ।
 सरा नाम द्विपता दुनिया में हमने भठरी पेर लइ ।
 जै लडका जन जाय अगन में अत अमरा की जीत हुई ।
 जै भगत जन जा अगनी में क करयोगा पेर ।
 गोदी के अन्दर भगत राम राम रह्या डेर ।
 ऐसी पवन चरी जोर की चिता तो पाह बगाय दई ।
 सील बन्दर की उयल-पुयल के लडक पे उटाय रई ।
 हुलकां तो वा जवने लागी अपरा नाय थवाय लिया ।
 दगा किमी का सगा नहीं मैं ममनेगा को मिहरी का सेर ।
 गोदी के अन्दर भगत राम राम रह्या डेर ॥

हाला एक निरिचत मुहूत पर जलाइ जाती है । उसकी प्रखिण्डा का जाती है । जो कि नन्दरिनों नूना जाती है और जो तडकर अग्नि न डाल चाते है । इसन पर अय लिय जाते है—अयम, अग्नि को भाग दिया जाता है, दिताय—प्रहा मज को मुग्धा के लिये जो वोन चाते है । जो चना लखनावा का अग्नी बन्नु है और निगति क विद्वद रामबारा है । कई लोक कथानिरी में आता है कि माता ने जो मकर पुत्रों का आपत्तियों में रक्षा की ।

इसी समय बच होला बचा टा जाता है ता एक लामाचार मनाया जाता है । एक मुजक बलना अपना लेमर अयवा उस लाम को लेकर जो बसत क अग्नि हला दहन के स्थान पर गाइ दिया जाता है, समीपस्थ जलाशय में बुझाने के लिए ले जाता है । विदनास है कि मज प्रहाइ को तप्त शान्ति क लिए यद उपाय किना जाता है ।

हली के अमर पर पुचान और असीर का निराली छया रहती है । मानव मान भा मानो प्रकृति का होइ से रग-विरगा हाने का गौरव प्राप्त करता है । पुरातन काल में भा हाला का पर्व नडे आनन्द और मानकता

काल रहा है। यह एक पौराणिक होला के आदर्श पर देखा जा सकता है। पीयूषपर्वा पञ्चाङ्ग के गोप गोपेश की हाली का इस प्रकार वर्णन छोड़ा है —

पायु की भीर, अमारिन म गहि गोविन्द लै गई भीतर गोरी ।
भाई करी मन की पञ्चाङ्ग, ऊपर नाई अवीर की भोरी ॥
छीन पित्तम्यर कम्मर तें, सु निदा दह मीदि कपोलन रोरी ।
नेन नचाय कही मुमुनाय, लला फिर आइयो खेलन होरी ॥

होली में मस्ती, उमत्त यौवन की प्रेममयी अभियोजना तथा उद्दीप्त भावनाया का सुकुमार सौन्दर्य पाया जाता है।

ग कृषि-गीत

हरियाना एक खेतीहर प्रदेश है। यहाँ का किसान कृषि विज्ञान में बड़ा निपुण है। इतनी गहराई से पृथ्वी चीर, चरम से पानी निकाल और निष्कृत्य प्रकृति से जूझ गेहूँ, जौ और चना उत्पन्न करना इन हरियानी किसानों का नो काम है। इसी कृषियाग के विषय में एक लाकावित्त में कहा है 'कोमला का हीर, जाने खेती की सीर।' इस मरुभाय प्रदेश में मीलों दूर तक पालियाँ बना बनाकर सिंचाई करना कुछ कम कठिन कार्य नहीं है, परन्तु यह किसान रात दिन एक करके जनता जनार्दन की बुभुक्षा की शांति के लिए उपाय करते रहते हैं।

हरियाना के एक भूभाग में नहर का विकास वर्तमान समय का देन है। इससे किसानों की परिस्थितियाँ पारंगतित अवश्य हुई हैं, पर हरियानी किसानों ने नहर के पाना की पूजा नहीं की है। इन लोगों के अनुभव इसे वरदान स्वरूप न मानकर एक विपत्ति ही समझते रहे हैं। एक उक्ति में कहा गया है "जहाँ जावे पानी नहर, यहाँ जावे शमारी नहर।" नाना प्रकार के राग एवं प्रायश्चा उपद्रव नहर के पाना की भेंट में मिले हैं।

हरियाना का किसान गात इन्हीं परिस्थितियों के चारा और घूमता मिलता है। इन गातों में धरती माता का देन का वर्णन आया है। उश्नाइ, क्या, अनाज, पैल, गाय एवं मिमान का अन्वेषण आदि के गीत इस फोटे में आते हैं।

अन्य प्रदेशों की भाँति हरियाना प्रदेश में भी उश्नाइ का अन्वेषण एक आशा एवं उत्साह का काल है। इस पावन काल में किसान कई प्रकार के शत्रुन मारता है, कई देवताओं का मनातियाँ करता है। उसी समय का

एक नव्य रूप में प्रयुक्त होनेवाला गीत हमें मिला है। इसका रूप पूज्यता स्थानान् होने पर भी स्पष्टरूप बन गया है —

घरती माता नै हरयो, करयो,
 गऊ के जाये नै हरयो करयो,
 जीवज के भाग नै हरयो करयो,
 दाया रोडे नै हरयो करयो,
 गंगा माट नै हरयो करयो,
 जमना रानी नै हरयो करयो,
 घना मगल को हरनै हरयो,
 दिना बीज उपजायो रोत्र,
 बोन बरयो सो मया नै मयायो,
 घर भर आगन भरयो ।

मिमान का एक और अने अथक परिधन की धुन है, ता दूसरे आर उभय आस्था मा दयनाय है। वह भाग्य और उद्यम न लिख्य हुआ अन्ना फल के निष्प घन्टा माता (बसुधरा) का अनुग्रह चादता है। प्राण देवता अथवा प्राणदेवता, गंगा माता और जमना राजा का धृता एक उभय पञ्च है। घना मन्त्र के निष्प्राय आन्धान ने ता उभय मिमान का अर भी हन्ता प्रदान की है।

हरिवाना किमान का आदर्शकर्तारै बड़ी स्वय एव स्थूल है। ये ता मौलिक आदर्शकर्तारै है। श्रेय चित्तानन उने नही मुताता। एक स्थान पर यह स्वय बोल उठा है —

दम चगे दैल देख, वा म्म मन बेरी,
 हक हिमाया न्या, वा माक मार जोरी,
 भूरी भूम का दूषा, वा शबड घोळणा,
 हतना नै करतार, तो बौहिर ना बोनया ।

घर में म्म चगे दैन हो, फल के बाद में लगान, मानगुबाय मांगा आवे, नूय भय दूष देनी हा और उसमें खबडा घेनकर पार्य। यदि भावान् हतना दे नै ता तिर उत्र न चाहिए। किमान नै जानन न सनेन न निष्प दया स्थान है। उसको आदर्शकर्तारै मानी मायी है।

एक ग्रन्थ गीत में यह नूस्वर्ग का कथना नेकर आया है। उसका पार्थिव—स्वर्ग चार भाजन, गौधन, उदार पना एव अश्वारोहण का कुटुम्ब में सिद्धकर पैदा है —

उजला भोजन, गाए धन, घर कलवती नार ।

चौथे पीठ तुरग की, बहिश्त निशानी चार ॥

हरियानी किसान घर बैठे ही स्वर्गिय आनन्द ले रहा है ।

दूसरी आर, राजस्थानी किसान हमारे किसान से एक पग आगे बढ़ गया है । उसने आनन्दालनासमय सुखी जीवन में एक मस्ती पूर्ण आत्म विश्वास है और इस परिस्थिति में वह लीलापुरुषोत्तम आनन्दकद भगवान् पर भी अग्र्य फस गया है —

बनवारी हो लाल ! कोन्या धारे सारे ।

गिरधारी हो लाल ! कोन्या धारे सारे । टेक ।

श्री महल भालिया धारे । धारी बरोवरा रहे कराम, कोइ टूटी टपरी म्हारे ।

गिरधारा हो लाल कोन्या धारे सारे ।

श्री कामधेनरा धारे । धारी बरोवरी रहे कराम, कोइ भेस प डही म्हारे ॥

बनवारी हो लाल कोन्या धारे सारे ।

श्री हाथी घोड़ा धारे । धारी बरोवरी रहे कराम, कोइ ऊट टोडड़ा म्हारे ।

गिरधारी हो लाल कोन्या धारे सार ।

श्री भाला बरही धारे । धारी बरोवरी रहे कराम, कोइ जेली गडासी म्हारे ।

बनवारी हो लाल कोन्या धारे सार ॥

श्री रतनागर सागर धारे । धारी बरोवरा रहे कराम, कोइ डान भर्या है म्हारे ॥

गिरधारा हो लाल कोन्या धारे सार ॥

श्री सोसरु सक्किया धारे । धारी बरोवरी रहे कराम, कोइ फाटा गुदड़ी म्हारे ।

बनवारी हो लाल कोन्या धारे सारे ॥

श्री राधा राणी धारे । धारा बरोवरी रहे कराम, कोइ फरु जाटणी म्हारे ।

गिरधारी हो लाल कोन्या धारे सारे ।

कैसा निश्चल गर्व है । किसान अपना साधारण परिस्थिति में कितना मनुष्य है । उसे टूटी भाँपड़ी में वही आनन्द है जो गणराज्य में । उसकी भँस कामधेनु से किस बात में कम है । उसकी सुपुष्ट क्लेशरा जाटनी महारानी राधा के समकक्ष ही तो है । इसलिए वह ताल टोक कर भगवान की समता कर रहा है । सताय परम सुखम् ।

हे बनवारा, हे गिरधारी, तुम जाहे कितने ही बड़े हो, मैं अथ तुम्हारे बरा में नहीं हूँ । तुम्हारे महल हैं, पर मेरी भोपड़ी भी उससे कम नहीं । तुम्हारे कामधेनु है तो मेरे पास गाय भँस आदि हैं । तुम्हारे हाथी

घाड़े हैं, मेरे ऊँच बेल हैं। तुम्हारे पास भाले-बरछी आदि शस्त्र हैं, ता मेरे पास जला और गढासा है। तुम्हारे पास सागर है तो मेरे पास डाय अयात् पानी की तलैया है। तुम्हारे पास सुख-सुविधा के सामान ताशक-तकिया हैं ता म अपनी पटी गुदड़ी में ही मस्त हूँ। तुम्हारे राधा जैसी रानी है ता मेरे घर भी एक जाटना है।

हरियाना में एक गीत 'हलिदा' के नाम से प्रसिद्ध है। इसमें कुलम्भू की अपने स्वामी के साथ बातचीत है। गीत में हरियाना किसान की ममदि का एक पूरा चित्र उभर आया है। किसान के चार हल हैं और आठ बैल हैं। बाजरे का राटी और साथ म बधुए का साग कैसा प्रकृति सुलभ भोजन है। फल्ल व पकने पर दम्पति प्रसन्न है कि उनका खेत में बहुत अनाज हुआ है। नायिका की दृष्टि इस समृद्धि के साथ अपने आभूषणों की आर गई है —

बाजरे की रोगी पोड़ रे हलिदा^१, बधुए का राधा रे साग।
आठ बलधा का रे हलिदा नीरणा^२, चार हलिदां की छाक।
घरमन लागी रे हलिदा यादलो।
सास नणद का रे हलिदा थोलणा^३, इषदूण उठावे छाक।
कमके ती रे बाधो गोरीधण लाउणा^४, म दे उटाख्यो छाक।
खोल ते खोला रे हलिदा में पिरी, किते न पाया धारा खेत।
ऊंचे चढ़के गोरीधण देखली, ग्हारे धोले बलध, के टाल।
पाछा ते फिर के रे हलिदा देखले, कोइ बोम मरे छकियार।
किसाक जाम्या रे हलिदा बाजरा, किमीक जाम्मी से जुआर।
लम्बे ते सिरटे^५ गोरीधण बाजरा, मुदवा सिरटे जुआर।
के मण बीघे निपने रे हलिदा बाजरा, के मण बीघे जुआर।
नौ मण बीघे निमजा गोरीधण बाजरा, दसमण बीघे जुआर।
अपण घढ़ाले रे हलिदा गोखरू^६, मेरी भवर की नाथ ॥

इस गीत में नायिका की अलकरणप्रियता दर्शनीय है। अन्य जिम्मेदारियों (उत्तरदायित्व) तो दूर रहीं, दम्पति की दृष्टि उत्तम फल्ल के साथ अपने आभूषणों की ओर अधिक है। उनके 'बजट' में आभूषणों की मद सदैव रहता है। वस्तुतः इस गीत में किसान जीवन की सक्षित कहानी समाई हुई है।

१ हाली, हल चलानेवाला। २ चारा। ३ हसना, उलहाना। ४ कमरबद्ध, नाड़ा। ५ बाल मुट्टा, ६ कानों में धारण करने का आभूषण।

कृपि गीतों में वर्षा की चचा होनी तो जरूरी है। फिर हरियाना तो वर्षा के लिए तरसता है। वर्षा की जा प्रतिष्ठा हरियाना निवासियों की दृष्टि में है वह भला बंगालिया एव बिहारियों की दृष्टि में कहाँ? हरियानी कृषक पत्नी जिमका पति आधी रात से ही कुत्था चलाते के लिए उठ जाता है बादल से प्रार्थना करता हुआ कहता है —

ऊपरां बादलिड़ा ऊपरां क्यू जा,
बरसे से क्यू ना हे ग्हारे देस ।

वर्षा के आह्वान में कौसी निराशा है? यदि वर्षा चले तो नायिका उसे क्षणभर में धरसा ले। साथ ही बादल के वर्षण सामर्थ्य की बात कहकर उसकी प्रशंसा भी की गई —

छन म पालिड़ा धूलमधूल,
छन म ती भरद जोहड़ डामडा^१ ।

अतः, यह वर्षा प्रार्थना उपालम्भपूर्ण रोमांस में पागवतित्त हो गई —

सूता रे पालिड़ा रूपा की छा,
रोत उगाड़ा रे मेरे बाप का ।
हूयो र पालिड़ा तरेकी रा,
रोत उगाड़ा रे मेरे बाप का ।
मन दे हे सुंदर बरधा की गाल^२,
तरे सरीफी ग्हारे की गोरहा ।
आइये हे सुंदर ग्हारे के देस,
लहण^३ रगा हे उपर चूदड़ी ।

लोक बाला की साथ रगा लहगा और चूदड़ी तक ही है।

किमान को अपने जीवन में कई प्रकार के अज्ञानों को मिलते हैं, पर चाजरे का पौष्टिकता लोक प्रसिद्ध है। राजरा स्वयं एक शक्तिशाली अज्ञान है। यह जल देता है। एक गीत में वह अपने गुणों की रसमें व्याख्या कर गया है —

यागरा कहे में घड़ा अलवेरला,
दो मुस्मल स खण अपेला,
जे तिरी नापो ग्रीचड़ी र्थाय,
पृत्तमान कोरा हो गाय ।

१ छोटा जोहड़ । २ गाली । ३ लहगा ।

एक अन्य गीत में बाजरे का नमकट विनित किया गया है। वह विनितना छोटा है उठता हा खाग है। उसकी शैताना दगुनाय है —

आध पाव बाजरा कूट्टा बैगी,
उएन उएन पर भरियो, जान बाजरा।
आध पाव बाजरा पचाएर बैडा,
सदर सदर हदिना भरिया, ईना बाजरा।

विनितन बाजरे का कूट्ट उठन कर विचड़ी पडा है ये इस गीत में अपने निराम्य पर अवश्य हा लक मूलम काव्य प्रीतिना का सराहना करेंगे।

उदयाना एक गीत न ल प्रानारा ने विचड़ी की आत्मानल कथा सुना दाया है —

म्हारा भागे लागे भाचड़ो।
म्हारे घोसो लागे मोचणे ॥
छुळकरो छुडयो बाजरो।
दे खा ए मूग की दाग ॥ माडो मोचड़ो ॥
X X X
सदबद सोभि बाजरो।
कोड लधरघ सोभि दाग ॥ मागे राचणे ॥
दूध सोचड़ो खाया धेदुग।
कोड वरस म्हारी चाड ॥ मागे राचणे ॥

सद्यफलप्रति अम का सायकता का प्रताक है, अत कुलचधू के मुख में पाना प्राणा स्वामाविक हा है।

हरिपाने का जप से नहर का पानी वरगन स्वरूप मिला है, यहाँ पर इम का मेना होने लगी है। यह खेता नर पल्ल (केश मार) बहा जाता है पन्तु हरिपानी किसान धू ने, जो अपने घणा (स्वामा) का घर के अजिर में बाहर जेत क्यार में भी साथ देता है, स्व का अर्थ नहा दिया है। वह इम न हार्थ वतुत म्हाइ गर है। एक गीत न यह अपने कष्टों का वररा इस प्रकार दे रहा है —

बोहत सताड इस्तदे रे, तने बोहत सताइ रे।
वालक छोडू रोवते रे, तने बोहत सताइ रे।

डालकी में छोड़्या पीसना,
 अर छाड्डी सै लागद^१ गाय,
 नगोदे^२ ईखड़े ! तने बौहत सताई रे ।
 कातनी म छोड़्या कातना,
 अर छोड़्हे सै मा अर बाप,
 नगोदे इखड़े ! तने बौहत सताइ रे ।
 बौहत सताई ईरडे रे, तन्ने बौहत सताइ रे ।
 बालक छोड़्हे रोवत रे, त नै बौहत सताइ रे ।

इस की गेती परिश्रम-साध्य है । इस गीत में श्रमश्लथ किसान बधू का दुलार भरा उलाहना है । यह गरीबी की दैन्य-चीत्कार नहीं है ।

एक दूसरे गीत में इल की निराइ करता हुइ कया ने रोप की रेसाय उभरी है —

इग नलाई के फल पाइ,
 इर नलाई मन कगे घड़ाइ,
 ले गया चीर बहु के सिर त्याइ ।
 मुसरा तै लड़गी पीठ फेर के लड़गी,
 आजा हे सामइ तने डडा तै घड़गी ।
 जेठ तै लड़गी गाती खोल के लड़गी,
 आजा हे जिगनी तेरा धान सा छड़गी ।
 देवर तै लड़गी घुघर खोल के लड़गी,
 आजा हे दर्यारानी तने खुटियां धरगी ।
 पदीसी तै लड़गी दिव खोल के लड़गी,
 आजा हे पदीसन तने पाइ के धरगी ।
 बालम तै लड़गी महलां बँटी हे लड़गी,
 आजा हे सोकन तेरा बँका बिती घड़गी ।

मिथ्या दापारापण ने प्रामोण कुलमधू के अन्तस्को विलुब्ध कर दिया है । यह मयाबह सिहनी-सी बना सब सबधियां का नापती है । पद्मोवन और सोकन की तो यह घड़ी दुर्दशा कर डालने का बीजा उठाए है । निस्सन्देह यह एक मार्मिक और मनोवैज्ञानिक चित्रण है ।

इस पेरते समय फाल्गुआ में मल्हारें भी गाई जाती हैं । रात्रि के साद्र पक्षात घण्टा में किसान की प्रतिभा का पर लग जाते हैं —

१ दुपार, अधिक बूध दनवाली । २ ठमस, मस्त ।

घड़ा खेरे घादणै, मुसी पिलग विद्या ।

नागू जिद एकला, मरु कटारा ग्या ॥ मेर बाबले मल्हार ॥

घाम जले उयू खेम जले, कुड़े जले कसारा ।

घूषट में गोरी जले, हीण पुरप का नार ॥ मरी बाबली मल्होर ॥

एक मल्हार ने का कुछ प्रदेश में प्रचालित है, प्रताकात्मक शैली का प्रयोग हुआ है —

धम्बर ऊपर हल खनै, बलद गऊ क पेट ।

हाली तो जनमो नहीं, रणियारी खड़ी खेत ॥ मेरी बाबली मल्होर ॥

इस शैली का सध्याभाषा नाम भी दिया गया है । उलटवासी ढंग पर बना ये मल्हारों बड़ी रहस्यमयी बात कह जाती हैं । एक दूसरी मल्होर में कोल्हू की क्रियाओं का कैसा सागापाग वर्णन आया है —

काला हिरन कोल्हू खले, गोह गडीली देय ।

कण्वा बंग गुद करै, मदक भोक्क देय रे ॥ मेरी बाबली मल्होर ॥

इन मल्हारों को गा-गाकर किसान अपने शीत को झुलाता और मनोरजन करता है । इन बाबली वचनों में कमी-बमी ज्ञान विज्ञान के तन्त्र भी भरे रहते हैं । कोल्हू की इन मल्हारों में शृंगार की भी कुछ-कुछ पुट पाई जाती है या विहारी की शृंगारिकता की समकक्षता को पहुँच जाती है —

नायक नायिका के बाहु मूल दर्शन की इच्छा लेकर कह रहा है ।

जल ओइडे काम्मन खड़ी खाम्बे खेस ग्हाय ।

रस्ता मने बतायद, ऊखी करके माय ॥ मेरी बाबली मल्होर ॥

एक स्थान पर कृष्ण-कामिनी ने अपने पति को मक्का की खेती में विरुद्ध मुझाव दिया है । गात में मक्का की कष्टकर पिनाइ का प्रयोग देकर, अंत में, यह आशा व्यक्त का गई है कि सास के पीछे इस दुष्टा में श्रवण्य मुक्ति मिल जायेगी ।

पाच पचास का नाय घड़ाइ, पड़गा लामना^१ पहरन न पाइ ।
सात ताहीं करी लामनी, मान पई घरा दिगाराइ^२, आगे सासइ खदती पाइ ।

दस्ता ब्यू ना काम, बगन ब्यू ना छाइ ।

मास मिरा नै मुका री सुकाइ ।

१ पेत्रेय ब्राह्मण में 'पितृग प्रलाप' का वर्णन आता है । एतश्च मुनि वक्ता करते थे । उसी प्रलाप शैली पर ये मल्हारों बनी हैं । २ फमल की कटाइ । ३ वापिस छाइ ।

ढाड़ सेर की कनी, बगल ऊर क, आधी पीस कै कथा घोरै थाड़ ।
 के सोवैहो क जागै नणदी के भाड़ ?
 मुकी मत चोड़ण हो कलावती के भाड़ ।
 डिगगी धरण^१ ठिकाने नहीं थाड़ ।
 सास मर जागा, नणद घर जागी,
 तेरे मेरे राज म मुक्की छुट जागी ।

किसान का सबसे बड़ा साथी पैल है । पैल ही किसान की शक्ति है । वह उसकी सबसे बड़ी आवश्यकता है पर यह विधि-धामता है कि बुढ़ापे म पैल पर से किसान की कृपादृष्टि उठ गई है । वह बिलाप करके कहता है —

अरे न्यू रोवै बुढ़ा बँल, मन्ने मत बेचै रे पापी ।
 तेरे कुधा कोल्हू में चाल्या, नाज कमा के तरे घरा घाल्या ।
 इव तन्नै करली सै बगजर की छाती ।
 तिरा बगजइ रोत मने तोड़्या, गाड्डी तै भुह ना मोड्या,
 इव्य मेरी बेचै मे मीटी ।

पैल के रोदन म कष्टना की पुकार है और किसान की निर्दयता की मार्मिक अभिव्यजना है । उसका भाग्य की विडम्बना यह है कि उसे बुढ़ापे म भी शांति नहीं मिलती ।

गाय भी इस प्रकार अपना दुर्गति पर अजस्र अश्रु वषा बहाती है । ससार की कृतघ्नता एव अघन्य मनावृत्ति का चित्रण नीचे के गीत में हुआ है —

न्य कह रही धौला गाय, मेरा कोड़ सुखता नाइ,
 मेरे क्विमे सिरी भगवान, मैं दुख पाय रही ।
 मेरा दूध पिबे गमार, धी तै गार्ब खीचदी ।
 मेरे पूर कमावें नाज, मँधे भा की रइ ।
 जब भी मरे गत पै छुरी ।

एक लाफगीत में ऊट की कहानी प्ररनोत्तर रूप म कही गई है —

ताकतवर बलवान बना, क्यू भुनी सकल बनाई रे ?
 के छुमेगा मन मेरे की धणी मुमीघत थाड़ रे ।
 दइ सुदा ने टाग बही जो दो दो गज तक जाती रे ।
 ऊपर धोउम्मा लद घणा जब तीन तीन बन ग्याती रे ।
 पेट उमरमा छाती चग्गा ह्तर^२ से मच जाती रे ।
 जगै रगदक^३ इटर क गा मिलता बोड़ हिमाती रे ।

१ नाभि । २ ऊट की घड़ टुड़ जा बगनी टांगों क बाच उभरी होती है ।

आश्रय लेकर अपने कष्टों को हलका करता है। काल्ह चलाते उसने मल्लार गान किया है, तो गाड़ी चलाते भी उसके स्वर निशोथ के शांत क्षणों के सहचर रहे हैं। कुआ चलाते वह बारा लेकर भ्रम विनोदन करता चलता है। इन बारों में कहीं कहां जीवन दर्शन के तत्त्व भी उभर आये हैं। कहीं-कहीं धार्मिक एवं सांस्कृतिक झलक भी मिलता है। भारत के प्राणों में धार्मिक अतिशयता हाली, कीलिया और चरसिया व अन्तस् को स्पर्श कर गई है —

भर गया मेरा राम मनाइयो ।

आगया भाई कीला खोल दो ॥

हरियाना में विगत युग में कई भीषण दुर्भिक्ष पड़े हैं। उन अकालों की कथामात्र रामाचित कर देती हैं। परन्तु धन्य हैं घरती माता के ये लाल जो जीवन मरण की उन घड़ियों को भी गा गाकर बिता गये हैं। किसान जीवन की मधुरता का श्रेय निश्चय ही लोकगीत का है। कठोर भ्रम के बीच ये गीत नये जीवन का संचार करते हैं।

घ राजनीतिक प्रभाव के गीत

राजनोति ने भी लोकगीतों में रग भरा है। राजनीति आज के सामाजिक वातावरण में गहरी तक पहुँची हुई है। राजनीति की चचा आज के कवि का धर्म बन गया है। एक गीत म पूज्य बापू के निधन को राष्ट्रीय चरित के रूप में अंकित किया है —

भारत के चन्द्रमा छिपगये, रहे त्रिलस तारे,
एक अज्ञान मराग था तिन गाधी जी मारे ।
वरण प्रार्थना गया हुआ था सुत्तम हुए दिन धोली,
थाए दहने दो कन्या थी भरे पिता की बोली,
धेदुर्दी ने दया करी ना तीन मार दी गोली,
बहुत से माणस् कट्टे होंगे घणा घणा व टोला ।

भारत भाग्याकाश व चन्द्रमा छिप गय हैं श्रीर उनही याद में तार त्रिलाप कर रह हैं, वास्तव म एफ गाथक उक्ति है ।

आगे एक गीत म कहा गया है। क बापू ने देश के लिए क्या नहीं किया। जब तक जागित रह उहने अपना रक्त से राष्ट्र की नींव का सींचा और शक्तिशाली बनाया। वे अपना धर्म पर बलिदान हुए। बापू की मृत्यु पर विदेश वालों ने भी शोक प्रकट किया —

भारत का आज़ाद बना के गुर्ग के बीच निग दिया,
 एक कर्नाली आरु हम से बिना रिता के करगया ।
 गुर्ग बना का उगन चाचा के मीठना गज दिया था,
 बना के पैर सर उठ गज नदी से मीर दिया था ।
 इतरम बना बना गया से गज गज भज दिया था,
 गजगज बनना दिग्द बना का दिग्द से दग्द दिया था ।
 उग मारी का उगम चार, चारी गु निरगगया
 भारत का आज़ाद बना के गुर्ग के बीच निग दिया ॥

X X X

कानू मारा कालिये गु से दिग्द के गुर्ग दियाण,
 भारत के तिनन मारा य एक दग गजगण ।
 चमरीका, इगर्द, दग से दग्द के दग्द दग्द,
 उगम चार उगम, चीन गज दग दग्दगण ।
 गु उग का का मी चंदा मुकगया, तिन दिग्द कानू नी मारये,
 भारत का आज़ाद बना के गुर्ग के बीच निग दिया ॥

प्रथम महापुरुष का एक पटना हरिद्वारी भागी म विगर्द हुए है । इद
 नगर का विगाला महापुरुष के प्रसर्दक वज्रधरा म एग-विद्युत ही गया और
 गमन आट विगाला पार-नीति के प्रसर्द हुए । नारायण के दग्द इतिहास के
 मार-याग्या । दद मर दिया है —

नरमन ने तोल मारया, जा गुग्ग चार म ।
 मारदुगे विगर्दी भाजत, से । दोग गण मगर म ।
 है उन चारी का के नीच, तिनक बाधम ए मग्दर म ।

लक्ष्मीता में एम अर्धम उगहरण निर्मेग तिनक द्वारा तुन इतिहास
 के अथकारमय पला पर आदरयकक प्रकाश पदगा । अभी इतरे संकलन
 एवं मान की आयश्यकता बनी है ।

४ अन्य-नीति

अब तक हमने उन भागी का लिपा है तिनक दार पुत्र जम य विवाहादि
 किर्मी मांगलिक अथगर पर अथरा श्रुत-पर्यं आदि गौन्दयमय पारत एव
 मादक यातावरण म भिरकी है । देवी देवाद्या की धाक (पुत्र) के पवित्र
 उन्मय म गाव ज्ञानरामे गीत भी गत-गृष्टो म रगाव या गुग्द है । इतक

अतिरिक्त एक विशाल गीत सम्पत्ति का निरीक्षण प्रकोण नामक उच्छ्वास में पृथक् किया गया है। अतः इस सर्वांगीण एव विशद विवेचन के उपरांत, जैसे तो कुछ अवशिष्ट नहीं रहता, परंतु जीवन जिस प्रकार वैविध्यपूर्ण है तथा जीवन के व्यापार जिस प्रकार गणनातीत हैं, उसी प्रकार जीवन का काव्यमयी व्यापार भी अनेक एव असंख्य हैं जिनका किसी एक स्थान पर अध्ययन उपस्थित करना मान कठिन ही नहीं है अपितु असम्भव भी है। इसलिए हम यहाँ गीत साहित्य के उन रूपों का अवलोकन करेंगे जो उपरोक्त प्रकारों से पृथक् पड़ गये हैं।

‘हुचकी’ जीवन की अति साधारण सी घटना है। हिंसा, हुचकी अथवा हिचकी के कई कारण होते हैं। विश्वास के आधार पर यह अपने परों पर किसी स्वजन के स्मरण को लेकर उड़ती है। कभी-कभी अजीब भी हिचकी का कारण होता है परंतु लोक कवि की दृष्टि इसमें आगे की राज कर गई है —

यो हुचकी क्यूँ आवै सै राम यो हुचकी ।
 के यो कज्जी की हुचकी सै जो सारी हाण^१ आवै सै ।
 कवज कइ पर उसनै जै रोटी भी नहीं खावै सै ।
 यो हुचकी क्यूँ आवै सै राम यो हुचकी ।
 बिड़ड़े साथी की होना कद^२ यादकरण की हुचकी ।
 याद करै से तू तै, पर तू किसनै याद आवै मै ।
 यो हुचकी क्यूँ आवै सै राम यो हुचकी ॥
 अच्चा तै फिर के मेरा^३ होगी मरने का यो हुचकी ।

परंतु किननी धार निराशा और बरसी है उस परित्यक्ता विस्मृता वियुक्ता नायिका का —

“मौत भी पर मेरे धोरै आ आ के चली जावै मै ।”

इस ऐहिक कष्ट लीला को अपने में समेट लेनेवाली मृत्यु भी उसके प्रति सद्य नहीं है। “आ-आकर चले जाने” से यह स्पष्ट है कि उने मृत्यु तुल्य कष्ट ही रहे हैं। गीत आगे बढ़ता है —

करता होगा राम याद, मनै वा ना न्यूँ भी कोन्वा ।
 जिसनै याद करै सै राम, भला हु म कद पावै मै ।
 यो हुचकी क्यूँ आवै सै, राम यो हुचकी ।

ऐसी तन्ना दे कि न लोरु अपना, न परलाक ।

सौड वाटी, सौडिया बागी, सामे रह गइ रजाई,
यो भी क्यू ना राठी राड के रातों मरी जवाह ।

छोटे छोरे कै न जागी

घर बाग घर घामा बाग सामे रह गइ मोरी,
यो भी क्यू ना बागी 'राड के रातों हो गइ चोरी ।

छोटे छोरे कै ना जागी, बालम धाणे कै नाजागी,
दश निराणे कै ना जागी ॥

सादर से प्राप्त एक नृत्य गीत में एक युवती अपने 'काले सइया' को बेच डालना चाहती है। वह उसे डुबा भी देती है। उसकी एक मान इच्छा 'काले ससम' के उत्तरदायित्व से मुक्त होने की है —

हम काले से ब्याहे री नणदिया,
मेरे पिछोक्कड बाजार लगत है,
काले को बेचन जाऊ री नणदिया,

हम काले से ब्याहे री नणदिया ।

ककड़ी भा त्रिक गइ, खीरे भी त्रिक गइ,
काले को कोई भी ना लवै नणदिया

हम काल से

मेरे पिछोक्कड गगा रहत है,
म काले का पेत्रन जाऊ री नणदिया,

हम काले से

डोव नाव में घर नै आया,
पाड़े पाड़े काग मरकता आया री नणदिया,

हम काले से

कोटे अदर सात कोटरी,
काले को मूदण जाऊ री नणदिया,

हम काले से

थरनों पाड़े मिला यालमा,
काले से गोरा हो गया री नणदिया ।

गीत के अन्त तक आने आने पाठकों को विदित हो गया होगा कि नायिका की मनमोहक परिचयित है। विरहानल में तपकर स्नेह सिंचित शंकर गीत की नायिका का युवावस्था आने पर काला पति भी "स्वामु गौर (दत्त) त्ति (शय)" दिग्गज दत्ता है। मचाइ है कि अभाव में हा किसी लु का ठीक ठीक मूल्य आका जाता है ।

के गीतों तक गा जाते हैं। अन्य प्रकार के गायक वे 'बेरूपिया' अथवा 'जम्बूपिया' हैं जो नीची जातिवा के उत्सवों पर 'मडली' बनाकर गाते हैं। इनके गानों में अभद्र एवं बेहूदे अनुकरण के अंश सम्मिलित होते हैं।

लोक-गाथा शास्त्री डा० चाइल्ड ने लोक गायकों के दो विभाग किये हैं। एक, चारण गाथाएँ (मिस्ट्रैल बैलेड्स) और दूसरे, परम्परा गाथाएँ (ट्रेडिशनल बैलेड्स)। चारण गाथाओं से उनका तात्पर्य उन गाथाओं से है जिन्हें घूमते फिरते भाट या चारण स्वयं बनाकर गाते हैं। परम्परागत गाथाएँ वे किस्ते हैं जो जनता में चिरकाल से प्रचलित हैं। इन्हीं किस्तों को पजारी की लोक गायकों के अनय अनेक कैप्टिन सर टेम्पल ने लीजेंड्स नाम दिया है। डा० सत्येन्द्र ने इन गाथाओं के लिए श्रवदान शब्द का प्रयोग किया है।

टेम्पल महोदय ने इन गाथाओं को छः चक्रों (Cycles) में विभाजित किया है।^१ उनके विभाजन की भीमासा इस प्रकार है—प्रथम चक्र 'रसालू चक्र' के नाम से अभिहित किया है। इसमें आनेवाली गाथाओं में शौर्य के चमत्कारपूर्ण साहसिक कार्य मिलते हैं। द्वितीय चक्र 'पाठ्य चक्र' है, जिसमें महाभारत के प्रकार की गाथाएँ आई हैं। इन गाथाओं में किसी न किसी रूप में पौराणिक वृत्त का सम्बन्ध मिल जाता है, अथवा यों कहा जा सकता है कि किसी पौराणिक गाथा का लाव गायक ने अपनी कला का आधार बना लिया है। तृतीय चक्र में 'शौर्य और मिद्धि' का सम्मेलन है जिसमें योद्धा-मर्त्या का कथाएँ मिलता है, इन्में 'गूगा चक्र' भी कहा जा सकता है। चतुर्थ प्रकार की गाथाएँ सिद्ध सम्बन्धी हैं, यथा पूरन भक्त अथवा धनाभक्त आदि। पाँचवा चक्र 'सती गरवर' के प्रकार की गाथाओं का है और अंतिम चक्र अथात् छठा चक्र स्थानीय प्रवीरा' से सम्बन्धित किस्तों का है, यथा 'किस्सा राव किरान गोपाल' तथा 'दग्गूल जाट बुलाखी का' आदि। इस विषय में इतना कहा ही अत नही है, अपितु विषय और विधान के आधार पर इनके और भी कई भेद किये जा सकते हैं।

कथा-चक्र के आधार पर भी गाथाओं में भेद पाया जाता है। यह भेद कई प्रकार का हो सकता है, परन्तु प्रेम, उत्साह एवं श्रद्धा तत्वों की प्रधानता से इन्हें निम्नलिखित तीन भागों में विभक्त किया जा सकता है —

१ सर थार सा टेम्पल "दि लाॅन्स आउ दि पनाच" प्रथम भाग, पृष्ठ १२ भूमिका।

आल्हा और ऊदल दो—भाइयों ने किस प्रकार चौहान पियौरा से अपनी मातृभूमि की रक्षा के लिए लोहा लिया, यह उत्तर भारत के आबालवृद्ध सब जानते हैं। वीर पुगव सतयोद्धा 'गूगावीर' के पराक्रमपूरा उदात्त चरित्र का जा मान हरियाने की जनता ने हृदय में है वह कथन की वस्तु नहीं है। आततायी यवनों से भारतीय संस्कृति के सम्मान रक्षणार्थ जा जीवन बलि गूगा ने दी वह इतिहास का अद्भुत घटना है। इन शौर्यपूर्ण गाथाओं का इस वीर प्रमदा भूमि में इतना ही प्रचार है जितना तुलसीदास ने 'रामचरितमानस' का।

हरियाने में तीसरे प्रकार के जो किस्ते मिलते हैं, उनमें अद्भुत तत्वों का सम्मिश्रण है। उनमें साहसिक कार्यों का उल्लेख होता है और अलौकिक तत्व प्रयोग म लाये जाते हैं। 'शीलादे' गाथा में शीला के महल के दीप, द्वार आदि बोल कर राजा को चकित कर देते हैं। इन मानवेतर तत्वों के द्वारा श्रोताओं का आश्चर्य अपनी सीमा तोड़ देता है और उनके हृदय में अचरणीय गुदगुदी पैदा होने लगती है। हरियाने में गूगा की अलौकिक आश्चर्यजनक शक्ति का राग ग्रहापा जाता है। गूगा कहानी में गूगा जंगल में है, तभी से वह अपना चमत्कार प्रकट करता है। रात्र के तैलों की लज्जा इस लेता है ता माता का स्वप्न में दर्शन व विपत्ति में मुक्ति का उपाय सुभाता है। वस्तुतः अद्भुत कार्यों से तथा नारी-समाज के गौरववधन से गूगा महिला जगत् में विशेष सम्मान पा गया है। भाद्रपद कृष्ण ६ का भागड़ी वीर की पूजा के मेले भरते हैं और रात्र जागरण होता है। 'जगद का पवारा' में भी परमार गात्रालयन वीर जगदेव के द्वारा अपना शिरच्छेदन एक रोमान्चकारी दृश्य है जिसमें अलौकिक तत्व सन्निहित हैं।

यहां यह विचार कर लेना भी समीचीन होगा कि लोकगीत और लोक गाथाओं में प्रमुख भेद क्या है? यह भेद दो रूपों में स्पष्ट देखा पड़ता है। एक—स्वरूपगत भेद (आकारगत अथवा बाह्य), दूसरा—विषयगतभेद (आभ्यन्तरिक भेद)। स्वरूपगत भेद के विषय में इतना जानना आवश्यक है कि गीत का आकार प्रकार छोटा होता है। उसमें एक भाव स्वल्प समय या स्थान लक्षर समाप्त हो जाता है। गाथा इसके विपरीत आकार में विशाल होती है। रागणा एक लोक गीत है जो कुछ पंक्तियों में समाप्त हो जाता है, किन्तु 'निहालद' एक लोक-गाथा है जो कई सप्ताह तक क्या कई महीनों तक गाई जाता है। लिखित में उसका आकार सदस्य पृष्ठों तक पहुँच सकता है। 'आल्हा' का पाठ्य में उत्तर भारतीय जनता का कठहार होता है, पूरे चतुर्मास गाया जाता है। कुछ गाथाएँ अप्रत्याशित छोटी भी हैं यथा 'किष्का रात्रिचरण गोवाल', पर तु फिर भी व किष्का लोक-गीत से आकार प्रकार में कई गुनी हैं।

लाक-गीत और लोक-गाथा का दूसरा भेद प्रधान भेद है। लाक गीत व. विषय है घर-दरहसी का प्राण्य, दृष्टद्वय को मीना तथा पारिवारिक व्यवहार के रग-निरमे चित्र उपस्थित करना आदि। लाक गीता में भिन्न भिन्न संस्कार—पुत्र जन्म, विवाह आदि, रेत क्या, श्रुत-पर्वों पर गाये जाने वाले गीत सम्मिलित हैं जिनमें घर दरहसी, प्रेम परित्याग, तथा, विधवा आदि व सुख दुःखों का चित्रण हा प्रधान है। कहने का आशय यह है कि घर व लघु घर में जीवन की जि अनुभूतियां का साक्षात्कार मानव-हृदय का हाता है, उही का भंडा इन लाक-गाता का मुख्य विषय है। शब्दान्तर म हम कह सकत है कि नारी-गीता का चत्र घर का वातावरण है। वृद्धा पुरुषा व गात शतरसमय हैं और युवक समाज व गात शृंगारिक हैं।

परन्तु लोक गाथा की भावभूमि लोक गीत से भिन्न है। लोक-गाथा एक लाक महाकाव्य होता है। महाकाव्या म मिलनवाली चार विशेषतायाँ—सजिवता (ऐक्शन), चरित्र (कैरैक्टर), दृष्टभूमि (सेटिंग) और कथा (थीम) में से लाक-गाथा में प्रथम पर विशेष बल रहता है। श्रत गाथा म गीता की मीति प्रेम के लिए विशेष ध्यान रहते हुए भी, मधर्म के लिए प्रधानता रहती ह। गाथाओं में वणित प्रेम में महान् मधर्म दिग्गया जाता है जिसका लघुगीता में प्राय शभाव रहता है। लाक गाथाया म वीरता, साहस एव रहस्य रोमांच का पुट श्रत्यधिक पाया जाता है। यश विराह जैम पुण्य का भी विना स्वाडे का सहायता व सम्पन्न नहीं होता। आल्हा को जिन्होंने पण या सुना है वे इस तथ्य म श्रनभिन्न नहीं हैं। 'पुरन भक्त' का गाथाया में जागिया की महत्ता दिखाने में गायक को बहुत समय व्यय करना पड़ता है। 'राजा मालू' अथवा 'किम्सा शालादे' रहस्य रोमांच का भदार है। नायक कद गाथाया में लोक मगल व साधक रूप में भी चित्रित किये गये हैं। 'निहालदे' रग में लाक सुलभ नायक सुलतान व द्वारा त्रिलाकतापी दानव का सहार एक लोक हितकारी कृत्य है। वास्तव में, लोक प्रचलित इन गाथाओं का पन्ने मुाते मध्ययुगान राजस्थान के जोहर जैसे कारणिक दरय आँला व सामने तैरने लग जात हैं।

लाक गाथाएँ प्राचीन प्रवीरों की और प्रसिद्ध सिद्धा की ही नहीं, नये व्यक्तियां की भी हा सकती है और उनमें भी कल्पना का पृथ लपवाग हुआ मिल सकता।

(ख) हरियानी लोक-गाथाओं में पात्र

हरियानी लाक गाथाया अथवा किम्सा के सार एव रहस्य को हृदयगत करने व लिए सप्रथम उनका पात्रा का विश्लेषणात्मक श्रव्ययन आवश्यकीय

है। गाथाओं में मिलनेवाले पात्रों में नायक, उसके सहयोगी, दैत्य, राक्षस, डाइन, जादूगरनी आदि सभी प्रकार के पात्र जो भारतीय लोक कथाओं में आते हैं, उपलब्ध होते हैं। रसालू गाथा में राजा रसालू अपने तीन साधियों के साथ यात्रा आरम्भ करता है। सुनार और बढई—दो मानवा तथा तोता (शुक) एक अमानवी है। तोता ही अत तक भक्त एवं विश्वासपात्र रहा है और जायसा क हीरामन ताते का भाति 'गुरु सुश्रु जेहि पथ त्रिखाना' ये सभी पशु पक्षी पात्र बोल सकते हैं। 'राजा रसालू' गाथा में तोता मानुषावाक्य उच्चारण करता है। 'शोलादे' श्रवदान में दीपक तक बोलता है और तथ्याद्घाटन करता है। इन गाथाओं में नायक और उसके सहयोगी प्रायः एक ही स्थान और एक समय उत्पन्न हुए हैं। रसालू और घाड़ा एक ही स्थान पर एक ही समय उत्पन्न हुए थे। यह घाड़ा राजा का दूत नीडा में सहायता प्रदान करता है। जब कभी राजा कठिनाई में हो जाता है तो घाड़ा उसे मार्ग प्रदर्शन करता है। इन पात्रों में कोई एक पात्र अद्भुत कौतूहलपूर्णा कृत्यों को करनेवाला होता है। 'निहालदे' श्रवदान में कथा आदि है कि नरवरगढ में एक दाना (राक्षस) रहता था। वह प्रतिदिन एक प्राणी का आहार करता था। एक दिन किसी विधवा के एकाकी पुत्र की बारी आई। नायक सुलतान ने उस अवसर पर निज का समर्पण किया। दाने के साथ द्वन्द्व किया और दाने को मार डाला।

कई स्थानों पर नायक ने साथ उसकी मौखी का प्रेम प्रदर्शित किया गया है। राजा कई-कई शायिया किया करते थे। सुवती अपने वृद्ध पतियों में कोई रुचि न पाकर कुटुम्ब के युवकों पर दृष्टि डालती थीं। बचारे युवक समस्या में पड़ जाते थे। ये व्यभिचारिणी विमाताएँ असफल प्रयत्न हाकर कभी-कभी नायक अथवा नायिका को मरवा डालती थीं। 'पूरन भक्त' नामक गाथा में विमाता के दुष्टत्व जन निर्दिष्ट हैं।

भारतीय लोक याता में भय का विद्यमानता भी समानरूप में रहता है। 'गुरु गूगा' नामक गाथा में मर्त्य का वर्णन आया है। गूगा का हृदयपन में पालने में साप के मांस खेलता हुआ दिखाया गया है। मार्ग पर उनका आधाधारण प्रभाव था। इस समय भी ये सापों के देवता कहकर पूज जाते हैं। विश्वास है कि वार गूगा के पूजक को मपदशन का भय नहीं होता है। इन गाथाओं में जिन सापों का वर्णन है, उनमें मारण, उच्चाटन एवं सर्जीवा प्रदान करने का शक्ति होती है। गूगा के भिस्से में एक श्रवान्तर कथा आती है कि धूपनगर के राज राजा (सजप) ने धचाभग करके अपनी पुत्री सिरियल गूगा को देन से हवार कर दिया। यह वन में जाता है और घामुरी

बनाकर पशु-पक्षियों का विमोहित कर लेता है। यामुकिनाग ने मुग्ध शहर तक (तातिगनाग) का गूगा का मेवा म नियुक्त किया। तातिग ब्राह्मण वेप बनाकर काष्ठ देश में जाता है। तिरियल का देग लेता है और त्रिगर खर बनकर उसे डस लेता है। तिरियल का शय महल में जाता है। उषर तातिग सपरा बन कर वहा पहुँच जाता है। उषने राबा से यह लिगया कर ले निपा कि यदि तिरियल स्वयं हा गर ता वह उमका सम्पत्त (शापी) गूगा से कर देगा। तब उषने नाम का डाली लकर मय पन्ते हुए तिरियल का निग उतार दिया। राबा 'त तिरियल का त्रवाह गूगा य माय कर दिया।

साधु-जन भी मानस्य लकरता म निउप शक्ति य अधिकार होने हैं। ये साधु सत्ताही उन सभा जादू एउ आरुचयो (मिगामिन्) का कर मक्ते हैं जिह मानव मान सक्ता है अथवा प्यात में ता सक्ता है। यथा किमी प्रियजन का जीवन कर देना और उमर प्रावणरा य लिए मिठा आदि ला देना अथवा का आरि दे देना, युते कागा का हग कर देना, मया का स्मरण लाभ कर देना तथा नपुसक का पुण्यशक्ति सपन्न बना देना आदि। 'गयी मररर' में हग प्रकार य वचन आण है। गूगा, माता ब्राह्मण के गर्भ में, अपनी कगमात दिनाता है और रय न शैला का जीवन कर देता है। प्रसिद्धि है कि 'नाम रर' ने मून बालर को पुनर्जीवित कर दिया था। घटा भक्त ने मूर्ति में प्राण-प्रतिपा का भी। इतना ही नहीं, साहित्यिक महाकाव्यों में भी ऐसे चामत्कारिक दृश्य आते हैं। महात्मा तुलसीदास का यह सामह प्रय "तुलसी भस्तक तब नये धनुस शान लोडु हाय" कुछ इस प्रकार के आद्भुत्य का समर्पन है।

अन्य प्रकार के चंद्र पात्रा का वचन भी इन गाथाओं में आता है। डारना (विचेज) का प्रयाग सदैव गादिका को पकड़ने में किया गया है। इनका शाक्त अंगर होता है। ये भूमण्डल म गुप्त वस्तुए खान सकना है, आकाश को फाड़कर उसमें योगला लगा सकती हैं तथा जल में आग लगा सकती हैं। पाथर का माम बना देने की अद्भुत शक्ति उनमें होता है। ये विभिन्न प्रकार न रूप रना लेता हैं। कभा जनरा वृद्धा है ता कभी अनुपम सुन्दरी युवता क वेप में हैं। कायसोदि य लिए काइ भी उपाय काम म लाता है और सदैव सफल प्रपन हानी हैं।

य हरियाना लोर-गाथाओं में प्राप्त अभिप्राय

लाक-कहानियों का भाँति लाक गाथाओं म भा कइ प्रकार के अभिप्राय मिलत है। इनम जीवनदान का शैलियों निराली होती हैं। मरम अथवा अस्थियों का इकट्ठा कर आरुति (धुकिनी) रनाइ जाता है और फिर उसम

प्राण प्रतिष्ठा कर दी जाती है। पात्र को जीवन दिलाने के लिए चिड़िया स्वयं नष्ट हो जाती है। वह पात्र के हाथ के लिए अपना पर देती है, पाँव के लिए पैर आदि। तलवार भी जीवन का प्रतीक बनकर आई है। जीवन जब रागप्रस्त हाता है तो उसमें जग लग जाता है। उमर टूटना जीवन समाप्ति का द्योतक होता है, किंतु जब यह एक साथ छोड़ दी जाती है तो जीवन पुनरावृत्त हो जाता है।

कई स्थानों पर स्वप्न भी सिद्धिप्रद होकर आता है। गूगा अपनी माता का स्वप्न में बतलाता है कि मृत शैलों को वह नीम की टहनियों से भाड़े। इस उपाय से शैल जी उठे हैं। ये स्वप्न भयावह एवं आशागर्भिता—दोनों प्रकार के होते हैं। इसी 'गूगापीर' नामक किस्से में गूगा अपने पिता जेवर को भयानक स्वप्न दिखाता है। परिणामस्वरूप राजा जेवर ने गूगा की सगमा माता का अपने यहाँ वापिस बुला लिया है।

'किस्सा राजा रसालू' में राजा सिरकप ने एक ऐसा आम्रवृक्ष दिया है जो १२ वर्ष से फूला था। इसके साथ एक बच्चा भी दिया गया है। यह कहा गया था कि जिस दिन यह वृक्ष फूलेगा तभी यह बच्चा राजा की पत्नी बन जायेगा।

इन गाथाओं में भगवान की अप्रत्याशित दया के द्वारा चाहे वह साक्षात् भगवान् के रूप में हाथ अथवा किसी दूसरे रूप में पात्र की सहायता कराई जाती है। प्रायः दयाकर पात्र बालनेवाले पशु होते हैं जो भविष्य का मार्ग दिखाते हैं, व आपत्तिकाल में बचाव करते हैं तथा विषम परिस्थितियों का शान कराते हैं। 'राजा रसालू' के किस्से में ताता यह कार्य करता है। कोई भी पशु अथवा पक्षी यह कार्य कर सकता है। अतः अन्य अनेक स्थानों पर चीता, मार, गीदड़, ऊँट यथा तोला में गिरते हुए द्वार से नायक की रक्षा करता है तथा सर्प आदि ने यह कार्य किया है। इनके अतिरिक्त निर्जीव पदार्थ, यथा वृक्ष आम और पापल भी यह कार्य कर सकता है। कभी-कभी यह ईश्वर की दया अज्ञान के रूप में आती है जो नायक का यथासमय अदृष्ट दिशा की शरण ले जाता है। कहीं-कहीं पर बाल (देयर) भी चमत्कारी रूप में आता है। यह वृक्ष काट सकता है, जलाये जाने पर आपत्ति में मुक्ति दिलाता है। यह बाहड़ जगला का तथा शत्रुओं का जला देता है।

हरियाना लोकगाथाओं में कई स्थानों पर रूप-परिवर्तन का उपाय भी काम में लाया गया है। रूप परिवर्तन के कई प्रकार हैं—अवतार ले लेना, जीवित का अज्ञान में और निष्प्राण का सम्राण में परिवर्तन आदि। 'गुरु

रूपा' के अयन में अजार की चंगा आई है। वह अपनी पत्नी गिरियन से मिलने के लिए रात्रि में रूप बदल कर आता है, अत्यन्तित हाता है।

इसके साथ ही हरियानी लोकगायार्थों में एक यन्त्रु दंगने का और मिलती है—गायक की पहचान और परीक्षा। नायक का पहचान का काम मुद्रा, काई शारीरिक निम्न, आनुरूप, क्माल आदि से निपा जाता है। कमा-कभी पूवव न का कपा भी इस दिशा में सदायक हाता है। यथा, नन प क्रिमे न नन जम की कथा प रहस्व-दूपाटन में नन की पहचान दुर है। नायिका का पराचर्य अथवा 'दिव्य प्रयोग' भी बराबर मिलता है। 'शीलादे' नामक किम में शाला को अपना सर्वोत्त प्रमाणित करना पडा है। मथा महता ने शाला को गोलते तेल में स्नान कराकर उमदी अग्नि-परीक्षा ली है।

तेल कबदाह दाल दो पिंग करो पैवार ।
उरमें रीना नहाले जब आय पनवार ।
आये पनवार जरा मेरे मन को,
पहुँची नहीं आये जरा उमक वन का ।
जो करना बेह काम मनी देर लगाघो,
अथ मृगी बय शर्त को पैर पत्राघो ।

इसी प्रकार दूसरी परीक्षा एक कच्चे घागे में कच्चा पडा बाँधकर कुछ जे पाना निकलवा कर का गद है। नायक परीक्षण में नायक से अभूत बात की आकाक्षा की जाती है। रेत से आटा दूर कराना, आततापी राक्षस का मार देना यथा 'निहालदे' म मुजतान ने दागे का मारा है, बदमाश व विगद घाड का अनुशासित (पालतू) कर देना, आदि परीक्षा के जटिल प्रश्न होते हैं।

यज-श्रीडा भी एक पन्ना है। राजा रसालू राजा सिरकप के साथ चौरड खेलता है और खेल में राजा सिरकप का सिर चीत होता है। प्रति-दिया की भावना भी इन गाथाओं में यत्र-तत्र मिलती है। 'किस्सा राजा रसालू' में राजा का अपनी पत्नी में अविश्र्वास हो गया है। उसे दड मिला है कि वह अपने प्रेमी के हृत्प के मास को खाए। इसी प्रकार 'शीलादे' म महता' अपनी पत्नी शीला का बँत मारता है और कम्पनी की भौलि वेप धारण कराकर घर की छत पर कचे उडवाता है।

प हरियानी लोक-गायार्थों का स्वरूप (त्रिपोपत्ताएँ)

यहाँ हरियानी के लोक प्रयोगों का स्वरूप-विधान जान लेना भी समीचीन हागा, जिससे साहित्यिक प्रमर्षा अथ महाकाव्या से इनका भेद स्पष्ट हो जाय।

१ महता, राजा रसालू का मर्षी है जो (राजा) बडा कृषिवा है।

लोक प्रबंधों की जो निजी विशेषताएँ मिलती हैं उनके आधार पर हमारे निष्कर्ष निम्न प्रकार हैं —

(क) लोक प्रबंध मौखिक रूप में प्रचलित हैं, लिखित रूप में नहीं।

(ख) इनका कोई प्रामाणिक मूलपाठ नहीं है।

(ग) प्रबंधकार अनाम एवं अज्ञात होता है।

(घ) लोक प्रबंधों का संगीत के साथ अटूट सम्बंध होता है।

(ङ) ये स्थानीयता से युक्त होते हैं।

(च) ये नाति, आचार और उपदेश से रहित हैं।

(छ) इनमें उच्च टेक्नीक का अभाव रहता है।

(ज) इनमें टेक पदों की पुनरावृत्ति होता है।

(झ) अथर आरम्भ होता है। (Abrupt beginning)

(ञ) सवेग प्रवाह होता है।

(क) मुख्य प्रचलित, लिखित नहीं

लोक में प्रचलित इन किस्मों का रूप आरम्भ से ही मौखिक रहा है और ये शिष्य प्रशिष्य परम्परा से एक से दूसरे तक पहुँचे हैं। एक गवैया किसी किस्मे को रागता है। उससे कोई दूसरा गवैया गाना सीख लेता है और फिर उससे तीसरा सीखता है। इस प्रकार यह अटूट परम्परा चलती रहती है और इस प्रकार लोक प्रबंधों का विकास होता रहता है। 'राजा रसालू', 'निहालदे', 'पूराभक्त', और 'गोपीचंद भरथरी' आदि हरियानी लोक प्रबंध लिपिबद्ध नहीं हैं। आजकल कुछ साधारण सी पुस्तकें इन किस्मों की अवश्य छपा मिलती हैं। लिपिबद्धता का अभाव से यद्यपि लोक प्रबंध पारिवारिक के अनुसंधानकार्य में कठिनाई होती है, किन्तु दूसरी ओर यह तत्त्व इन किस्मों का विनाशशील रहने में सहायक है। लिपिबद्ध होने पर लोक साहित्य की प्रकृति विशिष्टता गूँब जा जाता है। लिखित रूप प्राप्त हो जाने पर इन प्रबंधों की तथा एक अवस्था अन्वयान से संरक्षित हो जाता है। लिखित रूप के एक बड़ा भाग की बात कहते हैं कि "इस किस्मों के लिपिबद्ध होने पर उनका प्राणान्त कर दिया है।" "तब कोई भी लोक प्रबंध तभी तक वृद्धि करता है जब तक यह अक्षरों के लिपिबद्ध नहीं कर दिया जाता।

एक प्रामाणिक मूलपाठ का अभाव

उपरोक्त बात को समझ लेना से पर्यन्त यह स्पष्ट हो जाना है कि लोक प्रबंधों का मूलपाठ मिलने कठिन है। प्रायः मिलते ही नहीं

१ प्रोफ़ेसर गिरिधर—'भारत की' भूमिका।

है। जा बहुत मुग परम्परा से चलती रही है और जिसमें नये-नये गायकों का योगदान मिला रहा है उसका मौलिक एवं प्रामाणिक पाठ नहीं मिलता। जना अब हा किम्बा का करना सत है और गाने लगता है ता पर उमकी शक्ति हा जाता है और उमम परिवर्तन एव परिवधन हो लगता है। भि-भिन गयेव ह-हे अपन अजुन बनाकर गाने है और हम प्रसार उमका मूलम्य लुम हो जाता है। इस विषय में प्रा० फेर का मत यथाय है—“कमुन लाहगाया एक कायात्मक कथा है जिसमें काद भा विषय गाया जा सकता है, परन्तु गायक उम विषय का पूरव पदावि नहीं रहता दता।”^१ मेंक गिबविक ने भी ‘ग्राल्ड बेल्ड’ की भूमिका में यहा मत प्रकट किया है कि गाया में परिवर्तन और परिवधन के लिए विशेष स्थान है। अत गाया का प्रमाणिक मूलपाठ मिलना कठिन हा रही अरिबु अयंमय भी है। उदाहरण के लिए उत्तर भारत की लोकप्रिय गाथा ‘ग्रालहा’ सी जा सकता है। प्राय सम प्रदेशों एव बापदों में जनता ग्रालहा और उमल क पराक्रमपूष पार आन्यानों का बह चाव है मुनता है और हम गाया का काद एक पाठ नहीं, अनेक पाठ है। हम गाया ने अपन बन-स्थान सु दलगड म खारी और फलकर व्यापकता तो पाद परन्तु मौलिकता का तिलाजलि दना पड़ी। हम यहा प्रा० फेरिज का मत उद्धृत करके इस बात को उभात करेंगे। उन्होंने कहा है कि “किम्बा वास्तविक लोक प्रिय गाथा का कोद निश्चित एवं अन्तिम रूप नहीं हा सकता। प्रा० प्रामाणिक पाठ नहीं हो सकता। उमके विभिन्न पाठ हा सकते हैं परन्तु यवन एक हा पाठ नहीं हा सकता।”^२

प्रपञ्चसार (गाथाकार) का अनाम एव अज्ञात होना

लोक रागों के विषय म यद पुरातन बात है कि रचयिता का नाम मुन रहता है। किम्ब राग का किम्ब रागी ने क्व रचा, यह बतलाना कठिन है। यही कारण है कि आज हजारों रागा क होने पर भी हम उनम से एक के भी रचयिता के विषय म निश्चय रूप ने पुत्र नहीं बतला सकते। इन गार्ता क रचयिता अनाम एव अज्ञात हैं। साहित्यिक महाकाव्यों की भावि इन लोक रागा का भी काद कता अवश्य हागा जिसमें अपना मुहमयडला म बैठकर आनन्दातिरेक म इनरी रचना की हागी, परन्तु इन रागा का किम्ब व्यक्ति ने

१ आधार विषय काउथ ‘दि आकमफोर्ड पुक ऑफ पीलेड्स’, भूमिका भाग। प्रा० कर सज “दि इस्थ इज दैट दि पीलेड इज इन आइडिया, ए पोइंटिकल फॉर्म, दिव वन टकमप जेनी मैर, एंड इज नॉट खीव दैट मैर एज इट याज रिपोर।” २ “इगविश एंड स्कोटिश पावुलर पीलेड्स” भूमिका, पृष्ठ १८।

रचा यह बतलाने का हमारे पास कोई साधन नहीं है। कुछ ही ऐसे प्रथम गीत हैं जिनके रचयिता का नाम परम्परा से चला आता है—जैसे जगनिक का आल्हा आदि।

हरियानी होली या धमाल आदि के रचयिता धीसाराम भटीपुरवासी का नाम प्रसिद्ध है और वास्तव में कुछ हालियाँ की रचना उन्होंने की भी है। परन्तु अन्य हजारों धमाल और होली के गानों की रचना किसने की, यह बतलाना कठिन है। सच तो यह है कि इन रागियों ने अपने व्यक्तिगत नाम और यश की चिन्ता न करके जाति के लिए अपनी प्रतिभा का उत्सर्ग किया है। इस अनामता का अर्थ यह कदापि नहीं है कि वे लोग अपनी कृतियों के कारण लज्जा का अनुभव करते थे। इसका कारण एक यह हो सकता है कि वे अपने नाम व यश के प्रति इतने सजग नहीं थे, जितने आज के लेखक हैं। अंग्रेजी के लोकगाथा मीमांसक राबर्ट फ्रेन्स का मत भी बिल्कुल ऐसा ही है। उन्होंने लिखा है कि “आजकल के वतमान युग में किसी लेखक का अशत नामा होना यह सिद्ध करता है कि वह अपनी कृति से लज्जित होने के कारण ऐसा करता है, परन्तु प्राचीन समाज में इसका कारण अपने नाम के विषय में लेखक की लापरवाही ही समझनी चाहिए।”

घ सगीत का अटूट संवध

या तो समस्त लोकसाहित्य ही सगीत की नींव बनाकर खड़ा हुआ है परन्तु लोक राग और सगीत का साहचर्य अभिन्न है। सच तो यह है कि संगीत व बिना किसी राग के सुनने में आनन्द ही नहीं आता। अंग्रेजी शब्द बैलेड के लिए हमने जा ‘राग’ शब्द का प्रयोग किया है वह इस स्थान पर सार्थक हो गया है। बैलेड शब्द की व्युत्पत्ति लीटिन भाषा के बलार (Ballare > बलार) शब्द से माना जाती है जिसका अर्थ नाचना होता है। इस नाच के साथ संगीत की भावना बराबर लगी चलती रही है। प्राचीन काल में यूरोप देशों में नारियों के द्वारा ढोल अथवा मितार बजाकर बलार गानों का बखन मिलता है। हमारे यहाँ भी रागी लोग (वैनेडिस्टस) सारंग आदि बजाकर इन रागों का आलाप करते हैं। वफाकाल में अलहेत सदैव ढालक बजाकर हा आल्हा गाता है। गाने की गति ज्यों-ज्यों ताम हाती जाती है, ढालक बजाने की गति व भी वैसा ही परिवर्तन हाता जाता है। राग के बोलों व चरम शिखर पर पहुँचते हा ढालक भी इन्ही प्रकार तामना पर पहुँच जाता है।

हरियाना में लंगा लाग गौरीचन्द भरधरी, पूरन भगत, जगदत्त तथा

राज विश्वनाथजी आदि के राग सारंगी बजाकर गाते हैं। जोगियाँ का अना कठ और वाजावरण के अद्भुत सारंगी का मधुरता एक निराला आनन्द उत्पन्न करता है। सारंगी उनका अनन्य साधन है। सारंगी के साथ ही उनकी भारती सुररित होती है और उमक बिना यह पगु हा जाना है। सारंगी यह कि कुछ गात वाद्य-यंत्र की सहायता के बिना गाय जा। म अच्छे नहीं लगते। हाता का गाना हरियाणे में बड़ा प्रथिद्ध है। इन गारक मडली लाल, टप्प, नगाहा, भद्र और घड़ियाल आदि बजाकर और नान-नाच कर गाती है। इस अवसर पर सुर और वाद्य-यंत्रों की सार-नहायों एक विशेष प्रकार का समो बांध देता है और अताओ वा निर्मादित कर कर लेता है। कभा-कभा वाद्य-यंत्र के अभाव में प्रामाण्य लाग मूल्य आदि म सुषम बाध कर उमे खटका कर संगीत प्पनि उत्पन्न करते हैं। रिमगा वा चुन्की से भी काम निमा जाता है। इन प्रकार हम देण सकते हैं कि लफ गीत एवं लोक रागों का संगीत स अमेद सम्पन्न है।

क स्थानीयता से युक्त

यद्यपि लोक रागों के गायकों ने किसी राजा, रानी तथा अमीर उमगाओ के आभय में रहकर इन रागों की रचना की है और उसमें ऐसे ही वातावरण के लिए उपयुक्त अवसर भी हाता है तथापि स्वधिताओ की अपना निजी अभिचि और स्थानाय मान्यताओ के बल पर उनमें स्थानीयता आ हा जानी है। जो राग अथवा किम्मा जिस देश-विशेष में गाया जाता है अथवा प्रचलित है वहाँ का प्रादेशिक प्रमाण (रग) उस राग में आता अवश्यभावा है। जो राग वागड में प्रचलित है वहाँ की वाता का रग उन किम्मा में अवश्य रहेगा। 'निहालदे' में नरवरग के दागे के बखन म पूड़े और रोड आदि का बखन वहाँ के प्रादेशिक भाजन आदि से प्रमाणित है। वहीं कहां स्थानाय ऐतिहासिक घटनाओ का उल्लेख भी इन रागों में पाया जाता है।

घ नाति, आचार और उपदेश से रहित

लोक रागों में, मूल प्रवृत्ति रूप में, नीति, शिक्षा, आचार अथवा उपदेश का कोई मानना नहीं होती। उनका मुख्य उद्देश्य कथानक की प्रदर्शनीला है और उमक केवल मगोन एवं निमय अनित रमखायता पर हा विशेष जल रहता है। ये विषय प्रधार काव्य हैं। गायक अपने निजी व्यक्तित्व का राग में भिचने वाले किसी पात्रों के साथ सङ्गक कर लेता है। यदि वह गायक ऐसा नहीं करता तो समझना चाहिए कि उसका व्यक्तित्व पात्रों से भिन्न पद गया है और उसमें सहायिता आ गई है। हरियाना के लोक-रागों में—

गोपीचन्द भरथरी, गूगा, छाल्हा और पूरनभगत आदि में—त्याग, तपस्या, धारता, मातृभक्ति, प्रेम और देश भक्ति के प्रसंग यत्र-तत्र बिखरे मिलते हैं जो शिना और नीति के ऊपर पयास प्रकाश डालते हैं, किन्तु इन गीतों के रचयिताओं का प्रवृत्ति प्रधानतया उपदेश की आर नहीं थी। ये तत्व तो ग्रामगिरूप से यथावसर आ गये हैं जो लटकने वाले नहीं हैं। वास्तव में, इन लोक रागों में स्थायी एवं सुपरिचित रोचकता मिलती है और इनमें जीवन के विशुद्ध चित्र होते हैं।

छ उच्च टेकनीक का अभाव

लोक राग और लोक गीत दोनों में साहित्यिक टेकनीक का अभाव पाया जाता है। यहाँ पर तो सदैव अभि यक्ति की सरलता, स्वाभाविकता और सादगी पर बल रहता है। वस्तुतः ये राग तो सर्वप्रथम विवरणमान हैं जिनमें एक कहानी होती है और जो यथासंभव रुद्धमता एवं मितज्यता के साथ कही गई होती है। इनमें रचयिता एक साथ विषय पर पहुँच जाता है। वह जैसे बिना प्रस्तावना के प्रारम्भ करता है उसी प्रकार बिना उपसहार अथवा भरतवाक्य के अन्त कर देता है। लोक-रागों की अपनी विशेषता है कि इनमें कथा सर्व प्रथम पंक्ति का छूकर समाप्त होती है।

काव्य में लेखक का आग्रह छुट, अलंकार, गति और शृंगारी कल्पना पर रहता है। यह अपनी कृति में सामान्य पाठ्य, ताड़ मगड और उतार-चढ़ाव करता चलता है, पर तु लोक रचि इन अन्तिम गुणों से दूर रहता है। उमरा रचना में तो नैमगिक गुणों की लक्ष्य शिखरलाइ बढ़ती है। न कहीं इष्टपूजक अलंकारों का घाट है और न कहीं शिष्ट कल्पना और ऊहापाह के लिए स्थान। यदि कोई उपमा, उत्प्रेक्षा आदि अलंकार गुणाक्षरन्यायेन चरग आ जाये तो को आरति नहीं। वास्तव में ये लोक-राग एक प्राकृतिक राग के सदृश हैं जो अपने प्रवाद से बिना प्रयास के निरंतर बढ़ती रहता है। प० रामनरेश त्रिपाठी का मत इस आर बढ़ा मगीक है। उन्होंने लिखा है कि "ग्रामगात और मगकियों की कविता में अन्तर है। ग्राम-गीत हृदय का धन है और मगकाव्य मस्तिष्क का। ग्राम गात में रग है, मगकाव्य में अलंकार। "म स्वामिक ह, अलंकार मनुष्य विमित।" अपने ने लिखा है—"ग्रामगीत प्रकृति के उद्गात हैं, इनमें अलंकार नहीं, केवल रस है। रम नगं, केवल लय है। ललित नहीं, केवल माधुर्य है।" यहाँ पर यह ध्यान रखना चाहिए कि जो बात लोक-गाता के विषय में कही गई है वह लोक रागी के वल में ही यथार्थ परिचित होता है।

उपरोक्त कथन में हमारा यह आभास बनाने नहीं है कि लोक-गीत अथवा लोक-गायी में अलंकार आदि, आदि नदी मन्ते । कद स्थानों पर सुन्दर सुन्दर अलंकार मिलते हैं, परन्तु य विना प्रयोग या गद्य है । निम्नोद्देश लोक गायी का निम्न मौल्य ज्ञापना है ।

ज टुक या अन्य पदा की आशुति

लोक-गायी का एक विशेषता यह है कि इनमें टुक अथवा किछा लतु अथवा आशुति होती रहता है । इस प्रक्रिया से कद लाम हत है ।—प्रथम पहिले राग की 'एकमरता' (मनाटना) दूर हो जाता है और भूत नडला द्वारा टुक पदा की आशुति हान म गग में नरान प्राणी ज धंसार हो जाता है । दूसरे गायक को कुछ अवकाश मिल जाता है । यदि कद गायक किछा लोक राग का एक हा कय में गाना चाह ता, वह उसक लिए संभव नहीं है । अत भोजार्थ द्वारा गीत में हाथ बनाने से रागी की कुछ विभाम मिल जाता है । ताभर, आशुति क कर्ण गाव विशेष प्रभावशाली हो जाने है और भोजार्थ पर उनका गहरा प्रभाव पड़ता है । राग का एक बार में गा देने से उसका वह स्थायी प्रभाव नहीं होता या उसका पीनपुन्यन गाने होना है । टुक पदा की आशुति के गात का रहस्य छन छन कर भोजार्थ के हृदय में हो जाता है ।

अर्थ का स्पष्ट ने इन टुक पदा की दो भेदिका हो सकता है । एक—उपक, दूसरा—निरथक । गायक व टुक पद है तिनका कद निरन्तर अथ होता है । यथा—'जालातु' में भक्त प य शक्त छाथक है—“हरिहर के गुण गाऊँ मेरी जाला मन्ना भा कूद गग म हारो ।” जाला जी के दर्शन गग न्यान प महय पुरषप्र है । निरथक गीताय ये है तिनका कुछ म अथ नहीं, परन्तु उनका उपरागिता राग क प्रभावत्वान्न में है । यथा “ह आ, हर राम आदि । य पद प्रथा में निरथक है, परन्तु गीत के लिए इनका मूल्य अत्यधिक है ।”

म अथर आरम्भ

लोक गायी की एक विशेषता यह है कि इनका 'अथर आरम्भ' होता है । गायक कद लम्बी-लंबी प्रस्तावना बिना गद्दा किये हा विषय पर बड़ा चलता है ।

न सवेग प्रवाह

एक अन्य विशेषता यह है कि लोक गायी का प्रवाह बड़ा जोरदार होता है अत राग का गति बड़ी तान होता है ।

हरियाने के तीन प्रतिनिधि लोकरागों का निवेचनात्मक निष्ठृत अध्ययन

१ "निहालदे"

हरियाना रागों की भूमि है। यहाँ पर बड़े उन्नत उत्तम राग जिनमें समस्त रागाय तत्त्व सन्निहित हैं, जनना के कठाभरण बने हुए हैं। 'निहालदे' या 'निहाल देवी' उनमें से एक बड़ा राचक एवं महत्वपूर्ण राग है। इसे इस प्रदेश का महाकाव्य कहा जाये तो अत्युक्ति न होगी। परन्तु यह साहित्यिक महाकाव्यों की भाँति लिखित नहीं है। यह तो अलिखित रूप में है और लोक की जिह्वा पर निराजता है। इसे रागी जोड़े के साथ सारंगी पर गाते हैं और पावस में विशेषकर श्रावण में इसने गाने का उपयुक्त समय होता है। 'निहालदे' राग का कथासार इस प्रकार है —

“कीचकगढ़ में महाराजा चक्रवाहेन के वंश में राजा मैनपाल हुआ। वह पण्डित गोत्र का था। राजा मैनपाल के यहाँ दीर्घकालावसत एक पुत्र उत्पन्न हुआ जिसका नाम 'दालकुंवर' था। यही राजकुमार दाला आगे चलकर अपने वैयक्तिक गुणों के आधार पर मुलतान और विशेषरूप से 'नर मुलतान' के नाम से विख्यात हुआ है। प्रारंभ में यह बड़ा उच्चरस एव उद्दी था। इसी निरक्षर प्रवृत्ति के कारण उसे बारह वर्ष का दसोटा (देश निकाला) मिला और वह घर छोड़कर बाग में चला गया।

जगल में भटकते भटकते मुलतान को बाबा गोरपनाथजी मिले। गोरपनाथ जी को प्रणाम किया और 'जाग' के लिए उनसे प्रार्थना की। बाबा जी ने अन्तर्दृष्टि से देखा कि यह राजकुमार है और इसे अभी जाग की आवश्यकता नहीं है। अतः उन्होंने बालक मुलतान के सामने एक शत रागी यदि इन्द्रगढ़ में सात घण्टों से भिदा ला देगा तो उसे जाग मिल जायेगा। वह भित्तार्थ इन्द्रगढ़ गया। उसी समय वहाँ का राजा पशुपति (पेशवाकमधज) वहाँ आकर उच्चरस करते हैं) हाथी पर चढ़कर नगर का भ्रमण कर रहा था। भीड़ मन्वड़ बढ़ा था। हाथी ने आघात से बालक मुलतान का भिन्नापात्र टूट गया। वह रागे लगा। स्वयं राजा ने उसे समाना और राजकुमार नामकर उस धमपुत्र बना लिया। राजा पशुपति का एक और पुत्र भी था। उनका नाम पूलकर था। दोनों साथ रहते, परन्तु पूलकर का मुलतान के प्रति घटा इच्छा ही नहीं।

इन्द्रगढ़ में रहते हुए मुलतान की छद्म व्यतीत हो गयी। एक दिन

शिखर सेलने-सेलते वे दोनों भाई केलागट में पहुँचे। वहाँ पर मुलतान का बड़ा आदर हुआ। हमारे गिन घूमते-घूमते यहाँ के राजा मय के बानों बाग की आर का निकले। बाग में राजकुमारी 'निहालदे' मणियों के साथ गुला झूल रही थी। मन्थर राग ने बसाइयत हाकर मुलतान ने अनना घोडा बाग में बुदा दिया। यही मुलतान का पछनी निहालदे के साथ प्रथम मिलन हुआ। तत्पश्चात् पुत्री के प्रस्ताव पर राजा मय ने स्वयंवर रचा और राजकुमारी का विवाह मुलतान के साथ कर दिया।

इस घटना ने पूलकसर की हत्या का बाध टूट गया। उमने मुलतान का इन्द्रगट छोड़ जाने के लिए बड़ा और उमने (मुलतान ने) पूलकसर के आग्रह पर नगर को छोड़ कर के लिए त्याग दिया। 'निहालदे' का वहीं छोड़ा और यह बचन दिया कि यह छोटे बर की तीज का बारह बने तक अवरप आयेगा। फिर यह शक्ति की ओर नरवरगट चला गया।

नरवरगट का राजा दान यात्री राजा नल का लड़का था। उसी पत्नी जैमिननेर के राजा बुध का लड़की मारवाण थी जिसे 'मारु' भी कहते हैं।^१ आधा राज दोन के नाम था और आधा मारवाण (मारु) के। मुलतान ने मारवाण के अपान चौकीगर की नौकर्य कर ली। यह सम्मन बुध पर देरा लगाकर रहने लगा।

उस नगर में एक लोम्बाना दाना (गानव) रहना था। वह प्रतिदिन एक मनुष्य की भेंट लेता था। एक दिन मुलतान पहर दे रहा था। उस गिन नेठ खतन शाह के इकलौठे पुत्र की दाने की भेंट के लिए बारी आ गई। सेठ शाह-विहल था। मुलतान ने अनने की बलि के लिए अपण कर लिया और वह श्रेष्ठापुत्र के स्थान पर दाने के यहा चला गया। दाने के साथ लोमहरक सुद हुआ और मुलतान ने दाने को मार दिया। इस अनौचित्य परक्रमपूय एव लाकहितकारी कृत्य से प्रसन्न हा मारवाण ने उसे प्रचुर पारितोषिक दिया और अनना धर्मभ्राता बना लिया। अन मुलतान का 'नर मुलतान' अथवा 'चार मुलतान' कहा जाने लगा।

दूसरा बार नरवरगट के प्रजा-शाहक कुन्यात चार 'बानी' को पहर देते हुए मुलतान ने पकड़ लिया। राजा दोन ने उस प्राण-दंड दिया, परन्तु मुलतान ने बानी चोर की अपनी बिनेगारी पर रचा लिया। इस प्रकार उपरुत हाकर चार ने मुलतान से पगड़ी बदली आर वे दोनों मित्र बन गये।

१ रामध्यानी लोक महाकाव्य 'नेला मारु' के नायक-नायिका भी वे ही महान् आभाएँ दोला और मारु हैं।

एक पर्व पर सूरत बावड़ी के स्नान के लिए भारवण गई और वहाँ उसने मुलतान की बय माली^१। बनजारे जो बावड़ी का कर लेते थे, उन्हें खटक हुई। बनजारा सरदार भीमसिंह ने मारू से कर मागा और उमका डाला घेर लिया। मुलतान और बनजारे का डटकर युद्ध हुआ। बनजारा हार गया और उसने भी विजेता के साथ पगड़ी बदली।

इस नरवरगढ़ में मारू व यहा रहते रहते मुलतान को छ वर्ष व्यतीत हो गये। 'निहालदे' के साथ किया हुआ करार पूरा हो गया। निहालदे के दूत मुलतान को खोजते हुए नरवरगढ़ पहुँचे। एक दिन वया के समय वे दूत मारू के महल के नीचे लड़े थे और निहालदे के लोक प्रसिद्ध परवानों (प्रेम पत्रों) का पढ़ रहे थे। वस्तु स्थिति जानकर मारू के स्त्री-मुलम कोमल हृदय में चिर वियुक्ता निहालदे के प्रति दयाभाव क्षाप्रत हुआ और उसने तत्काल मुलतान को बुलाकर इन्द्रगढ़ जाने को कहा। साथ ही तीर्जा के करार की स्मृति करा दी। मुलतान अपनी प्रेयसी के तरदीप के प्रकाश में मजिन दर मजिन तै करता हुआ इन्द्रगढ़ पहुँचा। निहालदे अपनी प्रतिज्ञा के अनुसार चितारूढ़ हो गयी थी। मुलतान ने यथा समय पहुँचकर पाप्मना निहालदे को चित्ता से बचा लिया और फिर वे दानों सुवपूर्वक राज करत रहे।

उपर नरवरगढ़ से मुलतान के चले जाने पर महाराजा टोल का मागण व चारत्र पर संदेह उत्पन्न हुआ। उगने मागण से आप्रह किया। वह मुलतान का भात भरने के लिए बुलाये^२। तारी की मयादा दाव पर थी। मागण का निमण भित्ते ही मुलतान अपना घम बढ़ा के यहा भात भरने गया। यह भात जंका नया किया गया है, पौराणिक भात (तारी भक्त के भात) ने भी बट बट कर था। इस प्रकार मुलतान ने तारी मयादा की रक्षा की।

इस लोकउग म लान महाकाव्यापयोगी सभी तर्जों का बड़ी कुशलता न साथ निवाद हुआ है। 'कायशाला' ता इग राग का प्राण्य बर्ण है। समस्त कहाना आभावात्त मयपृण कयों का हा परिणाम है।

१ इस स्थान पर मुलतान म इयत्र की भावना या आराप लोचरणा का र न कर लिया है। २ इस स्थान पर तारी परीक्षा की यात छाड़ है, परंतु शत का रूप मयत्र, मयादित और कोमल रग है। इसने मुलतान और मारू के चरित्रों को उज्ज्वलता ही प्राप्त हुई है।

चरित्र-चित्रण व दृष्टिकोण में यह काव्य माहिरिक महाकाव्यों का कटि का है। मुजानन, निहालदे, मारवण, पुनरर, जाग पार और बाजाग भानसिंह आदि सभी चरित्रों का प्रसिद्ध विकास हुआ है। तापन मुजानन का चरित्र प्रारम्भ की 'जलकनकताहन' जिया में लेकर मारवण आदि अद्भुत कानों की प्रगल्भा से दा विकसित हुआ है। मुजानन का तापन स्वयं गद्य है। विनयनन में तरकर ममुगरन हुआ है। उमर चरित्र, मार, दाक्षिण, कामा आदि मारवण गुणों की धारणा रही इमानगरी व माध लोक-कलाकार ने का है। प्रकृति व मुजानन का मग व पावनता, गृह व भाव्यता, दिवाद्र शलशुभ म उत्तुगा, धरा व महाशीलता, कण म शा शालता और कृष्ण व सुदृश्यता उधार लेकर माना गिना दिया है।

'निहालदे' का चरित्र भी पयान भाषा में विकसित हुआ है। नारी-चरित्र के उत्तम गुणों का विकास विद्याभाषणा व हता है। निहालदे के पात्र प्रेम अनय लम्न, तरस्या और मनाल भाषण का सुष्यमर विप्रयुक्त स्थिति म मिला है। उमके शौर्य प्रेमालेखा में तास जीवर के मरवतो का मगगाण पर्यन हुआ है। पति पति म नारा-हृदय की कामलता एव कारणा भौंती प्रनीत होती है। अत म अरना परीना के समय गुन जो का यशापर की भौंति "आर्यपुत्र दे चुने प्रतीता अब तो मेरी धारी है।" 'कहती हूँ चिताखीन हा जाता है। यह तो लोक-कलाकार का मुजान प्रकृति का परिणाम है कि मुजानने ने मयासमय उम जाविन बचा लिया। फिर उमने महाकाव्य का नाम निहालदे रखकर नायिका व चरित्र की महानता का परिचय दिया है। अन्य पात्रों के चरित्र भी इस प्रकार परावर विकसित हुए हैं।

कहानों म स्थान की एकता का निवाह नहीं हा पाया है। ऐसी शौर्य एवं प्रेमपूर्ण साहित्यिक कहानियों म स्थान की एकता का निवाह आवश्यक भी नहीं है और समज भा नहीं है। सादृश प्रदर्शन के लिए नायक का स्थानान्तर में जाना पड़ता है। परन्तु जहाँ का जा पर्यन आया है वह अपूर्ण रचकता लिए हुए है।

कथा का उम लोक-गीत के लिए पूर्णतया उपयुक्त है। लोक-गीतों की

१. जमें अपने तीन पात्रों (चरित्रों) म से एक पात्र म यह विराम प्रचलित मिला है कि एक बार राता मय की परनी को (निहालदे की माँ को) पात्रता जी ने आशीर्वाद दिया कि मेरी पुत्री यही पतिव्रता होगी और यशवता होगी। पावती जी के धर्मा के कारण 'निहालदे' ही कथा का नाम पड़ा है।

कथा (भीम) सदैव लोक प्रचलित एवं लोकप्रिय होने चाहिए। 'निहालदे' राग हरियाना प्रदेश का एक सर्वप्रिय विस्सा है जिसे यहाँ का रागी बड़ा शान के साथ गाता है और यहाँ की ग्रामीण जनता बड़े चाव व रुचि के साथ सुनती है। यह राग या तो उत्तर प्रदेश और राजस्थान में भी दूर-दूर तक प्रचलित है, परन्तु जो महत्व 'निहालदे राग' को हरियाना में मिला है वह बड़ा विशिष्ट है। राजस्थान के प्रसिद्ध राग 'ढोलामारू' को हरियानी लोक-कलाकार ने बड़ी खूबी के साथ 'निहालदे' में अन्तर्हित कर अपने जातीय राग निहालदे की उच्चता प्रमाणित कर दी है। राजस्थानी राग ढोलामारू हरियानी राग निहालदे का एक प्रासंगिक कथा भाग होकर आया है। परन्तु ऐसा करने से कथा निवाह में एक बड़ी भारी त्रुटि आ गई प्रतीत होती है। लोकरागी नरवरगढ़ में मुलतान को ले जाकर एकदम नरवरगढ़ का ही हो गया है। उससे ऐसा अनुभव हाता है, मानो पहिली कथा से अपना सम्बन्ध विच्छेद कर लिया है। फिर कहीं छु वप के एक दाघकाल ने उपरात उस कथा को संपृक्त करता है। हम बीच, जहाँ मुलतान के चरित्र का उत्तरात्तर विकास हुआ है, वहा निहालदे उर्मिला की भौति प्रसाद के शुक् कारिकाओं से ही चाली-चाली है।

लोकरागी ने 'ढोलकँवर' का युगल' (जाड़ा) दिताकर कुछ सदिग्धता अवश्य उत्पन्न की है, परन्तु समनामता से मारवण की परीक्षा का अच्छा अवसर मिला है। यह जानकर कि इस दानार प्रतापी चौबीदार का नाम भी 'ढोलकँवर' है, मारवण उगका गम बदलवाकर 'मुलतान' रखती है और उसे अपना भाइ बना लेती है।

इस लोक महाकाव्य में लोकवाता के अन्य तत्व—सत-साधुओं की महिमा, पगड़ी बदल मार, नायक का परीक्षा, दानावध, सतीत्व परीक्षण अथवा दिव्य प्रयोग, तीर्थ इत्यादि पर मुद्द आदि सभी मिजते हैं और यहाँ इन सबका बड़ा सुन्दर संग हुआ है।

यह लोक-राग इतना विशद है कि एक अच्छा नायक पूरे भावण मास गाकर ही इसे समाप्त कर सकता है। इसे पूरा लिपिबद्ध किया जाये तो 'ढोलामारू' का भौति एक शृद्ध ग्रन्थ का निमाण हो जाये। परन्तु यह एक पृथक् ग्रन्थ का विषय है। हम तो यहाँ 'राग निहालदे' के कुछ सरस अंश ही दे रहे हैं।

१ मुलतान का जन्म का नाम भी 'ढोलकँवर' है और नरवरगढ़ के महाराज का नाम भी 'ढोलकँवर' है।

मुलतान बनागढ़ में राजा मय व महिला उद्यान में पहुँच जाता है।
मालन उससे इस ध्वजार पर राग प्रकट करती है। मुलतान अपने शयियन
की दुहाइ देता है —

बाग बनाना बेटी मूरा राजा मयमान^१ की बर निहाल ।
बेरा पट जा राजा मयमान नै तने देगा मूला पर टांग ।

हट के बोला पोछा धन का मुग रा मानन भरा एक जुषाब ।
मैं पतरी जन्म का चालू पतरापन की चाब ।

पुत्री के पतरापन चार ।

तगा बांपू रण बड ना ना पीठ दिगा ।
सूभर^२ घाड़ी ना चन् परपन ममम् पूष ममान ।

पर तिरिया नै माता बहू, बिना राजपूत की नै ब्याह कराऊ तीन तलाक ॥

पर पुरुष का देखकर 'निहालदे' भी बाग से भागतो है। परन्तु दृष्टि दून
में उसक विदुष तो गय और गाग में पायनच रह गईं। यह दूटने लगती
है। इस रात्र, मुलतान उसने समीर पहुँच जाता है —

घाड़ी घोड़ा राजा नै दे दिया, गिर पर रण दी पधरग डाल ।
पूगट बोला खाल कमान से, हम हंस पूगमी बर नै बाव ।

कवर । बावल^३ हिनैदा^४, क निर्न तरा बाप ।
क तने ब्याह कर उठ गया चाकरी ।

क ब्यापा नहीं सय तन काम ।

'निहालदे' का गाना

बेगी बोली मयरजपूर की मुन घोड़े क तू छमवार ।
नाबर बावल मैं हिनैदा, ना निधन मेरा बाप ।

नामन्नी ब्याह के उठ गया चाकरा,
मरे ब्याप रहा नै सय तन काम ।

ये^५ भीता मैं निरी केतकी, त पुरख मैं निरी नार ।
एक बार आगा छोड़ दे, मैं मिल छाऊ अपने मा बाप ।

पोता बोला बरुचे धन^६ का मुन रगभीनी राजकुंआर ।
मैं रहू पराया भोलगी^७, आग कहिण सेर उरगाद ।

१ कजागढ़ का राजा मय है और मान उसका छोटा भाई है।
२ गाभिन । ३ पिता । ४ तुच्छ । ५ थैं, तू, तुम, आप । ६ राजा मैनपाल
का पिता और मुलतान का पितामह । ७ नौकर ।

मतना दूधे देखके लभेस^१ नै, ग्हारा तेरा ना निभाही^२ ।
 और कुनर से बचना भर लियो, तेरा बायल देगा व्याह ।

× × ×

मर यो तेरा घोड़ा, जलयो तेरे कापड़े, अमर रहो तेरे सज हथियार ।
 मैं भूगी तेरे रूप की ताह की गरनू हरगिण नाह ।

व्याह का गीत

दिया दुडैरा^३ कलागढ़ म, नगर क ब्राह्मण लिपु बुलाय ।
 वेद पढ़ें चौरी रचें मंत्र कह सुधार ।
 रतन नदा क रम धर यंदी दइ रपाय ।
 मंत्र से बस-द्र^४ नगावल अपना बस रह दरसाय ।
 पहले परा दिया निगल ने सोने क चरल कर न्ये दान ।
 दूना बेरा दिया निहान ने कुनर करे राजा न दान ।
 ताचा परा दिया निगल ने आधा द दिया कलागढ़ का राज ।
 आगे से पाछु करे ज धरा पीठ पर राजा ने हाथ ।
 सार्थो बेरे दिये मुलतान न राजा ने नाड़े दोनो हाथ ।
 बूझ गेरन दासी दइ, तेरे मन्त्रों^५ की पनहार ।
 दाचन^६ जाचो राजा आपने, जता मता का हुआ मिलाप ।

मुलतान की शिफार खेलते समय फूलकर के साथ बलह हो जाती है
 और फिर वह इन्द्रगढ़ को छोड़ देता है —

पोता बोला चरघ बँग का, मुन रगभीनी राजकुमार ।
 देहा^७ रोलन में गया, तरे फूलकर दवर क साथ ।
 क्लिभी में रिपभी फूलरुवार म, मैंने अनाल की द दी तीन तलार ।
 नल का लोटा धर दियो, ग्हारी गरा नरु मुनार ।

× × ×

धग बोली मध रत्न की, मुण साजा मरा जराय ।
 नैय बाल चाकरी, धण^८ ता धन अपना साथ ।
 धूय पड़ निच होना बान्नी, करती बाल तीन दाय ।
 निम मरा डरा होगा घोडा कम् गिताय ।

१ नियाम, भय । २ निबह । ३ गुलाही कराना । ४ अग्नि
 (निभायमु, धैर्यार) । ५ मन्त्र, धर । ६ दामन, परदा । ७ गिहार ।
 ८ श्री ।

करू रमोड़ मोघ बे, अणल से ढोलूगी ड्याल ।
 ली मानन नू मो जा, देरे की रहमाँ चाँडीदार ।

X X X

पोता बोला चरुपे धन का, मुन रगभीनी राजकुमार ।
 गेला रागें बाँजर परने^१, गेला रागें चारण भाट ।
 मी चरुचा रजपूत का, ग्हारे रँकारे की गाल ।
 हूष मेरा गीला छोड़ दे, प्याग्गे की घाली जा मै जान ।
 कद निडलू इन्द्रगढ़ के राग से, जय कफगा अन्न जलपान ।

X X X

वेगी बोला मय रजपूत की, मुनले सागन मेरा सुघ्राय ।
 जेये घाले चाकरी, ग्हारे कँलागढ़ में नू ले घाल ।
 मरे भाड बजायें तसे नौकरी, मेरी भावना रहें मेरा सायेदार ।
 राग दिया मेरे पिता मै, उन गाँवों पर करियो राग ।
 मेरी माता चादर तैरा करै, तैरे सिर पर वेरे हाथ ।

X X X

पोता बोला चरुचा धन का, मुन रगभीनी राजकुमार ।
 मुमरागं के बमने नामदाँ का काम ।
 घोड़े का दुवागा छोड़ दे, प्याग्गे की घनी जा मै जान ।
 जित मेरा दाना पानी ले चन्ने, रय टाटे के अस्तत्यार ।

X X X

वेगी बोली मय रजपूत की मुन साजन मेरा जवाब ।
 होती करै घर रहें, सब से भने किमान ।
 घगाले ले बाएदा, ग्वेती कर घर शाय ।
 परगा ले दे रांगला, पादो लाल गुलाब ।
 चक्का लेदे थोजल सारना, रेमम मान बगय ।
 सूत इजारी फात हूँ, राकू टाक विहाय ।
 फात बना हूँ थाने डोरिया, घोड़े का घाले दाना घास ।

X X X

पाता बोला चरुचा धन का मुन रग भीनी राजकुमार ।
 त्रिया काग^२ श्यामग तीन जन, नाइ, माली और कज्जाल ।
 काटा म्वाऊगा तग का जो ग्हारा रुनगार ।
 घोड़े का दुवागा छोड़ दे, मेरा पिदली ले ले नेक मुद्दार ।

X X X

१ डोम आदि नीची जाति । २ कमाइ ।

वेगी बोली मय रजपूत की सुन मेरा राजा मेरा जवाब ।
 घोड़ों दूभर भादुवा, भैंसी दूभर जेठ ।
 राहों दूभर रडेपडा, विधवा दूभर पेठ ।
 राड लुगाइ ऊजड खेडे, तख तख जाभों कीय ।
 जै चाले थे चाकरी, धण का कर दे दूजा भैस ।

निहालदे ने तपस्विनी का वेप घारण कर लिया और मुलतान चला गया ।
 वह नरवरगढ़ में सम्मनपुर्ज पर रहने लगा ।

दाने के साथ युद्ध

दाना देखे ध्यान धर, बल भेंट नहीं पाई ।
 जत्र दाने ने मारा धर के ललकार ।
 बावन गज का ऊचा बना, छत्तीस गज का दिया विस्तार ।
 भेंट दैन तै रह गया बोला हो गया निपट गदार ।
 मैं बड जाऊगा नरवरगढ़ में ग्या जाऊगा कई हजार ।
 पोता बोला अरुवे धैन का, सुन भई दाने मेरा जुआव ।
 क्यू जाता है नरवरगढ़ में, किसने दइ तेरी अककल मार ।
 मैं घा रहा तेरी भेंट में, कर ले जो कुछ तरे अरुअपार ।
 मल्लमाडे में छथी कृदता दाने ने मारी किलकार ।
 युद्ध होने लगा नरवरगढ़ में, आधी से डल गइ रात ।
 सूरज का बल मुलतान में, दाना दिया राजा ने डाय ।

एक दिन सूरत गानकी के स्नान पर बनजारा भूमसिंह मरवण के डाले
 का घेर लेवा है और उससे अनुचित प्रस्ताव करता है —

जब बोला बजारा भीमसिंह सुन रगभीनी राजकुमार ।
 के निक्की धरती ने फोड़के, के तिन घड़ दी मुघड़ मुनार ।
 भाका लागेगा तेरे परवा पिछवा पवन का मुब-तुब का गोरा सा गाल ।
 घाला चढ़ाई घोड़े की पीठ वै, टाणे^१ बैने दुबस यत्रत्य ।
 सत्तर बजारी टांढे में और मैं, सबकी बर दूंगा सरदार ।
 मूठ का दूंगा चण्या, ग्याण को दूंगा नागरपान ।
 धरमड तीरथ हिन्दु के हाण क, सारे करा दूंगा स्नान ।

×

×

×

दोले में बोली बुध की मारवण, मुन बनारै मेरा जपाय !
 सूटे गाइत तारा दिन गया, पैर बांधते बीठ रात ।
 पेट भरे तू बध्या विल सा, के जाये राधिया की सार ।
 मैं राधी हू डोल की, बहुत बुरा मेरा भाइ मुजतान ।
 जे ब्यौरा हो जाबेगा मुनतान नै, तन्ने नहीं देगा नरवर से जान ।
 दाने सरीके घोहरै तारा क्या उनमान ॥

× × ×

जब बोला बनारा भोंबमिह, मुन रगभीणी राजकुमार ।
 मैंने काशी सूटी, कारमार; लूट लइ गइ मुजतान ।
 भावलपुर के लूटे फूलके, टिमलीगढ़ के मारे धरदार ।
 इन्द्रगढ़ तोना, कैलागढ़ के लूट मय धरमान ।
 गुनगढ़ चाया लोह के शोपहर लूटे बुध क बावन बजार ।
 गेकर में लोह इस नरवरगढ़ नै, इस लोहा का क्या उनमान ।
 गिनगिन दा कूँ किते के कांगरे, एकद भगा लू भर मुजतान ।
 हलवा^१ बनारै नै मन मा समझिये, कर छे लू जब कूँ मूहान ।

× × ×

दोले में बोली बुध की मारवण, मुन बनारै मेरा बुझाव ।
 लका का रामण मत्र बने, मेरे भाइ नै राम धर लछमन जान ।
 मुयरावाजा कम मत बने, मेरे भाइ नै गोकुलवाजा किरसन जान ।
 कृषी के पढवा जैमा मत बने, मेरे भाई नै हिमालय जान ।
 पाँचों पड़ये हिमालय गलगे, धूँ गालेगा तुम्हे मुजतान ।
 गली गली में रख जागा तेरा कांगरा घर घर बिकजा काबर नून ।
 सत्तर बनारी हाँडें^२ तेरी मांगती मेरे नरवरगढ़ के समभ^३ बनार ।
 निधा चाहे तो दोखे का घोरा^४ छोड़ दे मत निरदो^५ के छाते डाले हाथ ।
 बजारै और मुनतान का युद्ध हुआ । बजार हार गया और उसने
 मुनतान से पगड़ी बदली ।

दूसरा और तपस्विनी निहालदे ने प्रेम की पीर और वेदना से भरे परवाने
 धो भीतर से मुलगतै, हृदय से उछलते ज्वालामुखी को ज्वालजिह्वा समुदाय
 जैसे हैं अपने दूतों के द्वारा नरवरगढ़ में भेजे । परवानों की सख्या चौरासी
 है परन्तु हम यहाँ के केवल दो परवाने नमूने के तौर पर दे रहे हैं —

१ दुधक, इरका, हीन । २ घूमना । ३ बीच में । ४ समीपता ।
 ५ ततैया ।

१ बाचे परवाना बुधकी मारवण, लिरख कै भेजे पतिभरता नार ।
 नगर सुरगा^१ हबेलीयें, हेली^२ सुरगी साहूकार,
 धन सुरगा धरम तै, न्यत^३ उठ आवैं मागणहार,
 कुआ सुरगा भीठे नीर का जिसपै आवैं नाजक पणहार,
 खेत सुरगा चगे धोरिया उचे डौले दूगे^४ क्यार,
 बगड़^५ सुरगा छोट बालकें बहु सुरगी बड़ परिवार,
 बेटा सुरगी अपणे बाप क दिन तीज्या कै बड़ त्याहार ।
 मैं नहीं सुरगी कबर निहालद घर को नहीं मेरा भरतार ।
 तैरे पै हो तो भेजिए मुझ दुखिया का भरतार ।
 नहीं जल कै मरुगी तरणी^६ तान नै तरे नरवरगड़ पै बड़ जा भार ।

X

X

X

२ बाचे परवाना बुध की मारवण, लिरखे भेजे कबर निहाल
 चिबिया नै छाये आलये युगला नै छाये हरियल डाल ।
 हंसा नै समन्दर छालिए कजा नै छाये परबल ताल ।
 चदा छाया काली बादली जोवण नै द्वाली कबर निहाल ।
 और धयोरी मार के लिखू आज भरे समन्दर ज्यू उठे माल ।
 जल कै मरुगी तरणी तीन नै तरे पै हो तो बालम नै घाल^७ ।

मारवण वस्तुस्थिति जानकर मुलतान को इद्रगढ़ भेज देती है । उधर मुलतान के चले आने पर लोग चचा करते हैं और मारवण के चरित्र का लाङ्घित करते हैं । मारवण भ्रातृ-सन्ध की दृढ़ता प्रमाणित करने के लिए इद्रगढ़ मात का निमन्त्रण भेजती है —

बुध की बोली मारवण मुखिये छतरा न्हारी बान ।
 जिस दिन गया था नरवरगड़ छोड़ कै दिन तै होगा रात ।
 बाल्यम तै दावा बस्या बुध बाबल^८ तै गया मिलाप ।
 तान् नै देस भरवर की मदनी^९ मेरे पै धरे सै मनसा पाप ।
 नरवरगड़में करिये ऊजली रम्य कै जह्ये बाह्य की छाव ।
 धन का घाटा सै नहीं छाधा तपै सै मेरा राज ।
 और धयोरा क बहु बोवला मारै मेरा सिरका तान ।
 जहदी भाजा पट्टे धरम व ज्यब आवंगी बाल्यम कै साथ ।
 देर घड़ी की मत करे छावण छाडी होरी मे बरात ॥

X

X

X

१ हबेलीए हबेली का बहुवचन । २ हबेली । ३ निन्द्यप्रति । ४ भीचे, भील । ५ आंगन । ६ परित्र, तारनेवाली । ७ भेजना, पहुँचाना । ८ पिता । ९ प्रजा ।

पोता बोझा बहरी बैन का कीचड़गद का था परिहार^१ ।
 पदसौ मियजे^२ भाई बेगबद् ठरे पीहर ती का रहा परवार ।
 झूँ मियले कमधज क पूज नै जानी^३ मियजे पगदी का थार ।
 बसजारा मियजे भौमनिह रतना मियले साहकार ।
 गोधू मियजे शायना जोगी की माया अपरगरार ।
 बावन गडाँ के मिलन गडपति मने मियन की कर दे टाल ।
 आगिर नै कद्विपू हू तरा झीलगी^४ नरवर के जाये नर धर मार ॥

X

X

X

पट्टे चडा था पोना बैन का बावन गडाँ के राजे खार^५ ।
 रात्री होगी दुप की मारवण मियती का ले लिपा धाल ।
 झुझुझु मियती कर रही पादी पीने धी बार टवार ।
 खंवा सिम की उठदी खुदी नौलन पहरा दिया हार ।
 बावन दिव्ये दे दिया न्यारी न्यारी किम के मियार ।
 हीरे मोती दीने बहुत से बावन भरे सौन्या क धाल ।
 बावन घोड़े दिये पादीपते^६ और किस्म के अन्नन अपार ।
 बावन करहे^७ दिये पुगुल दम क भौखी गोदी समी नाह ।
 बावन हाथी दिये बगडोर के हौद भरे ये पन्ने जुहार ।
 बावन गाहूँ कपडाँ क ट दिये कासन बतन येगुमार ।
 बावन साल नौ नौ किराह के धरती की हौदी^८ जय जयकार ।

२. गूगा

संनवार गूगा के पारिविक आग्वानां ये बिना हरियाने के लाग-राग
 अवश्य हा अधूरे रह जायेंग । गूगा की पूजा हरियाने की सभी आतियों में
 मिलती है । गूगा की समस्त कथा एक सदिग्ध आवरण में दिनी है । इसमें
 ऐतिहासिक तथा धार्मिक तत्वां का अनोखा सम्मिभण मिलता है । गूगा
 विषयक कथाओं का का रूप उपलब्ध है वह एक सम्प्रदाय (Cult)
 के रूप में है । विगुद्ध धार्मिक भावना उसमें नहीं है । गूगा के उपासक
 उपास्य की न तो आध्यात्मिक अभिप्राय से पूजा करते हैं न वे मुक्ति तथा
 निराण्य का याचना करते हैं श्रीर न वे भगवद्-दर्शन की अभिलाषा से उससे

^१ मुलतान का गोत्र परिहार है । २ यह मिलने के लिए प्रयुक्त हुआ है ।
^३ जानी काम का चोर । ४ नौकर । ५ साथ । ६ दरयाह, पानी पर तैरने
 वाले । ७ ऊट । ८ होती है ।

दरबार में जाते हैं। उसकी समस्त मान्यता 'परचै' याचना तक है। भक्तों को विश्वास है कि गूगा के प्रसाद से सतान एव घन घान्य में वृद्धि हानी है।

हरियाने की जनता गूगा को कई नामों से पुकारती है। कोई 'गुरु गूगा' कहते हैं तो कोई 'गूगा पीर' और 'जाहर पीर' के नाम से अपने इष्टदेव को स्मरण करते हैं। इसका एक नाम 'बागड़वाला' भी हरियाने में प्रसिद्ध है जो इसकी जन्मभूमि के आधार पर इसे मिला है। इन नामों में से दो नाम 'जाहर पीर' और 'गुरु गूगा' विशेष व्याख्या चाहते हैं। लोकज्ञाता विशारदा में इन नामों को लेकर बड़ा वितण्डा चला हुआ है। कई प्रकार की वैविध्यपूर्ण अटकलें विद्वानों ने लगाई हैं, परन्तु अभी भी यह खोज का विषय बना हुआ है।

सर्वप्रथम 'गूगा' शब्द को लेते हैं। कई विचार इस आर व्यक्त किये गये हैं। एक मत, जो अधिक प्रचलित है, गूगा के जन्म-रुचधी कथा को आधार मानकर चला है। गोरखनाम की ने रानी बाह्यल को गूगल दी थी और आशीर्वाद दिया था कि तेरे घर एक ऐसा अयतारी पुत्र होगा जो घर घर पूजा जायेगा। इसी 'गूगल' से उत्पन्न होने के कारण पुत्र का नाम गूगा पड़ा और गूगल < गूगआ < गूगा की प्रक्रिया में होता हुआ इस रूप में आया है। ऐसे विश्वासों एव मान्यताओं के आधार पर आज भी नाम रखे जाते हैं। परन्तु निश्चयात्मक रूप से नहीं कहा जा सकता कि गूगा नाम का क्या आधार होगा। डा० वासुदेव शरण अग्रवाल का सुभाव है कि मध्यकाल में जागानों की रक्षा के लिये प्राण तक देते थे वे गोगा कहलाते थे और इस प्रकार वे गोप्रह (गौरक्षक) शब्द से (गोप्रह < गोग्गह < गोगअ < गोग्गा < गोगा) इसका संघ स्थापित करते हैं।^१ इस रथापना में गूगा के चारित्रिक गुणों की मापता दी गई है। गूगा ने पीरोषशाह (द्वितीय) के हाथ से असंख्य गौश्रो की रक्षा की थी यह इतिहास प्रसिद्ध है। परन्तु इस प्रकार का नाम गूगा का प्रारम्भिक नाम नहीं हो सकता। यह तो बश्चात् को मिला प्रतीत होता है। हरियाने में किसी हठी एवं उदरही बालक को माताएँ 'अरे गूगा रहणदे' कहकर निषेध करती हैं। गूगा के चरित्र में भी अर्जुन को माति 'न दैत्य न पलायन' दो विशेषताएँ थीं। परन्तु यह भी रूपवात्मक चारित्रिक व्याख्या ही

१ गूगा का जन्म बहरेरा नामक गाव में हुआ था जो हम ममय बीकानेर जिले के परगना रातगड़ में है। बीकानेर राज्य को बागड़ कहा जाता है। बागड़ शब्द गुजराती भाषा के 'बागड़ा' से मिलता हुआ है और जिनका अर्थ जंगल होता है। २ भारतीय साहित्य' अंक पत्रिका १९५६ पृष्ठ ३२।

हे जो उसे छहटा नहीं मिली होगी । अतः 'गूगा' शब्द का इतिहास अर्थात् अनुसंधेय ही बना है ।

गूगा न अपने बीयन में अनेक दिव्यतापूर्ण कार्य किये थे । इंदी अमौकिक कृत्यों के कारण उसकी 'पाक' (पूजा) चली और 'जात लगने लगी । 'पीर' की उपाधि भी गूगा को ऐसे ही कारणों में मिली है । एक नीरलाकी गुटका में जिसमें गूगा की कथा सत्त्व में वर्णित है, अतिम चरण इस प्रकार आता है 'बाहर-पीर मरद अवतार जगजीत पीरी पाह ।' वास्तव में दुष्ट संहारने से गूगा को पीरी प्राप्त हुई है । हमारे 'साधे' में भी 'पीर' शब्द अवतार अर्थ में प्रयुक्त हुआ है । गूगा को जब 'शाही इमल' की उजना मिलती है तो यह शिलाकी नाथ के महा अरज करता है और पूर्वपुगा की माता 'वीरत्व' मागता है ।

पहले पीरे बण्पा पीर में परतपाल मां पाया ।

दूजे पीरे बण्पा पीर में परमराम बुद्ध्याया ।

तीजे पीरे बण्पा पीर में जलमेधा के भवर जहार जलम से आया ।

चारु जुग में सम्मत करदे सरण तुम्हारी आया ।

गूगा को हिन्दु और मुस्लमान सभी मानते हैं और पूजते हैं । मुस्लमान उसे 'गूगापीर' कहते हैं और हिन्दू 'गूगावीर' गायों की रक्षा करने के कारण एव मुस्लमानों को हराने के कारण गूगा 'वीर पञ्जा' के अधिकारी हो गये हैं । 'पीर और बीर' शब्द का संबंध भी है । पीर शब्द वीर शब्द का चूलिका पेशाची रूप माना जाता है । अतः युद्ध विजेता गूगा वीर ही 'जगजीत कर पीर' बन गया है ।

'बाहर पीर' गूगा का एक विशिष्ट नाम है । इसे 'बाहिर पीर' भी कहा जाता है, जिसका अभिप्राय यह होता है यह पीर जो अपनी कला व कसमात प्रकट (बाहिर) दिखा दे और जो अपने भक्तों को तत्काल परिचय दे । बाहरपीर के जागरण में भक्त पर जब देवता का आवेश हो जाता है तो वह भक्तों को परिचय देता है । अतः इसे बाहर (बाहिर) पीर कहते हैं । कई विद्वान इसे जहरपीर कहते हैं अर्थात् जहर (विष) का देवता । यह क्या है कि गूगा का सर्पों पर विशेष अधिकार है और उसके भक्त सर्पदश से कभी पीडित नहीं होते । एक मत में बाहर का सम्बंध तुम्हार (सदाक, मोक्षा) से जोड़कर योद्धावीर अर्थ किया गया है । अतः भक्ति क्षेत्र के मूलमंत्र "जाकी रक्षा भावना बैसी, प्रभुमूरत तिन देखी तैसी" के आधार पर गूगा के भक्त अपने इष्टदेव में विविध गुणों का दशन कर उसे अनेक नामों से पुकारते हैं ।

गूगा की पूजा पंजाब, हरियाना, राजस्थान और पश्चिमी उत्तर प्रदेश में दूर-दूर तक प्रचलित है। हरियाना में उसके विषय में जो कथाएँ मिलती हैं उनका निष्कर्ष इस प्रकार है —

- १ गूगा चौहान राजपूत थे।
- २ उनके पिता का नाम जेपरसिंह^१ था।
- ३ इनकी माता का नाम बाहलदे^२ था।
- ४ गढददरेरा (ददेरा) उनका जन्म-स्थान था जो नीकानेर राजान्तगञ्ज है और सिरसा से ५० मील दूर है।
- ५ मैड़ी गाँव में जो गूगा मैड़ी के नाम से विख्यात है उन्होंने भूमि समाधि ली थी। मैड़ी पर जालवृद्ध की महत्ता हाती है। कथन प्रचलित है “गूगा सत्याजाल तलै।”
- ६ इनके दो मौसेरे भाई थे जिनके नाम हैं अजन-सर्जन। उनकी माता का नाम बाहल^३ था।
- ७ सम्पत्ति के लिए भगडा हुआ। ये दोनों भाइ दिल्ली बादशाह से जाकर मिले और उसे बागड़ पर चला लाये। युद्ध हुआ।
- ८ युद्ध में मौसेरे भाइ काम आये।
- ९ मौसेरे भाइयों का मृत्यु से माता बाहल रुष्ट हो गई और उसने गूगा को धिक्कारा।
- १० माता के धिक्कारने से गूगा ने भू समाधि ली।
- ११ लीला घोड़ा जो गूगा के साथ जन्मा था एक ही दिन समाधि ली।

१ राज ने इनके पिता का नाम यदुराज दिया है। महाकवि सूर्यमल ने इनके पिता का नाम राजा भीम दिया है परन्तु हरियाने की समस्त कथाएँ में गूगा के पिता का नाम जेपरसिंह चौहान ही आया है।

२ महाकवि सूर्यमल ने गूगा की माता का नाम ‘मनि’ दिया है।
‘भारतीय साहित्य’ पृष्ठ ६२

३ बाहल गोरग जी की सेवा किया करती थी। फल के समय बाहल पाकर फल ले आई। जब गोरगनाथ को इस प्रयत्न का पान हुआ तो उन्होंने धाप दिया कि पुत्र होते ही बाहल मर जायेगी और उसके पुत्र केवल १२ वर्ष तक ही जीवित रहेंगे।

१२ गूगा अथरात्रि के समय पाड़े पर चढ़ करे अरनी पनी गिरियल से मिलो आवा है ।

१३ गूगा में सगहन का अन्दा करो की अद्भुत राति है ।

१४ हिन्दू-मुसलमान दाना पूजते हैं ।

१५ माद्र पद कृष्ण द. वीं इनका पूजा का विगत दिन है

१६ गूगा व पात्र साया—लीला पदा, नरसिंह पादे, मग्नू चमार, रतन सिंह भगी और यह सब पचपीर कहलाते हैं । कियन्ना है कि गूगल से हा इन पाँचो का जन्म हुआ था ।

उपरोक्त पत्रियो में गूगा की कथा की छो रूपरेखा दी गई है उसके आधार पर गूगा के जीवन में दा बनाएँ पाठक का विशेष-ध्यान आकर्षित करती हैं । एक—गूगा के विनाह की तथा दूसरी, अरजन-सरजन और दिल्लीराह के साथ युद्ध की । इन घटनाओं को आधार मानकर गूगा विदम्ब प्रचलित रागो के साहित्यिक एवं आनुष्ठानिक दानो रूप मिलते हैं । टेम्पल महात्म ने इस राग का साहित्यिक रूप अपने समग्र 'शि लीजे-इसु आय दि पंजाब' के प्रथम भाग न पृष्ठ १२१ पर दिया है । इसका रूप स्वाग का है । पात्र प्रायः बिना विषा पूर्व परिचय व लाये गये हैं । प्रारम्भ में सरस्वता-स्तवन है —

सारद माता, तू बदी । धरत सरा प्यात्र ।
 द्विपा भपनी कीनिण । करो सुद का ग्यान ।
 करो सुद का ज्ञान, मात मी । मन हृद्या वर पाऊँ ।
 तू है, माता, सुध का दाता, चरनों मीम निवाऊँ ।
 करा सुद परगाता ! ज्ञान के निम दिन तुझे मनाऊँ ।
 कर हिरदे में धाम, साग गूगे का सुद बनाऊँ ।

फिर राजा जजर और रानी बाल्लन की पुत्र कामना और पुण्योहित रगाचार द्वारा राजा का धैर्य देना आदि बातें आइ हैं । फिर गूगा के विनाह की घटना का बड़ा समाचकारो वखन हुआ है । कामरूप प्रदेश के राजा सजा (सत्रय, सभा) ने अरनी पुत्रा गिरियल का विनाह गूगा व साथ करने से

१ एक गीत में यह आया है कि हरियाली खोज के दिन यादुल ने गिरियल से हठ की और शगर का कारण ज्ञात किया । गूगा के दर्शन किये परन्तु उम दिन में गूगा रात्रि में नहीं आता । गीत पृष्ठ २२०-२१ (प्रस्तुत निरन्ध)

इनकार कर दिया। गूगा को क्षोभ हुआ। उसने जगल में जाकर चासुरी बजाई। सब पशु-पक्षी विमोहित हो गये। चासुरिक ने तातिग (तल्लक) को गूगा की सेवा में नियुक्त किया। तातिग ब्राह्मण वेप बनाकर कामरूप देश में गया और सिरियल की पहचान की। फिर साप बनकर उसे डस लिया। सिरियल का शव जब महल में ले जाया गया तो तातिग सपेरा बनकर वहा जा पहुँचा। उसने राजा के सामने शत रत्नी यदि सिरियल जीवित हो गई तो वह उसकी शादी गूगा से कर देगा। तातिग ने नीम की टहनी लेकर मंत्र पढ़ते हुए राजकुमारी का विप उतार दिया। राजा सम्भा ने सिरियल का विवाह गूगा के साथ कर दिया।

गूगा की कथा का दूसरा रूप आनुष्ठानिक तत्वों से युक्त है। इसी घटना के पश्चात् उसे जगन्नीत कर पीरी मिली है। गूगा के मौसैरे भाई—अरजन सरजन ने दिल्ली के बादशाह को बागड़ पर आक्रमण के लिए प्रोत्साहित किया। घमासान युद्ध हुआ। गूगा ने विजय प्राप्त की और अरजन-सरजन दोनों भाइयों के सिर फाट लिये। इस घटना से व्यथित होकर माता बाल्लल ने गूगा को धिक्कार और कदापि मुँह न दिखाने की आज्ञा दी। गूगा उल्टे पैरों लौट गया और पृथ्वी माता से भू-गर्भ समाधि की प्रार्थना की। घरा से एक अमानुषी घाणी उद्गारित हुई कि हे वीर! भू-गर्भ समाधि तो केवल मुसलमान को ही मिल सकती है, हिन्दु को नहीं। यदि तू ऐसा चाहता है तो पहिले मुसलमान बने तदुपरात गूगा ने अजमेर जाकर 'रतनहानी से कलमा सीखा और स्लाम में दीक्षा ली। फिर मैड़ी^१ (गूगा मैड़ी) में आकर भू-लीन हो गया। यही मैड़ी गूगा का तीर्थ स्थान है। हरियाने में गूगा मैड़ी लालरुछ के नीचे बनाई जाती है।

कई विद्वानों का मत है कि जिस स्थान पर गूगा ने भू-समाधि ली थी वहां पर पीछे मदी (समाधि) बनी और फिर उस समाधि के आस-पास बसे हुए गांव को ही 'गूगा मैड़ी' कहने लगे। उनका तर्क यह है कि गूगा की पूजा के लिए मंदिर नहीं बनाये जाते, केवल मटियां हैं जिनमें कई प्रतिमा आदि नहीं होती। मन्दौर (छोपपुर) में एक मन्दिर में अवश्य उनकी पापाय मूर्ति मिली है जिसमें गूगा अपने सीले^२ के ऊपर खवार है और हाथ में माला लिए है।

१ मैड़ी अथवा जिसे गूगा—मैड़ी नाम से पुकारते हैं बीकानेर जिले का परगना भीरर का एक गाँव है जो भीरर से पूर्व में घाट-नौ कोम के अन्तर पर है। २ 'सीले घोड़े का अस्त्यार गूगा' का चित्रलिपि टाट राजस्थान के पृष्ठ ४४८ पर दी हुई है।

इस दूसरी ध्वजा में संरक्षित एक शब्द होने मात्र में निम्न है जिसमें गूग क पठकनदुर्ग चरित्र का चित्रण हुआ है। इस शब्द का इन मन्त्रों के रहे हैं। शब्द में गूग के पावा बंधों—गौला, मगू, नगमिह, बमा, पूनमिह—की श्रुता का भी रेखाचकारी बगन हुआ है। गूग का पूरा के साथ इनका भी एक संगण है और एकी शब्द को पात्रा मन्त्र समझा जाता है।

गूग का पूरा और क्या से संरक्षित एक तन्त्र पर और ध्वन जाता है कि इस पूरा में मानविक मन्त्रों का प्रति एक शक्ति की माना है। इस पंचमयी ध्वनाव में टन्त्र-जीव सभी बंधों के पुत्र हैं। ब्रह्मा भी है भगी भी, एकादश भा है और चमार भी। सबकी शक्ति संगण जाता है। सबकी मन्त्रों के लिए क्या निधि नाना प्रकार का मन्त्रों दी जाता है किमी को बंधा मेट किया जाता है ता किमी को बंधाई जाये।

गूग का शब्द, बैसा हरिपाने में गना जाता है, नाचे दिया गया है —

बेहरे सरिपल क कहें मुख मामु मेरी बात,
मुख मोड़ रग महल में मन्त्रे जाये धान बजल,
दिन्दी दूरी भी परी मेरी बलमगी यो नाम,
सँपने में इनचल होई ठेरा दिग्पा कवर का रात्र।

X X X

बेहरे बाधुल क कहें मुख सरिपल मेरी बात,
क्या सुने की बात से मोचना धन बजल,
सँपने में रात्रा बदे जगत मये बगाल,
सँपने में छात्रा बदे कलमत्र^१ से से हाय,
गुारे मिर पै गोरमनय से हम उरै^२ करींग रात्र।
पौ पगी पगडा^३ मया मुखरा से दीनी बाण,
मरद सवारै पागडी त्रिया मवारै माण,
बेहरे सरिपल क कहें मुख मामु मेरी बात,
धू धू धूना बाजता गद शदर के माह,
कवे शर के तू देखते हो रही रुने खान।

X X X

बेहरे बाधुल क कहें मुख सरिपल मेरी बात,
बेसा मन्त्रे दूध का बीच मित्रा से साँद,

१ नूनि। २ कलम। ३ इधर। ४ मवेरा।

महलां तै सरियल चालदी चल्यावै भौरा^१ माइ,
गूग मोइ जगावदी ले मासइ की ओ^२,
तम तो उठो पीर निदावणा तनै के सोवण की नींद,
तेरै सरियायै जम नू खड़े जायों तोरण उम्या^३ रींद ।

× × ×

बोले सरियल के कहै सुण सासू मेरी बात
क्यू जलमें एकता क्यू जण खोया नूर,
जलमें क्यूया दो जणै एक दाता एक सूर,
सुरा हो रण में लड़े दाता करदा दान,
सेरा जामददा क्यू ना मर्या हम क्या नै लिहान^४ मरी ।

× × ×

बोले बाइल के कहै सुण सरियल मेरी बात,
भरियो कलम दलिही भरियो दातासूर,
मेरा जाया क्यू मरे जिस पै ये दल घागे रे लूम^५
और ये दल घाये लूम जती सखा की जाइ ।

× × ×

बोले सरियल के कहै सुण सासू मेरी बात,
भगमे कर ख्यो कापड़े करो जोगी का भेप,
दलां बीच के लीकड़ो धम नै सब करै छादेस,
मुनोरी मेरी सासइ प्यारी जी ।

बोले सरियल के कहै सुण सासू मेरी बात,
पाचू ख्यादे कापड़े ख्या पाचू हथियार,
खीकला ख्यादे पीइके^६ मेरे दादभरे की सांग^७,
पति के भद्री में छाडू मने कीण कहेगा नार,
सुणो री मेरी सासइ प्यारी जी ।

× × ×

बोले बाइल के कहै सुण सरियल मेरी बात,
बासण लागे मेंह घणे भरियण लागे ताल,
बापल लागे पीपले^८ भाप कहां बड़ जा,

१ धरक । २ गढ़े । ३ हम क्यों शर्मिंदा होती । ४ चढ़ आये ।

५ काटी बांध कर । ६ तलवार । ७ तलवार धरना ।

करी राजते सब की मेरा सत्या सेर जगा,
जता मित्र की जाइ जी ।

X X X

जन्म^१ जोड़ गूण कहै मूय तरसोगी क नाथ,
पहली भरती भरी मुपों मेरा पद^२ बरो रिगाण,
पहले करा निमाफ तरी गरी का भीम नुजवा,
भरजन सुरजन न किया बाद जा दिरती म बादगाठ भजाया,
बाइम साय मद घाटा बन दरर में छाया,
पहिले पैर बट्या पीर में परम-पानों पाया,
दूजे पैर बट्या पीर में परम रान हुताया,
ताने पैर बट्या पीर में गसमपा के भपरपे गहार जन्म से जाया,
चारु जग में भावत करद सरण गुम्हारी छाया ।

X X X

मिरी दाकर भीम लकन पै गूण जिया हुताया,
मिर पै हाथ टरा दिया दीनर पीर बयाय,
मुधी भीर चार जगों की क्याया,
दिया ततोम करोड़ देवता,
माया का पार ना पाया,
भरजन सुरजन का तिस्रु काल,
गूण हाथ छरे से छाया ।

X X X

सग कलेज थोल जगी त्रिष साथ सनेदी,
गिरवर कप्ये हाक महल छै पिटरी रहीं,
दूट पिलग क साज पीर की पूती दहीं,
खबर हुइ नौ नाथ^३ म असमी जागे चार,
दल न कहन^४ पद गइ चौकरी कट गइ चार,
जती गोरख का चेला ।

X X X

कहां गई था नार खकी देरी थी ताम्ना,
क्या पांचू हथियार सहीदी^५ बदलू बाना,
मेरी माता नै बेग बलाद मने करै दूध बकसीस,

१ दस्त, हाथ । २ साथी । ३ कमी । ४ असली, वास्तविक सहीदी (बलिपय का सेप) ।

दुधमुत्त के मेले हुए सने पीली धारवत्तीस,
जती मिक्का की जाइ ।

× × ×

बोले सरियल के कहे सुण सासू मेरी बात,
मव मारी मोरी गई सत्या दिया जगाय,
खूटी तै खाडा पद्या चले पै घडी कमान,
शागतडा रोसन हुआ उठा भनाके तत,^१
रय चढत बैरी मुइत भरे जागे पी बलवत,
मुणो मेरी साम्सद प्यारी ।

× × ×

घदन चौकी विद्या दइ जलकारी धरी हजूर,
परी असर^२ तै उतरी सत्तर उतरी हूर,
परिया नै मटणा मख्या हूर चाढावै नूर,
सरियल करती आरता जिभके दज के लगे जहूर,
जती मिक्का की जाइ जी ।

× × ×

बोले बाइल के कहे सुण छीली के जाम,
तू गुगा दो जणे तीजा ना माइ जाया भीर,
जे आवै गूगे नै मरवाया के मनै मतपु दिखहये मुह,
जे एवावै जितवाय के तरे कूपां में परवालूगी पांय,
मुणो लीली के जाये ।

× × ×

बोले घोड़ा के कहे सुण माता मेरी बात,
एक मेरी टांग टूट जा मैं फिर दला के मांड,
दूजी टांग मेरी टूटना पूजा^३ में पून सया,
तीजे टांग मेरी टूटना मैं खेल् गिगन के मांड,
चौथी टांग मेरी टूट जा केरए लुछ न पार बसा,
मुणो मेरी माता प्यारा ।

× × ×

जहार चला रयरोठ पीछ के ला के जदा^४,
गूगा मारे महल की धाँक नगर नै दे परकवा^५,

१ भगवान को मनाकर । २ आममान । ३ पवन । ४ ताजा ।

गूते के बहुत ही पढ़ग्या रूप गाम नै होग्या चेमा^१,
रूप पै परी हुइ कुवान रूप जयो निल रह्या पदा,
मिर पै सुदेरी तान हाप सुखतानी कहा,
धीन छोक के माप हाग मेरी परतग्या^२ ।

× × ×

पोठा उम्मारसान^३ का धरके दंगे ध्यान,
गड दादर के राजपूत जयो उमग्या धावै भान,
बोले गूगा क कहै सुण्य रे बापरगान^४,
बाहर चढ़ी धारी मँ मानखी मरे पै योही बहोत इसान,
सुणो दादर के लोगो ।

× × ×

बोले पनइसिह के कहै सुण्य गूगा मेरी बात,
गड दादर की परस^५ मँ चरै बहली पाग,
चाबी छाई बाकली सिया^६ नै गाये गीत,
तु मरग्या रणवेत मँ मँ जीउगा के काख,
मँ बलू धुमारै साथ जती गोरख का चेखा ।
बोले गूगा के कहै सुण्य दादा मेरी बात,
मेरे जले अगीठिया^७ तेरे तिलगं घा,
यम जाओ घर आपणे तने किना बूध का पा,
धाउगा रणजीव के तने दोइखी^८ दइगा धा,
सुणो मेरे घर क पदव ।

× × ×

बोले भन्नु के कहै सुण्य गूगा मेरी बात,
चाबी माई बाकली सिया^६ नै गाये गीत,
त मर जा रणवेत मँ मँ जीउगा के काख,
मँ बलू धुमारै साथ जती गोरख का चेखा ।

× × ×

बोले गूगा क कहै सुण्य बाबा मरी बात,
कितन^९ मेरलीले लइ किरनै न्योदण^{१०} जा,
मेरा तो धाका^{१०} ह्युया त उहजटा घर नै जा,

१ घमा । २ प्रतिज्ञा । ३ गूगा का धामा । ४ दूसरा गीत है,
बानरसान । ५ चौपास । ६ लठियां । ७ दणिया । ८ कहा, को ।
९ निमगण्य । १० घन्ना ।

आउगा रणजीत के तेरे भात भरगा आ,
सुणो मेरे बाला भाखजा ।

× × ×

बोले बाला के कहे सुण मामा मेरी बात,
गाम गँगे की राइ म बोहत मरद मरमा,
उने बड़ाई क मिते जो लिये काल नै खा,
मै मरज्या बादसाह की कौन म नाम उमर होजा,
जती गोरख के चेला ।

× × ×

बोले बादसाह के कहे सुण 'बोड़ो' मेरी बात
ये वाच नपर^२ कौण सँ अन्नकी रस्ता दियो बात,
कद दल म गँगे ना मरज्या,
सुणो रे मेरे दल के जोड़ा ।

याता

उने दला के वाच खड्या कूने हलमारा,
के सोत्रे तम्बुआ धीच बागद दल चन्ग्या सारा,
तेरा खले दिल्ली तकत कहारै मग्न हमारा,
सुनो दिल्ली का सूया ।

याता

बदलू लीनी सुरास्ती 'याम की मा रखा गरभा^३,
लीता पृढ लगावदा चला 'गहर पे जा,
गूगा पान से द दे रोककी तरी मिलणी दूहू करवा,
जती गोरख का चेला ।

× × ×

मिलणी दूहू करवा तने बादसाह दूहू हरवा,
सुणो गोरख का चेला ।

× × ×

चेला गोरखनाथ का माथा लिया थराय,
नी कुकड़ा^४ का कोरवा गूगोलीनै हाथ उठाय,
सहस्रद मारे कोरके बदलू बाग^५ ज्य बरदाय,

१ भरजन, मरजन । २ भादमी । ३ गर्भ । ४ लड़ । ५ शुगलायक ।

घायु घायु राग स शोट से बदहाय,
मुयो घास्नी का मूबा ।

X X X

बोले बालू के कहे मुय गूगा मरा बाठ,
त मरा माह कर बाप मे भी गरी काजी गाय,
मदन करा ने गुलाम पे भी तेरा सङ्घ फीज के माद,
तने बादमाह मरवाद्यु जता गोरम का चेला ।

X X X

भी बालक निदान कहीं खड जायु खाला,
कदन दर्नी राड क न रय बाझा भाखला,
मरे हाथ कगय मिर सेहरा गज पूजन की मागा,
ह्व का जग जिता मुदि मरा मारयग ताता ।

X X X

बाद पुरय रिद गिद के धयी मउ गुरु गोरमनाथ,
उत्तरान मे ऊजरी जोगी की पनात ।
ई द्रमय्य बारह पय य धाने जहार क पाय,
धामत जोगनी बायन बीर मय खपर ल रछे हाय,
लारा^१ दिया बहीर^२ गुरु गोरम तरी माया ।

X X X

बदिया सेत महम पोर बदे रज्जों घाले^३,
बदगे दाना सेर^४, मारा माय^५ घास्नीवाले,
धंगी देरी माय खोजकिया^६ नगरकायवाले,
लारा किया बहार जती गोरम का चेला ।

X X X

बोल्ले गूगा क कहे मुय बाला मेरी बाठ,
दल ठमगे दरियायजू अथी जोड अमुवार^७,
घोट धनर पे कीजिए तरा होगा पहलका पार,
जती गारम का चेला ।

X X X

१ कतार । २ बाहर । ३ अचमेर के खवाजा । ४ हिमारवाला
'दानासेर' । ५ हामी का मारा । ६ धरदली । ७ प्रवीण अग्यारोही ।

बाले करियां बल्ल^१ भरद नै तेग उठाइ,
घाबक जड़े सुरग उठै जणु भाज हवाइ,
शूद पड़या दल बीच जला जु पाट्टी काइ,
जा मार्या सुलतान तेग भरतक में बाहो ।

× × ×

इकला दल बाला लड़ दिहरी धरैन कोय,
कोय बदला ले सुलतान का मेरे दला म होय ।

× × ×

धरजन उठ्या हयकै मुक् क करी सलाम,
नौ कोटी दल मारयाइ में बाला सै सरनाम,
इसके सिर का एक सै भ्याणी में चेतमान,
भ्याणी म चेतमान सुयो दिल्ली का स्या ।

× × ×

चेत्त भील^२ भियाणी का धया जादू चेत मान,
एकला दल बाला लड़ मेरा भार लियण सुस्तान,
सिर बाले का त्याय दे तेरा मुल्लू नहीं इसान ।
सुयो भ्याणी^३ का स्या ।

× × ×

घड़िया चेतमान म्यान तै सुमुभ्र प्याया,
मोहै^४ दिन्नी ढाल तयल घोड़ा चिक्काया,^५
रतिनै^६ मानी कोण^७ हक्या बाले पै भाया,
द्याबै कैसी बीनली बहगी एकू सात,
महियर^८ भइभइ भौ पड़े मुण्णि रहगे हाभ,
दोनुघां धी टट गइ तरवार प्यान पनमसर सेती ।

× × ×

वाता

बाला भायत देन जधी गूगा सुयमाये,
परोपत साह के दल में बाला पाग बदलक भाये,
यो सैयद^९ का बादसाह में अगडीर^{१०} बौहाय,

× × ×

१ स्थीरी चढ़ाना । २ 'भील'—'पान्ना' का रहनेवाला । ३ भिखानी शहर । ४ बाल में । ५ भगाया । ६ तनिह भा । ७ डिचडी । ८ तलवार । ९ इन्द्रप्रस्थ, दिल्ली । १० धेप्ट ।

धम आभो घर आपरो म्हारे बोहत धलेगे धममाय,
मुयो मेरी बाबा भायजा ।

× × ×

बोले गूग के कहे मुय बाबा मेरी बाब,
बाबा विममिला^१ के ता टा कर गाई^२ मै प्यान,
घब मै बगत इमान^३ का मुमर दे द्यो जान,
मुयो मेरा बाबा भायजा ।

× × ×

बाबा करिये बड पीरा का जिया सारा,
मुगद^४ बडाबी हाय दिया छोटत^५ पै घारा,
हीरपां^६ की हद का क जा मारे बडली^७ पगन,
उम बादमाह को पीत्र में बाले घान दिण धममान,
जती गोरम का खेला ।

× × ×

वाता

भय धगे महद्वार^८ बने धमेद इमाना,
मुर्की कुये कुमेद^९ सीम घर जिया निमान्ना,
खजर मारया खंच करपाजिन मिर का दान्ना,
यो खजर बाबा मर^{१०} बाबा करगया काड,
प्यान परमेसर सेती^{११} छाया ।

× × ×

बोला बाबा पाजा पीरी, बागजा दुनियां घोकरुप जाव मेरी छो बोरी वेरी ।

× × ×

गूग मारे हाँक मुयो दादर के पाबी,
घर मगा दिये पीर छोट ह्य खडू मुमारी,
घनक घनक घान^{१०} अजे खीले की पकड़ो बाग,
भगरी^{११} थापी खगा दड पाबी दीनै भगत बनाप,
जती गोरम का खेला ।

१ आरम्भ, फिर से । २ लड़ने का । ३ लड़वार । ४ छाया । ५ हाथी ।
६ भदबी नाम का । ७ महद और खजर दिल्ली के दो मुस्लिमान ।
८ लख्य । ९ सहा । १० रुदा । ११ कमर पर धाबारी की थाप ।

वाता

घार छोड़ चौकी घड़ी अरजन चढ़े ललकार,
भतीजा बढ्या इतबार रौं ले नगी तलवार,
धम तो चेतो जाहर औलिया तेरे पुहचे दावेदार,
जती गोरख का चेला ।

× × ×

धम मेरे मौसेर मेरे पै क्यू कोप थाये,
ले बढ स्याइ दल जाणु मिलयो को थाये,
मास्गा छोड़ू नहीं मेरी छोड़ पास लख भार,
हुकम नहीं गरु पीर का धम पहला करल्यो वार ।

× × ×

ले नौटकी^१ हाथ गोड़^२ अरजन ललकारे,
मस्तक सांधे तीर लग तानी^३ वैभारे,
गहों लहू की वृद्ध दूध पे छुटे पुनारे,
दूनी सही सलेम तै^४ कर्या सुरचन नै वार,
पाँच तीर सौ गन भले दीने गिगन चढ़ा,
गोरख नै काटे करदतै गुगा लिया बघाय
भ्यान परमेसर सेती ।

× × ×

बली भरे अहवार भ्यान तै सोरया खाडा,
जोड़े दिये गिरदाय नाकू^५ एसम्या दाडा,^६
जोड़े थीर चम्प के सग रहे थारे दांती^७ चमरे भैर,
भैरा तो थारा नहीं तै ऊपर जो क संग,
सग सरवर भगत नहीं गये छाड़ अस्तान,^८
गिस जल क प्यासे विरो व पुहचे मुल्तान ।
भ्यान पनमेसर सेती ।

वाता

कीला उषाणा^१ दग्ग जयी बढसारोम्याए,
इस्ती दाने हूळ सवी उमराव दुयार,
गुगा अपखै दल में षकला जन करी निसानादेए ।

१ हथियार विशेष । २ अरजन-सरजन का गोल है । ३ गमे का घोड़ा ।
४ मनाम करके । ५ दिमाग टटा हो गया । ६ गुमान ७ दाँतों में ।
८ भ्यान । ९ शाकी ।

बाइसा बागइ बानू रीत कहां की माया पावे,
उफने करले बाग रहयो नै क्यु क्यो पै,
माक्या घोइ मदीं नरे छोड़े पाग सरभर,
हुकम नहीं मन गद पीर का घन परछे करयो धार,
मुयो दिल्ली का मुसा ।

X X X

मुम्बमान झन्ना कहे हिन्दु कहे भावन,
सै दिल्ली रोमन, की मेरा दीना तऊत विद्या,
छात्रा रगियो तऊत की यो गुगा रूपा गरबाप ।

X X X

से नौटकी हाथ केर बइसाइ लछकाने,
पन्हा पेगी काट कर की उरी क्यारी,
जी भर रहगी साब हाथ रानी गिरपारी,
गोरग नै काटे करले यो गुगा जिया बणाय,
बुझ छोइ दीं पगल की मय विचन गये हुमवार,
दख बइसाइ की मुरतनै छरज गये चौहान,
स्वर में मारी तीन कवान,
ध्यान पनमेयर सेचो ।

बाता

हुगली दाव में खान परले ग्राडे नै ब्याप करै सै,
भारत जायत माता बुझे बटेहू रप की बात मुसा देघो ।
उइती देवी मने खोल कामली,
पइदी री देवी मने गुलाब जी,
रप कारी मूजा जल का धारा,
हुक मर नौर पिळा द्योजी,
पापी रे मंगे तने दूध पिळा दूध,
पन्हा ठे दोलू ब्याल जी,
गुगा हारषा तेरे जोड़े जीत,
हार घरा नै आया जी,
मस्तुकार सतहग का पइरा,
मूर्ती रे बात मय बोखोना,

सुरत तोड़ो सुर का कारतूम बिप टोपी गेरी ।
 जहा हिन्दू बँदा मुसलमान काया पढ़गी यदरी ।
 शरम कम्पा अगरेज नै क्या इक रग पेरी ॥
 मन्तरु लें कलमा का भेट्टिया नाहीं ।
 हांभी क नवाब नै घर गल्ल सुणाइ ॥
 तू मुखिये हिन्दू के बादमाह अगरेज इलाही ।
 आकै हिन्दुस्थान में बनी बुरी उगाइ ॥
 धरा मिर काट्टे दल जोड़ के कोइ भूप सिपाही ।
 सुण के तब अगरेज के अगना लग जाइ ॥
 यो गदबद गदबद करै कौन दो मूली जाइ ।
 मिया पकविलया जसलाद नै कोइ बालना नाहीं ॥

अब राज किशन गोपाल का रोप आया । उसने अगरेज नीति की निन्दा की । वही दण्ड निधान हुआ । विद्रोह का ज्वालामुखी भमक उठा —

भोला किमन गोपाल राव करे दोनू जोड़ ।
 मुखिये हिन्दू के बादशाह अगरेज अमोड़ ॥
 तू जावा रहा जमीन ते आया तेरा छोड़ ॥
 बिना गुनाह सरकार नै की मूली तोड़ ॥
 सुणके तब अगरेज के भल्ल उगी कपोर ।
 यो गदबद गदबद करै कौण ने मूली तोड़ ॥
 हुकम निया था हिन्दू के बादमाह कर अपणा जोर ।

रोप प्रकल्पित हाजर राव किशन गोपाल न कहा —

कहता किशन गोपालराव घर गल्ल सुणाइ ।
 मुखिये हिन्दू के बादशाह अगरेज इलाइ ॥
 तू आकै हिन्दुस्थान बदी बुरी उगाइ ।
 घग तोड़ी नगरतऊ नवाबी दाइ ॥
 भरत धर में भरत पर मार कर निया रिआइ ।
 कल दिवनी का पकड़या बादशाह जइ का बेरा बरा नाइ ॥
 आन धरा भन्दा परकै दीन पे बड़ा मुधरा स्गाइ ॥
 चमड़ा भर जमा लइ थी कलकत्ता माइ ॥

१ गदबद अथ न् आणोयतवन वक्रयस । २ पांसी । ३ हाथ । ४ अत,
 समाप्ति । ५ जिमका । ६ थारा । ७ मुद्गर । ८ था । ९ मय ।

धनका घर जमीं छै के निपा दिना रण्ड ।
ना कोण निजे तरा दीन में राम दुहाई ॥

सैयद कानेना ने बाब रिवाज दिना और रिवाज पे निर दुइ समय
का मोग था —

काबना सयद गका रहा फाहल छकाई ।
सुविपे हिन्द के बादशाह अंगरेज दुहाई ॥
यो बहा जारागन का हूँ बादा^१ नाहीं ।
वे^२ का रवाही राज हूँ हेक दुहाई ।
बहिप मनाजा तुजाराग रेवाही मो ही ।
अबोर^३ दिल्ली नरनल हारवाळ^४ बकाई ॥
दुष्ट एह^५ बये में मुबक एक दुइ बोदा नाहीं ।
हम नै फाट दिना दुहा निजे जयां पर टाई ॥
हम दिना फाट में फानिता मेरा के माही ।
पारी हक बिन्दापत समपायदा दिखी के माही ।
हम मुनवे^६ ताहा^७ कारनुस द्या^८ दीन बकाई ॥

आठ दिन का अरकाश दे दिया गया । भारतीय सरगरो ने मपयन की
योजना बनाई और दरबार किया —

राव न टाय नमक^१ की काफ्री लोय में टार ।
जे में यमने पाट द्यू बीच छियन मुरार ॥
सनदका^{१०} टट्टा पदान दिनाती ।
हाय घरा कुरान पे विष मक्का गरी ॥
राव जी जै में यम नै दगा द्यू दोजग^{११} निवधारी ॥
जगबहादर भ्यजरी^{१२} बनग करारी ।
एका हुपा दिनु मुन्बमान का भरड दरवारी ॥

अब समाहित होकर रिद्रोह आरम्भ किया और स्थानीय अंगरेज
अधिकारियों को अस्मिधार पर उठार दिया —

१ मौगध के लिये कहा जाता है । २ अरक, निबल । ३ हुमका ।
४ अजवर (अथ राजस्थान में) ५ अहारवाळ (अहीर मूमि) ६ इकदुय,
जनाकीख । ७ सोहंग (भविष्णवाळ) ८ दंगे । ९ लोय-नून भारतीय
परम्परा में विद्वान का प्रतीक है । १० हुमका नाम समदना था । ११
दोवन्, नरक । १२ अजवर का नवाब ।

हाथ जोड़ मक्का^१ कहूँ जवाब करारा ।
 तूरेवादी का राव जी धन म्हारा प्यारा ॥
 राव जी इव क हेले^२ बक्स^३ द जीव हमारा ।
 हम ना तुडवावै कारतूस कहय हमारा ।
 चौथाई दिल्ली करो राव, वण भाइ म्हारा ॥
 उन धो किशन गोपाल नै स्या धुधारा ।
 भारै भटकण लोट कै धड़ ती मिर न्यारा ॥
 धाचण लागी मिसरी^४ तरवार कटारा ।
 उल्टा हट हट कटे साहब साग्यों^५ का मारा ॥
 रग बिरग धरधरी^६ कस्की^७ की बाढ़ा ।
 जिनका धड़ परतै सिरनू पड़े म्हड़ पड़े थनारा ॥
 कौठी में मारा साहब लोग इखत्तर सारा ।
 एक काणा^८ गया भाग दे निजर इसारा ॥
 गगा की नाली बड़ गया देक फकारा ।
 गगा की धरे ध्यान रस जीव हमारा ॥

राव कृष्ण गोपाल मेरठ से दिल्ली आया और फिर भुज्जर के नवाब से भेंट लेकर रेवाड़ी पहुँचा । वहा युद्ध की तैयारी की और नसीबपुर का इतिहास-प्रसिद्ध मोर्चा खीता । इस मोर्चे पर फिर भगोड़ा जनरल टिमले मिला और उसकी अच्छी राबर ली —

कहता किमन गोपाल राव धर गल सुनाई ।
 चालो दोसी^९ न्हाय नै सोमोती आइ ॥
 धो दोसी कान्हाय सै कतल लड़ाइ ।
 जइ नै प्यारा घण लगी घर अपणै जाई ॥
 जइ नै प्यारा किशनगोपाल राव लो तेग उठाइ ।
 मरदा खातर नग बणया ना लड़े लुगाइ ॥
 राव जाओगे रणखेत में हे इचरन नाही ।
 करो खदाइ जग ननमी^{१०} बारवार नभोगी नाहीं ॥

१ घाटग्नि सीनियर अगरेज आफिसर । २ हम धार । ३ चमा करदे ।
 ४ राव कृष्ण गोपाल की तलवार का नाम । ५ शस्त्र विरोध । ६ धरती,
 भूमि ७ शव, लाशों की बाढ़ (समूह) लग गई । ८ पैय विहीन टिमले
 । ९ नारनौल के समीप एक पहाड़ । १० जन्म प्रदात्री माता ।

-गीत]

बरनैत्र^१ साहब बरनैत्र^२ मैं धर बिगल बजाइ ।
 बिगल दू^३ थी कलक रहम्बर के मंठी ॥
 मेरी रानरा^४ की बपी सांग पद बपी बजाइ ।
 सने सत्र सेर की निमरी^५ राय मैं मंगवट^६ ॥
 होदा वै बरनैत्र वै धर मुनुग^७ पई ।
 सोम दूट नैचे पदवा पद होदा मंठी ।
 हाथी घोडा साहब खोग^८ नै कजधी बयवना ।
 हाथी पूरवा या विपाद^९ के दख पाटटे न्याता ॥
 उजवी विमन गोपाळ^{१०} नै दिवे बग इमरा ।
 हाथी क मौइ^{११} घोडा दे दिया दे के दिखवाग ॥
 हय किय जाग खानत का माग ।
 माटे मय मेर की निमरा मोस्वा दुधारा ॥
 हाथी के मोरे मूट वै, मूट पद वै न्याता ।
 जेने बोटा^{१२} न्यात्र^{१३} का कारीगर पाह्या ॥
 हाथी सहाया विपादे दख में ना बखले जता ।
 दूजा गरी साहब खोग वै पदत मिर न्याता ॥

देने पर मुद में स्वप्रता के पुकारियो ने यह शीघ्र दिनाया कि अगनेब
 केना का घेय पवत हो गया । स्वयं जिने साहन भग गके हुए और
 नगाबपुर का जोहर में दुर्गोपन महेश शरज श्री, परन्तु राय कृष्ण गोपाल के
 प्रलपकर प्रहार ने वहा मो उस दुष्ट का बचाव न हो सका —

घोडा साहब खोग की टगाइ दिवइ ।
 रावनै गैडहो घोडा दे निया नमोपर ताइ^{१०} ॥
 कया^{११} मया जग वै चल्या भाग कुज छादा स्याइ ।
 बिय मारयो घोइ नहीं मन्न राम दुहाइ ॥
 साहब उला छिटे देखता हयो^{१२} बन घाइ ।
 धरके टेका मारता जोहर के मंठी ॥

१, = कलक और जनरल । २ राय गुजाराम की राजधानी, यह
 स्थान रेवाड़ी से एक मील परिधम में है । आत्रकल राव धीरे-धीरे जी वहा
 के स्वामी है । ३ राव कृष्ण गोपाल का कलवार का नाम । ४ महय की
 ६ सीधी गड । ७ सम्पुत्र । ८ शान्ता । ९ न्यात्रवृष (सुन्दर उपना के
 गइ) १० और । ११ निमले साहब । १२ भक्तिप्यता मयु ।

राव नै गलहीं^१ घोड़ा दे दिया जोहड़ के माहो ।
साइब गोत्ता खाके देखता दिया सीस उड़ाई ॥

टिमले साहन का यम का श्रुतिथि बनाकर राव वापिस रणक्षेत्र में पहुँचा और अपने साथियों को युद्ध धर्म का उपदेश दिया —

बोला किसन गोपाल राव भाइ रामलाल^२ ।
बोदा^३ न मत मारिये है जीव जजाल ॥
घोदा लड़े चून के कारनै करै निमक हलाल ।
तकलो^४ टोपीवान नै जिन् बँटे लाल ॥
मेरा जन मारा पातरु कटे कटे जीव जजाल ।
रोवें विलायत मेंम लोग माचै कौला^५ ॥

अत में राव ने अपने पक्ष के वीरों को प्रोत्साहित किया —

तम सिर की साग बखालो छाता की ढाल ।
दिया करलो बजर का देह करो दिवाल^६ ।
आज मगड़ा मडग्या दीन पै चौदा^६ की साल ॥

× × ×

इस प्रकार के अनेक वीर-रागों को सारंगी की सरस तान के साथ हरियाने के जागी गाते आये हैं। परन्तु खेद के साथ कहना पड़ता है कि आधुनिकता के प्रभाव से यह अमूल्य निधि समाप्त होती जा रही है। जहाँ पहले सारंगी की मधुर मादरु तान थी वहाँ अब फिल्मी गीतों का आकर्षण है। ऐसे रागों का भविष्य अघकारमय है। अत समय रहते इस अनमोल निधि की रक्षा कर लेना आवश्यक है।

इ हरियानी लोक-गीतों में साहित्यिक तत्व

लोक गीत अनिश्चित तिथि की देन है। इनकी प्रवाहिता घर के भीतर और बाहर सदैव से रही है। प्रकृति-पुत्रा शकुन्तला की सरियों ने इन्हें गाया, सीता की सहेलियों के पिक कठों से इनकी मधुरिमा प्रसरित हुई। चितौड़ की पद्मिनी के चार चरित को इन्होंने सवारा और चन्द्रावल के सतीत्व की कथा इनका अंग बनी। इसी दार्ढ्य परंपरा से ये गीत आज की कुलबधू के कण्ठहार बने हैं। उसने भी सभी मांगलिक अवसरों पर, भूले पर, हुलियारे के साथ,

१ साथ ही। २ राव का लघु भ्राता। ३ तियल। ४ देखलो, छांट लो। ५ दीवार, भीत। ६ सन् १९१४ में युद्ध हुआ था।

लोक गीत]

पनघर पर, तीर्थयात्रा के समय, सारंगी बजने, गीत बजने आवाज सुनने, दश मण्डल और चाका पीगते, प्रमाता आदि श्रोक रूप में इन्हें गाया और उन-जुनास है। पुरुष ने भी हल्की झेली, चामा सेन, गाथा बनाई, बल्लू चलाते, बग का झुंड का आनन्द सेत गेले टने म प्रमन इन्हें गाता है। याचका ने अपना टपनी की ताल पर इतिदास, वैराग्य आर प्रेम व गाता गाय। दर्बी ने बन्ध गाते, सुदार ने धाकनी पर गे टे आर भागी व बजायय के घाट पर 'द्विआ छी' का प्रतिष्ठा व अगा मर जडा। पुनर ने अना कथ व गाय अपना पति पिनाइ। पैना ने विना आर जुनाय या विना पुचरुडा गिय अरो वर पशुआ का प्रतादि किया। मदन सुने वाला ने गाते-गाते कुगई का। मरुने व अरो मार को गग अलावरर हलम किया। गाडानानू ने गाडो के पहिय का 'तू तू' का पति म अगा। पति विनाइ। ग्यालिश ने गाये चगते समय रण्य रं यरी का अभय पूरा किया। रागियो न अथना गाया-गायको ने भी अगा। गारगा पर देश व समाज के अलिखित इतिदास का गाया है। इस प्रकार ल व गगाज के समस्त उद्यम व व्यवसाय संगीतालय बन गये। लोक जीवन पूल गा हलका हो गया। कदो का तादर्य यद है कि उतने बड़े समाज व मनोरजन का काय अतीतकाल से इन गीतों ने किया है।

आज हम पाती का जब साहित्यिक कमीठी पर परखा जाता है तो काव्य कलाकारगियों के कान रुझ जाते हैं। ये लोक-साहित्य का नाममात्र सुनने ही नारुभा बचने लगते हैं। परन्तु यदि एक उदार दृष्टिकोण से निपय की परख की जाय ता निराश न हाना पड़ेगा बल्कि उनसे यह धारणा कि गीतों में उच्च एव गभार भावों का लाना केवल गारियों का तथा प्रतिमा उपर्य सुशिक्षित समुदाय का ही काम है, प्रामाण्य लोग मला उन्हें क्या जाने निराकार जान पड़ेगी। छंदम अक्लोकन यह बतलाता है कि इन गाये-गाये लोक-गीतों में जिनमें सरकारिक कविता की तरह शब्दाङ्गमर और पद-पद पर अनुमास आदि अलकारों का बहुलता नहा है, कविता का अपूर्व सागर लहरा रहा है। इन लोक-गीतों के कवि न तारों मरे आकाश के कवि हैं, न उन्हें नक्षत्रों से मौन-निमगण मिलता है और न सागर की लहरों से उन्हें कोई पुकार सुनाइ पड़ती है। उनकी प्रतिमा तो अहरह के जीवन का गान करने में ही उपलब्ध हुई है।

लोक गीतों के चूहात विद्वान प० रामनरेश त्रिपाठी ने लोक-गीतों की भीमावा का सार देते हुए एक स्थान पर बड़ी सटीक बात कही है 'इनमें रख है, अलकार नहीं, लय है छंद नहीं, माधुर्य है लालित्य नहीं।' वालव

में रस ही लोक गीतों का प्राण है। ये गीत बिगार की उपज है जो हृदय की बाणी में सुगरित हुए हैं। यदि इन्हें हृदय का शब्दमय चित्र कहा जाये तो अत्युक्ति न होगी। ये तो हृदय की सहनाइया हैं जो भावना के द्वार पर बजती हैं। फिर भला इनमें नीरसता के लिए स्थान कहा ? इन गीतों में साहित्य में उपलब्ध प्रायः सभी रस मिल जायेंगे। काव्य क्षेत्र का रसातिप्राप्त रस, कवण लोक-गीतों में अपनी समस्त प्राजलता के साथ विद्यमान है। सरराज शृंगार के दोनों पक्षों का—सयोग और वियोग का—बड़ा सरस वर्णन इनमें आया है। वीर और हास्य की चंचा इनका बराबर विषय बनी है। वृद्ध-वृद्धाओं के और साधु-सतों के लोक-गीत शांत रस की शीतल छाया में चल रहे हैं। अन्य रसों के उदाहरण भी खोजे जा सकते हैं।

जैसा हम ऊपर कह आये हैं लोक-गीतों में अलंकार प्रदर्शन के प्रति आग्रह नहीं है। परंतु उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा, अनुप्रास, श्लोपादि अनेक अलंकार स्वतः आ गये हैं। इन गीतों में उपमा अलंकार बड़े अनूठेपन को लेकर आया है। इसकी विशेषता यह है कि इसका उपमान सबन लोक से चटोरे हुए हैं। कहीं भी कृत्रिमता नहीं आ पाई है। जहां तक सरसता एवं मधुरता का सन्ध है वह तो इनमें इस प्रकार व्याप्त है जैसे तिलों में तेल अथवा दूध में मक्खन। परंतु सर्वोपरि विशेषता जो इन्हें इतर साहित्य के ऊपर उठा देती है वह है इनकी प्रभावोत्पादकता एवं स्वाभाविकता। लोक गीत आद्योपात्त स्वाभाविकता से अंतःप्राप्त होते हैं। इनमें कवल आश्चर्य तत्व को बाह्यत करने वाले ऊहात्मक कृत्रिम वर्णन नहीं मिलते। इनमें एक अनुभव भरा होता है जो पाठक एवं श्रोता पर अपना सहज प्रभाव छोड़े बिना नहीं रहता। दिन प्रतिदिन घर की मुठेर पर बैठकर काव्य काव्य करने वाले कौआ से किसी दुःखिता बाला का सदेश भिजवाना बड़ा स्वाभाविक है—

उड़ जा रे बागा ले जा रे तागा जादा तो जइये मेरा बाप कै ।

×

×

×

भुरट भुयारू रे बागा दम इस रोज रोज रे नव्या तेरा जीवै ॥

अथात्—ऐ भाई कौआ मेरे तागा (बागा और तार) को ले जाकर मेरे पिता को पहुँचा दीजिए कि मैं इस बागड़ देश में भुरट घास को बुहारती हूँ और रोती हूँ। कौआ की इसी सदेश-बाहकता के आश्रय पर लोक में एक विश्वास प्रचलित है कि कौआ के लगातार बोलने से किसी अतिथि के आगमन की आशा होती है। फिर अतिथि की सूचना लाने वाले को ही सदेशवाहक बनाना एक सस्ता एवं स्वाभाविक उपाय भा है।

सोक-भौत]

हरियानी गीतों में वष्या के मनोभावों का स्वामायिक चित्रण भी हुआ है। केव खनी होने में अथवा एक पुषरत्न के अभाव में वष्या को क्या बुद्ध नहीं सहना पड़ता, उसे पर मानसिक वेदना अनुभव होती है। संतान के बिना उसका समाज में आदर नहीं होता। सब उसे दुर्भाग समझते हैं। इसी बात का बयान एक गीत में हुआ —

रहो रहो बाम्बखली दूर रहियो,
तेरी प तेरी क्षायक मै गदारे पत्रम्है ।
रहो रहो बूबखली गरब मत बोल,
हम हां प हम माई भतीजां घागली ।
मइ प भतीजा तेरी माण मरुनी,
तेरे प तेरे दिवई बाम्बख दी बने ।

×

×

×

बन्तो गदारा राजीदा जी गदरां में खजी,
जे कोइ जो ज कोइ बालक पकई घांगखी जी ।
बोखी प घय मूरख गगार ।
बिन जाया कैसे पकई घांगखी जी ।
खीप्या पोया बाम्बखली के सोधे,
ना कोइ जाना कोइ बालक नेजे घांगखी जी ।

बाम्ब के हृदय की बात को वह स्वय ही जानती है। 'बाम्बल दिवई दीबले' अथवा वष्या के हृदय में गगानल घपकती है वड़ा ही स्वामायिक अभिव्यक्ति है।

इसका एक मनोविचार है, परंतु 'तीतियाडाह' अत्यंत स्वामायिक है। बिल प्राणनाथ के ऊपर खनी का सृष्टि-चक्र चलता है यदि उस पर किसी अथ का अधिकार हो जाये तो मन में कालुष्य का आना स्वामायिक ही है। हरियाना दुल्लवधू ता प्राण देकर भी अपनी सौक नहीं रहेगी —

अरजे ब्याहूँगेगा सांक दूसरी ही ठममें बड़ जंगी ।
तनें तो भरवार समम्य मीरंदा कर जंगी ॥

अथात् मैं मरकर और भूलनी बनकर सौक में प्रवेश कर जाऊंगी और उसे मार डालूंगी। बात बड़ी ही सजाव और स्वामायिक है।

हरियानी लोक गीतों में सत्यता एवं स्वामायिकता तो बूट-बूटकर भरी हुई है। बालक-की निरीहता एवं गो व मोलेपन से युक्त ये गीत निरद्वय हृदय का निरद्वय कहानिया हैं।

हरियानी लोक गीतों में अनेक आलम्बनाएँ एवं प्रतीकों का भी बड़ी भयता के साथ प्रयोग हुआ है। बहुत से फूल, फल व पक्षी आदि प्रतीक रूप में आये हैं। एक विवाह गीत में अस्फुटयौवना नायिका के कच्चे कौमार्य के लिए कच्ची-कला प्रतीक रूप में प्रयुक्त हुई है —

हरियाला बना काची कला मत तोड़िए माली को ढंगी गालिया ।
सहजादा बना पाकण्डे रसहोष्य दे नगाद्यूगी डालिया ॥

इस प्रकार अनेक उदाहरण खोजे जा सकते हैं। एक गीत में बिल्ली का धृष्ट रसिक का प्रतीक बनाया गया है। साहित्य में भ्रमर रसलम्भता के लिए कुख्यात है। एक पूर्ण यौवना नायिका अपने यौवन भार को समालने में असमर्थ है। वह अपने अन्तस् की बात को प्रतीक प्रयोग द्वारा कह गई है —

बावल ! यों जीवन तिन चार का, बाजीगर का खेल ।
बावल ! छीके धरु तो ठे पड़े, तले धरु तो बिल्लिया खाय ॥

(अर्थात्) पिता जी यह यौवन अस्थायी है, दो चार दिन का है। यदि मैं इसे छीके पर धरती हूँ तो गिरने का भय है और अगर तले भूमि पर धरु तो बिल्ली (धृष्ट रसिक) खा जायेंगे। कैसी निष्कपट विवेचना है? प्रतीक प्रयोग में लोक कवि बापी ले गये हैं।

कहीं-कहीं श्लेष अलंकार भी लोक गीतों में आया है। प० लखमीचन्द ने "सागीत पद्मावत" में रणधीर के पद्मावती के महल की ओर चलते समय एक रागनी में उड़ा सुन्दर रूपक बधा है। जिसमें श्लेष की सहायता से आभात्मिक अथवा परोक्ष अर्थ की बड़ी मार्मिक अभिव्यक्ति हुई है —

चन्द्रदत्त की आज्ञा लेकर फिर भगवान् मनाया ।
चाल पड़ा रणधीर रात नै कर कानून काया ।
खड़े चुपचाप कोई सा ना इधर उधर हिले था ।
पाच खड़े दरघाट पाच का दौराही दूर चले था ।
पद्मावत के महलो उपर अद्भुत तूर बले था ।
नौ नाडी और दस दरवाने ज्ञान का दीप जले था ।
झाड़ी माँके पद्मावत के पड़े रूप को छपाया ॥

जायहाँ ने जैम पद्मावता का परमेश्वर का रूप माना है वस ही लोक-गायक ने भी पद्मना का आधिक्यता व आररण में छिपाया है। उसी प्राप्ति ज्ञान दीप प्रज्वलित किये बिना असम्भव है। पाच ज्ञानेन्द्रियाँ एवं पाच

लोकगीत]

धर्मोद्धार पर काय पाना आरक्षकत्व है, तथा कभी उस स्थिति आना के
दरम संभव है। यथा विनय कृष्ण वना मुन्दर वन पदा है।

लोक-गातों में अलंकार अनेकों का एक वाच और सम्यग् सम्यो
दिए कि वा अलंकार इनमें मिलते हैं य अन्वी पूरी छटा के साथ नहीं
जय है। वे वा आरम्भ करने ही समाप्त हो जाते हैं। कारण स्पष्ट है कि
लोक-गातकार का रस व नरस में विरा मध्य गती है। वे रस व आरम्भ
निधान की परमाह नहीं करते। अतः उन अलंकार कुछ अल्प में लाने हैं।

रस परिपाक

लोक-गातों में रस परिपाक भी विशेषत्व का लक्ष्य हुआ है। वे रस
वा यन्तुव रस - निम्न हा है निम्न वा रस भावद्वय लक्ष्य है, यथा ने य
अज्ञान करते रहते हैं।

हरियाना लोक गातों में कल्प रस महाधिक आकरक है। कल्प का
समा कमल एव वर अत्रत्याघा का वचन हमें हुआ है, साथ ही शृंगार,
हास्य, वार और शान रस का वर्णन भी पवात माना में आया है, परन्तु वा
मादिकता कल्प वचन म आद है यह दूसरे रसों का प्राप्त नहीं। कारण कि
वे गात नारी के उस जीवन की स्मृतिया हैं वा दुःख, विलास और रोदन का
दूसरा पयाव है।

हरियाना लोक-गातों में शृंगार का वर्णन भी मूल मिलता है। विवाह
और पुत्रोत्पत्ति के समय गाये जाने वाले बरदों में और विवाहों में प्रसन्न
शृंगार व नद पूर पढ़ते हैं। वे दोनों समय, वास्तव में सयोग शृंगार के लिए
बड़े उपयुक्त हैं। विशेष शृंगार भावण और पाल्गुन में गाये जाने वाले
गातों का प्रधान विषय है। मूल के गीतों में भी विवाह गीतों का प्रधानता
रहती है। इसका निरस्त वर्णन आगे कक्ष्य विमलम के प्रसंग में करेंगे।

विवाह के गीतों के प्रवाद में शृंगार रस के समा सचारी करते रहते हैं।
इन, मीठों और गानी गातों में यह रस मूल गुणवर गाया जाता है। पुत्र
जन व अक्सर पर गाये जाने वाले दोलकों में भा शृंगार रस का पनात
समयी होता है। गर्मिणा की नया का धिना स्वामाधिक वर्णन एक गीत
होता है —

कीदी कीदा यगद बहाव दद टग मैं कमर में, हो रीन,
द्वय रहुंगी तरे घर में।

दुय्यार जिगानी मेरी बोटली ठोल्ली मारें जिय कयो स्पेथी बगल म, हो रानीदा
इबना रहूंगी तेरे घर में ।
सास नणद मेरी धार बधावें होती आवै मे जगत म, हो रानीदा
इबना रहूंगी तेरे घर में ।
छोटा देवर सरा रसीला दाइ नै बुलावै इक छन मे, हो रानीदा,
इबना रहूंगी तेरे घर म ।
छोटा देवर नै वाहण बिहाद्यू, दाइ बुलाइ इक छन में, हो रानीदा,
इबना रहूंगी तेरे घर म ।

प्रसव की पीड़ा से व्यथित गर्भिणी अपनी वेदना की बात अपने पति से कह रही है। देवरानी और जिठानी का हास परिहास उसे असह्य हो उठा है। अतः वह घर छोड़ जाने की धमकी देती है, परन्तु देवर और सास-नणद के मधुर व्यवहार से उसे कुछ सात्वना मिली है। देवर को एक अच्छा पारितापिक भी मिला है।

इस गीत में पति को ही पीड़ा का कारण समझकर स्त्री का यह निष्पत्ति 'इबना रहूंगी तेरे घर में' बड़ा सामयिक है।

एक दूसरे गीत में पति की क्रूरता का मीठा परिहास देखने योग्य है —

मेरे उठै थी पीड़ त-नै आवैथी नौद, ठोस्सा खाले, हो रानीदा,
नाद्यू नाद्यू पनीरिया ।
मेरे उठै था गुम्सा तेरा बाज्जे था हुक्का, ठोस्सा खाले हो रानीदा,
नाद्यू नाद्यू पनीरिया ।

पति ने प्रसूता के कष्ट में कोई हाथ नहीं चलाया और न कोई सहानुभूति ही प्रदर्शित की। अब सांके की पजारिया खाने का प्रस्ताव स्त्री को स्वीकार्य नहीं है। उसका 'ठोस्सा खाले' उत्तर कितना स्पष्ट है ?

साहित्य में शृंगार को रसराज कहा गया है। सचमुच यह विशेषण उड़ा उपयुक्त है। हृदय की परितृप्ति का इस रस में हाती है अत्यन्त सम्भव नहीं। परन्तु शृंगार वर्णन में कवियों की प्रतिभा प्रभा कभी कभी अवाञ्छनीय दिशाओं में चमकने लगती है। आशिक मारुकों के फूहड़ वर्णन और विलास प्रियता की भाँधी भावना कभी-कभी कविता कामिनी के कलित कलवर का कलुषित कर डालता है। परन्तु पाठक देखेंगे कि लोक-गीतों में यह दुर्गुण कदापि नहीं आ पाया है। इनमें निर्भर के निमल जल की भाँति ताजगी, पावनता और पवित्रता है।

हरियाना लक्ष्मी-गातों में स्नान व प्रेमचया हा नही है नासिक विन्दे की पुत्र भा है। हरियाना लक्ष्मी-गातों में स्थान स्थान पर हास्य रस फ छीटे बगल मिलते हैं। एक हास्य गीत में कृष्ण महिला गंगा स्नान को जाना चारदी है जिन्नु उसका भैम 'हास्य' है अथवा उषा मे धार कर्वाती है। म्म के सामने यह समान बना हुआ है, अत यह अपने पति से अपने वस्त्र पहन कर धार निम्नाने का मुक्ति देकर गंगास्नान का जला बना है। आगे का वर्णन गीत में पण्ड —

हो रिया मन गंगा हुआ दे जारा मे मय समार, हां ष जारी मे मय समार
 गोरी तने क्यूहर नुवाण्य, मरी हाथद पद री भैम, हां ष हाथद पद री भैम ।
 रिया तने जुगत बडादय मेरा करदे बदा पार, हां ष कर ले वेदा पार ।
 मुग पे मेरा नामय लटक, खुदही धापदार, हो ष खुदका धापदार ।
 मरी पीला धारा पहर के तू वेर काटिये धार, हां ष वेर काटिये धार ।
 इवच मे एक मोडिया चाया, मरी धव निपदा घाल, हां ष धवे निपदा घाल ।
 या गंगा हाय गड मे, वरा जीजा काड रह्या धार, हां ष काड रह्या धार ।
 मुग पादगा नेपण मुदागा, त्रिव विमरु भाजगी भैम, हां ष विमरु भाजगी भैम ।
 लगी वे पादे हो जिया करक ने गवम टैम, हां ष करक गवम टैम ।
 गाती मुखगा, पल्ला टघग्या न्यू मूय फणाके तै, हां ष मय फणाके तै ।
 गलिया मे या जियरा हो रह्या देगा मुयुद नर, हां ष जेपी मुयुद नर ।
 कोट्टे चन्दे चक मार कोण मन मेजो हाय, हां ष को ष मन मेजो न्हाय ।

हरियाना प्रव उपलब्ध सामाजिक चार्जे भा कष्टन का तरह इन गार्ता द्वारा अक्षित हती रहत हैं। हरियाने के इस उपलब्ध बकड़ा गीत में बेचारे कृष्ण ना हास्य का आनन्दन बनाया गया है। यन्तुत्र हास्य-गीत समाज के दुःख क्षयन के दायक होते हैं। ये गीत मनुष्य की तमा भाते हैं जबकि उसका जीवन में शांति और अन्तर में सुख की व्याप्ति हा। हरियाने का लक्ष्मी-गातन इस प्रकार की हास्य-तरंगी के लिए बड़ा उपयुक्त स्थल है। हरियानी नास्य-गातकार ने कहीं-कहीं विनादवय सुन्दर अत्युत्तियो का प्रयोग भी किया है। एक गीत म भिन्न-भिन्न प्रकार के जानवरों का चित्रण मयग हुआ है —

धींदा ज्याड मू में सीम दिया मन तीम ।
 हातापला मय छक लिया घो कीही ने अमीम ।
 म्म नहीं बोहलूया मू की मे म्म हाय ।
 पानपित की मडक ऊपर मांडक बाटे बाय ॥

लक्ष्मी]
 का कल्याण का गण दृष्ट जाता है और पट्टो ने रह बने हैं। लाहो का पर

उक्ति कितनी मार्मिक है —

‘तुम्हें पापुन बँग कहे, पापुन मेरी चीथ बिना ।
 बाँगू तो भर चाये तिन, क लाहो बेनी जाव धरा ॥

बैसा न्यायमूर्ति विषय है। पुषा के बिना गय दुःख हो सकता है, 177
 ‘गजल’ गंभीरता व अभान को पूर्ण कर भी नहीं कर सकता। गाँवने-गाँवने
 विना व जलान् गेरे हुए आमु आग’ में एतलदुला आने है। इन परिस्थिति में
 पुषा दुःख न करके भा मय दुःख करेगा है। मरगुन लोकिक माया वधवा
 में विनिवृत्त तन्मी कय तब शत्रुणा के दखु परगमान पर धय न भाग्य
 र म, तो साधारण यक्षियों का बात हो गया है। मग का मतिव्या भा उप
 दयाये तत्रों में गा उटना है —

‘मायल धान परी ही मरे दय्य भरपाये नैल ।’

उप कथा विना के पर का छड़कर औरों नये मंगार में पगण्य परी है
 तो वक्ष पर भी मुग न । मिलता । मास-मनद के कटार विनयण में नम
 रहना पड़ता है। उनके अत्याचार सहने पड़ते हैं। ऐसी स्थिति में नरापुण्य
 कश्य हर न गा उतनी है —

काद को व्याहा रिग मून लक्या चावल मेरे ।
 सोना भा दिया पापुन न्या भी दिया,
 पफ न दाही मेरे मिर की कपी
 माम ननद बोलें बोल रे । मुन तन्मा चावल मेरे ।

मचमुच लान गीता में माम-बदू की लड़ाई का इतिहास दुग के अक्षरों में
 लिखा हुआ है। अथात् ह लार्थीरा पिता जा आने ताना चाणी मय दुःख
 दिया, केवल एक मिर की कथा के बिना मुझे मास-मनद व व्यय बाण सहने
 पड़ते हैं। बयू का दयायता कभी शोचकारी है।

विप्लव भृंगार के वणन में कश्य को पयात स्थान मिला है। विरह
 मयथा गीत बड़े ममस्पर्शी होते हैं। अरना जीवा अश्रुधारा में स्नान करता है।
 इन गीतों का मुनकर पर्यर व हृदय मा पिपल उठता है और वक्र हृदय भी
 दुकड़े दुकड़े हो जाता है। विरह-व्यथा में मगार के सभी देवों ने कथियाँ ने
 अपना लेगना चलाइ है और बहून सा रमादी गर्व की है। परन्तु लोक-गीता में
 जिस दिनगता के दखन हाने हैं वह प्रायः दुलम है। कारण की ये गीत
 स्वानुभूति की उपज है, जिस हृदय में चाट लगी है ये गीत उठी दिल का
 आहें हैं। इनमें बहों, कल्पना और तपैदुल के परवाज नहीं है।

हिन्दी साहित्य में विहारी की बालिका के विरह गीतों ने, सुरदास की गोवियों के विरह गीतों ने और आधुनिक छायावादी कवियों के नैराश्यपूर्ण प्रेम के विरह गीतों ने बड़ा प्रसिद्धि प्राप्त की है। तनिक हरियाना विरह गीतों की कुछ बानगिया भा देसते चलिए।

पति परदेश जाने के लिए तैयार है। पत्नी भारी वियोग की सहज याशका से विह्वल हो उठी है। वह कहती है कि तुम्हारा धाड़ा किमने कस दिया है, किसने उस पर बैठने के लिए जीन रख दी है। वह प्रतिशाधानल से दग्ध होकर साथियों को कोसती है। सास और ननद के दुर्ग्व्यवहार का उसे खटका है। इसलिए वह उन दोनों से मुक्ति चाहती है। पति नाना मुक्तियों देकर उसे सात्वना देता है परन्तु नायिका खीजकर कह देता है कि मुझे मार डालिए। न मैं जीवित रहूँगी और न वियोग व्यथा सहूँगी। यह मर्मांतक गात पढ़िए —

पिया कन धारो घुडला कम दिया, कोण कन धारै धरदा जीद जी ।

मत जइयो राजद चाकरी ।

म्हारा भाइया नै घुडला कम दिया, म्हारा साधाड़ा नै धरदी जादजी

मत जइयो राजद चाकरी, मत जइयो परदेस

तरा साथिडा पै पड़ियो बीजली, तेरा भाइया की रहियो बाम्म जी

बाप तेरा न हो के कहू ?

मत जइयो राजद चाकरी मत जइयो परदेस ।

पिया जै थम पाथो चाकरी अपनी भाण नै जइयो जिडार जी,

मत जइयो राजद चाकरी

गोरी भाण बिंरा हम ने ना सरै म्हारा उल्ला बटेऊ^१ जाय जी

मत जइयो राजद चाकरी मत जइयो परदेस ।

पिया जै थम पाथो चाकरी अपनी माता ने जइयो जिडार जी ।

मत जइयो राजद चाकरी ।

गोरी साथ जिडारा हमनै ना सरै म्हारा चरपा का सोभा जाय

मत जइयो राजद चाकरी मत जइयो परदेस ।

पिया जै थम पाथो चाकरा अपनी गोरी धण नै जइयो जिडार जी

मत जइयो राजद चाकरी

गोरी थम नै जिडारा नासरै म्हारा कुणयो बारावा^२

मत जइयो राजद चाकरी मत जइयो परदेस ।

१ कतल करना, बध करना । २ महमान ।

यह गीत विप्रलय शृंगार का बड़ा सुन्दर उदाहरण है। इसमें गायीका के प्रति अनूपा और उमला तथा श्रम प्रतिष्ठा व मर्द, पिया, शंका, आवेश, निरुद्ध और शिवा आदि भावनाओं का बड़ा गटीक वर्णन हुआ है। ऐसा सरसता भला उदाहरणों का आधिकारिक वर्णन ने कहीं संभव है।

एक दूसरे गीत का नायिका पुण्यपौरा हो गई है। उसका परिपरदश नोकरों के लिए जा रहा है। उसे विषाग प्रमदय हो उठा है। शत यद साथ चलाने के लिए आग्रह करती है। चणों की चंगा अथ उमे नहीं मुदाती। यह कहता है कि मैं तुम्हारे शरीर से मरना के गदग विपरीत चालूगी और कार्य में बाधक नहीं चूंगा। यह तो तपस्विना गीत की भाँति माग के दृशकर्मों का कुचलता चलेगा और मियतम के सुख शीघ्र के लिए प्रयास करेगी। गीत का संभावना का रगारगदर कीजिए —

पाप धर्म का भवर हो ब्याही, हाँ जा मेरा हो गई मेर नयान
 चिनरन^१ का हल जाने नोकरों ।
 अरना एपायू द मोरी रग रगीला, हाँ जी कोण वीही माल गुनाव
 राधनों में की मोरी कागिये ।
 अरना तोह भवर हो चौयग वीदा क कन चगरा दृग,
 हाँ जी सग धारि चालूगी ।
 माना बय बदन क धीय बय ले हाँ जी सग धारी जालू ।
 घर पर नहीं रहूगी जी ।
 लोटा झारा^२ भवर हो मैं बयू ने ष जी कोण बयूजां रंसम होर ।
 तिम^३ लगे जय पिया ही धी जिये जे ।
 खाइ जलेबी भवर हाँ मैं बयू जे, हाँ जी कोण बयूजां कृ मुदाक^४ ।
 भूग लगे जय पिया ही मानिये जे ।
 बादल वीगला भवर हो मैं बयू जे, हाँ जी कोण बयूजां कमल घग,
 धूर पदे जय पिया हो हाँ कन जे ।

इस गीत में स्त्री के प्रेमजय भावों का मार्मिक वर्णन हुआ है। स्त्री का अमिलापा पमकपूर्ण है।

विप्रसुखा की दशा का एक और चित्र लीजिए। मियतम नौकरी पर जा रहा है। स्त्री कहती है। क तुम्हारे विषाग में मैं भंगे रहूगी, इसका कुछ उपाय बतलाते जाओ। पति चला फातो और घर बैठकर मौज करो की

१ उपभोग । २ मुराही, जलपात्र । ३ प्यास । ४ एक नमकीन भोज्य पदु जो मैदा का बना होती है ।

युक्ति देता है, परंतु नायिका का वह भाव्य नहा है। अतः म, पति उसे पान्त्र पहुँचाने का प्रस्ताव करता है। इस प्रस्ताव ने नायिका को प्रेमकलिका को असमय ही मसास दिया है और वह कह गई है कि पिता व यहा वात्सल्य भाव मिलने पर भी सम्मान कदा है ? गीत को सरसता देखिए —

धम तो चाल्या हो पिया म्हारा चाररी धरण रा कोण हवाग,
 यो रिड़ला मेरे मन बसा ।
 चरगा ल्याद्यू ए गोरी रागला^१ पोनी लाल गुलान,
 यो वसा ।
 चरगा सोड हो पिया रागला पीडी का मतर टुक,
 या बसा ।
 कोनी चावल म्हारी वा धणा धंगी हुम्म चला,
 यो बसा ।
 चावल द वो हो पिया माहण धीभर होम कराया,
 यो बसा ।
 भैल जुड़ा द्य है गोरी म्हारी चारणी वैठ्ग पीहर जाय,
 यो रिड़ला मेरे मन बसा ।
 बड़ी ण पियारी हो पिया बाप क धम तिन आदर न होय,
 या बसा ।
 पड़ी ज सूखू कडब जू चरिण न टागर दोर,
 यो बसा ।
 कडब^२ निमाणी हो पिया है पडै^३ हम तै पडया ण ना जाय,
 यो बसा ।

कैसी कातरता है 'पड़ी न सूखू कडब जू चरिण न टागर दोर' 'अर्थात् मैं पिता के यहा निना आदर न चरी ने सदृश पड़ी-पड़ी सूख जाऊगी, फिर सूखी चरी को (जुआर को) पशु खालेंगे परंतु मैं इस उपवाग म भी न आ सऊगी। सूखकर चरी नीचे गिर जाती है, परंतु मुझमें गिरा भी नहा जाता। फिर के इस नारकीय कष्ट से छूटने के लिए नायिका प्राण्णत चाहता है, परंतु यह भी उसने बश में नहीं है। 'हमते पडया ना जाय' म विवशता की बड़ा तीखी व्यजना भरी पड़ी है।

चिरह के गीत प्रावण मास में आधक गाये जाते हैं। पावस की मादकता म चिरह उद्दीपन के लिए विशेष अग्रमर मिलता है। प्रकृति की

हायदमया शोभा, मेघों का नाग, परीष का पा पा, रद रदकर प्रिय का स्वर
 विना है । हरियाणा में विनाम पाके हुए निरद गीतों के साथ यह शक्ति है
 विनाम "मंगल-निरद" का यथा अर्थ है । ये रचना जग 'गान्धारी-मंगल' की
 भक्ति का गू है यह ही कि "पूज है श्री" यहाँ के स्वरों का यथा गायन
 विनाम हुआ है ।

काका का मगुगल में गाव तनद का ही हुए गरी है, जो धरती को
 बाला का भी दूमर हुए है । पना उपरी की गायना चादर बुना के
 श्रीर पति शिशुकादा करा है । उगका (पना का) श्रीम भास्वर का
 का है । अरनी ऊरनी मधी, मग आगाधा श्री "गुग्गु" आका-गगा का
 प्रलम्ब म समेते एक गान का प्रलिका गा उठा है —

दूना दूना सी चणनियां से दूना,
 पानी को जाऊ मेरे साथ साथ जाव,
 रोरे रोरे री यह तो नेणू परद व,
 रोधा मत बान मह्यां भाको मन बाल मह्यां,
 दूगी दूगी जी गुग्गु बुधिया मगाव व ॥

× × ×

मोने को जाऊ मेरे साथ साथ जावै,
 रोरे रोरे री चम्मा चम्मा करर ।
 रोघो मत बान मह्यां भाकी मन बाने मह्यां,
 दूगी दूगी जी गुग्गु बुधिया मगाव व ।

इस गीत में बाल-विवाह की दयालय दशा का यथा भारत म धरत
 विना गया है । यानी पति और सयाना पत्नी के विचारों में आकाश पानान
 का श्रेतर है । यह गाव तन र साथ यही मुन्दरता से गाया जाता है ।

वैधव्य के गीतों में यदगा का गदरा छाप दाना है । जीवन-मार्थों के
 रुठ जाने पर तो विधवा का सगर ही समाप्त हो जाता है । उमे अरत वियोग
 की स्मृति काटे ही चुम्ना है । विधवा विलाप में विनाद का गदरी रेगाए
 उमरी है —

७ माम्बू नय ध्यू महल म दरा विर्याना मूना ।
 बुध एक दिना की ना मैं मुझे मारे जनम का रोना ।
 अरे यानी धा जय रही बाप के मके सोच समर बुध भाषा ।
 दय ध्यू कटे दिन रात मके कोप एक दिना की ना से ।

समूचा गीत शान के तागे जाने से बुना हुआ है । वियोग के क्षण भी

जब कल्पसम हो जाते हैं तो जीवनपर्यंत का यह विभाग कितना भर्मांतक है, पढ़कर रोमांच हो आता है ।

विधवा की वार्षिक कहानी ही नहीं विधुर की व्याकुलता भी लोक-गीतों में आइ है । साहित्य में राम का सीता के प्रति और अज का इंदुमती के प्रति विलाप एक गभीर हृदय का रुदन है जो हृदयस्पर्शी होते हुए भी व्याकुलता से पूर्ण नहीं है । हमारे लोक गीतों में करुणा अधिक छलकती है । पादर के एक गीत में रड्डुवे का विलाप कितना भर्मस्पर्शी है । उदाहरण देविए —

व्याही थी रे तिलसी नहीं याक्या हुइ प्यारी ए ।
तोड़ी थी रे सूधी नहीं, ली थी गले में डार, पारी ए ॥
घर घर दावा, घर घर चाती, रड्डुव के घर घोर अधेरा ए ।
घर घर भोजन, घर घर रोटी, मेरे घर टकनी में घून, प्यारी ए ॥
दामण चुदड़ा खूनी धरे सै, एक बर पहन दिखाय प्यारी ए ।
पानी की जलघड़ रीती धरी सै, इक बर सागर जाय, प्यारी ए ॥
गहने का डिवा भरा धरा सै, इक बर पहन दिखाय, प्यारी ए ॥
भैया तरा लेख आया, इक बर पीहर जाय, प्यारी ए ॥
मेचें मेरी सुना पढ़ी सै, एक बर सूरत दिखाय, प्यारी ए ।
डाल खगेबा वगड़ बिच सोया, एक बर सुपने में आय प्यारी ए ॥

गात का वणन और विलाप बड़ा स्वाभाविक है । “एक बर सूरत दिखाय प्यारी ए” में गभीर दीनता भरी कसक है ।

वास्तव में, ये करुण गीत ही साहित्य की अमूल्य निधि हैं । भला जिस अविताम विश्ववेदना को टीस नहीं, करुणा के आखू नहीं, वह कितनी ही चमत्कारपूर्ण हो, माधुर्यपूर्ण नहीं कहीं जा सकती । महाकवि शैली की मीमांसा भी यही है —

“Our sweetest songs are those
that tell of saddest thoughts ”

पाठक देखेंगे कि हरियाने के इन लोक-गीतों में अलंकार नहीं, शब्द-खेला नहीं, भूमिका और प्रस्तावना नहीं, है केवल सीधी-सादी ग्रामीण भाषा में एक दुखित हृदय की एकमात्र करुणा । यहा शब्दाडंबर की वेदी पर अविताम का आत्मा का कभी बलिदान नहीं किया गया है । वस्तुतः विना किसी कृत्रिम याजना के, विना क्लिष्ट कल्पना के और विना कलात्मक

विषाण व हृदय रग में परिपूर्ण हा छाये, यहाँ तो रग निताह है। रग दृष्टि में कहा जा सकता है कि हरियाने के दो सान्नीभ्य रग के कनरा हैं।

साहसपुर, अरबन्वा तथा उदात्त विचारों की प्रेरणा में गार-दृष्टि के वीर रग की सृष्टि होती है। यह रद जादू है जो मुर्गे में जात जात देता है और उर्द सत्य पर मर मिटने के लिए तार कर देता है। फिर हरियाना तो वीरता का ही दूतय नाम है। हरियाने की यात्रा बागा ने यमी किमी का आठक गही माना। एक लोभोति में इन लोभों के रूप का रग का म कहा गया है —

अपना बाँपा बापेण नार्थे नहो दे किमी को दारता ।

बागदिया मग तादियी घो म देम हरियाणा ॥

हरियाने की जनता अपने वीराज्ञान के प्रयोग में कभी किमी में पीछे नहीं रहा। स्वतंत्रता के प्रथम युद्ध में हरियाणा ने सबसे पहिले अपनी आत्मा बेगी थी। यहाँ के राज किशन गणाल ने उम युद्ध का भीमरोश अपनी तलवार को नाक में किया था। उर्दो नगाधपुर के युद्ध में अपनी बन्भूमि का मयाग रक्षा के लिए लड़ने वाले बादात्रा का जिन उन्माह से ललकारा था वह ललकार आज भी कायरा में प्राण पृक देता है। उदाहरण देन लाविए —

कहता किमन गोपाल राय पर गज्ज मुनाइ ।

खालो दोमी दाय नै मामोनी^१ भाइ ।

यो दोमी^२ का न्हाय नै कमल लड़ाइ ।

जह नै प्यारा घर लग घर अपय ताइ ।

जह नै प्यारा किमन गोपाल राय जो तेग उठाइ ॥

मरदा खानर जग धण्वा लालई लुगाइ ।

मर जाओगे रण गेन में है ह्चरत गही ।

करो वदाइ जग जनमी^३ बार बार जमेगी जाहीं ॥

यहाँ के पानीपत और मुक्तेश्वर के विस्तृत मैदान आज भी हरियाणा युवकों की स्थायुओं में वीररस का मचार कर रह है।

साहित्य में एक विशेषता और भी दृष्टिगोचर होती है। हिन्दी समृद्ध साहित्य कवियों ने स्त्री जाति का शृंगार अथवा कल्याण रग के आश्रय

१ सामवता अमाकम्पा । २ लोमी भारतीय जिला महेन्द्रगढ़ में एक पहाड़ी है जिसके मैदान में राज किशन पाल व राज गुलाबाम की अमेजों के साथ लड़ाइ हुई थी । ३ माता, जननी ।

आलम्बन के रूप में ही अधिक ग्रहण किया है और वीर रस के लिए अनुपयुक्त समझकर स्त्री-समाज की बड़ी श्रवणा की है। उन्होंने कभी यह न साचा कि आचल में दूध और आल में पानी के अतिरिक्त उनमें वीरोल्लास का अविरल स्त्रोत भी प्रवाहित रहता है और त्याग एवं बलिदान की इच्छा उनमें उतनी ही प्रबल है जितनी पुरुषों में। यह देखकर हम हर्ष होता है कि हरियाने में लोक-कलाकारों ने उन्हें भुलाया नहीं है। चन्द्रावल का जौहर राजस्थानी ऐतिहासिक जौहर से उत्कृष्ट है और उसे कोसा पीछे छोड़ गया है। इसमें करुणा रस की पुट से सरसता और भी बढ़ गई है। इसी प्रकार 'गौरा' बहन का आत्म बलिदान सतीश्वरी सीता के बलिदान की कोटि को छू गया है। अनेक ऐसे उदाहरण हरियानी लोक-साहित्य में विद्यमान हैं जिनके देखने से पता चलता है कि त्याग-क्षेत्र में नारी-नर से बहुत आगे है।

लोक-साहित्य में जीवन की स या में गाये जाने वाले निगुण पद, हरजस अथवा भजन बहुत मिलते हैं जिन्हें शत रस के स्निग्ध छींटे हाते हैं। इस रस का वितरण अलप्य जगाकर भिक्षा मागने वाले याचकों के द्वारा समाज में बराबर हाता रहता है। हरियाने की एक विशेषता यह है कि यहाँ ग्राम-ग्राम में किसी न किसी साधु महात्मा की समाधि है जिसे पर प्रातः सायंकाल वैराग्यपूर्ण भजन गाये जाते हैं। ये भजन, 'निर्गुन या सचद' सरल लोक भाषा में होते हैं जिसे प्रत्येक श्रोता समझता हुआ गा लेता है।

हरियाने में वाद्य गरीमदास व 'सचद' बहुत प्रसिद्ध हैं। उनमें से दो उदाहरण हम प्रस्तुत कर रहे हैं —

- १ सुखियों सत सुजान दिया हम हेला रे^१ ।
 और जनम च्होतरे होंगे मनुप जनम दुहेला रे^२ ।
 तू जो कह मैं खरकर जोड़ू चलना तुझे अवेला रे ।
 अरब खर लौं माया जोड़ी, सग न चलसी धेला रे ।
 यों तो भरी सत को नवरिया^३ सतगुर पार पहेला^४ रे ।
 दाम गरीम कहे भाइ साधो मचद गुरु चित्त चेला रे ॥

इस छोटे स 'सचद' में मनुष्य यानि की श्रेष्ठता, सत्य और गुरु की महिमा अपूर्व ढंग से प्रतिष्ठित की गई है।

- २ दामदा नहां भरोसा रे अब तू कर चलने दा सुल^५ ।
 मैंडी^६ मन्दर वाग बगाचे रहमी उल न भूल ।

^१ पुगार । ^२ फन्नि । ^३ नीसा । ^४ पार करने वाले ^५ उसूत, ध्यान । ^६ घर, मद्रा ।

दास^१ मुनरदा पीर लपत ह करदा^२ गन वरुष ।
 गरीष दास गुण पार उतरा^३ गन^३ दिनेवा गन ॥

इस पद में संसार का अज्ञानता का विनाश गान है। पूर्ण मनुष्य गान में आनंद ल रहा है जो सिखा है। जका पान अज्ञान की आर इस प्रकार नहीं है वैश द्राया आदि से लग हुआ उर उर गद कर व.दद खना है। मनुष्य के अन्तर्गत विषय आगत का जनी प्रकल्पित है जो छुड़ यह भाग में लिख है। इस प्रकार मीग, काल आदि के अन्तर्गत पदों का उगार गाया जाता है।

उत्तम विवेचना में पाठक श्रुति कि य गात रहस्यगत, द्वापारा, प्रगातिगत, प्रदागवाद, पलापनगत, लालागत, लालागत और निगारागत आदि प्राप्तिनेकगतों का विवाद-वचन में दूर है। इनमें जो कृषक या पुस्तकों का, ग्याता का तथा अन्य परोक्षों की कर्मज भावना लक्ष्य पदा है जिन्हे कथा "मथि कागद लुआ नहीं कलन गदि नदी दाप"। इनमें फयल गन है जिम्मे य उत्तम काव्य का कृति क अभिकारी है। इन्हें 'जगन्ना कविता' कहना बहानत है, अस्वस्थ है।

ग लोच-गीतों में लय

अब हम उस प्रधान विद्येयता को लते हैं जो एक गीत कला का आधार है। यह विशेषता "लय" है। गीतों की प्रत्येक पंक्ति बड़ी सुन्दरता क साथ दुहगद जना है विभिन्न गीत के माधुर्य में उत्कृष्ट आ जाता है। यदि इस पुनरावृत्ति का हटा दिया जाये तो सारी साक-कविता परिमाण में आधार रह जाये और सौंदर्य एवं माधुर्य में उतनी भी न रह। किन्तु लोच गीतों में मिलाव वाला पुनरावृत्ति द्वारा और भाषा-भाषी पुनरावृत्ति नहीं है। यह एक पंक्ति क प्रत्येक शब्द क लिए कथा समानार्थक और कथा विरोधाभासक बाका प्रस्तुत करनी है। कथा पंक्ति के एक-एक शब्दों का और कथा पूर्ण पाठ का समानार्थकता में बल देती है। इस आवृत्ति में एक लय है, एक ममगति है।

यह आवृत्ति कला, कर्म, जिया, जिया-विशेषण और विशेषण आदि अत्र म है प्रा समानार्थक एवं विरोधाभासक गानों प्रकार का है। इतिहास लोच गीतों में ज, हा जी, जीए, वी, हरे राम, आदि प्रायः प्रत्येक पंक्ति क आदि, मध्य और अन्त में पाये जाते हैं। य पद लुच का नाम करते हैं जिम्मे इनके पदों और गान में मनुष्यता प्रा जाती है। इस गुण के कारण इन गीतों का

^१ दास । २ उर । ३ खान ।

आलम्बन व रूप में ही अधिक ग्रहण किया है और वीर रस के लिए अनुपयुक्त समझकर स्त्री-समाज की बड़ी अवस्था की है। उन्होंने कभी यह न साचा कि आचल में दूध और ग्रास में पानी न अतिरिक्त उनमें वीरग्ल्लास का अविरल स्रोत भी प्रवाहित रहता है और त्याग एवं बलिदान की इच्छा उनमें उतनी ही प्रबल है जितनी पुरुषों में। यह देखकर हमें हर्ष होता है कि हरियाने के लोक कलाकारों ने उन्हें भुलाया नहीं है। चन्द्रावल का जौहर राजस्थाना ऐतिहासिक जौहर से उत्कृष्ट है और उसे कोसों पीछे छोड़ गया है। इसमें करुणा रस को पुट से सरसता और भी बढ़ गई है। इसी प्रकार 'गौरा' बहन का आत्म बलिदान सतीश्वरी सीता व बलिदान की कोटि को छू गया है। अनेक ऐसे उदाहरण हरियानी लोक साहित्य में विद्यमान हैं जिनसे देखने से पता चलता है कि त्याग-क्षेत्र में नारी नर से बहुत आगे है।

लोक-साहित्य में जीवन की संध्या में गाये जाने वाले निर्गुन पद, हरजस अथवा भजन बहुत मिलते हैं जिनमें शांत रस व स्निग्ध छींटे होते हैं। इस रस का वितरण अल्प जमाकर भिक्षा मागने वाले याचकों के द्वारा समाज में बरकरार होता रहता है। हरियाने की एक विशेषता यह है कि यहाँ ग्राम-ग्राम में किसी न किसी साधु महात्मा की समाधि है जिन पर प्रातः सायंकाल वैराग्यपूर्ण भजन गाये जाते हैं। ये भजन, 'निर्गुन या सचद' सरल लोक भाषा में होते हैं जिसे प्रत्येक श्रोता समझता हुआ गा लेता है।

हरियाने में राजा गरीबदास के 'सचद' बहुत प्रसिद्ध हैं। उनमें से दो उदाहरण हम प्रस्तुत कर रहे हैं —

- १ सुखियों सत सुजान दिया हम हेला ३^१ ।
 और जनम बहोतरे होंगे मनुष्य जनम दुहेला ३^२ ।
 तू जो कह मैं खरकर जोड़ू चलना तुझे अकेला ३ ।
 अरब खबर लीं माया जोड़ी, सग न चलसी धेला ३ ।
 यों तो मेरी सत का नवरिया^३ मतगुर पार पहेला^४ ३ ।
 दास गराव कटे भाइ साधो सचद गुर चित्त चेला ३ ॥

इस छोटे से 'सचद' में मनुष्य यानि का श्रेष्ठता, सत्य और गुरु की महिमा अपूर्व ढंग से प्रतिष्ठित की गई है।

- ० दामदा नहीं भरोसा रे अब तू कर चलने दा सूत^५ ।
 मैंडी^६ मन्दर वाग जगीचे रहमी डाल न मूल ।

^१ पुजार । ^२ कठिन । ^३ नौजा । ^४ पार करने वाली ^५ उसल, प्यान । ^६ घर, मदा ।

द्वय^१ मुनकडा पाठ लघु है करदा^१ गान धरुम ।
गरीब दाम गुण पार उतराये सरग^३ द्विनेवा गान ॥

इस पद में संगार का अंगारता का विनाश गया है । गुण मनुष्य माया में आनंद ल रहा है जो मिथ्या है । उसका ज्ञान अज्ञान का आर इस प्रकार नहीं है जैसे द्रामा आदि में लक्ष्य हुआ उतरा उतरा कर क कर सकता है । मनुष्य का अन्तर्गुणें स्थित आनंद की ज्योती माननी है उस द्रव्य उदमान में स्थित है । इस प्रकार मांग, बंधार आदि के अन्तर्गुण पदा का बंधार गया जाता है ।

उत्तरा विवेचना में पाठक दंगों कि य गात्र रहमगात्र, द्वापगात्र, प्रगतिगात्र, प्रयोगवाद, पलावनका, पलागात्र, दलागात्र और निगशागात्र आदि प्राप्तिनकमाने के विनाश-चक्र में दूर हैं । इनका उदकूपक का पुस्तक का, शब्दा का तथा अन्य परोक्षाली का कर्मन मानना एतका पक्षी है जिसे कभी "माते काद हुआ नहीं कवन गदि नदी हाथ" । इनमें केवल रस है जिसमें य उल्लस कान्य का कानि य अधिकांगी है । इन्हें 'जगना कविता' कहता वहानत है, अपराध है ।

रा लोक-गीतों में लय

अब हम उस प्रधान विवेचना को लते हैं जो लोक-गीत कला का आकार है । वह विवेचना 'लय' है । गीतों की प्रत्येक पंक्ति बड़ा गुण्यता के माय दुहरार जना है जिसमें गीत के मायुष्य में उन्क्य आ जाता है । यदि इस पुनरागति का दृग दिया जाये तो सारा लोक-कविता परिमाण्य में आधी रह जाय और मौदन एव मायुष्य में उतनी भा न रह । किन्तु लोक गीतों में मिला कला पुनरागति काय और भाषा-साय पुनरागति नहीं है । यह एक पंक्ति में प्रत्येक शब्द के लिए कमा समानाधिक और कमा विरतीनाधिक आका प्रस्तुत करता है । कभी पंक्ति य एकला शब्दा का और कभी पूरी पंक्ति का मनाश जगना में बल देता है । इस आगति में एक लय है, एक समगति है ।

य आगति कला, कर्म, क्रिया, प्रक्या विरपण्य और विरपण्य आदि सय में है और समानाधिक एव विरपण्यार्थक दानों प्रकार का है । दियाना लक्ष गीत न ग, हा का, लाए, लै, हरे राम, आदि प्राय प्रत्येक पंक्ति य आदि, मय्य प्रार पल में पाय जाने हैं । ये पद ह्रस्व का काम करने हैं जिसमें हान पदन और गाने में मधुरता आ जाती है । इस गुण के कारण इन गीतों का

१ उल्लस । २ उतरा । ३ ध्यान ।

सरलता से स्मरण रगा जा सकता है। एक विशेषता यह है कि ये तुक पद अथवा आवृत्ति के पद बिना प्रयास के रचत आ गये हैं।

सचमुच लय ही लोक गीता का मनोहारी बना देता है। जब नारी कठ सामूहिक रूप से किमी गीत को अलापता है तो उस समय लय के द्वारा उस गीत में रस का संचार हो जाता है। ऐसा करने समय स्त्रिया आवश्यकतानुसार कहीं ह्रस्व को दीर्घ और दीर्घ को ह्रस्व करती चलती हैं। किमी अक्षर की कमी कुछ अक्षरों को जोड़कर पूरा कर ली जाती है। इस प्रकार साधारण लोक गीत भी इस लय की शाण पर चढ़कर सरल हो जाते हैं।

भिन्न भिन्न गीतों की लय भिन्न भिन्न दुआ करती है। लाख गीता क अभ्यस्त आता केवल लय सुनकर ही गीत की पहचान कर लेते हैं। कुछ गीत तार स्वर में और कुछ मद स्वर में गाये जाते हैं। हरियानी के राग अथवा गाथाएँ—गृगा, किशन गापाल, निहाल देवी, पूरन, जयमल फते आदि के लिए 'तार स्वर' आवश्यक है। नारी गात—होलड़, बदड़ा, बदड़ी और भूले के गीत विलम्बित स्वर में गाये जाते हैं। हरियाने के "मनरा" गीत की लय बड़ी ही मोटक और मरस है। जब स्त्रिया झूला झूलता हुइ इसे गाती हैं तो रस की वषा सी होन लगती है।

घ लोक गीतों में छंद

लोक-गीता में छंद का बधन बड़ा श्लथ है। एक प्रकार से यदि कहा जाये कि इनमें छंद होता ही नहीं तो कोई अत्युक्ति न होगी। वैसे तो छंद काव्य नायिका के परिधान हैं, परंतु लोक गीतों में इसकी पूर्ति लय और सगीत से हो जाती है। इनका संगीत बड़ा सरस हाता है।

ग्रामीण कवि पिगल ज्ञान से शय होते हैं। उन्हें वणिक एवं मानिक छंदा का ध्यान नहीं रहता। वे तो "स्वात सुपाय" अपने निष्कपट भावा की राग का रूप दे देते हैं चाहे वह सदाप ही क्या न ह। परंतु जिन्होंने इन गीतों का मुना है उन्हें कभी भी इनमें गतिभग या यतिभग णप नहीं मालूम पड़ा। पर भी यदि इन्हें छंद भाषा में कहना चाहें तो "यथात्मक छंद" कह सकते हैं। इसीलिए प० रामनरेश त्रिपाठी ने अपनी सटीक मीमाणा देते हुए कहा है कि "इनमें (लोक गाता) छंद नहीं, केवल लय है।" इस लयाश के ही कारण ये लोक-गीत बड़े श्रुतिमधुर हैं।

चतुर्थ अध्याय
लोफ-क्या

लोक-कथा

हमने पाछे कहा है कि कहाना ममयत वाङ्मय की आधा है। मौखिक या लिखित साहित्य का कोर रूप से लेता उमर मूल में कर न कह सकता है मूल कथा अवश्य मिलेगा। यह कहना अयुक्त न होगा कि मानव की चिरं के व्यक्तियों के प्रति जो प्रयत्नमिच्छा—वाचिक तथा कविक—दूर होगी। यह एक कहानी रहा होगा। 'मै' और 'तुम' इन दो शब्दों में भी एक कहानी है। इसका रचित एक परमार्थ रूप का देश व जातियों में मिलना है। इस अर्थ में हम हरिश्चन्द्र प्रवेश ने मर्त्य परमार्थ ने प्रचलित लोक-कथानों का अध्ययन प्रस्तुत करेंगे। यह यह विचार लेना भी अस्मान्मान व हाता कि हरिश्चन्द्र म ज्ञा लोका-अज्ञानता आत्र मित्रता है उनका उन्हें बड़ा महत्त्व है। उनका इतिहास वाग पदार्थ के प्रदेशों में भा शत्रु पदार्थ तथा निश्चय म भा हा महत्ता है, उनका परमार्थ मिले, पर कथाना का इन चारों आर लोका दूर दूर का म, जनों का मात्र निकालने में कौटिल्य के प्रण एव प्रयत्न का अर्थ है।

क भारतीय परमार्थ म लोक-कथावित्या

कथानिया का उद्भवना का आदिभूमि भारत का माना गया है। या ता कहाना का मौखिक रूप, दृष्टि के समारम्भ में ही प्रत्येक देश में पाया जाता है। य परपरित कहानिया सब देशों में घास की तरह अपने आन पैदा हुए हैं। सभी देशों की बृद्धाचारों ने बालमनविनाद के लिए कहानिया कही हैं। किन्तु साहित्यिक कहानिया लिखने का श्रेय भारत का है। यथा हम साहित्यिक अभिव्यक्ति की परंपरा एक सुदूर अतीत से विद्यमान मिलती है। ऋग्वेद में जो महार का सर्वप्रथम उल्लेख ग्रथ है, सुतियों के रूप में कथानों के मूलतत्त्व पाये जाते हैं। ऋग्वेद के म १ सूक्त २४।२५ मंत्र ३० (दोनों में मिलाकर)^१ म ऋषि शुन शेष का यह प्रसिद्ध आख्यान है निम्न

१ अद्भुते राजा वरुणो वास्योऽप्ये स्तूप ददत पूतदध ।

शुनोपो यमद्वद्गृभात मो अग्मान् राजा वरुणो मुमोस्तु ॥

अथन राजा वरुण ममयाद्विद्धा अग्मो वि मुमोस्तुपाशा ॥

भा प० जयन्त्र शमा इ ऋग्वेद महिना (भावा भाव्य) में ३ म अण्ड देवता होगा। यहाँ वासोवास्य मिलता है।

उद्दोने 'वदण्य' की प्रार्थना की है, उदाहरण के रूप में लिया जा सकता है। अप्पला आत्रेयी के आदर्श नारा चरित्र ऋग्नेद म आये हैं।

ब्राह्मण ग्रंथों में भी हमें अनेक कथाएँ उपलब्ध होती हैं। शतपथ ब्राह्मण की पुरुरवा और उवशा की कथा का किसको ज्ञान नहीं है। (श ब्रा ११।५।१)। कवि कालिदास के 'विनमोर्वशी' नाटक का आधार यही कथा तो है। ताड्य ब्राह्मण १४।६।११ में च्यवन, भार्गव और सुमन्या मानवी की कहानी पल्लवित हुई है तथा एतरेय ब्राह्मण ७।३ में शुन शेष के आख्यान का वर्णन हुआ है।

ये कहानियाँ उपनिषद् काल से पूर्ण का हैं। उपनिषत्काल में आकर इन्हें कुछ नया रूप मिला है। गार्गी-याज्ञवल्क्य सवाद तथा सत्यकाम-आवाल आदि की कहानियाँ उपनिषद् युग की प्रसिद्ध कहानियाँ हैं। कठोपनिषद् में एक बड़ी प्रसिद्ध कहानी नचिपेता की आती है जिसका हिन्दी रूपान्तर प० सद्दल मिश्र जी ने नासिकेतोपाख्यान नाम से किया है। इसमें नचिपेता अपनी विलक्षण प्रतिभा से यम से अमरता प्राप्ति का उपाय शत करता है। केनोपनिषद् में अग्नि और यक्ष का कथा का रोचक वर्णन आया है। छान्दोग्य उपनिषद् ४।१।३ में जनश्रुति के पुन रान्त जानश्रुति की कथा का चित्रण मिलता है।

यह इतना और जान लेना अपेक्षित है कि वे ब्राह्मणों में जिन कहानियाँ के राज और निद्रु मिले हैं वे सब यज्ञ विधि, अनुष्ठान अथवा स्तुतियाँ (दानस्तुतियाँ आदि) से सम्बन्धित हैं। उपनिषद्काल में पहुँचते-पहुँचते कहानियों की वह आनुष्ठानिकता एवं अलौकिकता की मात्रा समाप्त हो गयी है। देवताओं के स्थान पर राजा या ऋषि आ विराजे हैं। यह सब कुछ हाने पर भी उस युग के मनीषियों की दृष्टि में कहानी निमाण की प्रेरणा दुबल हो गयी थी जिसका पूर्ण विकास आगे चलकर पुराण, रामायण और महा-भारत में हुआ।

पुराणों में कहानी खुलकर आर है जिससे वेद के गूढार्थ का प्रतिपादन होता है। यह कहना कि पुराण व्याख्या के विराधार नहीं है।
की कुजी है। फ कथाओं
है। ३

नाक-कथा]

कथन है कि इसमें एक चौथा मूलवृत्त है और उसे पुष्ट करने के लिए तीन चौथा आख्यान भरे पड़े हैं। कहा जाता है महाभारत में १ ला १ श्लोक है। इनमें से २४००० श्लोकों में मूलवृत्त है शेष ७६००० उपाख्यान है।

यह उपराल् विवेचन वेद, वेदिक आभार एवं पुराणादि को लेकर मिलने वाली कहानियों के विषय में है। इनके अतिरिक्त गम्भूत में मिलने वाले आख्यान-गाहित्य का भी विश्व-साहित्य में एक गौरवपूर्ण स्थान है। मस्त्रन के य आख्यान किष्ण प्रख्यात पारागिक एवं ऐतिहासिक पात्र अथवा कथा वस्तु के उपयोग का लेकर नहीं गई है। इन आख्यानों की पृष्ठभूमि में निशुद्ध कल्पना है। इनमें स्थान-स्थान पर कुतूहल, घटना-वैचित्र्य, हास्य, विना, भार, उपदेश और काव्य रस भी मिलता है। इस आख्यान साहित्य को वेदान्तों ने दो वर्गों में विभाजित किया है—१ नीति कथा, २ लोक कथा। पहिल हम नीति कथाओं का लेंगे।

नाति कथाओं का नियम गद्यार, राजनीति तथा व्यावहारिक ज्ञान है। इनमें जीव जन्तु, पशु-पक्षी मनुष्यों के समान ही सारे कार्य करते हैं। मनुष्यों की भांति वे संभाषण करते हैं, रूप बदलते हैं, पशु से मनुष्य बनते हैं और मनुष्य पशु का रूप धारण कर लेते हैं। यदा मनुष्य और पशुओं का विवाद मा हाता है अथवा मनुष्यों जंमे उनसे व्यवहार है। नीति कथाओं की एक विशेषता यह हाता है कि एक ता प्रथा कथा हाती है और कद-कद गीण एवं अप्रधान कथाएँ उसमें भीतर चलता है। सरहन के दो प्रथ पचतत्र और हितादेश नाति कथा के उत्तम रत्न हैं। इनके अतिरिक्त बहुत सा नातिकथा का पुस्तकें उपलब्ध हाता हैं। तृतीय शताब्दि ई० पू० के भरहुत रूप पर कई नीति कथाओं के नाम आये हैं।^१

१ पचतत्र

पचतत्र भारतीय नातिकथा साहित्य का रत्नाकर है। पचतत्र की रचना का मूल उद्देश्य राजकुमारों की नीति शास्त्र की शिक्षा देना था। महिलाराज्य न राजा अमरशक्ति के तीन पुत्र थे। वे बड़े ही उद्दडी और मूर्ख थे। सम्राट का प्रबल इच्छा थी कि किसी प्रकार वे मूर्ख राजकुमार अदीपकाल में

१ महाभारत आदिपर्व १।१०२,

‘यनुविशति साहस्रैर्षने भारतसहिताम् ।
उपाख्यानविना तावद्भारत प्रोच्यते सुदं ॥’

२ मैकडोनल ‘इंडियान पाठ’ पृष्ठ ११७।

नीतिशास्त्र निष्पात हा जायें। यही कार्य पचतत्र के रचयिता पंडित विष्णु शमाने कर दिया था। कहा जाता है उसने छ मास में ही उन राजकुमारों को नीति निपुण कर दिया था।

विश्व साहित्य को भारतीय साहित्य की यह एक महता देन है। पचतत्र की कहानिया बहुत-बहुत दूर की सैर कर चुकी हैं। इनके भ्रमण की कहानी स्वयं बड़ी रोचक है। पचतत्र का सबसे पहिला अनुवाद पहलवी भाषा में बादशाह खुसरू अनुशेरावों के हुकम से इ० ५५० के लगभग हुआ। इसमें पचास वर्ष पीछे ही इसका अनुवाद सीरियन भाषा में हुआ। सीरियन से अरबी में इसका अनुवाद हुआ और अरबी में पहुँचते पहुँचते इन कथाओं की रयाति यूरोप के अन्तस् को लू गयी। फिर क्या था यूरोप का सभी मुख्य मुख्य भाषाओं में इसने अनुवाद हुए। जर्मन विद्वान डा० विंटरनिट्ज के मतानुसार जर्मन साहित्य पर पचतत्र का विशेष प्रभाव पड़ा है। इसकी कहानिया (Aesop's Fables), जो ग्रीस का प्रसिद्ध कथा संग्रह है, और अरब देश की मनोरंजक कहानियाँ—'अरेबियन नाइट्स' की आधारभूत ये ही कहानियाँ हैं।^१ संस्कृत की इन कहानियाँ का सार में इतना अधिक प्रचार हुआ है कि ये विश्व साहित्य का एक अंग बन गयी हैं।

खेद है कि पचतत्र अपने मूल रूप में उपलब्ध नहीं है। आजकल उसने आठ परिवर्तित संस्करण प्राप्त होते हैं। इन सबके आधार पर आधुनिक विद्वान ए० एडगर्टन का पचतत्र सबसे अधिक प्रामाणिक माना जाता है। आज पचतत्र में इसने नाम के अनुरूप पाचतत्र या भाग हैं। जिनके नाम हैं—१ मित्रभेद, २ मित्रलाभ, ३ सधिविग्रह, ४ लब्ध प्रयाश और ५ अपरीक्षितकारकम्। कई विद्वानों का विचार है कि आरंभ में इसने बारह भाग रहे होंगे। पर इस विवेचन के लिए यहाँ अबसर नहीं है।

२ हितोपदेश

नीतिकथाओं में पचतत्र के पीछे 'हितोपदेश' का नाम लिया जाता

१ History of Sanskrit literature by WEBER

Page 211—(Beast Fable)

But the most ancient book of fables extant is the पचतत्र The original text of this work has, it is true, undergone great alteration & expansion & can't now be restored with certainty, but its existance in the sixth century A D is an ascertained fact as it was then by command of the celebrated Sassanian King Nushirvan (Reg 531 579) translated into Pahlavi

है। हितोपदेश की रचना बहुत कुछ पंचतंत्र के आधार पर हुई है। लंगक नारायण पंडित ने मुद्रिक की प्रस्तावना में यह बात स्वीकार की है। 'पंचतंत्र तथा न्यम्याद् प्राधान्यं लिख्यते।' पंचतंत्र का आधार इतना अधिक है कि ४३ कथाओं में से २५ तो पंचतंत्र से ली गयी हैं। हितोपदेश में चार परिच्छेद हैं—मित्रनाम, मुद्गरमूढ, विग्रह और सभि। प्रथम दो परिच्छेद भा पंचतंत्र से लिए हैं। भाषा सरल और सुवच होने के कारण कोमल भाति विद्यापिपा में हितोपदेश पंचतंत्र का अपेक्षा अधिक प्रिय है।

नाति कथाओं के निवेदन के पश्चात् हम संस्कृत में उपलब्ध लंका कथाओं का श्रेष्ठ पाठकों का ध्यान आकर्षित करते हैं जिनके साथ हिन्दी लंका-कहानियों की श्रम बराबर सजमे। जैसे तो नाति कथाओं का बहुत सा विशेषनाम लंका कथाओं में भी दिग्गम्य पड़ती है, पर दोनों में प्रमुख श्रम यह है कि नाति कथाएँ उपदेश प्रधान होती हैं और लंका-कथाएँ मनोरंजन प्रधान। प्राधान्य में ही यह सामरस्य श्रुति है। परन्तु दोनों एक पक्ष के ही दो पक्ष हैं और उसमें गंभीर भाव अधिक नहीं है। यह भी ध्यान रखने की बात है कि लंका-कथाओं के पात्र प्रायः मनुष्य ही होते हैं। नीति कथाओं की भांति पशु-पक्षी और चाय-जु नहीं होने। नीति कथाओं की कल्पना या शिरा अथवा उपदेश प्रधान कथाओं की सर्वप्रसिद्ध कृति पंचतंत्र है जिसका वर्णन ऊपर ही किया है। मनोरंजन प्रधान कहानियों का स्थापित प्राण प्रायः 'वृहत्कथा' है।

३ वृहत्कथा

कथा-साहित्य की दृष्टि से शुद्ध लंका-कहानियों का विशाल समूह 'वृहत्कथा' (वृहत्कथा) है। यह मनोरंजन प्रधान कहानियों का प्राचीनतम समूह है। इसने क्षेपक महाराजा 'हाल' के सभासक्ति 'गुणाद्य' माने जाते हैं। मूल वृहत्कथा पेशाची प्राकृत में लिखी गयी थी। डॉ० व्यूलर का मत है कि वृहत्कथा प्रथम या द्वितीय शती ईस्वी की कृति है। इसमें एक लाख पद्य थे। परन्तु यह है कि पेशाची की यह श्रमर कृति मूल रूप में उपलब्ध नहीं है। श्रम केवल इसमें तीन सजित संस्कृत रूपांतर मिलते हैं।

- १ नेपाल के बुद्ध राजा की वृत्त वृहत्कथा श्लोक समूह
- २ चेम्बेद्र विरचित वृहत्कथा मञ्जरी तथा
- ३ सामदेव रचित कथा-सरित्सागर।

वृहत्कथा के इन संस्करणों में 'कथा सरित्सागर' सबसे अधिक प्रसिद्ध है। यह प्रायः वास्तव में भारतीय कथा रूपी सरिताओं के लिए समुद्र है। इसमें

अति प्राचान प्रचलित लोक कहानियों का संग्रह है। कथा-सरित्सागर का रचनाकाल ग्यारहवीं शताब्दी का पूर्व मध्य भाग है। इसका कथानक बड़ा पुष्ट है जिससे कथाकार की कुशलता का पता चलता है। सोमदेव काश्मीर के राजा अनंत तथा क्षेमेन्द्र के समकालीन थे। बड्डकहा तथा उसके सस्कृत रूपान्तरों के अतिरिक्त सस्कृत में और भी अनेक कथा संग्रह प्राप्त हैं जिनमें रहस्यरामाच एव साहसिक कार्यों की प्रधानता है।

४ बेतालपचत्रिंशतिका

इस कथा संग्रह में २५ कहानियाँ का संग्रह है। इन कथाओं का मूल बृहत्कथा मजरी तथा कथा सरित्सागर में मिलता है। ये २५ कहानियाँ पहलियाँ के रूप में कही गयी हैं। एक भूत उज्जेन के राजा विक्रमादित्य से इन पहली कहानियाँ (बुभौश्रला) का कहता है। ये कहानियाँ बड़ी मनोरंजक एव कौतूहलवर्धक हैं। इस संग्रह का श्रेय शिवदास नामक लेखक का है। 'बेताल पचासा' इसका हिंदी रूपान्तर है।

सिंहासन द्वात्रिंशिका अथवा द्वात्रिंशत्पुत्तलिका अथवा विक्रमचरित भी एक मनोरंजक कहानी-संग्रह है। इसकी प्रत्येक कहानी में धारानगरी के राजा भोज का वर्णन आता है। राजा विक्रम के सिंहासन की २२ पुतलियाँ राजा भोज से एक एक कहानी कहकर उड़ जाती हैं। ये बेतालपचत्रिंशतिका की भाँति उत्कृष्ट बुद्धि विलास से पूर्ण नहीं हैं। इसका हिंदी में अनुवाद "सिंहासन बत्तीसी" के नाम से हुआ है।

"शुक सप्तति" एक अधिक रोचक एव लाकारप्रय संग्रह है। इसका कना अज्ञात है। इसमें ७० कहानियाँ संग्रहीत हैं। मदन सेन नामक युवक का अपना पत्नी पर अत्यधिक अनुराग है। वह कार्यन्त परदेश जाता है। पत्नी निरहविदग्धा है। शुक उसे रात्र रात्र में एक एक मनोरंजक कहानी सुनाता है। ७० कहानियों से ७० दिन व्यतीत होते हैं और इसके पाछे नायक लौट आता है।

इनके अतिरिक्त भी कुछ संग्रह हैं जिनका स्वरूप सा परिचय इस प्रकार है। मथिल-काकिल विद्यापति कृत "पुरुष परीक्षा" ४४ नैतिक और राजनीतिक कहानियों का संग्रह है। "कथाणव" में चारों और मूर्खों की ३५ कथाएँ दी गयी हैं। "भोजप्रबंध" भी एक स्फुट संग्रह है। इसने रचयिता १६वीं शताब्दी के बल्लाल सेन हैं।

कुछ कहानियाँ ससार की परिक्रमा करके देश विदेश का मुद्रा से विभूषित

होकर लौगी है। मरुतक पदितो ने फिर इन्हीं मंगल परिधान दे दिया है। "अवेदिना नाहदम्" का "आत्म्यामिनी" व नाम में जगद्गुरुविरचित ने मंगल ने अनुवाद किया है। प्रोग का ईश्वर का कहानियों का अनुवाद इयचनात्कथा नाम में आगपय बाह्य १ प्रस्तुत किया है।

५ जातक

सौन्दर्य साहित्य में कहानियाँ प्रचुर परिमाण में पाई जाती हैं। सौन्दर्य कहानियों का सप्रह जातक नाम में संग्रहित है। जातक कहानियाँ भगवान् बुद्ध के पुत्र जन्म का शीघ्र कहानी हैं। राजा महासजाश्री में लहर विगाड़ पनु-वर्षियाँ तक इन कहानियों के पात्र हैं। इनमें विशयता यह है कि इन कहानियों का भगवान् बुद्ध देव व स्वयं अथवा मुनिपरिद में अनुसंधानों का सुनाया है। जब कभी कइ विष्णुमा उग्रत हुद ता उगवा उग्रयमन इग कग नवों दाम किया गया है। इन कहानियों में कथिभय की भिन्न भिन्न अर्थवाश्री का रानुन कर बुद्धत्व की प्राप्ति का मार्ग बताया गया है। इन सभी कहानियों के मूल में उपदेश या नाति निहित होती है। दूसरा विशेषता यह है कि ये कहानियाँ सरल, सरमायक एवं मानवाय परिधिपालनी के युक्त हैं। इनमें पंचतत्र पैसा उलभत एव कठिनाता नहीं है। कहानी बड़ी सरल, सुवाप है और साथ ही प्रमाण-संग्रह मा है। इन कहानियों की प्राचीनता के विषय में विद्वानों का मत है कि ये रागायण में भी पदल का है। "दशरथ जातक" का कहाना में यह बात महत्व हा समर्थ आ जाता है। इतना हा नहीं भगवान् बुद्धदेव के समय शताब्दियों से जनता में प्रचलित आम्बान, परिश का कहानियाँ अथवा राचक चुटकले भी धार्मिक रूप में ललकर अर्थान में रूपान्तरित हा गये हैं।^१ जातक संग्रह में ५५० हैं। इनके अनुशीलन व बुद्ध के समय अथवा उससे मा प्राचीनकाल के भाग्यम इतिहास का समग्र चित्र मिलता है। जातकों का भाषा पाली है।

जातक साहित्य के अतिरिक्त सौन्दर्य साहित्य में "अपदान" (अपदान) भी लिखे गये हैं। ये आत पुत्र्य विरता का कहानियाँ हैं। इनमें मा वातकों की भाक्ति भूल और कर्मान नाता हैं। जन्म की कथाएँ रहती हैं। इन नाता में अन्तर यह है कि जातकों में मा भगवान् बुद्ध के जीवन का कहानियाँ हैं, जब

१ जातक की परिभाषा प्रो० जन० ची० मुगर ने यह दी है "जातक नाम बोधिसत्तकथा" जातक सप्रह पृष्ठ ६ (निषेदनम्) पूरा धोरियटल मीरीन न० २०।

२ विशेष विवेचन 'जनमा-कलोपीन्या थॉर रिलीजन एन्ड पेरिक्ल' में मिलेगा।

कि उपदानों में भिक्षुओं ने उदात्तकर्मों के विपाकफल का वर्णन दाना है^१। ये उत्तम पुरुष में आत्मकथा के रूप में होते हैं। ये उपदान संहृत में भी बौद्ध पंडिता ने लिखे हैं। इनमें 'उपदानशतक' सबसे प्राचीन बताया जाता है। आयशूर की "जातक माला" में जातकों की कथाएँ पद्यरूप में निरख हैं।

६ जैन कहानियाँ

कथा-साहित्य की दृष्टि से जैन साहित्य बौद्ध साहित्य की अपेक्षा अधिक सम्पन्न है। जैन कहानियों में तीर्थंकरों, श्रमणाएँ एवं शलाका पुरुषों का जीवन कथाएँ हैं जिनसे धर्म के सिद्धान्तों का स्पष्टीकरण होता चलता है। इनमें धार्मिक दृष्टि को पुष्ट करने के लिए जैन कहानीकार साधारण कहानी का समाप्ति पर 'केवली' (मुक्ति के अधिकारी साधु) के द्वारा दुःख सुख की 'पारया पूर्व जन्म के कर्म का आधार पर कर देता है। उस वृत्ति पर ये जातकों से भिन्न हैं। जैन-कथाओं में भूत-वर्तमान दुःख सुख की व्याख्या या कारण निर्देश के रूप में आता है। यह गौण है। मुख्य है वर्तमान। जबकि बौद्ध जातकों में वर्तमान अमुख्य है और भूत प्रमुख है। वहाँ वाधिसत्व की स्थिति विगत काल में ही रहती है। इनमें अनेक रूपक कहानियाँ भी हैं। एक उदाहरण देना पर्याप्त होगा। एक तालाब है, उसमें खिले हुए कमल भरे हैं। मध्य में एक बड़ा कमल है। चार ओर से चार मनुष्य आते हैं और वे उस बड़े कमल को हरियाणा चाहते हैं। प्रयत्न करते हैं परन्तु सफल नहीं होते। एक भिक्षु तालाब के किनारे से तो कुछ शब्द बोलकर उस बड़े कमल को प्राप्त कर लेता है। यह 'स्यगर्दम्' की रूपक कहानी है। इस रूपक के द्वारा यह समझाया गया है कि जैन साधु राजा के समीप सरलता से पहुँच जाता है।

इस प्राचीन कथा साहित्य से जिसका ऊपर वर्णन हुआ है, सत्य ग्रहण कर आगे के लेखकों ने संहृत, प्राकृत और अपभ्रंश में अनेक कहानियाँ खड़ी की हैं। अपभ्रंश के 'पडेम चरित' (पञ्च चरित) एवं भविष्यकथा (भविष्यत्कथा) नामक पुस्तकें कहानी साहित्य की अमूल्य निधि हैं। इनमें अनेक उपदेशप्रद कहानियाँ उपलब्ध होती हैं। अधिक क्या कहा जाये कथाओं के समूह के समूह जैन आचार्यों ने रच डाले हैं जिनके द्वारा जैन धर्म का प्रचार भी हुआ है और धार्मिक सिद्धान्तों को बल भी मिला है।

१ उपदान की व्याख्या करते हुए प्रो० तुंगर ने लिखा है—
"उपदान इमस्मिं अनकेम भिक्षुन कठकम्पत्य विपाकफलं वर्णयन्ना निम्नात्"।
जातक संग्रह (निवेदनम्) पृष्ठ ७।

इन्होंने इन कहानियों का विपुल संग्रह दिया है। श्री प्रवासी लाल वर्मा की 'सौराष्ट्र की लोक कथाएँ' 'आत्माराम एंड सस दिल्ली' के यहाँ से अभी प्रकाशित हुई है।

ब्रजभाषा क्षेत्र में तो 'ब्रजसाहित्य मंडल' की स्थापना से जीवन आ गया है। ब्रज साहित्य मंडल तथा डा० सत्येन्द्र जी के प्रयत्न से ब्रजलोक साहित्य का बड़ा उपकार ही रहा है। डा० सत्येन्द्र जी के प्रयत्न से 'ब्रज की लोक कथानिया' प्रकाश में आईं। यह संग्रह बड़ा उपयोगी है। भाषाशास्त्र तथा स्तोत्रवादा दोनों दृष्टियों से इसका बड़ा महत्व है। इसमें सुयोग्य लेखक ने (संग्रहकर्ता ने) ग्रामीण ब्रजभाषा का रूप दिया है। समस्त कहानियाँ ग्रामीण ब्रजभाषा में हैं। कथाओं का चयन में सापेक्षता है। सभी प्रकार की कहानियाँ इसमें संग्रहीत हैं। एक खोजपूर्ण भूमिका ने पुस्तक का मूल्य और अधिक बढ़ा दिया है। कहानियों का विभाजन भी बड़ा मौलिकता के साथ किया गया है। 'ब्रज की लोक कथाएँ' नाम से आदर्श कुमारों यशपाल का एक संग्रह आत्माराम एंड सस के यहाँ से प्रकाशित हुआ है। इन कहानियों की भाषा खड़ी बोली है।

श्री कृष्णानन्द जी गुप्त के संप्रयत्नों से लोकवाता नामक पत्रिका में बहुत सा बुद्धेलखंडों का लोक कथानियाँ छपा था। शिव सहाय चतुर्वेदी का 'बुद्धेलखंड की कहानियाँ' पुस्तक रूप में छप चुकी है। ये कहानियाँ खड़ी बोली में लिखी गयी हैं। इस पुस्तक की भूमिका बड़ी गंभीर एवं विवेचनापूर्ण है।

लोक साहित्य प्रकाश डा० वेरियर एनविन ने महाकाशल प्रदेश का कथानियाँ का एक संग्रह 'फोक टेल्लस फ्रॉम महाकाशल' नाम से प्रकाशित कराया है। इस संग्रह की कहानियाँ अंग्रेजी भाषा में हैं। भाजपुरी के अनन्य उपासक डा० कृष्णदेव उपाध्याय जी ने कहानियों का एक विपुल संग्रह किया है, परन्तु वह अभी अप्रकाशित है।

आत्माराम एंड सस प्रकाशन दिवना में अनेक छुट्टे-छुट्टे लोक-कथाओं का संग्रह प्रकाशित हुए हैं। इन संग्रहों में 'पञ्जाब का लोक-कथाएँ' लेखक पट्टी तथा जेदा 'मालवा की लोक कथाएँ' श्री श्यामपरमार 'श्रवण की लोक-कथाएँ' श्री शिवमूर्ति सिंह बंस तथा 'छत्तासगढ़ का लोक-कथाएँ' श्री चंद्र कुमार उल्लोखनोय संग्रह है।

ग हरियाने की लोक-कथानियाँ—त्रिभिध रूप

पीछे हमने कहा है कि हरियाने में लोक कथानियाँ प्रचुर परिमाण में

मनुष्य की धार्मिक प्रवृत्तियाँ ही अधिकतर कार्य करती रही हैं। पुराण पुरुष के जीवन में मनोरजन के लिए बहुत कम स्थान था। इसके अधिकांश कार्य एक विशेष प्रकार के धार्मिक आवेग से प्रेरित होते थे। हाँ, आमाद-प्रमोद द्वारा मन को प्रसन्न करने की प्रवृत्ति मनुष्य में स्वाभाविक है^१। इस स्थापना से कहानी के दो रूप धार्मिक तथा मनोरजन स्पष्ट हो जाते हैं। श्री गुप्त जी का मत गभीर है और लोक कहानी के वर्गीकरण की दिशा स्पष्ट करता है।

आदिकाल में मनुष्य की प्रेरक दो भावनाएँ रही हाँगी धार्मिक भावना तथा भीति की भावना। आदि पुरुष के अधिकांश कार्य आस्था एवं विश्वास से अभिभूत थे। उसने प्रवृत्ति की क्रियाओं का एक धार्मिक भाव से देखा और उसने प्रति धार्मिक अभिव्यक्ति दी। दूसरे पक्ष में उस पुराने युग में जब मनुष्य जंगलों में रहता था उसके पास रहने के लिए कोई स्थान न था। वह शीत के भय एवं हिंसक पशुओं के भय से अग्नि जलाकर रात रात भर सिमटा हुआ उसके पास बैठता था। तभी वह रिक्त क्षणों में अपने मन बहलाव के लिए कुछ वाणी का प्रयोग करता होगा। यह वाणी का प्रयोग ही कहानी का आदि रूप रहा होगा। इस वाणी प्रयोग में उसने अनुभव भी व्यक्त किये होंगे जो भविष्य के लिए उपयोगी एवं शिक्षाप्रद बन गये होंगे। इस प्रकार कहानी का आदि रूप धार्मिक एवं मनोरजनात्मक तत्वों के ताने-बाने से बुना गया। उसमें प्रच्छन्न रूप से अनुभव, शिक्षा, उपदेश एवं दृष्टांत भी लगा रहा। इस प्रकार लोक-कहानी के तीन ही भेद हो सकते हैं—

- १ धार्मिक तत्वों से युक्त कहानियाँ, जिनमें वृत्त या महात्म्य कथाएँ आयेंगी,
- २ मनोरजनात्मक तत्वों से युक्त तथा
- ३ उपदेशात्मक तत्व मूलक।

पर यह विभाग नुदिरहित होते हुए भी अति सज्जित है जिसमें उतना स्पष्टता नहीं है जितनी अपेक्षित है। अतः हम हरियाना प्रदेश से प्राप्त लोक-कहानियों के विस्तृत विश्लेषण के लिए उन्हें निम्नलिखित वर्गों में बाँटकर अध्ययन करेंगे। यह वर्गीकरण इस प्रकार है—

- १ मनोरजनात्मक, २ उपदेशात्मक, ३ व्रतात्मक, ४ देवविषयक,
- ५ पौराणिक, ६ साहस एवं शौर्यपूर्ण, ७ ऐतिहासिक, ८ कौशलपूर्ण,
- ९ अलौकिकतापूर्ण, १० सामाजिक, ११ बुभौयल, १२ चुटकले,
- १३ लघुछन्द कहानी।

१ शिवमहाय अतुर्वेदी द्वारा सम्प्रहीत “बुन्देलखण्ड की ग्राम कहानियाँ” सम्प्रदा की प्रस्तावना जिसे प० कृष्णानन्द जी गुप्त ने लिखा है।

२ उपदेशात्मक कहानियाँ

दूसरे प्रकार की कहानियाँ उपदेश प्रधान हैं। ये क्याएँ उस युग का स्मरण कराती हैं, जिन विद्या एवं शिक्षा ग्रहण करना अति कठिन था और इन्हीं कथाओं पर जनसाधारण की शिक्षा निर्भर थी। हम पहले कह आये हैं कि सार्थक (शिक्षाप्रद) मनोरजन ही कहानी की आत्मा है। इस प्रकार मन बहलाव एवं मनोरजन में भी एक तत्व प्रबुद्धरूप से विद्यमान रहता है और वह है शिक्षा या उपदेश। प्रत्येक कहानी में जैसे मनोरजन तत्व रहता है और कहाना को आगे बिसकाता है उसी प्रकार उपदेश भी साथ लगा रहता है। वह उपदेश दृष्टांत रूप में श्रोता के सामने आता है। विनोदशील तत्वों से लिपटा हुआ यह उपदेश श्रोता पर बड़ा गहरा प्रभाव छोड़ता है। आचार्य मगमट ने काय के प्रयोजन बतलाते हुए जो कहा है 'कायता सम्यततयोपदेश युज'। यह लोक कथा साहित्य पर पूर्णतया घटता है। यहाँ शिक्षा या उपदेश देने के लिए डाट टपट की जरूरत नहीं है। सुनिष्ट और सीरिष्ट बस यही कहानी है।

जैसे कोई कहानी (व्रतात्मक कहानियों को छोड़कर) ऐसी नहीं होती जो मनोरजन न करती हो उसी प्रकार कोई ऐसी भी लोक कहानी नहीं होती जो उपदेश न देती हो। पशु पक्षी, जीव वस्तुओं की सभी कहानियाँ इस विभाग में आयागी। इन्हें अंग्रेजी में फ़ैबल (नीतिकथा) कहते हैं। यूरोप में 'ईसप की फ़ैबल या कथाएँ' सुप्रसिद्ध हैं। हमारे यहाँ इन्हें पंचतंत्रीय कहानियाँ कहते हैं। हमारे निजी हरियानी लोक कहानी संग्रह में 'हंस और कौआ' की कहानी बड़ी उपदेशप्रद है। किस प्रकार धूर्त लोग सज्जनों को अपने चंगुल में फँसा लेते हैं। यह शिक्षा इस कहानी से मिलती है। जाटणी की चतुराई (निजा संग्रह) की कहानी विपत्ति में धैर्य धारण की शिक्षा देता है। अबलाओं के धैर्य एवं साहस का अच्छा उदाहरण प्रस्तुत करती है। 'सिंह पछाड़ गीदड़' (निजा संग्रह) की कहानी भी शिक्षाप्रद है। 'डायन पत्नी' की कहानी में तो विश्वजनीन उपदेश 'जाको राखे साहयाँ मार सके ना कोय' का बड़ा रोचक आदर्श दिखाया गया है। इन कहानियों की विशेषता यह है कि इनके बल इस प्रकार मन में उतरते हैं कि भुलाए नहीं भूलते।

३ व्रतात्मक कहानियाँ

तासरे प्रकार की कहानियाँ वे हैं जिन्हें व्रत अथवा महात्म्य की कहानी कहा जायेगा। ये कहानियाँ महिलाओं से सम्बन्धित हैं और इनका प्रचार मादलाओं में ही है। इन कहानियों का उपयोग या तो व्रत का समाप्ति पर

दियाकर उसके कच्चे तागों की डोर गले में पहन लेती हैं। अनन्त चतुर्दशी के दिन उसे खोला जाता है। जो स्त्रियाँ अनन्त की पूजा करती हैं वे अनन्त चतुर्दशी को पहिले बधे धागे को खोलती हैं और नया धागा पहनती हैं। कथा सुनी जाती है।

४ देव विषयक कहानियाँ

चौथे प्रकार में देव विषयक कहानियाँ आती हैं। इनमें देवताओं को पान बनाया जाता है। विशेषतः यह है कि देवता भी मानवी रूप में आये हैं। उनके कार्य भी मानवी कार्य जैसे हैं। बस उन पर देवतापने का छाप होता है। 'हनुमान जन्म की कहानी', 'गोतमरिखी और इन्दर महाराज' और "लक्ष्मी बड़ी या भाग्य" आदि (निजी संग्रह) कहानियाँ इस वर्ग में आयेगी।

पौराणिक कहानियाँ से इनमें अन्तर यह है कि पौराणिक कहानियों में चरित्रों के विषय में यह विश्वास होता है कि वे कभी जीवित थे। बखित पानों के निश्चित नाम होते हैं और स्थानों के नाम भी दिये जाते हैं किन्तु इन देव विषयक कहानियों में चरित्र देवत्व से अभिमण्डित रहते हैं। 'भाग्य का खेल' नामक कहानी में वेमाता (विधाता) की सावभौमसत्ता का दिग्दर्शन कराया है। उसने आगे रावण जैसे बलशाली सम्राट् भी कुछ नहीं हैं। (यह कहानी राजाराम शास्त्री के संग्रह में दी हुई है।) इस कहानी का रहस्य इन पक्तियों में है —

वेहमाता के अक्षर ना टलें, टलें रावण के खेल।

रही क्वारी डूमनी, सिर में धाले तेल ॥

५ पौराणिक कहानियाँ

पाचवीं कोटि में वे कहानियाँ आती हैं जिनमें पुराणा में बखित राजा, महाराजा अथवा किसी पौराणिक चरित्र का लेकर कहानी कही जाती है। ये कहानियाँ पौराणिक कथा कहलाती हैं। इन कहानियाँ के चरित्रों में कुछ अलोकिकता का पुट आ जाता है और कुछ अतिरजना का अंश रहता है। बखित पानों के नाम दिये जाते हैं। "वृष्ण सुदामा" की कहानी इसी प्रकार का लोक प्रसिद्ध कहानी है। "राजा नल की कथा" (निजी संग्रह) एक पौराणिक कृत को लेकर चली है। इसी प्रकार की दूसरी कहानी हमारे संग्रह में 'राजा रघु की कथा' के नाम से है। इसमें इस के द्वारा अमरपल देना, राजा रघु की तपस्या की कीर्ति तथा ब्राह्मण को क्षमा करने का वर्णन है।

दिखाकर उसने कच्चे तागा की डोर गले में पहन लेती हैं। अनन्त चतुर्दशी के दिन उसे खोला जाता है। जो स्त्रियाँ अनन्त की पूजा करती हैं वे अनन्त चतुर्दशी को पहिले बधे घागे को खोलती हैं और नया घागा पहनती हैं। कथा सुना जाती है।

४ देव विषयक कहानियाँ

चौथे प्रकार में देव विषयक कहानियाँ आती हैं। इनमें देवताओं को पान बनाया जाता है। विशेषतः यह है कि देवता भी मानवी रूप में आये हैं। उनके कार्य भी मानवी कार्य जैसे हैं। उस उन पर देवतापने का छाप होती है। 'हनुमान जन्म की कहानी', 'गोतमरिखी और इन्दर महाराज' और 'लक्ष्मी बड़ी या भाग्य' आदि (निजी सग्रह) कहानियाँ इस वर्ग में आयेंगी।

पौराणिक कहानियाँ से इनमें अन्तर यह है कि पौराणिक कहानियों के चरित्रों के विषय में यह विश्वास होता है कि वे कभी जीवित थे। वर्णित पात्रों के निश्चित नाम होते हैं और स्थानों के नाम भी दिये जाते हैं किन्तु इन देव विषयक कहानियों में चरित्र देवत्व से अभिमण्डित रहते हैं। 'भाग्य का खेल' नामक कहानी में बेमाता (विधाता) की सार्वभौमसत्ता का दिग्दर्शन कराया है। उसने आगे रावण जैसे बलशाली सम्राट् भी कुछ नहीं हैं। (यह कहानी राजाराम शास्त्री के सग्रह में दी हुई है।) इस कहानी का रहस्य इन पत्तियों में है —

बेहमाता के अक्षर ना टलें, टलें रावण के खेल।

रही फवारी हूमनी, सिर में घाले तेल ॥

५ पौराणिक कहानियाँ

पाचवीं कोटि में वे कहानियाँ आती हैं जिनमें पुराणों में वर्णित राजा, महाराजा अथवा किसी पौराणिक चरित्र का लेकर कहानी कही जाती है। ये कहानियाँ पौराणिक कथा कहलाती हैं। इन कहानियों के चरित्रों में कुछ अलौकिकता का पुट आ जाता है और कुछ अतिरजना का अंश रहता है। वर्णित पात्रों के नाम दिये जाते हैं। "कृष्ण सुदामा" की कहानी इसी प्रकार की लोक प्रसिद्ध कहानी है। "राजा नल की कथा" (निजी सग्रह) एक पौराणिक वृत्त का लेकर चली है। इसी प्रकार की दूसरी कहानी हमारे सग्रह में 'राजा-रघु की कथा' के नाम से है। इसमें इस के द्वारा अमरपल देना, राजा रघु की तपस्या की कीर्ति तथा ब्राह्मण को क्षमा करने का वर्णन है।

“राजा मोर की कहानी—३ जामों की” भी एक पौराणिक कहानी है। (निजी सग्रह) लोक प्रसिद्ध “राजा शम्भ की कहानी” और “वीर विक्रमाजीत” की कहानियाँ अनन्त काल से लोक की बस्तु रहा हैं। इनमें मन के लिए कष्ट सहन का प्रश्न अधिक रहती है। राजा शम्भ की कहानी का सार इस दाँदे में समाया हुआ है —

“कित्त चम्पा कित्त आमली, कित्त मरवर कित्त मोरा
ज्यों ज्यों पढ़ती चापदा, रवाँ-रवाँ सहेँ सरीरा।”

वार विक्रमाजीत का परदुःखभङ्गनहार विशेषण उसने चरित्र की उदानता एवं प्रबलकता का चिह्नक है। इन चरित्रों में सामान्य जनता का आदर्श पुरखों ने दर्शन द्यते हैं।

६ साहस और निम्न की कहानियाँ

छ्द्रन प्रकार साहस एवं शौर्य की कहानियाँ का है। इन कहानियाँ का “जान जाला की कहानी” भी कहते हैं। अंग्रेजी में इन्हें “एडवेंचरस् टैल्स्” कहते हैं। इनमें बुद्धि चातुर्य के साथ जान को हथेली पर रखने का साहस प्रदर्शित किया जाता है। इनमें अद्भुत कर्तव्य की प्रधानता होती है। इन कहानियाँ प पात्र होते हैं—दूत, भूत, डायन और दाने (दानव) आदि। इनका उद्देश्य आताओं में साहस एवं शौर्य भावना भरना होता है। घोर आपत्काल में भय तथा घबड़ाने से नहीं, रोदन एवं विलाप से नहीं अपितु अदम्य साहस से काम चलता है। यह इनका प्रतिपाद्य विषय होता है। ये कहानियाँ बच्चों के लिए नहीं होतीं। युवकों एवं जीवटों के स्नायुजाल में रक्त संचार करना इनका उद्देश्य होता है।

हरियाने में उपरोक्त कहानियों का बाहुल्य है। वास्तव में, हरियानी समाज की दृष्टिसे रामास पसन्द नहीं हैं। हरियाने की प्रत्येक गतिविधि में जावन है। उनका प्रत्येक काय साहस और हिम्मत का प्रतीक है। ऐसे समाज में शौर्य शौर्यपूर्ण कहानियों का प्रचुरता का हाना बाल्दनीय है। “अनबालते राणी” तथा “राणा महकावली (निजी सग्रह) कहानियाँ में नायक अपने अलौकिक साहस एवं उत्साह से अपनी मनोनादित नायिका की प्राप्ति करता है। “रानी महकावली” कहानी का कथा पट तो अनेक साहस एवं शौर्यपूर्ण कृत्यों से निर्मित हुआ है। “मूखा की कहानी”, “लम्बटकिया की कहानी”, तथा “हा हा” की कहानी एक ही कहानी है जो इन नामों से हरियाने में प्रचलित है। वृत्तस दानवी ने यहा से “फूल” एवं “लाल” (रत्नाविशेष) लाना किन्हीं किन्हीं “मा के लालों” का काम है। दाने के प्राइवेट क्ल में मानव का

यहाँ पर सागीतकार ईश्वर, पार्वती, सरस्वती और गुरु की वन्दना करके आगे चला है। किन्ना किना सागीत में भगत राक्षस की मूर्ति आया, उपदेश आदि वाक्य भी मिलने हैं। 'सागीत लाला बणुजारा' में प० कुन्दन लाल जणायक निनामी द्वारा प्रयुक्त भरत राक्षस दर्शनोप है —

नहीं गात्र को आत्र हो चरन फरो चाहे प्रौढ़ ।

शरन छत्र की बोलन प्रालम्ब कुन्दन गौड़ ॥

साहित्यिक नाट्यो को अत्र भूलभुनैया—अरु, अकारतार, विष्कम्भक आदि इन सागीतों में देखने का नहीं मिलती।

साग का जमाने के लिए साज-सज्जा युक्त किसी रगमन की आवश्यकता नहीं होती। यद् तो गुले नौड़े में तल्ल विद्याकर निना किषा डिगार दुरान के अपद्धित पात्रों के द्वारा खेल लिया जाता है। कभी-कभी कइ साग मडली यथासमय और यथास्थान जसिया आदि का भी प्रयत्न कर लेती हैं, परन्तु लोक नाट्य के लिए इसकी अनिनायता नहीं है। अपनी छाटी सा श्रेज पर ही सब अभिनेता—पुरुष-स्त्री—बैठे रहते हैं। प्रवेश, प्रस्थापना, सनाद, माना, नाचना आदि सब रगमच पर दखा के सामने गुले मैगा में हाता रहता है। जिगकी बारी आइ उसने उठकर अपना पाठ अत्रा कर दिया। जनाना पाठ जनाने वेप में पुरुष ही निधन करते हैं।

विषय की दृष्टि से यदि 'सागीत' पर विचार करें तो हमें धामिर, पौराणिक एवं ऐतिहासिक आरंभानों में लेकर निलस्मी ऐयारी और आधुनिक समते घणिन, दिङ्गले रसाभास मूलक प्रेम व्यापारा तरु का वर्णन देखने को मिलेगा। एक आर, पुण्य श्लोक राजा नल के पावन चरित्र का वर्णन है अथवा गोपीचंद भरपरी (भनूदरि) की अनन्य त्यागवृत्ति^२ के दर्शन हाते हैं तथा पुरामल न उदात्त एवं अलौकिक शिष्यचार की उद्भावना है तो दूसरी आर "ताट तोड़ और नाली पाइ" और 'लालोचमन' के नमन

१ 'सागीत मन्नाना पत्रनिवा (कौपी) — चौ० चन्द्रनिह ।

२ साग राजा गोपीचंद —

चौबोला—लये वदन में तीर, ये मैं साता ने समझाया ।

कचन काया जली पिना की, ये दिष्टात चताया ॥

अगम निगम ना जान मुना क, तमतराज छुटाया ।

७ गुरुदेव ! करो किरवा, मैं जोग लन का धाया ॥

अशिष्ट एवं जषय अश्लील प्रेमालापों का चित्रण है। ऐसे सागों में गाँवों का वह आरण्यक निश्छल वातावरण जो अपनी पावनता एवं निरीहता के लिए प्रसिद्ध है बड़ा निम्न, धिनीना और गहिर (निम्न) चित्रित किया गया है। यहाँ इतना और देल लेना चाहिए कि साग की परम्परा के आदिम उसने यह दशा न थी। यह तो आज की 'उड़ रोशनी' का परिणाम है और उमा हान मनोवृत्ति के परितोष के लिए इन सागियों की प्रतिभा प्रभा अवाङ्मनीय दिशा में पदार्पण करने लगी है। आशिक माशूकों के बेढगे चरण और विलासप्रियता को भूझा भावना ने कविता कामिनी के कलित कनेवर को कलुषित कर दिया है।

हस दृष्टि से जब इन सागों पर दृष्टिपात करते हैं। तो यही प्रतीत होता है कि आरम्भ के कुछ सागों को—पुरजन पुरजनो (५० लक्ष्मीवृत्त), हरिश्चन्द्र (५० सरूपचन्द्र वृत्त) तथा सीला सेठानी (५० नेतराम वृत्त) आदि को—छोड़ कर जिनमें जीवन के उदात्त एवं विशुद्ध पक्ष की भाकी मिलती है प्रायः सभी साग नग्न शृंगार की मन्त्रोपाए हैं। इतना खुला शृंगारिक एवं विलासितामय वर्णन इनमें होने लगा है कि लज्जा भी लजा जाती है। इसका बड़ा अस्वस्थ प्रभाव अबोध बाल बलिकाओं पर पड़ता है। कई स्थानों पर नव युवतियाँ इन सागियों की बाकी अदा पर पिदा होकर अपने घरबार को छोड़ गई हैं। यह सागों की इस विलासिता का ही परिणाम है। यहां पर कतिपय नाटककार या सागीतकार यह आपत्ति उठावेंगे कि बिना शृंगार रस का पुट दिये नाटक अथवा साग सरस एवं आकर्षक बनाये ही नहीं जा सकते। बात कुछ सीमा तक ठीक भी है और यह बात भी सत्य है कि शृंगार सर्व प्रिय रस है किन्तु औचित्य इसे और भी आकर्षक एवं सहृदय सबैध बना देगा क्योंकि सयम में एक विलक्षण शक्ति होती है।

१ (क) सागीत लीलोचमन (धनपत वृत्त) —

चन्द्रमा सी शान हूर की सड़क धीच खड़ा देखी।
मध जोवन की ठीक जलें यू उटती फूलझड़ी देगा
मुरगाइ की डाल चाल के पाव धरे थी डट डट के
नैन कगर तुलम इशारा हूर करे थी हट हट के।

(ख) सागीत लीलोचमन (राम विष्णु व्यास वृत्त) —

मुण सैण्डल आली गोरी नीवै नै नजर करे
तू जमीन्दार की छोरी, तेरी मटके पोरी-पोरी कट खाना खोर करे
तेरो दो पुतली काली छोरीं पै मार करे रे

ग हरियानी सागीत का इतिहास

किमी साहित्य का इतिहास प्रधानतया दो प्रकार में लिखा जाता है। एक कालक्रम की दृष्टि में, दूसरे विषय की दृष्टि से। आबकन कालक्रम से इतिहास लिखने का प्रथा ही विशेष प्रचलित है और है भी यह वैज्ञानिक। इस परम्परा के अनुसार आलाप्य साहित्य के उदय, विकास आदि के मौल चिह्न की राज का जाती है और उसका अध्ययन किया जाता है। इतिहास का एक शैली का उदाहरण प० रामचन्द्र श्री शुक्ल का 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' है। दूसरी शैली विषयक्रम से इतिहास लिखने की है। इसमें साहित्य के विभिन्न अंगों जैसे पद्य, गद्य और रुक्क, रीति एवं अलंकार आदि का क्रमबद्ध इतिहास होता है। महापंडित कोय के द्वारा लिखा गया 'संस्कृत साहित्य का इतिहास' इसका सुन्दर उदाहरण है। हिन्दी में डा० हरदेव यादव का "हिन्दी काव्य शैली का विकास" इस दिशा की अन्धी पुस्तक है। विशेष कवियों या लेखकों के नाम से आलाप्य साहित्य को बाट कर अध्ययन करने का एक नूतन प्रथा भी प्रचार पा रही है। इटसन का "अप्रेना साहित्य का सखिप्त इतिहास" इस शैली से लिखा वस्तु है। इस प्रणाली में कवियों के नामों पर युग निर्धारित किये जाते हैं। यथा 'एज आन शेक्सपीयर, मिल्टन युग, टेनिसन युग आदि।

साग साहित्य का इतिहास प्रस्तुत करने में हम प्रथम शैली का अनुगमन नहीं कर सकते क्योंकि सागरगमच का इतिहास टटोलते समय हमें साग, स्वाग या नौटकी की काम-विधिया नहीं मिल सकी हैं। अतः समय के निश्चय के अभाव में किस प्रकार काल विमाजन किया जाये, समझ में आनेवाली बात नहीं है। दूसरी प्रणाली विषय के एक होने के कारण कार्य में नहीं लाइ जा सकती। यह शैली तभी समय है यदि आलाप्य विषय में कई शैलिया गद्य, पद्य, नाटक आदि हों। यहा केवल नाटक ही एक मात्र विषय है। तीसरी प्रणाली अवश्य हा हमें सहायक सिद्ध होगी।

हरियानी साग का इतिहास राजते समय प० दीपचन्द्र ऐसे सागी हैं जिन्हें हम युग प्रवर्तक के नाम से पुकार सकते हैं। इनके द्वारा सागी में एक नया मोड़ आया, एक नई दिशा मिली और इस साहित्य ने एक नई करवट चदली। अतः प० दीपचन्द्र को हम साग साहित्य के इतिहास का मध्यविन्दु मानेंगे और उनके नाम पर युग स्थापित करेंगे। इस प्रकार समस्त हरियानी साग साहित्य का तीन भागों में बाटा जा सकता है —

अशिष्ट एवं जघन्य अश्लील प्रेमालापों का चित्रण है। ऐसे सागा में गाँवों का वह आरण्यक निश्छल वातावरण जो अपनी पावनता एवं निरीहता व लिए प्रसिद्ध है बड़ा निम्न, धिनीना और गह्रित (निच) चित्रित किया गया है। यहाँ इतना और देर लेना चाहिए कि साग की परम्परा के आदिम उननी यह दशा न थी। यह तो आज की 'नई रोशनी' का परिणाम है और उसी हीन मनावृत्ति व परितोष के लिए इन सागियों की प्रतिभा प्रभा अवाञ्छनीय दिशा में पदार्पण करने लगी है। आशिक माशूका के बेल्गे वणन और विलासप्रियता की भूड़ी भावना ने कविता रामिनी के कलित कलेवर का कलुपित कर दिया है।

इस दृष्टि से जब इन सागा पर दृष्टिपात करते हैं। तो यही प्रतीत होता है कि आरम्भ के कुछ सागों को—पुरजन पुरजनो (५० लक्ष्मीकृत), हरिश्चन्द्र (५० सरूपचन्द्र कृत) तथा साला सेठानी (५० नेतराम कृत) आदि को—छोड़ कर निनमें जीवन के उदात्त एवं विशुद्ध पक्ष की भाँकी मिलती है प्राय सभी साग नग्न शृगार की मञ्जूषाएँ हैं। इतना खुला शृगारिक एवं विलासितामय वर्णन इनमें होने लगा है कि लज्जा भी लजा जाती है। इसका बड़ा अस्वस्थ प्रभाव अबोध बाल-बलिकाओं पर पड़ता है। कई स्थानों पर नव युवतियाँ इन सागियों की बाकी अदा पर फिदा होकर अपने घरबार को छाड़ गई हैं। यह सागा की इस विलासिता का ही परिणाम है। यहा पर कतिपय नाटककार या सागीतकार यह आपत्ति उठावेंगे कि बिना शृगार रस का पुट दिये नाटक अथवा साग सरस एवं आकर्षक बनाये ही नहीं जा सकते। बात कुछ सीमा तक ठीक भी है और यह बात भी सत्य है कि शृगार सर्वप्रिय रस है किन्तु औचित्य इसे और भी आकर्षक एवं सहृदय सवैध बना देगा क्योंकि समय म एक विलक्षण शक्ति होती है।

१ (क) सागीत लीलोचमन (धनपत कृत) —

चन्द्रमा सी शान हूर की सड़क बीच खड़ा देखो।
मध जोवन की ठीक जले यू उरती फूलमड़ी देखी
सुरगाइ की ढाल चाल के पाव धरे थी हट हट के
नैन कगर जुलम इशारा हूर करे थी हट हट के।

(ख) सागीत लीलोचमन (राम किसन प्यास कृत) —

सुख सेबल आली गोरी जीवै नै नजर करे
तू जमादार की छोरी, तेरी भटके पोरी-पोरी कट खाना खोर तेरे
तेरी दो पुतली वाली छोरीं पै मार करे रे

अभिनय उद्दोने किया। यह राग उग समय के अभिनीत रागो से, जो अशतः भजन होते ये और अशत गान, अपनारुन उच्च कोटि का रहा था।

इसने पाछे, प० दीपचन्द (सेरी गवाडा निरागी) का प्रतिभा प्रभाकर राग गगन में छा गया और उदगण अस्त हो गये। प० दीपचन्द के मद गभीर स्वर को बिन्दो मुना है ये आज भी उनका प्रभाव शिरसा स्वीकार करते हैं। 'प्याने की प्यास' का खमत्कारी यथान निम्न पक्तियों में हुआ है —

डुक मा नीर पिला ने और घाल मेरे घस्टे में,
अरे त भने घरा की दीकरी, तने तनम लिया टोटट म,
त मरा साथ होखले रे, दाम्मण मदया द्यू घोट्टे में।
डुक मा नीर पिला दे और घाल मेरे घस्टे में।

दापचन्द के राग यागीय प्रथम महायुद्ध के समय अपने यौवन पर थे। उन जिंदा दीपचन्द हरियाणो का प्रमुख गायक था। वास्तव में उसके कठ म बैठकर राग बड़ा प्रभावशाली बन जाता था।

दीपचन्द के गान का प्रभाव अच्छूक होता था। कथन की इस प्रभावोत्पादकता को स्वीकार करके भारत सरकार ने उसे भरता के कार्य में ले लिया था। हरियाणो के जाटा ने जा बड़े निबर और निर्भीक हैं और सदा रागी रहे हैं, सेना में भरती होना नहीं चाहा। परन्तु सरकार का हरियाना प्रदेश जैसे बहादुर वीर सैनिकों की आवश्यकता थी। उन्हें किस प्रकार भरता के लिए प्रोत्साहित किया जाये यही समस्या थी। उसी बात का बीड़ा प० दापचन्द ने उठाया। मनुस्मृति सानी है कि यहाँ की जनता सदा से सेना के हरावला (अप्रभाग) में रहती रही है^१। हरियान के जाटा की निर्भीकता एक उक्ति में इस प्रकार आकर बैठी है —

“घाप्पी बोया आप ही खात हैं, नाहा दें सिमी को दाणा।
सागड़ देम मत जाणियो या सँ दस हरियाया।”

१ कुरुक्षेत्र मस्यदेश पचालान् शूरसेनान् ।

दीघा लघुधूर्त्त नरानप्राणीकेषु धोचयते ॥

मनुस्मृति अ० ७ श्लोक १६३

कुरुक्षेत्र, मस्यदेश, पचालदेश तथा शूरसेन देश के त्रिपुलकाय और फुर्वाले मैदानों को भीषण आक्रमण करने के कारण सेना के अप्रभाग में रखना चाहिए।

२ दीपचन्द युग

३ उत्तर दीपचन्द युग ।

एक दूसरी रीति यह भी हो सकती है कि हम समस्त उपलब्ध साग साहित्य का उसकी अवस्थाओं में बांट लें । अवस्था विशेष में जो प्रवृत्ति विशेष रही है उसी के अनुसार उस सामग्री को एक अवस्था का नाम दें । दूसरी अवस्था को दूसरा नाम दिया जाये । इस प्रकार हमारे विभाजन की रूप रेखा यह होगी —

१ प्रथमावस्था

२ द्वितीयावस्था

३ तृतीयावस्था (अतिमावस्था) ।

पीछे हमने देखा है कि लोक रगमच के आदि युग में इसने दो रूप में एक कौतन का रूप और दूसरा नौटकी का रूप । कौतन का रूप ही आगे चलकर रामलाला के रूप में प्रतिष्ठित हुआ । उसी से कुछ प्रवृत्ति साग ने ली । यह बात पीछे कही जा चुकी है । परन्तु हरियाने के साग के इतिहास पर विचार करते समय इस प्रदेश में यात भजनाक मडलियाँ के स्वरूप का भी देख लेना होगा । विशेष अध्ययन इस बात का सक्षो है कि हरियाना का सागीत अपने आदि रूप में भजनीक मडली का मृणी है । हरियाने के आधुनिक सागों के प्रतिष्ठापक प० दीपचन्द से पहिले जा दो सागी—रामलाल सटीक (सौनीपत) और प० तैताराम (अस्मापला निवासी) हुए हैं वे आदि में भजनीक थे और पश्चात् का साग बने । उनसे पास वाद्य-यंत्र—सारंगी एक तारा) ढोलक और सरताल हाती थीं । सङ्ग सङ्गे गाते थे । भजनाकों का स्वरूप था ।

पंडित तैताराम जी जगधारी, बड़े भजनानदी और कथावाचक थे । उनसे विषय में यह बात कही जाता है कि वे किसी गाव में भगवद् कथा कहा करते थे । अनेक लोग कथा सुनने आते थे । उन्हीं दिनों उस ग्राम में एक प० किशनलाल (रेवड़ी, मेरठ जिला, उत्तर प्रदेश निवासी) सागी आया और उसने अपने साग का प्रदर्शन किया । साग का जनता पर ऐसा जादू चढ़ा कि कथा में कतिपय वृद्ध मर्तों के आतरिक्त कोई न आता । दक्षिणा क लाल पड़ गये । इस घटना से पंडित जी को उड़ी खिन्नता हुई और वे उड़े गेरास हुए । वस, उन्होंने कथा को अंतिम प्रणाम किया और अपनी प्रतिभा गमा का सागदवा की भट कर दिया । इस प्रकार उनकी साग सुनभ प्रतिभा में उभय हुआ । 'साला सेठाना' क सारठ (साग) का प्रथम सफल

अभिनय उन्ही किया। पर साग उस समय के अभिनीत गाना से, जो अत्यन्त भजन हाते थे और अत्यन्त साग, अपवाहण उच्च फोटि का रहा था।

इसने पाछे, प० दासचन्द (मेरी गाढा निगामी) का प्रतिभा प्रभावर साग गगन में छा गया और उडगण्य अस्म हो गये। प० दीपचन्द क मन् गमार स्वर का जिहोने मुना है ये आज भी उनका प्रभाव शिरसा स्वीकार करते हैं। 'प्यामे को प्याम' का रोमाङ्ककारी यथा निम्न पंक्तियों म हुआ है —

डुक सा नीर पिना दे और घाल मेरे घट्टे में,
अरे त भले घरा की शीशरी, त-ने जनम निवा टोटे में,
त मेरा माघ होवने रे, दाम्मण मदवा द्यूं घोटे में।
डुक सा नीर पिना दे और घाल भरे घट्टे में।

दासचन्द ने साग योगेश्वर प्रथम महायुद्ध के समय अपने जीवन पर था। उन दिनों दीपचन्द हरियानी का प्रमुख गायक था। वास्तव म उसके कठ में तैठकर राग बड़ा प्रभावशाली बन जाता था।

दासचन्द क गात का प्रभाव श्रूक होता था। कथन की इगा प्रभावोन्पादका को स्वीकार करने भारत सरकार ने उसे भरता के कार्य म ले लिया था। हरियाने क जाटी ने जा बड़े निडर और निर्भीक हैं और सग बागा रहे हैं, सेना म भरता हाना नहा चाहा। परन्तु सरकार को हरियाना प्रदेश जैसे बहादुर वार सैनिकों का आवश्यकता थी। उन्हें किस प्रकार भरती के लिए प्रोत्साहित किया जाये यही समस्या थी। उसी गत का बीड़ा प० दीपचन्द ने उठाया। मनुस्मृति साक्षी है कि यहाँ का जनता सदा से मना के हरावला (अग्रभाग) म रहती रहा है। हरियाने के जाटी की निर्भीकता एक उक्ति में इस प्रकार आकर बैठी है —

“आप्या बोया आप ही रात हैं, नाहा दें किसी को दाया।
यागइ देम मत जाणियो या सँ देस हरियाणा।”

१ कुरुप्रेषाश्च मत्स्याश्च पञ्चालान् शूरसेनान् ।

दोषा वृत्तधूरचैव नरान्प्राणीरेषु योत्सवते ॥

मनुस्मृति अ० ७ श्लोक १६३

कुरुपत्र, मत्स्यदेश, पञ्चालदेश तथा शूरसेन देश क सिपुलनाय और पूर्वील सैनिकों को भीषण आक्रमण करने के कारण सेना क अग्रभाग में रचना चाहिए।

२ दीपचन्द युग

३ उत्तर दीपचन्द युग ।

एक दूसरी गीति यह भी हो सकती है कि हम समस्त उपलब्ध साग साहित्य को उसकी अवस्थायाँ में बाट लें । अवस्था विशेष में जो प्रवृत्ति विशेष रही है उसी के अनुसार उस सामग्री का एक अवस्था का नाम दें । दूसरी अवस्था को दूसरा नाम दिया जाये । इस प्रकार हमारे विभाजन की रूप रेखा यह होगी —

१ प्रथमावस्था

२ द्वितीयावस्था

३ तृतीयावस्था (अतिमावस्था) ।

पीछे हमने देखा है कि लोक रगमच के ग्रादि युग में इसने दो रूप धारण किए हैं, एक कीर्तन का रूप और दूसरा नौटकी का रूप । कीर्तन का रूप ही आगे चलकर रासलीला के रूप में प्रतिष्ठित हुआ । उसी से कुछ प्रवृत्ति साग ने ली । यह बात पीछे कही जा चुकी है । परन्तु हरियाने के सागाँ के इतिहास पर विचार करते समय इस प्रदेश में व्याप्त भजनीक मडलियाँ के स्वरूप का भी देखा जाना होगा । विशेष अध्ययन इस बात का साक्ष्य है कि हरियाना का सागीत अपने ग्रादि रूप में भजनीक मडली का श्रृण्वी है । हरियाने के आधुनिक सागी के प्रतिष्ठापक प० दीपचन्द से पहिले जा दो सागी—रामलाल राटीक (सौनीपत) और प० नेताराम (अस्मापला निवासी) हुए हैं वे ग्रादि में भजनीक के और पश्चात् का सागी बने । उनके पास वाद्य-यन्त्र—सारंगी एक तारा) ढालक और सरताल हाती थी । रङ् रङ् गाते थे । भजनीकों का स्वरूप था ।

पंडित नेताराम जी जगधारी, बड़ भजानदी और कथावाचक थे । उनके विषय में यह बात कही जाती है कि वे किसी गाँव में भगवद् कथा कहा करते थे । अनेक लोग कथा सुनने आते थे । उन्हीं दिनों उस गाँव में एक प० किशनलाल (रेवड़ी, मेरठ जिला, उत्तर प्रदेश निवासी) सागी आया और उसने अपने साग का प्रदर्शन किया । साग का जनता पर ऐसा जादू चढ़ा कि कथा में कतिपय वृद्ध मत्तों के अतिरिक्त कोई न आता । दन्विषा के लाले पड़ गये । इस घटना से पंडित जी को नङ्गी पिरता हुई और वे प्रद निराश हुए । वस, उन्हीं कथा का अंतिम प्रणाम किया और अपना प्रतिभा प्रभा का सागदेवी की भेंट कर दिया । इस प्रकार उनकी साग सुलभ प्रतिभा का उन्मेष हुआ । 'सीला सेठानी' व सारठ (साग) का प्रथम सफल

अभिनय उद्योग किया। यह साग उस समय के अभिनीत गागा से, जो अत्यन्त मजबूत होते थे और अत्यन्त साग, अपलाटन उच्च फोटी का रहा था।

इसके पीछे, १० दीपचद (मेरी माडा निरामी) का प्रतिभा प्रभाव साग गगन में छा गया और उदयगण अग्न हो गये। १० दीपचद के मन् गमार सर का निहोले गुना है वे आन भी उनका प्रभाव गिरगा स्वीकार करते हैं। 'प्यामे की प्याम' का रोमारकारी यणन निम्न पक्षियों में हुआ है —

डुक मा नीर पिजा ने और घाल मेरे घट्टे में,
अरे तु भले परां की दावरी, तन्ने तनम जिया दोट्टे में,
तु मेरा साथ होवने रे, दाम्मय मदरा तूवू घोट्टे में।
डुक मा नीर पिजा दे और घाल मेरे घट्टे में।

दीपचद के साग परापीय प्रथम महायुद्ध के समय अरने यौवन पर थे। उन दिनां दीपचद हरियाने का प्रमुख गायक था। यालन म उसके षठ में बैठकर राग रदा प्रभावशाली बन जाता था।

दीपचद के गात का प्रभाव अचूक होता था। कथन की इया प्रभावोत्पादकता को स्वीकार करके भारत सरकार ने उसे भरता के काय में ले लिया था। हरियाने के जागे ने जा बड़ निबर और निर्भीक हैं और सग सागा रह हैं, सेना म भरती हाना नहीं चाहता। परन्तु सरकार को हरियाना प्रदेश जैसे बहादुर वार सेनिर्ना का आश्चर्यना थी। उन्हें किस प्रकार भरती के लिए प्रोत्साहित किया जाय यज्ञ समस्ता था। उसी बात का बीड़ा १० दीपचद ने उठाया। मनुस्मृति साक्षा है कि यहाँ का जनता सदा से मेना के द्वारावली (अग्रभाग) में रहती रहा है। हरियाने के जागे की निर्भीकता एक उक्ति में इस प्रकार आकर पैठी है —

“घापी घोया आय ही खात हैं, नाहा ने किमी को दाया।
यागद दस मत जाणियो या सँ तेस हरियाया।”

१. कुम्भेश्वर मन्व्यारच पचालान् शूरमेनान् ।

दोषा क्लधूरुचैव नरानप्रानीकेषु योपयते ॥

मनुस्मृति अ० ७ श्लोक १६३

कुम्भेश्वर, मन्व्यदेश, पचालदेश तथा शूरमेन देश क विपुलकाय और पूर्वोक्ति सेनिर्ना को भीषण आक्रमण करने के कारण सेना के अग्रभाग में रचना चाहिए।

२ दीपचन्द युग

३ उत्तर दीपचन्द युग ।

एक दूसरी रीति यह भी हो सकती है कि हम समस्त उपलब्ध साग साहित्य का उसकी अवस्थाओं में बांट लें । अवस्था विशेष में जा प्रवृत्ति विशेष रही है उसी के अनुसार उस सामग्री को एक अवस्था का नाम दें । दूसरी अवस्था को दूसरा नाम दिया जाये । इस प्रकार हमारे विभाजन की रूप रेखा यह होगा —

१ प्रथमावस्था

२ द्वितीयावस्था

३ तृतीयावस्था (अतिमावस्था) ।

पीछे हमने देखा है कि लोक रगमच के ग्रादि यग में इसके दो रूप थे, एक कीर्तन का रूप और दूसरा नीटकी का रूप । कीर्तन का रूप ही आगे चलकर रासलीला के रूप में प्रतिष्ठित हुआ । उसी से कुछ प्रवृत्ति साग ने ली । यह बात पीछे कही जा चुकी है । परंतु हरियाने के सागों के इतिहास पर विचार करते समय इस प्रदेश में व्याप्त भजनाक मडलियाँ के स्वरूप का भी देखा लना होगा । विशेष अध्ययन इस बात का साक्षी है कि हरियाना का सागीत अपने आदि रूप में भजनीक मडली का ऋणी है । हरियाने के आधुनिक सागी के प्रतिष्ठापक प० दीपचन्द से पहिले जो दो सागी—रामलाल खटीक (सौनीपत) और प० नेताराम (अस्मापला निवासी) हुए हैं वे आदि म भजनीक थे और पश्चात् का सागी बने । उनके पास बाद्य-यंत्र—सारंगी एक तारा) ढालक और ररताल हाती थीं । खड़ खड़े गाते थे । भजनीका का स्वरूप था ।

पंडित नेताराम जी जगधारी, बड़े भजनादी और कथावाचक थे । उनके विषय में यह बात कही जाती है कि वे किसी गाव में भगवद् कथा कहा करते थे । अनेक लोग कथा सुनने आते थे । उही दिन उस ग्राम में एक प० किशनलाल (रेवड़ी, मेरठ जिला, उत्तर प्रदेश निवासी) सागी आया और उसने अपने साग का प्रदर्शन किया । साग का जनता पर ऐसा जादू चढ़ा कि कथा में कतिपय वृद्ध भक्तों के अतिरिक्त कोई न आता । दक्षिणा के लाले पड़ गये । इस घटना से पंडित जी को नई विनता हुई और वे चढ़ निराश हुए । इस, उन्होंने कथा का अंतिम प्रणाम किया और अपनी प्रतिभा प्रभा का सागदेवा की भेंट कर दिया । इस प्रकार उनकी साग सुलभ प्रतिभा का उन्मेष हुआ । 'साला सेटानी' क सारंग (साग) का प्रथम सफल

अभिनय उठोने किया। यह साग उस समय के अभिनीत सागा में, जो अत्यंत भजन होते थे और अत्यंत साग, अपेक्षागत उच्च कठि का रहा था।

इसके पाछे, प० शीतचंद्र (मेरी ब्यादा निरागा) का प्रतिभा प्रभाकर साग गान में छा गया और अदम्य अभ्य हो गये। प० शीतचंद्र के मन् गम्यार स्वर का विन्दने सुना है वे श्राव भी उनका प्रभाव शिरसा स्वाकार करते हैं। 'प्याने का प्याम' का रोमांचकारी यथान निम्न पंक्तियों में हुआ है —

टुक सा नीर पिला दे और घाल मेरे घटे में,
 घरे त भले घरा का शीकर, गने गनन निपा टोट में,
 त मेरा माथ होवने है, शम्भु मडया द्यूं घोट्टे में।
 टुक सा नीर निना द और घाल मेरे घटे में।

शीतचंद्र के साग यथानय प्रथम महाबुद्ध के समय श्रौं यैन पर थे। उन गिना दासचंद्र हरियाने का प्रमुख गायक था। पाल्प म उभवे कठ में पैटर राग नडा प्रभावशाली बन जाता था।

शीतचंद्र के गात का प्रभाव अचूक होता था। कथन की इसा प्रभावोत्पादकता का स्वीकार करके भारत सरकार ने उसे भरता क काय में ले लिया था। हरियाने के जाटा ने जो बड़े निडर और निर्भीक हैं और सग जागा रह हैं, मेना में भरता हाना नडा चादा। परन्तु सरकार का हरियाना प्रदेश बैस बहादुर वार सेनिका का आवश्यकता थी। उन्हें किस प्रकार भरती के लिए प्रोत्साहित किया जाये यथा समझना थी। उसी बात का बाड़ा प० दासचंद्र ने उठाया। मनुस्मृति साक्षा है कि यहाँ का जनता सदा में मेना के हरियाना (अप्रभाग) में रहती रहा है। हरियाने के जाटा का निर्भीकता एक उक्ति में इस प्रकार श्राकर बैठा है —

“घाथी घोया श्राप ही गान हैं, नादा में श्रिमा को दाया।
 बागद देम मठ गायियो या सँ जेम हरियाया।”

- १ कुरुपेत्रारच मन्प्यारच पन्गलान् शूरसेनजान् ।
 दीया वलधूरचंद्र नरानप्रानीकेषु योचयते ॥

मनुस्मृति अध० ७ श्लोक १६३

कुरुपेत्र, मन्प्यारच, पन्गलान् तथा शूरसेन देश क विपुलकाय और पुत्रीके सेनिकों को भीषण आक्रमण करने के कारण सेना क अप्रभाग में रखना चाहिए।

परन्तु प० दीपचन्द के रागचन्द्र कथन की प्रभावोत्पादकता के प्रभाव में वे ही बागी जाट मंत्र-भुग्ध मधुमत्तिकाश्रों की सदृश घड़ाघड़ पौज में भरती होने लगे । उन पर उससे गाने का बड़ा असर हुआ । यदि यह कहा जाये कि दीपचन्द के गाने हरियाने में 'चिगुल' का काम करते थे तो अत्युक्ति न होगी । दीपचन्द को इस महान् कार्य के लिए लाखों रुपया इनाम मिला और रायसाहब की उपाधि भी मिली । रगरूटी के लिए गाये गये गाने आज भी हरियाणे की जनता को याद हैं —

भरती होलै रै धारे बाहर खड़े रगरूट,
इया इसा रखते मज्यम बाणा,
मिलता फट्या पुराणा, उवा मिलते हैं पुलरूट,
भरती होलै रै धारे रगरूट ।

फुलचूट ही नहीं विस्फुट का भी बड़ा भारी प्रलोभन प्रस्तुत किया गया है । यहाँ 'रगरूट' किसी जाति विशेष के युवक के लिए नहीं प्रयुक्त हुआ है । सभी युवक इसके सवोध्य हैं ।

दीपचन्द युग से आगे बढ़ने से पूर्व यह अनुपयुक्त न होगा कि पाठक इस युग की साग विषयक प्रगति का सिंहावलोकन कर लें । इस युग में सागीय रागचन्द्र के साधनों में पर्याप्त परिवर्तन हुआ है । जो अभी तक खड़े होकर इकतारा और खरताल से ही काम लेते थे इस दौर में एक चौकी और मूटा लेकर बैठते थे । नायक मूटा पर और शेष सब नाचे । राणी और चादी दो नाचनेवाली होती थीं । साज के क्षेत्र में एकतारे के स्थान में सारंगी का प्रयोग बढ़ा । खरताल ज्यों की त्यों रही । इसके अतिरिक्त टोलक और नक्कारा भी सम्मिलित हो गया । साग इस दौर में अपने वास्तविक रूप में उपस्थित हो गया । प्रभावकारिता के लिए स्त्री और पुरुष का अभिनय होने लगा । साग अब पकी नकल या स्वाग बन गया । दीपचन्द दौर के मुख्य मुख्य सागी ये हुए हैं —

१ हरदेवा स्वामी	गाव गोरड़
२ बाजेनाई (भगत)	„ ससाणा
३ प्रभु	„ आसन
४. भरतू	„ भैंसरू ब्राह्मणान्
५ हुकमचन्द	„ किसमिनाना (जिला करनाल)
६ लखमीचन्द	„ छाटी ।

ये सभी सागी दीपचन्द दौर के कहे जाते हैं परन्तु इनमें प० लखमीचन्द

ये प्रतिभा सम्पन्न गायक हुए हैं। कहा जाता है वे भी महात्मा फ़ीर की तरह "मसी कागद छूयो नहीं, कलम गही नहीं हाथ।" वाली कवि के थे। परन्तु उनकी प्रतिभा का प्रस्फुरण जब होता था जब कि वह शारदा का ध्यान कर दत्तावधान हाकर बैठते। लग्नीचंद बड़े शानी और वेदान्ती पंडित थे। उनका रागणी जो शानपूर्ण है वेदांत के उत्कृष्ट गमूने हैं।

रागिणी हरियाने की अपनी निराली विभूति है। इसका उद्गम अशक्त है। पर इसका वर्तमान रूप का पयास थैय प० लखमीचंद जी का है। मनुता का कथन है कि प० लग्नी का दिव्य कठ ही इस राग का जन्मदाता है। परन्तु यह तो सत्य है कि रागणी के नाम पर राग ही प० लखमीचंद की स्मृति का अवश्य आती है।

घ हरियानो सागीत में सूफी प्रभाव

प० लखमीचंद जी ने हम क्षेत्र में एक नई निशा दी। उन्होंने साग का जो अभी पौराणिक एवं धार्मिक आख्यानों पर आधारित था, एक उन्मुक्त क्षेत्र में ला रखा किया। जीवन के साथ उसका सम्बन्ध स्थापित कर दिया। प्रेम और योवन जो प्रामाण्य जीवन की दो विभूतियाँ हैं उनका अच्छा संयोग साग में देखने का मिला। इस दौर में कई सागा में सूफी काव्य धारा की प्रवृत्ति मिलता है। स्थान में किमी मुदरी के दर्शन हो जाने पर उसकी प्राप्ति के प्रयत्न, नाना कष्ट और अंत में सच्चे प्रेम की पूर्ति की सुन्दर अवतारणा इनका विषय है। इस प्रकार का एक साग हमारे सामने है। वह दुलीचंददत्त 'सच्चा माणक' है। लखरू दुलीचंद गुप्त मानसिंह का शिष्य है। इसमें एक सुन्दर प्रेम कथा का वर्णन आया है जिसका संक्षेप नीचे दिया जाता है —

वार्ता

सज्जन पुरुषों को मालूम हो कि श्याम नगर में राजा मुफ्त राज की लड़की चन्दकोर क्वारी था और इधर कमलीपुर के क्षेत्र में राजा धर्मजीत का लड़का बलवीर सिंह था। एक दिन बलवीर सिंह ने सुपना देखा तो उस सुपने में उसे चन्दकोर का ख्याल आया कि तीस वर्ष की उमर में है और अब तनूपिता के घर पर क्वारी है और जैसा वह हुसन रूप में है वैसा कोई खूबसूरत बर उसकी जाड़ी का नहीं मिलता। अब यह लड़के के दिल में समा गया और उस पै इस्क सवार हो गया। अब सुबह हाते हा लड़का उसी के ध्यान में पागल सा बन गया। जब यह उसकी राणी ने सुना तो अपने पति से न्यो कहने लगी :—

जवाब रानी अमरावती का

दोहा— आज तनै के हो गया चेहरे का उतरा रंग ।
यालम तों न्यों तो घता कयो विगढ़ रहा तेरा डग ॥

जवाब बलवीरसिंह का रानी से

अरे के कहूँ कहण की गा बात बदन म लग रही आगसी ।
इब सवर करू कितनाक । रांड धिर गइ नीयू की फाक ।
धी मोटी मोटी आय लकी मेरे काली नाग सी ॥१॥
जहर चट्या काली नागण का । घाय होग्या तीर लागण का ।
रात नै महीना था फागण का इरक में खेली फाग सी ॥२॥
तनै समझाऊ इरवार । मनै जबतै देर्या दादार ।
हुया मैं घायल बिना हथियार मेरे होगी बैराग सी ॥३॥
मैं सिर पै विपता ठाऊ । अदैं दट के गा भोजन खाऊ ।
कहे महताब अदैं तै जाऊ, मैंने तो दीखे निरभाग सी ॥४॥

जवाब रानी अमरावती का

(काफिया)

निय तै बुरा हाल तेरा देखा पिया मैं हो री मरणे जोगी ।
तेरे बितके तेल लागगे कोण से हुआ दर्द का रोगी ।
तेर रात-रात में यालम आज के करू घायल सी होगी ।

जवान बलवीरसिंह का

(काफिया)

हुया मेरे पै इरक सवार, घता मैं बुणसा जतन कर ।
मनै निय तै सुपना आया । मेरी दुख पा रही सै काया ।
हुया मैं बिना ददैं बेमार अदैं उज्ज तै बिन पैद मर ॥
रात नै लगी जिगर में चोट । सेल मनै लिण छानी पै थोट ।
घा खिल्या चैत में क्यार यणक मैं मिरगा जाय घर ॥

जवाब रानी अमरावती का

हो तनै बरजु स भरतार मत टोरर रह्ये जमाने की ॥
बित गण तेरे अतर पुनेल । घाल सेना रू धीपड़ खेल ।
परत्रिया जिय की चैत इज्जत करद आर की ॥

आन सेरा पेगा बिगद रहा दग । तन जाणू पी राग्री हो भग ।
मेरे जोवन का लिप रग पतग मै या पेच लदाणे की ॥

जवाय बलधीरसिंह का

जब से देगा हे सुपना मै घायल हुआ,
वो है देवी हुन की पुजारी हूँ मैं ।

भीक मागूगा उसमे या दगी मुझे,
उमके जोवन का बना, भिगारी हूँ मैं ॥

सुपना देगे मुझे पार घटे हुए,
जब से हुए पारहा दिल में भारी हूँ मैं ।

घब षक धै कहू चाहे काम दना,
करता म्याम नगर की त्यारी हूँ मैं ।

वो घोड़ी है उमकी मरारी हूँ मैं,
बन्यरो है वो शूरन मुरारी हूँ मैं ।

दोहा— अगनी सी जग मेरे मने जू जू होती देर ॥
अब प्यार अमीरी हो लिया जीम्या तो मिलूंगा केर ॥

रागनी

राणी रोती छोड़ी धरा म्याम नगर का प्यान ॥

मै हूँ आगे नै बटगा । ना लान शम म शङ्गा ।

यण्डे मै तार शङ्गा वा माली पड़ी मै कमान ॥

वार्ता

सब सजा पुरुषों का मालूम हा जब कि बलनीर सिंह जगल बियावान
में पटुचा तो उसे एक साधू तप करना दिमाइ दिया । अब लडका
साधू को देखकर सोचने लगा कि इस भाग जो का चेला बण कर स्याम
नगर नै चलूँ और वहा जाऊँ उसने महल का पता लगा कर भीक मागने
जाऊँगा । अब बलनीर फकीर के पाम आया और फकीर बलवार को देखकर
कहणे लगा ।

जवाय फकीर का

दोहा— कुणसे देस का करर मै कुणसे देस नै जाय ।

बियावान के बीच म टुक भा दृशान ना गाय ॥

जवाय बलधीर का

दोहा— दम नगर तै छूटया हूँ कर जगल म बास ।

मै तरी शरण में आबिषा त पूरी कर द आस ॥

जवाब रानी अमरावती का

दोहा— आज तनै के हो गया चेहरे का उतरा रग ।
बालम तौ न्यों तो बतार्यों विगड़ रहा तेरा ढग ॥

जवाब बलवीरसिंह का रानी से

अरे के कहूँ कहण की गा घात बदन में लग रही आगसी ।
इस सबर करू कितनाक । राड घिर गड़ नीबू की फारू ।
थी मोटी मोटी आर लड़ी मेरे काली नाग सी ॥१॥
जहर चढ़्या काली नागण का । घाव होग्या तीर लागण का ।
रात नै महीना था फागण का इरक में खेती फाग सी ॥२॥
तनै समझाऊ हरवार । मनै जगत देर्या दीदार ।
हुया मैं घायल बिना हथियार मेरे होगी वैराग सी ॥३॥
मैं सिर पै विपता ठाऊ । अर्दे डट के गा भोजन खाऊ ।
वहै महताव अर्दे तैं जाऊ, मैंने तो दीरै तिरभाग सी ॥४॥

जवाब रानी अमरावती का

(काफिया)

निब तै घुरा हाल तेरा देखा पिया मैं हो री मरणे जोगी ।
तरे कितवे तेल लागमे कोण से हुआ दर्द का रोगी ।
तरे रात रात में बालम आन के कर बाल सी होगी ।

जवाब बलवीरसिंह का

(काफिया)

हुया मेरे पै इरक मवार, घता मैं कुणसा जतन करू ।
मनै निब तैं सुपना आया । मेरी दुख पा रही मैं काया ।
हुया मैं बिना दद घेमार अर्दे उजा तैं बिन वैद मरू ॥
रात नै लगी तगर में चोट । तेल मनै लिण छाती पै ओट ।
वा सिरिया सैत में क्यार यणव मैं मिरगा जाय चर ॥

जवाब रानी अमरावती का

हो तनै बरनू स भरतार भव टोरर रह्ये जमाने की ॥
कित गए तरे अतर पुगेत । घात सेना र खीपड़ रेल ।
परत्रिया निय की घेत इगत करद थारे की ॥

आज तेरा चेना खिगद रहा हग । तन पागु पी रागी हो भग ।
मेरे जीवन का लिण रग पागु में धा देध खदाये की ॥

जवाय बलधीरसिंह का

जब से देखा है मुपना मैं धायल हुआ,
धो है देवी हुन्न की पुगारी हूँ मैं ।
भीक मागूगा उससे धो रगी मुक,
उमक जीवन का दना, भिमारी हूँ मैं ॥
मुपना देवे मुक धार घट हुण,
जय से हुण पा रहा दिल में भारी हूँ मैं ।
अब एक बै कहू घाट खाम्य दरा,
करता स्याम नगर की खारी हूँ मैं ।
धो घोड़ी है उमकी गधारी हूँ मैं,
धन्वरी है धो हुन्न मुगारी हूँ मैं ।

दोहा— अगनी भी जगै मेरे मने नू नू होनी नैर ॥
अब प्यार खत्री हो त्रिपा नीम्या तो मिलगा वेर ॥

रागनी

रागी रोती छोड़ी धरा स्याम नगर का ध्यान ॥
मैं हव आगे नै बगुगा । ना आज राम में गदगा ।
बएर मैं तीर खगुगा वा ग्यात्री पदी म कमान ॥

यात्री

अब स्याम पुरुषों का मालूम हो पत्र कि बलधीर सिंह जगल त्रियावान
में पगुगा ता उसे एक सागु तन कगुगा त्रिगाड त्रिया । अब लदका
साधू का देखकर साजने लगा कि इस बाग जो धा चेला पगु धा स्याम
नगर है चल् और रहा बाकर उमर महल का पना लगा कर भीक मांगन
खामगा । अब बलधीर फकीर न पास आया और फकार धन्वीर का दगुकर
कहये लगा ।

जवाय फकीर का

दाहा— कुयमे देस का करर मैं कुयान नैस नै पाय ।
त्रियावान क धीच में दुक भी दगुगत ना ग्याय ॥

जवाय बलधीर का

दोहा— नम नगर है धुगुगा हव करर नगत म काय ।
मैं तेरी शरण में आत्रिया नू पूरी कर ट काय ॥

मेरी जोग लेख की सला भला तेरा होगा मनै चेला करिण् ॥
 भग पड रहा अकल मेरी में । चुभगी पैनी थी धार छुरि म ।
 में आग्या शरण तेरी में नाथ मेरे घाव दूखतै नै भरिण् ॥
 म तेरे तै कान पहाऊ । फिर तेरे क्या बण जाऊ ।
 म तेरा दास कहाऊ नाथ तू हाथ मरे सिर पै धरिण् ॥
 में आया घरतै लिकड़ कै । इव मेरे आग कालजे भड़कै ।
 मनै चेला करले वेधकै तो मत अपने दिज म डरिण् ॥

वार्ता

सज्जन पुरुषों को मालूम हो कि बलबीर ने घाड़ा और अमीरी बस्तर सब उतार दिए और लक्ष्मीनाथ का चेला बण कर चल दिया और चन्दकोर के महल में अलख जगई । चन्दकोर जोगी का सारा हाल रादी से सुनकर भट्ट पाटक पर शार्क और जोगी को सुगत देखते ही उस पर आशिक हो गई और दोनों एक दूसरे का देखणे लगे तत्र चन्दकोर बलबीर से इस तरह कहणे लगी —

जयाम चन्दकोर का

(काफिया)

मनै जिततै तेरा हाल सुणा से नाथ मरे वाजी कोया गात म ।
 या मेर मन म भागी^१ माला जो ले रहा अपने हाथ में ।
 तने लेणो हो सो मागले इरे पने अ चनहारात म ।

जवाब जोगी का

दोहा— सुपने में दखा तनै मेरे तत्र तै लगा उचाट ।
 मन हीरे पन्ने छोड़ कै सत्र तजे राज और पाट ॥

रागनी

जोबन की भोख घाल दे और कुड़ लोड़ नहा से धननी ॥

तेरा चेहरा ऐसे दमक जाणू कडकी विजली गगन की ॥

जवाब चन्दकोर का

दोहा— तरे तै के मे ल्हको^२ में साफ कहु सु खोल ।
 सास सत्र व लेवती त्रिब उठै इरक की होल ।

१ पम्द आड । २ द्विपत्र, पुराण ।

रगनी

मेरा सौरभ दरग गान । मन तो ले धन अर्पण साथ ।
 इय उटक रोन परभाठ पति तेरी देगू श्याम नै ॥
 मन बड़ी-बड़ी विजा टाड । नोयन बदाग्या बहर कसाह ।
 मेरी इय तक ना हुड सगाह रोज मैं किमकी जानै ॥

जवान जोगी का

मन लेग्या करक ध्यान चन्दे तै सुपरा तरी स्थान ।
 इय मैं बैठ करू अस्नान मीली तू वूद घुमासे की ॥

रात्रि के निदहन पहर में जोगा चन्दकोर के महल ने उतरता है और
 कतवाल उने पकड़ लेता है ।

जवान कौतवाल का

(अपिया)

पर प्रिया विर का देल री या बड़ बहा नै ग्योना ।
 तन करगू यध कद म इव तीं आगी आगी होना ॥

जवान जोगी का दरोगा से

जो करते सखी यारी, वो भीमागर पार उतर जाग ।

प्रात काल जोगी राजा बुकट रात क सम्मुख पश किया जाता है और
 उने प्राण-दंड की सजा सुना दी जाता है ।

वार्ता

दूसरे दिन जोगा को पासा के लिए तैयार करने लग ता मुहम्मद
 राज का बजार जोगी से आकर कहल लगा कि त कीण से देश का जोगी
 है और किसना लड़का है ता जोगी वाला कि मैं कमलापुर के राजा
 धरमीबात का लड़का हूँ और चन्दकोर के इश्क में पँसकर यहा अर्पणी भात
 निखानी पर आ पटुचा हूँ । इतना सुण कर बजार बादशाह से कहल लगा
 कि यह जोगी राजा का लड़का है और चन्दकोर के महल में जाकर उसका
 घम भी बिगाड आया है इसलिए इस जोगी का रिहा करने चन्दकोर को
 इसके साथ व्याह द। ता सजन पुनपो । यहा का किम्बा ता यही छोडा जाता
 है और अब चन्दकोर के महल का हाल सुनाता हूँ ।

जवान कवि का

दोहा— दिन लिक्ड़ा पीली पटी सब रटे राम ससार ।

चन्दकोर भरी इश्क में मरगी थी खाय कटार ॥

(काफिया)

लडकी ने ख्याल कर्या दिल में इश्क म मरगी होके आधी ।
कमरे में लहास पडी चमके थी जाणू चमक कचिया चादी ।
राजा सहहा सत कर रहा था जाके न्यू रोवण लागी बादी ॥

जवान बादी का राजा से

राना चन्दनोर तेरी बेगी वा तै खाय कटारी मरगी हो ॥

जवाब कवि का

सुणा चन्दनोर के भरणे की उस लडक ने गम आगी रै ॥
धा होगी निसतै रहा था डर मैं । नित मारू जाके टक्कर म ।

मनै तेरे इश्क म फंम के घर पै सोले राखी त्यागी रै ॥
मै था पीवण ने हो रहा रै । सरबत का था भरा कटोरा रै ।
न्यू रोवै आतर भौरा रै तो खिली कली मुरझाई रै ॥

वार्ता

सज्जन पुरुषों का मालूम हो कि जिस वक्त चन्दनोर की लहास महलों में पड़ी थी तो उसे देख देख कर सनके मुँह से रोया ही रोया निकल रहा था । तब राजा मुकटराज दिल में शांति धर कर उन लोगों से कहणें लगा कि अब रोणे से क्या हाता है चलकर इसकी गत मुक्त करनी चाहिए । तब इतनी मुणकर बलवीरसिंह राजा स यू कहने लगा —

मैं फसा इश्क में होग्या मेरा नास से ।
या करदे मेरे हवाले जो पडी लहास सै ।

राना का जोर चल्ता ना थो आ रहा था बीच घचन में ।
लडका लहास उठाके चल दिया फिर आ पहुँचा था एक घन में ।

जवाब कवि का

अरे चित्ता चिखी थी रात नै कुड़ दुख का हुवा ना इलान ।
आग लगावण लागर्या आया शिवजी महाराज ॥
आया शिवजी महाराज खोस के आग बगादी ।
धरती पै पड़ी लहास ऊपर तै लकड़ी हटा दी ।

जवाब शिवजी का लडके से

इसकी सारी उमर इय खतम हो चुकी इसको पन नतन से निलायगा मैं ।
अगर बाकी तेरी साल चौबीस की जो तू कहदे तो आधे मिलायगा मैं ।

तो तू आधी उमर अपनी दे दे इसे अभी पहलु में तरे मुजाय्गूग मी ।
महताव कहे तेर पारा बर इन्को जल क साथ पिजाय्गूग मी ।

जवाय बलवीर का

दोहा— ५ जिदा इसने त करे तने समकू राम समान ।
उमर नहीं चाहे नाथ ती मेरी ले ले सारी जान ॥
ले छोटा जलका हाथ म लड़की को दिया पिजा ।
आधी उमर बनवीर की ही चन्दकोर में मिला ॥
ही चन्दकोर में मिला नार पेड़ी होगी हर हर करती ।
शिवची गायब होय गए धो तो टाया थी हिरती फिरती ॥
विद्युदा जोडा केर मिला सुरा होगे घासमान धरती ।
चन्दकोर नै दुग्या आशिकु घरयो में धरली सुरती ॥
मानविह जोगी रहे जिला रोहतक शहदपुर गाम ।
बयजारा महताव का देखली बीच मुकाम ॥

हरियाना के इन लोक किस्सा म लोक-वाता के कई तत्व—अद्भुत देवी
शक्ति की उपस्थिति, साधु का धूना और प्रेमियों की आयु का विनिमय आदि
बराबर मिलते हैं और य अलौकिक अशा सदैव कथा के विकास म सहायक
सिद्ध हाते हैं ।

सुपी प्रेम कथाओं म राजा के जागी हाने और प्रेयसी के मंदिर में दर्शन
पाने की बात आती है । “सागीत सच्चा मारकू” में भी इस परम्परा का
पालन हुआ है । यहा नायक बलवीर सिंह जागी बनता है और नायिका
चन्दकार से राजमंदिर में भेंट हाती है । शिव महाराज का श्रवतारणा से लेलक
ने कथा को सुग्नात बनाने में विलक्षणता से काम लिया है ।

पूरी कथा म सहज स्वाभाविक प्रामाण्य वातावरण और प्रामाण्य उपमाना
की छटा दशनाय है —“मने बोली लागै प्यारी तेरे इस मुँह बटना से की ।”
म मुह के लिए बटवा उपमान बड़ा सुन्दर एउ उपयुक्त है ।

प० लखमीचंद अपठ थे । उन्होंने अनेक साग खेले थे परन्तु कोइ साग
अपने नाम से छपवाया नहा । दूसरे दूसरे सागिया ने उनके गाना की तर्ज
पर अपने-अपने गाने रचे हैं और छपवाये भी हैं । आज बाजार म लखमीचंद
की तर्ज पर बनी हुई ता बहुत सी सागीत की किताबें मिल जाती हैं
जो देहाती पुस्तक भंडार, दरीवा कला, दिल्ली आदि से छपी हैं परन्तु लगमी
ने अपनी कोइ किताब नहा छपवादी थी ।

जहा प० लखमीचंद ने रागी का जन्म दिया, उसमें वैशिष्ट्य भरा, यहा वे उसे अलकृत करने में भी नहीं चूरे हैं। 'भूपन यितु न विराजइ कविता, अनिता मित्त' उनका भी मूलमंत्र था। बड़े सुंदर-सुंदर अलंकार उनकी रागी से निस्त हुए हैं। उपमा के विचार से लखमी का हम हरियाने का कालिदास कहें तो तनिक भी अतिशयोक्ति न होगी। उनकी उपमाओं का साधकता एवं पूर्णता श्रोताओं का मनमुग्ध कर देती थी और वे चित्र लिखे से रह जाते थे। उनकी उपमाओं में उपमेय और उपमान में एक निराली सादृश्यता है जो बहुत ही कम स्थानों पर देखने का मिलती है। उनकी शब्द-योजना इतनी सुंदर, कल्पना इतनी मार्मिक, काव्य प्रवाह ऐसा अजस्र एवं गतिवान् और चित्रण इतना आकर्षक है कि सहसा मुँह से वाह ! वाह !! निकल पड़ता है। वह मानवी कवि नहीं, वरन् दैवी कवि जान पड़ता है। उसकी कृतियों के द्वारा कभी हम वास्तव्य में, कभी शृंगार में, कभी करुणा में और कभी अद्भुत रस में अपने को डूबता पाते हैं। परन्तु श्रेय है कि श्रवण के साग में जावन की उच्चता एवं गालानता के लिए आग्रह कम हो गया है। एक उद्दाम और नग्न शृंगार ने सागियों की आर्त्ता पर निर्लज्जता का पदा डाल दिया है। इनके साग जीवन के उपयोगी तत्वा से रहित हैं। एक सस्ते प्रकार के शृङ्गारिक पक्षा पर इनकी दृष्टि है। ग्रामीण भाली भाली जनता पर इसका सुप्रभाव पड़ रहा है। हास्य भी बड़े निम्नकोटि के हैं। इनमें न तो हास्यात्पादक घटना की विचित्रता है, न आश्चर्यजनक सभापण और न ही मानव जीवन के गम्भीर क्षणा का प्रश्न है। इन्हें हम केवल स्कूल आप स्नेहल कह सकते हैं। परन्तु यह कह देना भी आवश्यक है कि यह पृथित प्रवृत्ति चाहे प्रबल हो रही हो किन्तु फिर भी वह सागियों के साग काफ़ी सतोषजनक हैं।

प० लखमीचंद युग के सागी आज भी अपनी प्रतिभा का प्रकाश फैला रहे हैं। प० लखमीचंद इस लोक को छोड़ चुके हैं। इस आधुनिक कड़े के सागियों को सूची यह है —

१	प० मागेराम	गाय	पुरपाखचा
२	सुलतान	"	राइद
३	चन्दन	"	बजीणा
४	जमुआ मीर	"	मुनारी
५	धनपत	"	निदाणा
६	प० राय किशन व्यास	"	नारनौद
७	प० रामानन्द आजाद	"	गोरिया

इस अंतिम दौर में वाद्य यंत्रों में हारमानियम भी सम्मिलित हो गया है। अत्र ६ तग्न होने हैं, शामियाना लगा होता है, तग्न पर जायम और सफेद चादर बिन्धी जाती है। तग्न के ऊपर नायक के लिए कुर्सी भी जाती है। इस दौर में नाचने वालों की संख्या बढ़कर ६ हो गई है।

यहां पर उन सांगोता के नाम देना भी असामयिक न होगा जो जनता में अपना प्रतिष्ठा स्थापित कर चुके हैं और जिनमें सामाजिक उच्च भावनाएँ मिलती हैं।

नाम सांगोत	खेगक	गाय
१ सीला सेठानी	प० नेतराम	समाल
२ सारठ	दापचन्द	सेरीगाएडा
३ बनपर्व	प० सरूपचन्द	दिखोर गेड़ी
४ चार पर्व	"	"
५ बैराठ पर्व	"	"
६ उत्तान पाद	"	"
७ हरिश्चन्द्र	"	"
८ नल-दमयन्ती	प० लखमाचन्द	जाटा
९ मोराबाई	"	"
१० सत्यवान-सावित्री	"	"
११ पुरजन और पुरजनी	"	"
१२ शाही लकड़हाथ	"	"
१३ सेठ ताराचन्द	"	"
१४ पूरन भगत	"	"
१५ रूप बसन्त	प० मागेराम	पुरपाण्ची
१६ नर मुलतान	चितरु मिस्तरा	सापलागठी
१७ अजना	प० माइचन्द	बधैल
१८ हर्षीकृत राय	प० मानेराम	पुरपाण्ची
१९ मोहना देवी	प० रामानन्द आजाद	गोरिया ।'

सांगो में, भजनीकों की भांति, ताल का पुनरावृत्ति करने वाले का 'साजदे' या 'देकिया' कहते हैं। 'साजदा' का सम्मिलित स्वर एक अनुपम समों बाध देता है। इस बाध में मुख्य गायक को विश्राम मिल जाता है। दूसरे, आताओं का विचारधारा में विघ्न नहीं आने पाता और रस चर्चण बराबर बना रहता है।

ख हरियाना लोक नाट्य और सिनेमा

हरियाने के लोक-नाट्य का महत्व जान लेने पर तथा साहित्यिक नाटक से अन्तर देख लेने पर सिनेमा से भी इसका अन्तर स्पष्ट कर लेना समीचीन होगा। सिनेमा मनोरजन के आधुनिक साधनों में से एक है। यह एक वैज्ञानिक देन है। जहाँ हमारे मनोरजन के साधनों में ग्रामोफोन, रेडियो ने अपना अद्भुत स्थान बना लिया है वहाँ सिनेमा (चलचित्र) भी हमें अच्छा लगाने लगा है। उसकी बहुरूपी वेशभूषा, रङ्गीन दृश्यावलिया, पर्यंत, पाताल, समुद्र, समीर के रोमाचकारी दृश्य, दर्शक पर बरबश अपना प्रभाव डालती हैं किन्तु इतना होने पर भी वे सभी वस्तुएँ जो चमकती हैं सोना नहीं हैं। वहाँ पर हमारे असंस्कृत दर्शक को एक बड़ी भारी कमी अनुभव हाँती है यह कमी उस अवस्था में तो ग्रसह्य हाँ जाती है जब अवर्णित बातें कल्पना के पर लगाकर उतरती हैं क्योंकि हमारे ग्रामीण दर्शक के पास तीव्र कल्पना शक्ति नहीं है। वह जन्म से सदा प्रकृति के खुले वातावरण में पला है जहाँ प्रत्येक वस्तु अपनी राम कहानी अपने आप सुनाती है। कल्पना की यह कमी ग्रामीण दर्शक को रस में विष मिलाती प्रतीत होता है। वह ऊँच उठता है। उसे तो दीपचन्द, लखमा और मागेराम व धनपत की वे रागनी पसन्द हैं जहाँ उसने कल्पना लोक की सहचरी उसके दृष्टि पथ में बैठी अपनी भावभंगिमा एव हाव भाव से उसे बराबर प्रत्युत्तर देती रहती हों। इसी कारण, नगढ़ पर चोत्र पढ़ी कि ग्रामीण आबाल, वृद्ध पुरुषों के मदमाते दल टिड्डी दल की भाँति घरों से निकल पड़ते हैं। साग का दगल आरम्भ हाँ जाता है।

साग की सिनेमा के ऊपर एक अन्य विशेषता यह है कि साग में छाया चित्र नहीं होते। अस्थि चर्ममय पुतले अपने मनोभावों को प्रकृति सुलभ रीति से अभिव्यक्त करते हैं। ये गुड़ का स्मरण कराकर भीठा मुँह नहीं कराते। ये तो साक्षात् गुड़ की ढली खिलाते हैं। इन ग्रामीण दर्शकों की दृष्टि में लीला चटनिस, सुरैया, नरगिस, मधुबाला, नलिनी जयत और कामिनी कौशल आदि के उत्कृष्ट नाटकीय भावाभिव्यजन का कोई मूल्य नहीं है, यहाँ तो मूल्य है निहालदे, मारू, सीला, लीलाचमन, रूपकला आदि के शकृत्रिम नाट्य कौशल का जो ग्रामीण वातावरण से श्रोत प्रोत है तथा जो सीधी सादी भाषा में दर्शकों का मनोरजन करता है और उनकी जेबों से सहसा 'रपैय्ये', बिखरवा देता है। वस्तुतः इन ग्रामीणों का आनंद यर्ब क्लास और फर्ट क्लास में बँटा नहीं होता है।

रसानुभूति के लिए सुपरिचित भाषा का होना जरूरी है। वह ऐसी हो

कि श्रोता के भाव तानुओं को प्रथम आघात में ही भंगृत कर दे। ये गुण और विशिष्टताएँ इन सागों में हैं। इन्हीं कारणों से यह शैली वैज्ञानिक साधनों में सुसज्जित सिनेमा जैसा छाया लोक से बाजी लिए हुए है।

घ हरियानी लोक-नाट्य की विशेषताएँ

हरियाना व लोक-नाट्य का विहंगामलोकन गत पृष्ठा में हुआ है। अब हम इसका कतिपय विशेषताओं पर दृष्टिपात करेंगे।

१ हरियानी लोक-नाट्य एक समुदाय या समाज का वस्तु है। उसमें व्यक्ति विनाय का कल्याण और अनुभावा की अनुसृति नहीं होता। प० लक्ष्मीचन्द व हरियानी साग उनका अपने व्यक्तित्व से पूर्ण नहीं हैं उनका ता उस 'लगामा' का व्यक्तित्व है जो हरियाने का जनता का प्रतिनिधि है और जो जनता का मूक भावनाओं का मुखरित करता है।

२ हरियानी लोक नाट्य व लोक-नाट्य की वह विशेषता भी उपरिधत है जिस विशेषता से लोक-नाट्य का गीति नाट्य कहा जाता है। अर्थात् इसमें पद्य की प्रधानता है। हरियानी साग इसी पद्य प्रसाद से आविष्ट है और जब तक रागणी की सरसता एवं उपादेयता बना रहगी, वे भी जन मनोरजन करते रहेंगे।

३ हरियानी साग खुले में होता है। तब्यता का ऊँचा मंच बनाकर उसके चारों ओर नौसों का घेरा बना लिया जाता है। पट परिवर्तन का विधान नहीं होता। प्रवेश व प्रस्थान आदि सब रागमंच पर दर्शकों के समक्ष खुले में होते रहते हैं। दर्शक मंडल इस मंच के तीन ओर बैठ जाता है।

४ हरियाने के सागों में कोई अंक आदि नहीं होते। इसमें दृश्यों का ताँता बधा रहता है। समस्त कार्य क्रम पूर्णक हाते रहते हैं। गीत, नृत्य और बीच में वाता भी चलती रहती है।

५ हरियानी सागों में सकेतो का बहुलता से प्रयोग होता है। इससे यह लाभ होता है कि अनेक चारों बिना शब्दों का जामा पहने ही अभिव्यक्त हो जाती हैं। इस सकेत विधान से कई त्रुटियाँ पूरी हो जाती हैं। सच पूछा जाये तो यही तत्व साग में अङ्गनिमता भर देता है।

६ हरियानी लोक नाट्य का कोई एकसा रूप नहीं है। इसमें पौराणिक, धार्मिक, ऐतिहासिक सभी कथाएँ प्रदर्शित की जाती हैं और का जा सकती हैं। प्रेम-कथाओं व विरह या सयोग शृंगार व ममस्पर्शी अभिनय के बीच

म या तो उपदेशात्मकता के दर्शन होते हैं अथवा सामाजिक द्रुटियों पर आक्षेप किये जाते हैं या अभिजात वर्ग पर व्यंग्य कसे जाते हैं। मास्टर रामानंद जी की रागणी का एक अंश जिसमें एक सामाजिक चित्र आया है, यहाँ दिया जाता है —

“तू पलटण म चाल पढ्या इय कौण मेरे लाडलडावैगा ।
तेरे आप्पे लाडलडै जा जिय तेरे घर मनीआडर आवेगा । टेक
तेरे मनीआडर की नहीं जरूरत म नै चाहवते दाम नहीं,
सो अई गुजारा बयूर होगा करने नै खुड़ काम नहीं ।
कोइ और मजूरी टोहल्ले यो उज्जद होर्या गाम नहीं,
म्हारे रेती बपारी बद् पड़ी रौ, जिय तक घरसे राम नहीं ।
भितै पाखी की जगहा बोखामे, कोइ लम्बरदार सतावैगा ।
तेरे आप्पे लाडलडै जा जिय तेरे घर मनीआडर आवेगा ॥”

रागणी की इस एक कली में ग्रामीण पति-पत्नी की कोमल भावनाओं का बढ़ा सुन्दर वर्णन हुआ है। किसानों को लम्बरदार की उगाही-पताई की इतनी चिंता है कि वे घरबार छाड़ने के लिए विवश हो जाते हैं।

७ हरियानी सागा में कथानक प्रायः ढीला ढाला होता है। पूर्वार्द्ध में कथा शिथिल गति में बढती है। उत्तरार्द्ध में यकायक द्रुतगति आ जाती है जो अस्वाभाविक रूप से घटनाओं का ढनेलती चलता है किंतु विशेषता यह भी है कि इस विधान में दशकों के मनोरंजन में कोई विघ्न नहीं पड़ता। कथा तो पूर्वत सुपरिचित होती ही है। बस तृप्ति मिलती है रस-वर्षण से, घटनाओं के सहसा उतार चढ़ाव से। ‘निहालदे’ के साग में कथा तो पूर्व शत है। उसने परवाना से भी परिचय है। बस आनंद आता है, घटना के घटन में।

८ हरियानी साग मडलियों का प्रत्येक सदस्य प्रायः प्रत्येक पात्र का कार्य कर लेता है। वह ‘देवर रैडी शल’ की भाँति हाता है। निर्देशक नाम का कोई पृथक् व्यक्ति नहीं हाता। साधारण अभिनेता ही निर्देशक हो जाता है और दूसरे क्षण वहाँ निर्देशक एक अभिनेता। मडली में एक कौटुम्बिक भावना हाता है। कोई व्यक्ति किसी भी उत्तरदायित्व को निभा सकता है। जो अभी दासा है वह दूसरे क्षण रानी भी बना सकती है।

अतः हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि हरियाने के लोक-नाटकों में समाज की सामूहिक भावना मिलती है। वे व्यक्ति विशेष से रचे जाकर भी व्यक्तित्व की छाप से मुक्त हैं।

पष्ठ अध्याय
प्रतीर्ण साहित्य

प्रकीर्ण साहित्य

पूर्व पीठिका

गठ पृष्ठी में हरियाना व त्रिस लाख-साहित्य—गाथ, प्रपञ्च गीठ (गाथा) कथा आदि—का सम्यग् अनुयाजन तथा अध्वयन हनने किना है उसमें विलार व लिए स्थान है। उसमें विर बड़े-बड़े, भावनाएँ व्यापक एव इतिवृत्त बाटेल हैं। इस अध्याय में पाठकों का हम उस उद्यम व प्रवृत्त करतें हैं जहाँ चमत्कार का प्रकाश है स्वाभाविकता का हरीतिना है और आडम्बररहानता का गौरव है। वहाँ न टगड़ का मय है, न कल्पना का भूलभुलैयाँ। वह लाक-वाहन्य व वह सौन-सप्रह है जहाँ प्रत्येक बात स्थूलता का परे फेंक सूक्ष्म रूप न सिद्ध कर देता है। नै है तो छाने परन्तु है नाविक के प्रभावपर तार। ये किमानो, प्रानोर्यो एव सत्कृति के प्रमाण स धाँचत लोगा की वह वाथा है जिसका सहाय पाये बिना कवि की प्रतिभा प्रमा कुण्ठित रह जाती है। इसमें शुद्ध-वाचना है, सालकागता है और है एक विशय प्रकार का लवयता एव चटपटानन। इस साहित्य व श्रंग है—लाकृति, मुशवर, पठलियाँ, सूक्तियाँ, शिशु बायीं विलास, मल्हौर (सिधुइ) एव आलना आदि। हमने इसे 'प्रकार्य साहित्य' नाम दिया है। इस प्रकीर्णवर्गीय साहित्य का मधुरा लाकसाहित्य (Pleasant Surprise) नाम भी कुछ लागों ने दिया है।

क लोकोत्तियाँ (कहावतें)

माया अथवा बला में सौन्दर्य और सौष्ठव लाने के लिए लोकोत्तियाँ और मुहावरों का प्रयोग अनिश्चित काल से चला आ रहा है। उनके व्यवहार में प्रयागकता का एक विचार परम्परा का सहाय मिल जाता है और उसको इस बात का अनुभव होने लगता है कि इस प्रकार की परिस्थिति पहिले भी आ चुकी है जो उसको सामाजिकता का अधिक बल प्रदान करता है और वह सोचता है कि पहिले भी लोग उसी प्रकार अपने विचारों का प्रकट करते आये हैं। पहिले हम हरियाना प्रदेश का लोकोत्तियाँ (प्रायावाण) का अध्वयन करेंगे, तदुपरान्त मुहावरों का।

सदा से सम्य, असम्य किंवा अर्द्धसम्य सभी बातियों में लोकोक्ति अथवा कहावतों का प्रयोग देखा जाता है। जीवन की समस्याएँ कहावतों का जन्म

देती हैं। जीवन अनेकानेक समस्यात्मक घटनाओं का सकलन ही तो है। प्रत्येक अनेक ऐसी कथावर्तों जिनकी पृष्ठभूमि घटनापरक है। बड़ी-बड़ी समस्याएँ, अनुभव तथा जीवन जगत के जटिल प्रश्न जब तीव्र, लघु एवं चटपटे वाक्यांशों द्वारा निरूपित होते हैं तो प्रवाद की सृष्टि होती है। डॉ० चटर्जी ने एक स्थान पर कहा है "जनता की समवेत अभिज्ञता (अनुभव) तथा विचार कथावर्तों में उपलब्ध होते हैं।"

कथावर्तों का क्षेत्र बहुत विस्तृत है मानव जीवन की कोई ऐसी गतिविधि नहीं जो इसके चक्र से बाहर हो। कथावर्तों में जीवन के सभी मुख दुःख, दर्प, विषाद, रुचि व ग्लानि विविध वर्णों में समाहित होकर मिलते हैं। जातियों के आचार विचार, रीति परम्परा आदि के अभिजन में कथावर्तों ने सदैव हाँ सहयोग दिया है। देश भेद के आधार पर के पीछे मानव मानव एक है। मानव प्रकृति सत्य एक है, इसकी पूरी पूरी छाँच हमें लोकोक्ति साहित्य के तुलनात्मक अध्ययन से मिलती है। वाच्यार्थ में भिन्न होती हुई भी कथावर्तों में भावार्थ में अभिन्न हैं।

लोकोक्ति साहित्य इतना ही पुराना है जितनी मानव भाषा। लिखित साहित्य के प्रादुर्भाव से पूर्व इसका जन्म हो चुका जाता है। प्रत्येक जाति के ज्ञानपूर्ण वाङ्मय अथवा नीति साहित्य (विज्जम लिटरेचर) से इसी साहित्य का अभिप्राय लिया जाता है। संसार के सभी प्राचीन ग्रन्थों में ज्ञानपूर्ण साहित्य की विशद सामग्री अध्येता को अपनी आर आकर्षित करती है। पंचतंत्र व हितोपदेश की लोकोक्तिमूलक कथाएँ, चाणक्य सूत्र, बौद्ध साहित्य, प्राकृत तथा संस्कृत के अथर्वनामि विषयक ग्रन्थ इन कथावर्तों से भरे पड़े हैं। ऋग्वेद तथा अथर्ववेद के अनेक पूर्णापूर्ण ऋक्, पाद या अर्द्धपाद स्वभावतः लोकोक्ति या कथावर्त कह जा सकते हैं। सुक्तिया जिनका वर्णन आगे करेंगे, एक प्रकार की कथावर्त ही हैं। इतना ही क्यों भारतीय आधुनिक भाषाओं के प्रख्यात तथा अज्ञातनामा कवियों के कितने ही दोहे, पंक्तियाँ, चौपाइयाँ, कवित्त जनता के हृद्गत भावों का प्रतिध्वनित पर लोक प्रिय कथावर्त ही बन गए हैं। ऐसी कथावर्तों की गणना करना भी कठिन है। इस प्रकार हमें असंख्य कथावर्तों अपने लिखित साहित्य से उत्तराधिकार में मिलती चलती हैं। परन्तु लिखित साहित्य में प्रमावोत्पादकता तक तक नहीं आ पाती जब तक कि वह जन प्रवादों को प्रयोग में न ले लें अथवा जन प्रवादों का प्रवाद उसे न मिल जाये। यह कहना अतिरिक्त न होगा कि

विश्व प्रसार नमक के बिना मञ्जन रम्यहीन हो जाता है। ठाक उमा प्रसार भाषा या बर्ला का प्रभाव भा बिना किसी मौने की कशानत के पीछा पद धारा है।

कहावती की उत्पत्ति में सिधा एक ध्वनि का हाय नहीं होता। यद त एक निश्चल जन मनदाय की न्नीहृति में धाम लेता है। साधारण रूप में कहावन एक रूपन है, एक उक्ति मात्र है किन्तु यद लाक्षणिक तम। गिन। वाच्य। बन्कि उम लक्ष अर्थात् उक्ति बना ल। पर लोक अनुभव सिधा वाक्यद्वय द्वारा उक्ति-चिन्तन प्रगत कर जाता है तब कहीं उसका लाक्षणिक नानकरण होता है। लार्ड रल्ल न इसी अर्थ में कहावन का, 'प्रभुता का बुद्धिमाना और एक का चमत्कार (The wisdom of many and wit of one) कहा है। सयका सम्पत्ति बनने य-य का लाक्षणिक अथवा लौकिक मत्प बन। कथा एक व्यक्तित्व का चतुर्धा से सयक, आरुपित कर सको वाला रूप प्राप्त कर लेता है, तब कहावन का जन्म होता है। उक्ति चातुर्य हा कहावन का चरित्र जनाता है। यह चरित्रजनन हा लाक्षणिक का अनुप्राणित शक्ति है। यही उसमें गत्यात्मक तत्व है। कहावती का प्रादुर्भाव सग होता रहता है। व भाषाएँ सचनुच सामान्यशालिनी हैं जिनकी लाक्षणिक निधि समन है।

साहित्य का किसी भा प्रकार का परिभाषा का ककार शृण्वना में वाचना कठिन होय जाता है। परन्तु फिर भा विद्वानों द्वारा दा गई लाक्षणिक का परिभाषाओं का वाच लेना अत्रावर्गिक न हागा। सिध्व क विद्वाना ने लाक्षणिक (कहावत) का परिभाषा अनेक प्रकार से दा है —

- १ जनता में निरन्तर व्यवहृत होने वाला छोट्टे-छोट्टे कथन—गाम्भन
- २ एक का सुन विषय अनेका का चातुर्य सन्निहित है—लार्ड रल्ल
- ३ लक्ष-साहित्य का एक प्रकार वा साधारण धर्मलू वाक्य न रूप में बीजन भा तीक्ष्ण आलाचना कर। एनसाइक्लपैडिका ब्रिटेनिका (ब्रिटिश विश्व-क २)

४ जनता में प्रचलित कोई छोट्टा या सारगर्भित कथन, अनुभव अथवा निरीक्षण द्वारा निश्चित या सबका ज्ञात किसी मन्व को प्रकट करने वाला कोई सचित उक्ति।
—'आक्सफोर्ड इंगलिश डिक्शनरी।'

१ श्री साहित्यप्राम वैश्याव, 'गढ़वाली भाषा क पाठ्य' नामकी प्रकाशित पत्रिका सवत् १९६४ पृष्ठ १०३ ४।

ध्यान नहीं दिया जाता। इसी एक भाव को व्यक्त करने वाली यदि हम तीन लोकोक्ति—एक हिन्दी जगत से, दूसरी संस्कृत वाङ्मय से तथा तीसरी अंग्रेजी प्रोवर्ब्स से लें तो हमें भाव-साम्य का स्पष्ट पता चल जाता है। यथा—हिन्दी जगत इस भाव का अपनी सीधा सी अभिव्यक्ति में या कहेगी 'घर का जोगी जागना आन गाव का सिद्ध', संस्कृत का पंडित 'अति परिचयाद्ब्रह्मा भवति' रूप देगा और अंग्रेजी में यह भाव इन शब्दों में बधा मिलेगा कि 'फेमलियरिटी ब्राइस कटेम्प्ट'। भिन्न काल, भिन्न देश, भिन्न भाषाओं में कहा हुआ यह भाव एक मुग्न विनिश्चय का ही लगता है। संस्कृत और अंग्रेजी के शब्द तो माना एक ही व्यक्ति के कथन से प्रतीत होते हैं। एक उदाहरण और लीजिए—हरियानी में एक कहावत है—'उजला उजला सत्र दूध काया'। यह अंग्रेजी के इस वाक्य की जोड़ी का प्रतीत होता है। 'आल दै ग्लिटरम् इज नाट गाल्ड'। एक और कहावत है कि 'गाज मेरी मगणी कल मेरा व्याह। टूट गई टगड़ी, रह गया व्याह ॥' इसमें मानव का चेष्टाओं पर देखकर का अभिव्यजन हुआ है। ठीक इसी अर्थ को व्यक्त करनेवाली अंग्रेजी की यह कहावत है, "मैन प्रापजेज गाड डिस्पोजेज।" आदि।

लोकोक्ति साहित्य का महत्व

मानव के अध्ययन, उसकी भाषा, साहित्य तथा संस्कृति के अध्ययन के लिए लोकोक्तियाँ एक अमूल्य साधन हैं। भाषा की सुंदरता, सरसता, एवं प्रभावशालिता का बहुत बड़ा भाग कहावतों को मिलेगा। इनमें 'गागर में सागर' भरने का क्षमता होती है। भाषा में एक जादू सा आ जाता है। एक तीक्ष्ण व्यंग्य होने पर भी सुनने वाला हँस नहीं करता। यथा—किसी परमुष्पापत्री व्यक्ति का उल्हाहित करने पर भी यदि वह अपनी प्रवृत्ति को न छोड़े, तब यह कहना 'दा पर बत्ती' मागनी, पर चलना मसाल की चादनी।' दा घर और अधिक भिन्ना मागनी पड़े पर चलेंगे मसाल के प्रकाश में। कितना शिष्ट एवं गम्भीर व्यंग्य है। इसी प्रकार किसी सम्पन्न व्यक्ति के पास पहुँचकर मन की अभिलाषा पूरी न हो तो यह कहना 'पहुँचे समन्दर पै घोषा हाथ लगा' कितना साहित्यिक व्यंग्य है। हिन्दी के प्राचीन तथा अवाचान जितने सिद्धहस्त लेखक हैं उन सबने काव्य का बहुत सा प्रभाव लोकोक्ति में जमा है। सूरदास की गोपिया ऊधो स कहती हैं।

"प्रकृति जोड़ जाके अंग परी" स्वान्न पहुँच कोटिक जा लागै सधि न काहू करी।" इसमें श्वान पुच्छ की नित्य की चक्रता से एक चुमता भाव व्यंग्य व्यक्त किया गया है।

लाकोक्ति का साहित्यिक दृष्टि से भी कुछ कम महत्व नहीं है। कई विद्वानों ने तो लाकोक्ति नामक अलंकार ही पृथक् माना है। इसने तो यह प्रगट होता है कि लाकोक्ति साहित्यिक भाषा में भाषा के काम करती है। एक मुहावरे के प्रयोग से हम यह कह सकते हैं कि लाकोक्ति साहित्य में मुहावरे का काम करती है।

डा० बासुदेव शर्मा अमबाल ने लाकोक्ति साहित्य में महत्व का प्रतिपादन करते हुए लिखा है कि "लाकोक्ति का मानवी ज्ञान का चारों ओर घुमते हुए रूप है। अनन्तकाल तक घातुओं का तगकर रूप-रश्मि नाना प्रकार के रत्न उपरालों का निमाण करता है, जिनका आलाक स्या द्रिष्टव्यता रहता है। उसी प्रकार लाकोक्तियाँ मानवी ज्ञान का घनाभूत रत्न हैं, जिन्हें बुद्धि और अनुभव की किरणों से पूरनेवाला ज्योति प्राप्त होती है।" संक्षेप में हम यह कह सकते हैं कि लाकोक्ति का अनुभव का भार है। लाकोक्ति भाषा के रूप का संयोजन इन उभे अंगों से प्रमाण (प्रतीति) प्रदान करती है। लाकोक्ति साहित्य साधुभीम साहित्य है। यह जिनके मुहावरे का ही मोरम है, उसका है, जिसका कर्ण सुहर में पड़ा है उसका भी उतना ही है। लाकोक्ति का महत्व इस बात से भी जाना जा सकता है कि जब हम अपने साहित्य सवियों की लोक प्रियता देखना होती है तो हम इसी कसौती पर काम कर देखते हैं कि अमुक साहित्यकार की कितनी उक्तियाँ ने जनता का कण्ठ पर अधिकार पा लिया है तथा उसी कितनी उक्तियाँ जनता का कण्ठहाज बन गई हैं। अतिसुख लोकोक्तियाँ साहित्य का एक महात्वपूर्ण अंग हैं।

लोकोक्ति साहित्य की विशेषताएँ

लाकोक्तियों में अनेक विशेषताएँ देखने में आती हैं जिनमें से कुछ इस प्रकार हैं —

लाकोक्ति की पहली विशेषता है 'लाघव'। अरबी में एक बड़ा सामान्य बात कही गई है—'भातरला व दल्ता' अर्थात् थोड़ी सी भी सामान्य या युक्ति पूर्ण कही गई है, उत्तम है। संस्कृत में भी 'मित्तं च सारं च वज्रादि वाग्मिता' तथा 'सुलभा च माना बहुला गुणश्च' के द्वारा कथा की इसी विशेषता की ओर संकेत किया गया है। ग्रीक निवारकों में भी लाकोक्ति या विशेषता बखान करते हुए कहा है—'Multum in parvo' ; e Much in little, वास्तव में लाकोक्ति में लाघव ही एक ऐसा गुण है जो इसे सर्वप्रिय बनाये हुए है। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि लोकोक्ति का लघुत्व ही उसमें उद्वेग ला देता है। देविण 'गीतिका के भीतर' यह उक्ति देखना

तीन शब्दों से बनी है जिसका अर्थ है मनुष्य की प्रसिद्धि दो कारणों से होती है—धर्मशाला आदि भवन निमाण कराने से या गीता में गाये जाने से। किंतु इसका यह तात्पर्य नहीं है कि लोकोक्ति में सर्वत्र यह गुण हो। इसके विपरीत कहावतें बड़ी बड़ी भी होती हैं यथा—‘धिया की मा राणी। बुढ़्यात भरेगी पाणी।’ आदि में वाक्य का वाक्य लाकोक्ति कहलायेगा। कभी कभी तो वाक्य को छोड़ पद के पद लाकोक्ति की परिधि में निवास करते हैं। यथा —

फस की आग, उधार का राणा।
 बरत पड़े पै कमा न पाणा,
 तिन उठ उठ घर घर जाणा। आदि।

दूसरी विशेषता यह है कि लोकोक्ति में अनुभव और निरीक्षण का निचोड़ हाता है जो इसे सत्य बना देता है। सचाई कहावत की आधार शक्ति है। प्रयोगकता ने उस अनुभव से जांच लिया है और अपने निरीक्षण पर पूरा पाया है। एक कहावत देखिए, “कानरा के डेरा में टूका का याव।” कजर एक छाति है जो मागकर अपना निवाह करती है। उनके डेरों के अंदर जमान जायदाद के भगड़े तो हाते नहीं है। बस जो बासे फूसे टूक मिल जाते हैं और बच रहने हैं उहीं के ऊपर भगड़ा होता है। यह कहावत इसी बात का लक्ष्य करती है जिसमें दर्शक का अनुभव एव निरीक्षण है। यह तो इसका वाच्यार्थ है। सत्त्वार्थ होगा ‘तुच्छ पुरुषों के तुच्छता के भगड़े।’ इसी प्रकार एक अन्य कहावत है जिसमें कटु सत्य कहा गया है—“मूसल का मिद में के भीज्जे से” जो मूसल को जानते हैं उन्हें इस अनुभव का ज्ञान अवश्य होगा कि घासे से मूसल पर कोई प्रभाव नहीं होता अथात् निर्लज्ज पर बातों का कुछ प्रभाव नहीं पड़ता।

तीसरी विशेषता लाकोक्ति में है—घरेलू भाषा। या तो समस्त लोक साहित्य ही घरेलू भाषा में प्रवहमान होता है, परन्तु कहावतों की भाषा सरल घरेलू और दिन प्रति दिन की जानी-पहचानी होता है। लोकोक्तिया वास्तव में जनपदीय बोलियों की अपनी वस्तु हैं। साहित्यिक भाषाओं में अपनी-अपनी शालियों से लाकोक्तिया उधार ली जाती हैं और साहित्यिक क्षेत्र में वे बहुत दिना तक अलग अलग रहती हैं। “गजी और राडा में जुह्लावादी”, अपनी परिस्थिति का विचार किय बिना अव्यापार करने वाल न प्रति कहावत के ये शब्द कितने सार्थक एव कितने घरेलू हैं। इसमें घरेलू वातावरण और साधा-साधा घरेलू भाषा है। अन्य कहावतें और देखा जा सकती हैं। “म्हारी मुग्गा म्दार ते गुग्गू”, “काणी के आन की कमर से” आदि घरेलू भाषा में

पर के वातावरण का एक चित्र है "देहरा आहूटा घन पिरे । लीप्सा पोचा पर विने ।" ऐसा ही "हाना क पान्द्रे विरकता का के काम" मुहावरा है जिसमें प्रार्थीय वातावरण मुद बाल रहा है ।

चौथी विशेषता है कि लाकविन साहित्य अनाम है । इसके रचयिता का पता नहीं है । ये नाम का ह्यान मे शून्य है—“नेतो खनम मत्ती, वरना रेत्ता की रत्ता”, कृपि कार्य स्वामी क द्वारा अन्ध्या हाता है, नहीं ता यह व्यर्थ हागा । कदात कय वहाँ और किसरे द्वारा कनी, पूषतया अज्ञान है ।

अतिम विशेषता इसका लाकप्रियता एव लोक-चलन है । कइ उक्ति चाह कितनी हा मनाहाय क्यों न हा वह तय तक लोकरोक्ति नहीं बन सकती जब तक कि लोक उमे अपनी न घनाले । लाक के अनाना से हा उसकी सहा लाकाक्ति होती है ।

डा० सन्धेन्द्र ने लाकाक्ति में सतुक और अन्योक्ति अश को भी विशेषता माना है । उनका तक है कि तुक से कदात का लयाय पिल उठता है । किन्तु ऐसी भी अनेक कदावने हैं जहाँ लयाय होता ही नहीं है । दूसरे अन्याक्ति अश का भा पृथक् विशेषता मानने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि वास्तविक कदावता में अन्याक्ति ही उनका प्राण है । सामान्यार्थ की प्रतीति ही लोकोक्ति में गति देता है । विशय की प्रतीति हाती अत्यय है किन्तु दुद्ध हा स्थाना पर ।

वर्ण्य विषय

लाकाक्तिनो न वर्गीकरण की न ता कइ शैली ही निधारित की जा सकती है और न उन्हें किन्हीं वर्गों में समता न रखा ही जा सकता है । बान्धव में उस साहित्य का विषय-वर्गीकरण जा सर्वदेशीय एव सर्वकालान अनुभव पर आधारित है, और जिसमें मानव की समस्त परिस्थितियों स्थान पाती हैं, एक दुष्कर कार्य है । अभी तक अन्यान्य लेखकों ने इनक विषय और वर्गीकरण के माग प्रदर्शन करने का प्रयत्न किया है पर प्रयास म ये कहाँ तक सफल हो सके हैं यह एक आलोचना का विषय है । प्रस्तुत निबंध में हम इन्हें निम्न वर्गों में रखकर अध्ययन करेंगे—१ जानिपरक । २ स्थानपरक । ३ इतिहासपरक । ४ कृपि वषा परक । ५ नानिगमित । ६ व्यंग्यामक ।

लाकाक्ति साहित्य मनाया मूलोपर जा व्यास ने उनका विभाग—

१ सार्वदेशिक व मावकालिक, २ एक दश्रीय व एक कालिक क्रिया है। परंतु यह विभाग इतना सूक्ष्म है कि अध्येता का अधिक सहायक नहीं था। यह तो साधारण का रूपरेखा है। हरियानी में लोकोक्ति साहित्य उदात्त सम्पन्न है। इस प्रदेश में लोककृतियाँ प्रचुर मात्रा में पाई जाती हैं। साधारण जन (हालांकि पाली) अपने सभापण में लोककृतियों का प्रयोग करते हैं और अपने कथन का भरतल बनाते हैं। महिलाएँ भी अपने आह्विक व्यवहार में लोककृतियों का छोक लगाती हैं। बालक भी अपनी बुद्धि के अनुसार इनका प्रयोग करते पाये जाते हैं। तात्पर्य यह है कि वाणी का उपयोग करने वाले सभी प्राणी लोककृति का प्रसाद पाते हैं। अब हम अपने वर्गीकरण के अनुसार हरियानी कहावतों का अध्ययन करेंगे।

१ जातिपरक—लोककृतियों में निम्नलिखित जातियों के स्वभाव, आचार-व्यवहार और रीति नैतिकता के उच्च सत्य ढंग में निबद्ध कर दिया गया है। ये फुटकर सूत्र, दोहे अथवा गीत जाति विशेष के लिये छोटे छोटे पाठ्यग्रन्थ हैं जो उस जाति की मनोवृत्ति का चित्र पाठक के समक्ष उपास्थित कर देते हैं। कहावत है—‘अग्ने अग्ने ब्राह्मण’, अतः हम अपना जाति विषयक अध्ययन ब्राह्मण का लेकर ही आरम्भ करते हैं।

ब्राह्मण—लोक में ब्राह्मणों की ख्याति पराक्रमियता की ओर बहुत पहिले से रही है। इसी बात का हरियाना में इस कहावत द्वारा दिखलाया गया है, “शकर कर मकर कर, रीर पर शकर कर। इतने में चुलाल्यू, दड़ना का फिकर कर।” एक दूसरी कहावत में ब्राह्मण को इस प्रकार चित्रित किया है “ब्राह्मण होके आटे^१ जाहड़, बनिया होके करे मरोड़^२। जमींदार हाके लेवे फाड़^३, तीना का आया थावने^४ ओड़। काला ब्राह्मण, भूरा चमार। उल्टी मूछ मुनार, इनका न कोई इतवार ॥ नाम्मण कुत्ता नाणिया तीरू जात कुत्ता। बामन कुत्ता हाथी ये नहीं तीन जात व साथी ॥” हरियाने की एक कहावत में ब्राह्मण का सन बुराहिया का मूल कहा गया है—“काल नागड़ तै उपजै, अर बुरा नाम्मण तै हाय ॥ अकाल सदैव बागड़ प्रदेश से उत्पन्न होता है और दूसरों का अहित सदा ब्राह्मण में होता है।

कायस्थ—तीन जात में पाल, कायस्थ बागा कुकरा^५। तीन जात में घाला, नाइ ब्राह्मण कुत्तरा^६ ॥

१ तत्परता और शीघ्रता के साथ रीर पर शकर टालिष और उसे खाकर ज्याही में कुल्ला करू तो दखिया दीजिए। २ भरना। ३ अभिमान। ४ प्याज। ५ रोग। ६ मुर्गा। ७ कुत्ता।

जाट—शरीराने को मन्दता व मन्दति में जाट का एक महत्वपूर्ण स्थान है। जनसामान्य मानस ने उन्हे चारों ओर में परगा है। कहा जा सकता है कि लकार्ज न जाट का पूरा गबर ला है। जाट पर १ हमें मन में अधिक धनिया प्राप्त हुए हैं जिनका विवरण निम्न प्रकार है—

मदपुत्र आवै, बट पुधना आवै। जाट बडे टाट, जाट जाल गगा ॥ जाट भना दद श्र गदा ना द ॥ जाट भार बाणिया विद्याग मारे जाट ॥ जाट मर्या त्ति बाणिए, बिज तराम, हल ॥ गूमडा^१ श्रर जाटडा वध भल ॥ जाटडा श्रर^२ जाटडा श्ररगाते मारे ॥ गूजर टेक^३, प्रहार इट, जाट कहा सा कहा ॥ जाट^४ फिरगी, नौ गारा, लड़ जाट क दा छग ॥ विगुज किरा या जाट नै, सांका रहना तास। जाट डूरे^५ धाजा धार ॥ आगम बुद्धि बाणिया, पाच्छम बुद्धि जाट ॥ जाट^६ जाट जे माने, कर दे धाले माने ॥ सामन मानवे का धून म जोगा उन जाए जाट ॥ जाट^७ न वान गुनकरा ॥ पनाया जाट, गानह दूना जाट ॥ जाट र जाट हाडा जाट ॥

साग^८, मागी, कापद, मती मून धार टाट।
 ये दुर्धी कटे भन, श्रर सागवा जाट ॥
 जाट, जनाड, गानना, रंगारा^९, मुनार।
 कभी ना होंगे आपने मलूक^{१०} करा मी बार ॥
 जाट, रंगारा, नाटवा, धौय विरवा नार।
 ये चारों भूये भले, धाप^{११} करें विगार ॥
 तुर्क, जाट और मुश्कडा बदर भिड़ विद्याओ।
 ये दुर्धी ना आपने, भावे^{१२} दूध कठोरे पिळाओ ॥
 जाट रे जाट तरे मिर पे खाट।
 तेली र तेली तरे मिर पे कोरहू।
 व पडा जाट पडा नैमा, पडा जाट खुग नैमा ॥

१ फोड़ा और जाट को सदैव बाधकर रखना चाहिए। २ जाट और नैमा मदा अपने निजी लोगों को हानि पहुँचाते हैं। ३ गूजर प्रतिभापात्रक होता है, अहीर हर्षी होता है और जाट उदार होता है। ४ जाट फिरगी और नौ अंगरानो क भाय लड़ने का सामर्थ्य जाट क ले लड़कों में होता है। ५ जाट में बुद्धि कम होती है और वह जलधारा में तिन धौली दूब जाता है। ६ जाट मन आपस में मन्वन्था होत है और जब मिलते हैं तो हानि की समावना होती है। ७ जाट अहृषण होता है। ८ साग चावल। ९ जाति विशेष। १० मन्वन्वहार। ११ नृत होकर। १२ चाह, वंशक।

जाट कहै सुण जागसी, अड़े गाव म रहणा ।
 ऊ तिलाड^१ ले गइ, हा जी हा जी कइणा ॥

अहीर—अहार जाने सेती की तदवीर ॥ हीरे ने रेकारे^२ की गाल ॥
 हरि वे पीर^३ ॥ अहार खावे रामड़ी मतावे खीर ॥ अहीर ओठ पाखी^४, तीनों
 सत्यानाधी ॥

सभी जात गोपाल की, तीन जात वे पीर ।
 बिना गरज लरजे नहीं, बनक^५ वेसा हीर ॥
 लाप घास और अहीर के सरन म न रहिये ।
 टाकर और पहाड की टोकर भी सहिए ॥

गूजर— ऊजड़ देखे गूर वूदे, ढाल दकवे चंरागा ।
 रीर देखे बाछन वूदे, तीनों हो जायें राणी ॥
 गूर से ऊजड़ भली, ऊजड़ से भली उजाड़ ।
 जहा देखिए गूजर, तहा दोनिण मार ॥
 गूजर गोडा, जाड जड़^६, बड़ पीपल मिररात ।
 जाट हार्या नय जानिए, जय आखा नीर बलात ॥
 कुत्ता रिहनी दो, गूजर बादर दो ।
 ये घरा ना हो तो मुले किवाडा सो ॥

बनिया—आगम बुद्धि बाणिया, पाण्डम बुद्धि जाट ॥ बाणिया हाकम
 गजम पुदा ॥ बनिया मीत ना बेसवा सती, कागा हम ना राधा जती ॥ बनिया
 हाकम, बामन शाह । जाट पिवादा, गजन मुदा ॥ बाणिया के आट म, कै खाट
 म ॥ लड़ा बाणिया पड़े बराबर, पट्या बाणिया मर बराबर ॥ जाननहार
 जानिया, अनिया तेरी बान । गिनट्याने लाहु पिवे, पाखी पीवे छान ॥

बावन बुद्धि बनिया, तरेपन अकल तैता ।
 पवन अकल मुार मी, रुपये में दहे धेली ॥
 किसका टाकुर पालती, किसका मित्र बलात ।
 किसकी वेसा इस्त्री, किसका बनिया बार ॥
 ढीली धोती बनिया, उट्टी मूछ मुनार ।
 बिना तिलक के माहन, इन पत्थर क दे मार ॥

कुम्हार—कुम्हार का कुम्हारी पै उस ना चले, सटकणे^७ के फान

१ बिरली । २ अरे या रे भा अहीर क प्रति गानी का काम करते हैं ।

३ अहीर निगुरा होता है । ४ जाति विशेष । ५ बनिया, वेसा और अहार ।

६ घुच विशेष । शमी घुच । ७ कटरा ।

उठे ॥ दीला धाली बनिया, उल्टी मूँछ मुनार । मैं पैर कुम्हार के, तारा
प्रधल^१ पद्यान ॥ हड़ हड़ हम कुम्हार की । माली का क घुट^२ । ना जानू ए
गवली कह नल नैदुट ऊँट ॥

राघड (मुसलमान राजपूत)—सौ राघडा की एक मा ॥ राघड भल
नाल क, किहू नही राने । कि घाडे की पीठ, कि टग घाने ॥ राघड का
शाहना^३, गूजर पै मिथ्या । गार^४ की गती कुसल ना जान ॥

भाट— भाट भटिपारी घरग, चीनो जात कुजात ।
घाये का आदर करें, चलत पूछें ना बास ॥

धाणक—(भगी स मिलता पुलती एक जाति) धाणका न मा का
न बाह्य का । [किमा का सगा नहीं हाता ।]

ना^५—शामन कुत्ता हाथी य नहा चार जात न माथी ॥ तीन जात नै
घालें^६, नाद रामन कुनरा ॥ तल जले दरवार का नाद का न जाय ॥ नाइया
की से जनेत (बरात) म सारे टाकुर ॥ नाद किसका भाद, छोरा बेच ल्याथा
लुगाद ।

डोम—गाला^७ साइयत, अभा^८ धन, हूमा डेडा प्यार । गारे खेनी जाने
के चारा शम्भ खुआर ॥
तेली—तेली का तल जल, तेरा जी क्यू जले । बाचन बुघ बनिया
तरपन अफल तेली ।

मुनार—चानन बुद्ध बनिया, तरपन अफल तेली । चानन अफल मुनार
की, रुपय म दे है धला । काला ब्राह्मन, भूरा चमार । उल्टी मूँछ मुनार ।
इनना ना काइ इतवार ।

कोली—देना आइ हुनावणी, काली तै लटम लटा ॥
मेन—मेन मरा चित्र जाणिए जिन तीजा शले ॥

देश या स्थान परक—कहावतें पाठक के समस्त स्थान व देश विशय
के ज्ञान का पिढारा खोल देती है । ये प्रामाणिक निर्देशक का काम करता
हैं । इनम आलाच्य देशवासियों के स्वभाव का बखान भी मिलता है आर
मौगालिक बखान भी । यथा 'बागर म डागर बस' ऐसी एक कहावत है जा
बागर प्रदेश का सम्पत्ता-संस्कृति हीनता का ज्ञान करा देती है । 'देसा म्हे देन

१ काता, निरी, पूरा । २ हरे घने । ३ दरगना । ४ ग्राम समीप ।

५ हानि पहुँचावे है । ६ बाल के । ७ बकरा, भेड़ ।

हरियाणा, जित दूध दही का गाणा' हरियाणा प्रदेश का निरामिष प्रजात का श्वर समृद्धि का इसमें कथन है। इसी प्रकार गुजरात और मालवे की सम्पन्नता पर भी उक्तिकार की दृष्टि गढ़ है — सामन लगती सतर्वी, गर्जे श्राधी गत। हम तो जाग पी मालवे, तम जायो गुजरात।— इस दाहे की नायिका का पता है कि ये दा देश धनघायपूर्ण है। 'जिसने देवरी ना दिल्ली बोह उच्चा न दिल्ली' में दिल्ली के महत्व, सौन्दर्य एवं आकर्षण का वर्णन है।

३ इतिहास परक—लाकोक्तियां में हमारा इतिहास भी गिमन कर बैठा है। इतिहास का वह विस्तार तो यहाँ देखते म नहीं आयेगा परन्तु ये छानी छानी उक्तियां विगत युग की किसी मुख्यतम घटना का पाठक के सामने चित्रित करती हैं।

'कहाँ राजा भाज कहीं गागला तेली' भाग की अमहायावस्था को चित्रित करता है। 'घाडा राज श्वर बैला अनाज' इतिहास च उस युग की गाथा कटती है जब भीज म अश्व का बड़ा मान था और बैल किमान का पाव था। जब सना का विभाग आज की भौति वायुमना व नौसना के नाम से नहीं था बल्कि पदाति, अश्वाराही, गजन्नर, रथचर आदि नाम से था। हरियाणा प्रदेश की लाकोक्तियां में इन्द्र के हाथों सताये हुये इस प्रदेश का हीन दशा का ऐसा काव्यिक चित्र है जो पाठक को रामान्वित कर देता है। इस प्रदेश म एक दो नहीं अनेक दुर्भिक्ष पड़े हैं। प्रत्यक्ष अकाल अरुनी नई समस्या लेफर उपस्थित हुआ है। इन सब का ऐतिहासिक वर्णन हमें इन दुर्भिक्ष की उक्तियों में शत हाता है। चौतीसा नाम का अकाल इस प्रदेश म बड़ा भयकर हुआ था। उस ऐतिहासिक स्मृति का लोकमेधा ने इन शब्दों में अभी तक याद रखा है —

एक राटा का बैल रिना, और देसा बिक गया ऊँ ।
 चौतीसा ने रो दिया, भैस गाय का घट ॥
 चौतीसा ने चौतीस मारे, जिये वैस वसाई ।
 थोह मारे तरुही श्वर उमने छुरी चलाइ ॥

अकाल की भयकरता यहाँ तक थी कि एक रागी का बैल रिना और ऊँट तो एक पंजा में बिका। चातामा अकाल म भस गाय का बरा ही समाप्त हो गया। चौतीसा अकाल म चौतीस जातिया मर गइ, कवल दा जातिया शेष बचा—कसाई और बनिया। बनिया अपनी तराजू से कमाता और कसाई अपनी छुगे चलाता।

एक कथानक इतिवृत्त इन पत्तियों में भरा हुआ है। एक दूसरी कथाएँ हमारे परतंत्रण के इतिहास का बड़ा खूब मे व्यक्त कर रहा है—
'कमाने घाती आना, गाना टारी आला' भारतवासी कमाने हैं और कर रूप न गनवाल अंगरज सर त खाते हैं।

५ कृषिपरक—हरियाना प्रदेश कृषि उपजाया लागो त आयाद है। इमन जिनना आधक कथाएँ कृषिपरक मिलत, है उतना दूसरी गही। एसा हना सामाजिक हा है। कृषिपरक कथाएँ वे उचित्या हैं बा कृषि न ऊपर की गइ है अथवा किसान, गेन, तैल आदि का काइ अनुभव जन्ता व सामने गवनी है। वथा—'जा बनेगा सा काटगा।' इस कथाएँ का वातावरण कृषिपरक है और इसका आभेयार्थपूर्ण रूप स कृषिपरक है। भावाथ दूसरी कथाएँ का भाँति इपर उपर बा सकता है। उत्तम नेता, मध्यम बज। अम चाकरा मन्व निदान।" इम कथाएँ म कृषि व्यवसाय की भूरि भूरि प्रशंसा का गइ है।

हरियाने में अनेक ऐसी कथाएँ भी मिली हैं जो ठेठ किसान का साथी हैं। उनमें कृषि विपरक बड़े सुन्दर-सुन्दर उपदेश भरे पड़े हैं। एक प्रकार न इन कथाएँ में कृषि शास्त्र व पुत्र पढ़े पढ़ मिलेंगे। 'हल लगा पातल, त फूट गया काल।' गहरा जुताई करने में परल अच्यो हाता है। जेठ जग, माट हटी, सावन बाई न बाई।" यह कथाएँ 'अगाथा सा सगाथा' का हा रूपान्तर है। कसास की रोती पर एक उखगा है, नीलाइ (गलाइ) ता करा रुपता, करा चुनेगा कपता" छार्टी परल की यदि गलाइ गहाँ की ता कसास कुछ नही हागा। एक और कथाएँ में जुताई की गहिना मतलाते हुए कहा गया है—'बिआही दगा दे दे, पर बाह दगा ता दे।' विवाहिता पला घागा द सकनी है, परन्तु जुताइ (बाह) कभी धाला गही देता। बड़ी यथाथ उक्ति है।

इसा स्थान पर हम उन कथाएँ का भी देरा लोगा चाहते हैं जो हैं तो कृषिपरक हा पर तु उनम ज्या तशशास्त्रों के गभीर तत्व साहित्य हैं। ऐसी भा अग कथाएँ हरियाने म मिली हैं। उदाहरण —

उत्तर दिशा से पवन बहने पर अनाज की उत्पत्ति बहुत अधिक हाता है। इसी बात का महा कहा गया है। 'पौन चले उत्तरा, अनाज पाये ता उत्तरा' यदि उत्तर की पवन चलेगी तो अनाज इतना अधिक होगा कि कुत्ते भा न पायेंगे। 'दो सावन दो भादवे, दो कात्क, दा मा' टाडे टारे बेच क,

नाच विसावन^१ जा' ॥ 'सावन पैहला पचमी, जादल हो न बीज । बेचा गाड़ी बलदा, नापजे^२ खुल न चीज' ॥ 'आइ मेखे^३ और आला सूए एकमएक' । किसान ने प्रति एक उत्तम शिक्षा है कि चैत्रमास में पकी अथवा अधपकी सब को काटकर रख लेना चाहिए । फसल खड़ी रहने से हानि होती है । इस प्रकार की सकड़ा कहावतें इस लेखक का मिलता हैं ।

कृषिपरक कहावतों में तैल, गाय और भैंस का भी खुलकर वर्णन आया है । तैल किसान का शक्ति और गाय भैंस शरीर पुष्टि के साधन हैं । उनकी श्रेष्ठता का परीक्षा किसान को अपेक्षित है । ऐसी अनेकानेक कहावतें यहा प्रचलित हैं । यथा —

आच्छी गाड़ी तैगन खुरा, ले आवो कथा, कदी ना बुरा ॥ तैल विसावण चले कथ, चूडे क मत देखियां दत । लारा लिया लाल यतन कर, लीला लियो कराइ पर ॥ तैल का आगा और घेनु का पात्रा । कृषि प्रधान देश मे ध्याये दिन ही बहा ने निनाशियां को गाय व तैल खरीदने पड़ते हैं । गाय और भस की परीक्षा के लिए एक कहावत है 'गाय नारी अर भैंस सारा' अर्थात् गाय क्याणा (म यम) अच्छी होती है और भैंस भारी । हरियाने की गायें दूध देन म बड़ी प्रसिद्ध हैं । उनकी दूध देने की सामर्थ्य अधिक है । इस विचार का लेकर हरियाने की एक कहावत म गाय की तुलना भैंस आदि से को गई है, 'गाड़ी वाला सदा दिवाला, भैंसवाला आवे ॥ गायवाला बर्रा जराजर, बकरी वाला बाधे ॥' यह विचार आज की गौहितकारी भावना व अनुकूल है । किसान न घर म तैल और भैंस का खाय नहीं है । तैल वचारा प्रात म स घ्या तक हल चलाता है और एल निनौले की सानी मिलती है भस का । इस अवसर पर तैल ने एक शिकायत की है, "राट निनौले भूरी खाय । हल चलाने लाडा जाय ॥ निनौले युक्त सानी ता भम का दी जाती है और हल चलाने तैल जाता है जिसे खूना चारा ही मिलता है । लोकोक्तिकार उा कमकमरा निष्कर्षणय किसाना पर व्यग कसो से नहीं चूका है जो गाय बल्लइ क चक्र म न पड़ मस्त रहने वाले हैं 'गाय न वाच्छा नाद आने आच्छा ॥'

५ नीतिगर्भित—लोककृतियों की अधिक सरया नीति साहित्य ने अतगत आता हैं । हरियाने म भी नीतिगर्भित उक्तियां म किसान ने काम का बहुत सी रातें आइ हैं । आलसी किसान की दशा का एक चित्र यहा दिया गया है —

आलस नौद क्रियान नै गोरु, घोर नै गोरु मामी ।
दफा घ्याच मूल नै सारु, राट नै सारु हागी ॥

नातिगर्भित यह वाक्य बड़ा सामक है । इसमें किमान, चार आर साहूकार को अन्धा शिक्ता दी गई है । 'जिम गह न जाग, उमर कोष गिना तै न पादा ॥ मेना, बाती, चाकरी और घाड़ का तग । माइ ता करे आयर चाइ लाग लाग हो चूज ॥ भीत में आला, घर में साला, जे करे कुट्ट ना कुट्ट चाला ॥' आदि ऐसी कथाएँ हैं जो जानपदाय जन के लिए चाणक्य नीति जैसा कार्य करती हैं । इन नातिनूलरु कथाएतों में उन ठकितयों का भी स्थान मिलना चाहिए जिनमें स्वास्थ्य के नुस्खे (योग) बतलाये गये हैं । यथा —

कषार करेला, घैत गुड़, मात्रा माग न ग्या ।
कौही मय गिरह की, रोग रिमावन जा ।

इस कथावत में पम्प का सुन्दर नाति टा गई है । यदि उपमाकता इस नाति का पालन नहीं करता तो वह एक तो अपने पैसे इनके शय में व्यय करता है, दूसरे रोग लगगा तिससे हानि हागी । इस प्रकार "घाड़े का काम, आदमा का वास ।" आदि लाभाक्तिया भी आयुर्वेदाय जान कराता हैं ।

६ व्यग्यात्मक—लाभाक्ति में बड़ा गहग व्यग्य दाता है जो अचूक चाट करता है, परन्तु उसकी अभियोजना का विधान कुट्ट ऐसी श्रमभुत याचना द्वारा होता है कि मुतने वाला चोट गानर भी कीच में रपटने वाले का भाति रिखा से शिकया नहा करता । नेक शलाह (सभति) का न मानकर प्रतिभूल आचरण करने वाले व्यक्ति का नीचे लिखा ठकित मूलता का प्रमाशन करता है । "मेधे नै दिया लूणा, गधा कहै मेरा आयर पाड़ै" लाशोक्तिकार ने अपना चन्द्रराइ से लिंग परिवतन ही नहीं, यानि परिवतन तर कर दिया है । पुरुष गधा बना दिया गया है । 'उल्टा चार फातवाल नै ढाटे' धृष्टता का ताव बाण है । इस प्रकार निस्कार व्यक्ति की आलोचना 'धोया चना, बने घया' के द्वारा सयन शब्दों में कर दा गई है । गहरा तड़क मड़क रगनेवाले लागो को ललित करके कही गई "ऊँची दुमान, पीना पन्वान" उक्ति सर कुट्ट कह गई है । अकल के अर्था का कच्चा चिढा खोलनेवाली "अकल दिन ऊट उभाणे" बुद्धि के बिना ऊट नगे रहते हैं और 'अकल उडा न भैस' उक्तिया आल प्रान कर रही हैं । इस प्रकार का एक ताखा व्यग्य 'मुम्सल का मिह ग्हे जे भाज्जे से' तथा 'नदादे नै मिल्या कटोरा, पाना पी पा हुआ पदोड़ा' नदी दे (अभावग्रस्त व्यक्ति) को यदि कटारा मल बाये तो वह उस्तै

पानी ही पानी पीता है और उसका पेट फूल जाता है। आदि उक्तियाँ में आया है।

प्रकृति निरीक्षण तथा भविष्यवाणी वाला कहावतें भी अनेक हैं। यथा — 'सावन माह चले पड़वा, खेले पूत बुलाले मा' में प्रकृति निरीक्षण स उत्तम फल की बात कही गई है। भविष्यवाणी में घाघ भइली की उक्तियाँ आर्योगी जिनका सविस्तार वर्णन आगे मिलेगा। तमूने के तौर पर एक उक्ति है —

सुककरवाली वादली, रहे सनीचर छाया।

कहे सहदेव सुन भाटली, त्रिन बरसे ना जाय ॥

यहा शजुन रिचारवाली कहावतें भी मिलती हैं त्रिनम जीवन के सफलता असफलता की भविष्यवाणी दाती है। यथा —

एकला शुग दूना साल, भाटे धर्या मिले गुद्याल।

तीन फोस लग मिल जाय तली, तो मौत निमायै सिर पर खेली ॥

(अर्थात्) यदि यात्रा करते समय जगल में एक मृग मिले, दो घाप मिलें, भंसे पर चढा हुआ गुआला मिले और यात्रा के तीन फोस तक तेली मिले तो निश्चय ही मृत्यु हा। ऐसे दृश्य अपशजुनकारी हैं।

उक्त कहावता के अतिरिक्त कुछ कहावतें ऐसी हैं जो न तो सूक्ति हैं मगर हैं पूरे पूरे दोहे जिनका अर्थ हृदयगम करने के लिए वे घटनाएँ उभेदनी पड़ती है जिनके आधार पर उनका निमाण हुआ है। यह पंचतन की शैली है। अर्थात् यहा एक युक्ति से कहानी उपजती है अथवा कहानी से दोहा उपजता है। हमने इन्हें 'कहावती दोहा' नाम दिया है। यहा एक दोहा देते हैं त्रिसम हरियाणा प्रदेश का मुँह बालता चित्र है। जना गाररनाथ अपने अनुभव का इन शब्दाँ में बाध रहे हैं —

कटक दश, फगेर नर, भँम मून का नीर।

कर्मा का मारा फिरे, धागर धोच फीर ॥

(अर्थात्) हरियाणा में कटक अधिक हैं, मनुष्य कठोर प्रकृति के हैं और यहा का पाना भस के मून जैसा है। ऐसे वागर प्रदेश में फनीर का दुभाग्य है।

'जाट थार तेली' की कहानी में तेली की भगवद् स्तुति भा ऐसे ही कहानता दोहा म आइ है। यथा —

भीदा गाँधी, धँल मारना, जा' वह शुद्ध शुद्ध में।

द्वय क द धरना। सुदा यचा दे पदा घमोडून्ड में।

(अथात्) दृ इश्वर । रास्ता तग है, रैल जिनो कध स जुग्रा उताग । त्या है, को जाइता हूँ ता वह मारन आता है, जाट कता है रैल को जगह जुड़कर गाड़ो गाना । ऐसे दशा में आप ही सहायक हो । मुक्त उचात्रा । म श्रव पर पर रूइ धुनकर हा आजीविका कर लूगा । ऐसे अनन कदाप्रत, यह हरियाना में प्रचलित है । एक दूसर कदावती दाहे म गंगा-यमुना के अन्तर्गती प्रेश का चित्रण हुआ है —

म्याननाम घड़ा मराव, लींठा लींठी कटु जवाव ।

आधी रोगी, ऊपर साग, ले तो ल ना रास्ता लाग ॥

गंगा-जमुना के बीच के भाग को 'म्यानडाम' नाम से हरियाना प्रदेश में पुकारते हैं । इस प्रदेश में भिक्षुओं के साथ एसा व्यवहार होता है कि उन्हें मरपट भाजन भा नहीं मिलता ।

कहावता में कदा-कदी पर सामाजिक उच्छ्वलता की भी प्रशय मिला है । यथा—'मरा तग नाता, तीसर का फोड़ मात्या ।' यहा प्राचारिक पत्र को लेकर देखें तो समय नियम का मात्रा के प्रति श्रवहेला ही दृष्टिगत हागा । राजनैतिक प्रभाव भी कहावतो में भलक गया है । इन प्रकार ये कहावत 'पिनाक पुराना' ही नहीं हैं आधुनिक राजनैतिक तत्व भी इनमें अनुस्यूत मिलते हैं । कांग्रेस का लहर दौड़ी ता गांधी जी को लोगों ने अपना वेताज का प्राशान मान लिया और उन्किार ने कहावत को जन्म दिया 'श्वरा रूपैया चाना का, राज महात्मा गांधी का ।' इससे महात्मा गांधी का जन मानस पर राजनैतिक एवं आर्थिक प्रभाव प्रस्ट हाता है । कही-कनी पर आयुर्वेद के ज्ञान को भी इन गगरिया (नेतला) में भर दिया गया है । 'आत भारी तै मात भारी ।' 'जिन जला उत सक' जल का नुस्खा है । ऐस ही स्वास्थ्य का नुस्खा है —

'गम ती न्हावे, सोला खावे । छाम्हे सोवे, उसका वेद मूड पकड़िया रोवे ।'

लाकाक्तिया का बात समाप्त करने से पूर्व यह और देण लेना होगा कि लाकाक्तिया में अन्वोक्तितत्व का विशेष महत्व है । यदि यह कहा जाये कि अधिकारत लाकाक्तिया अन्वोक्तिया हैं ता विषयान्तर न हागा । इनमें जिनका प्रस्तुत उल्लेख हाता है, उसके अतिरिक्त सामान्य विशेष में इनका प्रयोग होता है । "गजा और गालरू की इड्डी" यह सल्लाटा के सम्बन्ध में है परन्तु गजा के प्रति इसका उपयोग न हाकर एक विस्तृत भावभूमि में हाता है । अत इस उक्ति में वर्णित विशेष—गजा जिनके सर पर जल न हों—में जो सामान्य जिसमें गुण्य आदि को विशेषता न हो है, उसी सामान्य के अर्थ में इसका उपयोग हो

सकता है, एव होता है। जहा विशेष का वर्णन कर दिया जाता है वहा पर भी 'विशेष' उक्ति को वैचित्र्य देने के लिए ही आता है। अर्थ वहा पर भी सामान्य विशेष का ही हाता है। 'टाकर वाला ऊट पहिले अरझावै', 'अवकल दिन ऊट डभाये' में 'ऊट' विशेष के प्रयोग से वैचित्र्य उत्पन्न हो गया है। अर्थ सदैव विशेष में गभित सामान्य ही होगा। 'पूड़ी ना पापड़ा, पटाक चहु आपड़ी' आदि में विभावना जैसी खूबी आ गई है। यहा पर भी प्रकृत विशेष अन्तनिहित सामान्य भाव में ही वैचित्र्य है और वही लोकोक्ति को समाले है। यहा सामान्यभाव है 'तैयारी बिना कार्य का हो जाना।'

अन्याक्तिपूर्ण कथावर्तों में विशेष की स्थापना और उसके द्वारा सामान्य एव वैचित्र्य की योजना तो समभव कल्पना के आधार पर हुई है और 'टाई दींगरी पत्तू बागवान' जैसी कथावर्त में विशेष किसी सम्भावना पर निर्भर नहीं प्रतीत होता 'दींगरी का टाई' होना समभव नहीं है। ऐसे स्थानों पर उक्तिकार केवल उक्ति वैचित्र्य से अपने भाव को कह देना चाहता है। समभव असमभव की उसे चिन्ता नहीं होती। उसका यही ध्येय होता है कि तीर 'लक्ष्य बंध कर' दे। ऐसी कथावर्तें कम होती हैं।

हरियाने में कुछ लोकोक्तियाँ ऐसी भी मिली हैं जिनमें लाकोत्तिकार अपनी मनोवाञ्छित सुतदायक वस्तुओं की कल्पना करता है। आनन्ददायिनी परिस्थिति की अवतारणा ही इनका मूलमन्त्र होता है। यथा —

दस चगे बैल देख, वा दस मन बेरी,
हठ हिसापी न्या, वा सावसीर जोरी।
भूरी भैंस का दूधा, वा रावड़ घोलणा,
इतना दे करतार, तो थोहरि ना बोलणा ॥

किसानों के आनन्द की परकाष्ठा है कि उसके अच्छे चगे बैल हों, पयाप्त अनाज हो जाये, फसल के पीछे लगान या मालगुजारी माँगी न जाये, भूरी भैंस का दूध पीने को मिले और रावड़ी का भोजन मिल जाये। इतना मिल जाने पर उसे सार्वभौम सत्ता प्राप्ति जैसा भतोप मिलता है। वह फिर भगवान से अधिक नहीं मागेगा। इसी प्रकार सहस्रश लोकोक्तियाँ हैं जिनमें जीवन जगत् के किसी न किसी पक्ष की आरूठी झलक है। लोक साहित्य का अध्ययन इस मौखिक साहित्य के बिना अधूरा ही है।

२२ मुहावरे (रूढ़ियाँ)

भारत भर की भाषाओं तथा उपभाषाओं (भाजियाँ) में मुहावरों का प्रयोग पाया जाता है। जैसे लोकोक्तियों के प्रयोग से भाषा भरतल बन जाती

ह, उदा प्रसार मुहावरों के प्रयोग से भाषा का सौन्दर्य, प्रसार और प्रभाव बहुत बढ़ जाता है। जिन बलियों का अभी तक साहित्य नहीं जाना है, उनके बलनेवाल भी अपनी वातालाप अधिक प्रभावमयी बनाने के लिए मुहावरों का प्रभय लेते हैं अथवा प्रयोग करते हैं। अक्षर-ज्ञान का प्रमाण जिन प्रभावों का नहीं मिला है उनके गुण में भा मुहावरे, यदि प्यानपूर्वक सुनें तो, अपने आप निकलते मुहारे पढ़ते हैं और बड़ प्यार लगते हैं। किन्तु हा स्त्री पुरुष तो मुहावरों में ही बातें करते हैं। इधर रहतक नगर म एक एडवान्ट है, जिनका नाम श्री० प्रताप सिंह है। उनके लिए प्रसिद्धि है कि वे मुहावर ही प्वाते हैं, मुहावरे ही पीते हैं और मुहावरे ही बोलते हैं।

१ (क) मुहावरों का अर्थ

मुहावरा शब्द अरबी भाषा का है। अरबी में इसका अर्थ होता है "परस्पर बातचीत और खाल पत्राव करना।" वहाँ यह शब्द सीमित तथा सङ्कुचित अर्थवाची है या यों कहिए कि अरबी में मुहावरों शब्द का अर्थ सामित है। किन्तु भारतीय भूमि पर आकर इसका अर्थ विस्तृत हो गया है। जैसे भारतीय वाङ्मय में मुहावरा शब्द का यथार्थ पयाय नहीं मिलता। कई विद्वान इसने लिए कई प्रतिशब्द देते हैं यथा—प्रयुक्तता, वाग्धारा तथा रमणाय प्रयोग आदि आदि। परन्तु हम इसका प्रतिशब्द 'रूटि' देते हैं जो इसने प्रयोगार्थ के अधिक समाप है। मुहावरा (रूटि) उस मुगटित पद समूह का नाम है जो अपना साधारण अर्थ (वाच्यार्थ) नहीं, अपितु एक विशेष अर्थ (रूटार्थ या लक्ष्यार्थ) प्रकट करता है। उदाहरणार्थ 'गड़े मुँदे उगाड़ना' हरियाने का एक प्रसिद्ध मुहावरा (रूटि) है। इसका अभिधेयार्थ वाच्यार्थ है "कट्टे उल्हाड़कर उनमें के शव बाहर निकालना।" परन्तु वातालाप म हमका प्रयोग इस अर्थ में नहीं होता बल्कि "प्राचान एव विमृत अवाङ्मनाय बातों का वणन करना।" अर्थ म होता है। इसका यह अर्थ लक्ष्य व द्वाग हुआ है जिसमें रूटि का प्रधानता है और इसमें उक्त पदसमूह निस्खदेह रूटि है। परन्तु विषय प्रयोग की रिपाट मिलने पर पुलिस ने 'गड़े मुँदे उगाड़ना डाल' सरासे वाक्यों में उक्त पद समूह रूटि नहीं है क्योंकि वह वाच्यार्थ से आगे नहीं बढ़ता और उस अर्थ को ही प्रकट करने नीय हो जाता है। डा० कृष्णदेव उपाध्याय ने अपनी मौलिक 'भाजपुरा लोक-साहित्य' में पृष्ठ ५५२ पर मुहावरों की यह परिभाषा दी है "हिन्दी एव उर्दू" में लक्षणा अथवा व्यञ्जना द्वारा सिद्ध वाक्य का ही मुहावरा कहते हैं। मुहावरों व अर्थ में अभिधेयार्थ में कुछ पिलक्षता होती है। एक गम्भीर दृष्टि से देखने पर विदित होगा कि डा० उपाध्याय का कथन भी हमारी स्थापना का पुष्टि कर रहा है।

(स) लोकोक्तियों और मुहावरों का अंतर

आगे चलने में पूर्व यह उचित है कि लोकोक्ति एवं सूक्ति में अन्तर स्पष्ट कर लिया जाय। लोकोक्ति में एक पूर्ण सत्य या विचार की पूर्ण अभिव्यक्ति होती है। वह दूसरे वाक्य का अंग नहीं बनता बल्कि एक स्वतंत्र वाक्य होता है। सूक्ति (मुहावरा) स्वतंत्र नहीं होती वह तो वाक्य में भीतर ही प्रयुक्त होती है। अथवा यदि कहिए वह किसी वाक्य में रमने जाने के लिए प्रयुक्त होती है। 'ये जाणो भेद विनाले का स्वाद' 'घर में गदड़ा सेर', 'लगा एक न देना दो' आदि लोकोक्तियाँ हैं जो स्वतंत्र हैं। 'साग भरणा, भात्रे की चिड़ियाँ, बायली बूच, बारा मुठ्ठी का, आदि सूक्तियाँ हैं जो वाक्य के प्रयोग का गठ जाहती हैं।

(ग) मुहावरों का महत्व

मुहावरों के आविर्भाव का प्रतिपादन करते हुए श्री हरिऔध जी ने एक स्थान पर बड़ी मार्मिक बात कही है—“घटना और कार्यकारण परम्परा से जैसे असंख्य वाक्यों की उत्पत्ति होती है, उगी प्रकार मुहावरों का भा। अनेक अवसर ऐसे उपस्थित होते हैं जिन मनुष्य अपने मन के भावों का कारण विशेष में सक्त अथवा इंगित किंवा व्यंग्य द्वारा प्रकट करना चाहता है। कभी कभी एक ऐसे भावा का छोड़ शब्दों में निवृत्त करने का उद्योग करता है, जिनके अधिक लम्बे चौड़े, वाक्यों का जाल द्विचित्र बनना उसे अभीष्ट होता है। “इसमें हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि भाषा के सवारने, मजाने और उसमें शक्ति व बल पहुँचाने का कार्य मुहावरों का है। मुहावरों ने बिना भाषा कीको रह जाती है और विधवा सी प्रतीत होती है। मुहावरे की लक्ष्णिक शक्ति से भाषा में सन्धम आता है और अनासक्त विस्तार दूर हो जाता है। ‘मुकामा, शेर व शायरी’ में मौलाना शाली ने मुहावरों के महत्व को निम्नलिखित शब्दों में व्यक्त किया है, “मुहावरा अगर उम्दा तौर में बाधा जावे तो बिना शुनहा परस्त शेर को बलद और बलद का बलदतर कर देता है। “निस्सन्देह मुहावरों के यथोचित प्रयोग से शैली में परिष्कार आता है और उसमें शक्ति आता है। साथ ही शैली में माधुर्य तथा मनोहारिता भी आ जाती है। भाषा में सुस्ती भी इहाँ के प्रयोग से आती है। मुसी प्रेमचन्द की भाषा का जादू मुहावरों के सम्यक् प्रयोग में है और प० अयोध्या सिंह उपाध्याय की कविता की शक्ति मुहावरों के सहारे स्थिर है।

मुहावरों के महत्व के साथ ही साथ हम अपनी एक विशेषता हाती है। मुहावरों का शब्द विन्यास ‘परिवर्तन असह्य’ गुणवाला होता है। इसका तात्पर्य है कि प्रयोग करते समय सूक्तियाँ के शब्दों तथा उनके क्रम में कोई

परिवर्तन नष्ट होने पाता। यथा — 'पेट का पानी न पचना' का भाव है, काद बात दिया न सन्ना। यदि हमने स्थान पर 'उदर का जल न पचना' कहा जायेगा तो अर्थ का अनर्थ हो जायेगा। यहा यह न भूलना चाहिए कि 'शब्द परिश्रुति असद्वत्' उत्तमात्तम साहित्य का गुण होता है। अतः यह कहना कि लौकिक एव मुहावरों साहित्य के श्रेष्ठ अंग हैं, अस्मगत नहीं है।

२ हरियानी मुहावरों का अध्ययन

हरियानी मुहावरों के सम्बन्ध विवेचन से पाठक को अनेक अनूठी बातों का पता चलगा। इन मुहावरों में कहीं स्थानीय सामाजिक प्रथाओं का उल्लेख हुआ है, तो कहीं किसी पौराणिक व्रत का वर्णन है। किसी जाति की विशेषता और उसके स्वभाव का चित्रण भी इनमें आया है। कई बार मुहावरों के द्वारा शब्दों की निरुक्ति करने में सहायता मिलती है। इस प्रकार इनका बड़ा महत्व है।

क सस्कार तथा प्रथाओं का उल्लेख

ऐसे अनेक मुहावरे हरियाना प्रदेश में प्रचलित हैं जिनमें इस प्रदेश के सस्कारों एवं प्रथा परम्पराओं की छाप है। एक मुहावरा है 'हाथ पेलने करना' जिसका अर्थ होता है 'पुत्री का विवाह करना'। कन्यादान करते समय पिता पुत्री के हाथों का हल्दी से पीले करता है और फिर उसे वर को देता है। अतः यह मुहावरा हिन्दुओं में प्रचलित कन्या के विवाह-सस्कार का बताता है।

वर जब कन्या का पाणिग्रहण करता है उस समय वर और कन्या के गोत्रज पुरुषों के नामों का उच्चारण किया जाता है। इसे हरियाना में 'शालाचार' कहते हैं। यह प्रथा कुलीनता की भावना से युक्त है। इन्हींसे मिलता जुलता दूसरा मुहावरा है 'कुली बत्तानता' परन्तु यह पहिले मुहावरे के पूर्णतया विपरीत है। इसका अर्थ है 'किसी के वर के दाप बत्तानना' अर्थात् दापों का वर्णन करना। इसी प्रकार 'भात भरना' 'पानी देना' 'सुण्डे में घी भरना' आदि मुहावरे हैं जो प्राचीन सस्कार व प्रथाओं के अवशेष हैं।

लियों के व्रतों का उल्लेख भी इन मुहावरों में यत्र-तत्र पाया जाता है। 'सकरात पूजना' एक मुहावरा है जिसका अर्थ है रज्जु पीटना। *श्रिया* में मकर समाप्ति बड़ी श्रद्धा से मनाई जाता है। लिया इस अर्थ पर *श्रिया* आदि कटकर लिखनी बनाती हैं। अतः बाजरा करने की *श्रिया* ...

से इस रुढ़ि (मुहावरे) का पीटना अर्थ होता है। साथ ही इस मुहावर के द्वारा उस प्रथा का उल्लेख भी हो गया है।

र ऐतिहासिक चित्रण

हरियानी मुहावरा में ऐतिहासिक अर्थों की ओर भी अनेक संकेत मिलते हैं। 'सत्तावणिया जूता' हरियानी का एक मुहावरा है। यह मुहावरा १८५७ के सिपाही विद्रोह के समय से मन्थित है। बहुत से जाटों के यहाँ ऐसे पुराने जूते मिलते हैं जो दूसरों के हैं और जिनसे उन्होंने अपने शत्रुओं को १८५७ में पीटा था। इसी प्रकार का एक दूसरा मुहावरा है 'भाऊ की लूट'। राजा भाऊ गुजरात ने थे। उनका धोखे से हराया गया और राज्य को लूटा गया था। राज्य में कोई व्यवस्था न रह गई थी। वही पुरानी बात इस छोटे से मुहावरे में अवशिष्ट है। 'पुराना घाघ' अर्थात् आवश्यकता से अधिक अनुमनी, मुहावरा भी इतिहास के एक तमसाच्छन्न कोने को प्रकाश प्रदान कर रहा है।

ग पौराणिक चित्रण

कुछ मुहावर पौराणिक कथाओं पर आधारित हैं। 'द्रीपदी का चीर' एक मुहावरा है जो पौराणिक युग की कथा को अपने में समेटे हुए है। अचूक आपधि को 'रामनाथ' कहते हैं। यह भा पाठक को उस प्रागैतिहासिक युग में प्रवेश कराता है जहाँ इतिहास की पुस्तकें मूक हैं। इसी प्रकार 'ईद का चाद' किसी विगत युग की स्मृति का द्योतक है। 'मुदामा ने चावल' भी कृष्ण युग की वस्तु है।

घ जातिगत विशेषताएँ

हरियाने में कई ऐसे मुहावरे हैं जो किसान जाति को आधार मानकर खड़े हैं अथवा चल रहे हैं। इनमें 'जाट गोंगदा' जाटों का भगड़ा 'बुद्धू जाट' आदि मुहावरे जाट जाति के चरित्र पर प्रकाश डालते हैं। इस प्रदेश का एक मुहावरा है 'बावली बूच'। यह बूच कोई पशु विशेष अथवा कीट विशेष नहीं। लोकमेधा ने अद्भुत भाव के लिए एक शब्द ढूँढ लिया है जिससे किसी जन्तु का भाव शब्द धृति के प्रभाव से मिलता है। जिसे मान लिया गया है कि वह नाबला होता है। गाय व ऊपर भी कई मुहावरे मिलते हैं यथा—'गूगली गाय' इसका अर्थ होता है 'दया का पात्र' 'बावली का काका' एक दूसरा मुहावरा है जिसका अर्थ 'अत्यन्त सीधा'। यह मुहावरा तो कि सगलता एवं भोलेपन का लेकर चला है।

६ व्यंग्याक्ति

मुहावरे की परिभाषा देते हुए पीछे कहा गया है कि लक्षणा व व्यञ्जना से मुक्त सिद्ध वाक्य का मुहावरा कहते हैं। हरियाने में ऐसे मुहावरे प्रचुर मात्रा में मिलते हैं जिनमें व्यंग्य की अभिव्यञ्जना बड़ी अनूठी हुई है। 'साड का साड' एक मुहावरा है जिसका अर्थ होता है "उच्छृङ्खल बालक" विषय पुत्र पर पिता आदि किसी अभिभावक का अनुशासन न होने से वह साड की भाँति उद्वह हो जाता है। अतः यहाँ साड शब्द से उच्छृङ्खलता का भाव ध्वनित होता है। 'पुराना घाय' मुहावरे में 'घाय' शब्द घाय कवि के अनुभवों की आर लक्ष्य करता है अतः इस मुहावरे का अर्थ होता है "महुत अनुभवा पुरुष"।

७ शकुन विचार

हरियाना मुहावरों में शकुन विचार भी आया है। गायों में उल्लू बोलना अपशकुन और कौवा का बोलना शकुन माना जाता है। श्रमों के फटकने से भी शुभाशुभ विचार लगाये जाते हैं। 'हयेली युजाना' धन की प्राप्ति और 'पैर खुजाना' यात्रा का होना आदि का शान कराते हैं।

इन मुहावरों में प्राचान भाव व अतिरिक्त नवान वस्तुओं पर भी विचार व्यक्त किये जाते हैं यथा—'पलेटफाम साफ होना' एक मुहावरा है, जिसका अर्थ होता है 'सबका मर जाना' आदि आदि। इस प्रकार हम देखेंगे कि जीवन जगत के नवीन अनुभव नये-नये मुहावरों के जनक होने जा रहे हैं।

संस्कृत साहित्य में सूक्ति या सुभाषितों के अतिरिक्त अनेक प्रकार के न्याय भी उपलब्ध होते हैं। यथा—'वलेकपात न्याय, अरराम रोदन न्याय, अघ दर्पण, अजाडपाणीय, काकोलूकीय न्याय आदि-आदि। इन्हें हम रुद्रि या मुहावरा ही कहेंगे। इनका 'सुस्त कहावत' नामकरण जिसकी आर कई विद्वानों का सजत है, सगत नहीं प्रतीत होता। कहावत और मुहावरे में अन्तर एक मौलिक अंतर है। वे दोनों एक जाति की दो विधाएँ अवश्य हैं परन्तु उन्हें एक नहीं कहा जा सकता। कहावत कहावत है। वह स्वतः स्पष्ट है और मुहावरा परत स्पष्ट है।

मुहावरों तथा कहावतों का इतना अध्ययन ही पर्याप्त नहीं है। इनमें से अनेक मुहावरों को साहित्यिक तथा वर्तमान भाषा का रूप देकर सुन्दर भव्य-व्यञ्जना की जा सकती है। 'साग भरना, भावे की चिटिया तथा पजे पाज

ग पहेली

पहलो शब्द प्रहेलिका का तद्भव रूप माना जाता है जिसका अर्थ होता है 'विषम अवस्था' अथवा 'उलभन'। हरियानी में इसे 'फाली आडना' पहेली बतलाना अथवा "गाहा खोलना" कहते हैं। 'फाली' शब्द का अर्थ होता है, 'फलार्गमित वाक्य' और गाहा 'गाथा' शब्द का अपभ्रष्ट रूप है जिसका अर्थ होता है 'कथा या कहानी', भोजपुरी में इसे 'बुझौवल' कहते हैं। वहाँ तो पहेली पढ़ने के लिए 'बुझौवल बुझाना' मुहावरा भी है। इससे और भी कई नाम—पारसी, प्याली तथा उद्याणा आदि—भिन्न भिन्न बोलियों में प्रचलित हैं। संस्कृत में पहेली को 'ब्रह्मोदय' कहते हैं।

पहेली कहने की प्रथा बड़ी प्राचीन है। बारहवीं तेरहवीं शती के कविवर खुसरो की पहेलियाँ और मुकरियों के विषय में आचार्य शुक्ल ने लिखा है कि "जिस ढग के दोहे, तुकबदिया और पहेलियाँ आदि साधारण जनता की बोलचाल में इन्हें प्रचलित मिलीं उसी ढग की पद्य पहेलिया आदि कहने की उत्कठा इन्हें भी हुई।" यह सभ्य और असभ्य सभी प्रकार के लोगों में प्रचलित मिलती हैं। अचकाश के क्षणों में पहेलिया अवाल-वृद्धवनिता सभी के लिए मनोरजन का उत्कृष्ट साधन हैं। कई अनुष्ठानों और विवाहादि सस्कारों पर भी इनकी पूछ होती है। इधर हरियाने के गावों में जामाता की बुद्धि परीक्षा के लिए सुसराल में 'सीटणो' पूछे जाते हैं जो एक प्रकार की पहेली होती है। इसे कहीं-कहीं 'छन' या 'छद' भी कहते हैं। 'सीटण' म शृंगार के कोमलतम पक्षों का बड़ा खुला वर्णन होता है जो परिष्कृत रुचि

१ 'बुझौवल' ब्रज और बुन्देलखड़ी में एक प्रकार की कहानिया होती है जिनमें कौतूहलपूर्ण परिस्थिति का स्पष्टीकरण वाञ्छित होता है। श्री हरगोविन्द गुप्त, बुन्देलखड़ी बुझौवल, आनकल पत्रिका, दिसम्बर, १९५२, में लिखते हैं "बुझौवल उन कहानियों को कहते हैं जिनमें एक व्यक्ति प्रश्न करता है और दूसरा उनका उत्तर देता है। मनोरंजक कहानिया भा होती हैं और सावधानिक ज्ञान की वृद्धि करनेवाला बौद्धिक व्यायाम भी, जिसमें कभी-कभी बहुत ही तत्व की बातें पकड़ में आती हैं।" प० त्रिपाठी ने बुझौवल को पहेली का पर्याय माना है। उनका कहना है, "बच्चों की बुद्धि, पर शाय बचाने के लिए गावों में बहुत सी पहेलियाँ जिन्हें बुझौवल कहते हैं, प्रचलित हैं। बुझौवल बड़े गूढार्थवाले होते हैं।"—हिन्दी ग्राम-साहित्य, भाग ५ में ग्राम साहित्य की रूपरेखा।

२ रामचन्द्र शुक्ल, हिन्दी साहित्य का इतिहास पृष्ठ ६१।

का धिनोना लगता है। भारतनय में वैदिक काल से ही 'ब्रह्मोदय' पहेलियों का प्रचलन पाया जाता है। अश्वमेध यज्ञ के अक्सर पर ब्रह्मोदय आनुष्ठानिक क्रिया का अंग सम्भूत जाता था जो होता और पुरोहित न मध्य चलता था।

पहेलियाँ का प्रमुख उद्देश्य मनोरंजन हाता है। परन्तु कारा मनोरचनात्मकता ही इनका सर्वस्व नहीं है। ये तो वक्ता के बुद्धि-विलास तथा धाता की बुद्धि पराक्षा व साधन रूप में मा आती हैं। बड़े अनुभवों बुद्धि के धना और प्रत्युत्पन्नमति काइयाँ लाग भी उनसे वैचित्र्यपूर्ण अर्थ गौरव के प्रति नत मस्तक हैं। इसी से प० रामनरेश जी त्रिपाठी ने इन्हें 'बुद्धि पर गाण चढावो का यन' या 'स्मरण शक्ति और वस्तुगान बदाने की कलें' कहा है। भोजराज ने भा प्राहलिका ने उपयोग पर टिप्पणी देते हुए कहा है 'क्रीडा गाष्ठी विनोदेषु तज्जैराकाणमनये। परव्यामोहने चापि सोपयागा प्रहलिका।' अथात् खेल, गोष्ठा तथा विनादकाल में प्रहेलिना जाननवाले पारस्परिक विचार विनिमय अथवा परामर्श एव धोतृ-वृन्द को व्यामाहित करने के लिए अथात् आश्चर्य चकित करने के लिए इनका उपयोग करते हैं।' वहाँ पर इसने भद्रान्मेदों का भी वर्णन किया गया है यथा—अन्त प्रश्न, गहि प्रश्न, बहिरन्त प्रश्न, छाति प्रश्न, पृष्ठ प्रश्न, उत्तर प्रश्न, प्रभृति।

पहेलियाँ के वर्ण विषय इतने विस्तृत एव व्यापक हैं कि साधारण से साधारण वस्तु भी पहेली की पकड़ से छूटी नहीं है। दिन प्रति दिन इनकी सख्या बढ़ता रहती है। ग्रामीण प्रतिमा का अशुमाली बराबर चलता रहता है। माटे नौर पर हम कह सकते हैं कि पहेलियों में किसी वस्तु का वर्णन हाता है जिसम प्रस्तुत के द्वारा अप्रस्तुत की योजना की जाती है। अप्रस्तुत यहाँ प्राय ग्रामीण वातावरण से लिया जाता है जो वस्तु उपमान के रूप में रहता है। यह नैसर्गिक भा है। गाँव के बुद्धि कौशल को सजग रखने के लिए उस अपार परिचित परिस्थिति के अतिरिक्त और क्या चाहिए। अत यह कहा जा सकता है कि पहेलियाँ के विषय अनेक एव अनंत होते हैं। ब्रज की पहेलियाँ को डा० सत्येन्द्र जी ने निम्नलिखित सात वर्गों में बाँटने का प्रयत्न किया है। १ खेतों सम्बन्धी २ मोहन सम्बन्धी। ३ घरेलू वस्तु सम्बन्धी। ४ प्राणी सम्बन्धी। ५ प्रकृति सम्बन्धी ६ अंग प्रत्यंग सम्बन्धी ७ अन्य। यह वर्गीकरण अधिकाश में समीचान है परन्तु 'पौराणिक कथा सम्बन्धी' पहेलियाँ भी प्रचलित मिलती हैं जो उपरोक्त वर्गों में नहा रखी जा सकता। यथा —

घाप क्वारा वाप क्वारा और क्वारी महतारी ।

पुत्र पिता न गोद खिला रखा दखो न वेदाचारी ॥

हरियाने की यह पहला एक पौराणिक पहली है । इसमें मकरध्वज और हनुमान की पौराणिक गाथा कही गई है । अब तक यह पौराणिक वृत्त स्पष्ट नहीं हो जाता तब तक यह पहली नहीं सुलभती । अतः हमारी सम्मति में उपरोक्त सात वर्गों के साथ एक वर्ग और पौराणिक कथा सम्बन्धी होना चाहिए । इससे भी अधिक भेद किये जा सकते हैं ।

पहेलियों के विवेचन में यह भी ध्यान रखने की बात है कि इनमें बहुत से ऐसे शब्दों की योजना होती है जिनका अर्थ प्रस्तुत में तो कोई नहीं होता परन्तु प्रकरण में आकर उनमें अर्थ-दायकता आ जाती है । कभी-कभी शब्द पादपूर्ति के लिए प्रयुक्त होता है और कहीं पर किसी व्यंग्य की अभिव्यक्ति के लिए । श्लेष का श्रूढा प्रयोग भी इन ग्रामीण गाथाओं में देखने को मिलता है । यथा —

दिल्ली बोई बेल, मगर पै नाल गये ।

हथनापुर फूले फूल, पटाल पान गये ॥

हरियाने के इस गाढ़े में एक बेल का वर्णन है जो दिल्ली में बोई गई है, जिसने नाल (तने) आदि भुगेर तक गये हैं । हस्तिनापुर में उस पर फूल लगे हैं और पटियाला तक पत्ते गये हैं । इस अलौकिक बल का वर्णन आता का कीतूहल से भर देता है और उसे चकित कर देता है । अत्र आप इसमें प्रयुक्त श्लेष को तनिक अनादृष्ट कीजिए और देखिए कि इस गाढ़ा का फल "ग्रामा में स्त्रियों द्वारा धारण की जानेवाली आँगी" है । यहाँ दिल्ली (दिल, बद्ध), मगर (भुगेर वा पृष्ठ, पोठ), हथनापुर (हाथ, भुजमूल) और पटाले (पटियाला, पेट) श्लिष्ट शब्द हैं । आगी (Bodice) बद्ध से चलती है और कमर पर उसकी तणियाँ बांधी जाती हैं जो बेल के तने के सदृश हैं । भुजमूल पर फूला हुआ भाग हस्तिनापुर के फूल और पेट पर पटियाला पर पान के सदृश खुला कपड़ा रहता है^१ । कितना भव्य एवं सुन्दर श्लेष है ।

पहेलियों में एक शब्द-चित्र होता है । प्रश्नरुता उस चित्र को उपस्थित करके अर्थात् पूर्वपक्ष की स्थापना करने अपने प्रातपक्षी से उस चित्र के उत्तरपक्ष की आकांक्षा करता है । यहाँ पठिनाइ यह होती है कि प्रस्तुत चित्र अस्पष्ट होता है । उससे तो केवल एक दिशा मात्र मिलती है । श्लेष की

^१ आज भी (गाढ़ा) लुहारों की स्त्रियाँ इसी प्रकार की अणियाँ धारण करती हैं ।

पूर्व कृत का अन्त के आधार पर करनी होती है। इनसे अन्वय का अन्वय अन्वय अन्वय के अन्वय करते वक्रे होते हैं कि वह विषय का अन्वय मनना का कृत अन्वय (Clue) के विषय के अन्वी कल्पना के धर्म का मर्म है। इतना ही नहीं, इतने मनना का अन्वय मनना का एक बात और होता है इन चिन्तों में और वह है 'ध्यानविकरण की भावना' जो अन्वय एवं मननना के ध्यान का विकन्दित कर्ता है और विचलित कर्ता है। इन्में 'अन्वयनापत्ता' ही बना रहता है। यथा—'दा भद्र एक से, कान करें कर्तु। एक रहा हाडा परा में एक रह वैदु।' एक हरिद्वाना गाहा है। इन्में अन्वय प्रथम पद का चित्र अन्वय बुद्धि-पल्ल पर अन्वय करके आता कर्ता है ता उन्का ध्यान विकन्दित होने लगता है। एक स्थान पर कान करें स्त्रिणु एक कर्ता रहता है और दूसरा धूनना रहता है। उन्का समक में नहीं आता। अन्वय उन् 'चाका' का भाव स्पष्ट सक्त द्वारा ज्ञात नहीं होता। वास्तविकता यह है कि इन पहेलियों में इस ध्यान विकरण के तन्व ने ही कौतूहल जाग्रत किया है। यही चमत्कार है और यहा उक्ति का वैचित्र्य है। एक दूसरी पहेला —

पद द मारा खँदि योजा यधय्या धनम बेला ।

इस गाह का फल खोजद नहीं तो मैं गुरु तू खेला ॥

यहाँ लट्टू का भाव विचित्र प्रवृत्ता से चित्रित किया गया है। पहेलियों को अधिक सख्या इसी 'ध्यान विकरण', के आधार पर उक्ति-वैचित्र्य का अन्वय बना है। मुकरियों में तो यह प्रवृत्ति इतनी प्रचुर होती है कि भोता को प्रकरखबर ज्ञान ता होता है कुछ और पर कला भद्र से दूसरा अर्थ कर बैठता है। इस प्रणाली से मनाभावनाओं को रहस्यमय ढंग से गुह्य रख लिया जाता है। अन्वय पहेलियों में इस अस्पष्ट चित्रण के द्वारा जो कौतूहलमय आनन्द मरा होता है उसी का लेकर दबी आदि अलंकारवादियों ने पहली का अलंकारों में गणना का है, परन्तु रस सम्प्रदाय के आचार्य रसबाध में विरोधी कह कर इसे अलंकार कोटि में बहिष्कृत कर देते हैं। और इसे उक्ति-वैचित्र्य मात्र की सजा देकर आगे बढ़ते हैं। परन्तु इस विषय पर थोड़ा सा विचार कर लेना यहाँ समाचीन होगा। लोक प्रचलित, पहेलिकाव्या के विश्लेषण, अध्ययन एवं मनन से यह निर्धार प्रतीति होती है कि इस

१ विरचनाय—'साहित्य दपण', दशम परिच्छेद, पृष्ठ ४६६—

रसस्य परिपन्थित्वानालंकार प्रहेलिका ।

उक्तिवैचित्र्यमात्र सा द्युतदत्ताधरादिका ॥

साहित्य में एक कौतूहलमय भाव एवं विस्मयकारी चित्र होता है जो रस काटि तक पहुँच जाता है। विस्मय स्थायाभावादि के द्वारा व्यक्त हो अद्भुत रस में परिणत हो जाता है। हिन्दी के जो विद्वान सस्कृत रसवाद की पूँछ पकड़े हुए हैं उन्हें विचारना चाहिए कि अपने भाषा सारल्य एवं प्रवचानुचर्य से हिन्दी पहेली सस्कृत प्रहेलिका की भाँति “कायातर्गतोद्भूत” नहीं है। अध्ययन के लिए हरियाने की कुछ पहेलियाँ नाचे दी जाती हैं।

यह बतलाया जा चुका है कि पहेलियों का प्रधान उद्देश्य मनोरंजन है। अतः पहेली श्रोता की बाँछें खुलवा देती है। बच्चे तो ऐसे श्रवण पर मिलखिलाकर हँस पड़ते हैं। उदाहरण—“जोहड़ ते निकली भरड़ फूँ। चार चुत्तड़ चार मुँह।” यहाँ बच्चे भरड़फूँ के ‘चारचुत्तड़’ का नाम सुनते ही मिलखिला उठते हैं।

काकनाजी हमने कुकड़ दलया, बहो भतीजा कैटे देरया।

बिना चाँच तै भुगते देरया, बिना परों के उड़ता देरया।

कुकड़ यहाँ एक लाकमेधाप्रसृत काल्पनिक शब्द है जिसमें ‘शब्द ध्वनि’ विशेष अर्थ की प्रतिपादिका है। इसका अर्थ किसान के कुएँ पर का ‘चाक’ है। ऐसी अनेक पहेलियाँ हरियाने की जनता को याद हैं। ऐसी पहेलियाँ में ‘रामलाला’ सालगराम आदि शब्द भी व्यक्तिवाची न होकर जातिवाचक रूप में ही प्रयुक्त हुए हैं।

पहेलियों का विषय एकमात्र मनोरंजनप्रकृता ही हो ऐसी बात नहीं है। बड़े गम्भीर प्रश्न भी इनमें विषय बनते हैं। रूपक शैली के द्वारा जीवन की अनुपम मीमांसा निम्नलिखित गाँधे में दी गई है —

बच्चे फल मुहावने, गहर हुए मिगन।

वे फल कीम से, जो पक्के हो करवान।

इस पहेला में बच्चे, गहर और पके फलों के रूपक से शैशव, यौवन और वृद्धत्व का यथार्थ चित्र दिया गया है। जीवन में बाल्यावस्था मुहावनी है, युवावस्था, अन्न ददायक है, परंतु वृद्धावस्था कड़वी होती है।

कई पहेलियाँ ऐसी मिली हैं जिनका कथापट पौराणिक इतिवृत्त के सूत्रों में निर्मित हुआ है। ऐसी पहेलियों का अर्थ तब तक हृदयगम नहीं होता जब तक कि वह ‘पिनाक पुराना’ समझ में न आ जाये। यथा —

भाप कवारा थाप कवारा और कवारी महतारी।

पुत्र पिता नै गोद खिना रह्या दरखो न वेदाधारी॥

यहाँ मकरध्वज और हनुमान का पौराणिक कथा कहीं गई है। हरियाने का बहुत सी पहलिया ऐसी हैं जिनमें वृष्भूनि घर और घरेलू वस्तुओं से निम्नित हुई है —

हरा थी मनमरी थी, मौलास मोती जड़ी थी।

राजा जी के महल में, तुमाला थोप्यां रखी थी ॥

मैं जब हरा थी यही मनमरी थी। नौ लाख माली (असख्य माली) अर्थात् 'गने-नीले दाने मेरे शरीर में बड़े हुए थे और किसान के महल (मैन) में तुमाला (भूटटे के पत्ते) थोपे रखी थी। मह एक मकर का 'कूकड़ी' का अपने मुँह वाला बरान है। घर में प्रतिदिन उपवास में आने-बाना गेहूँ भी पहली में सिमारी बना खड़ा है "छात्र सा उपवाहा, बाने पट में बिबाइ।" परन्तु लोक मेधा का परितोष प्रामाण्य वातावरण से नहीं हा जाता। उसकी पैनी दृष्टि शहरा 'बनेनी' और 'पतग' को भी पहली के क्षेत्र में घसीट लाई है —

गोल गोल चौतरा, पोरि पोरि रस।

घता तो घता नहीं, रपये द रस ॥

बलेवी के साथ शहरा सदा और जुआ की प्रवृत्ति भी लोक तक लगी चला आइ है। पतग का बरान हरियाने की एक पहला में हुआ है —

एक कहानी मैं सुनाऊँ सुनले मेरे पूत।

बिना परोँ क टर गई, बाँध गले में सुत ॥

साइकिल तो आज नगर की अपेक्षा प्रामाण्य बनती जा रही है, और उसने ग्राम से घोड़े को भगा दिया है। एक उक्ति है —

घोड़ा हँ पर घाम नहीं ग्याता।

खड़ा करँ तो दिग' दिग जाता ॥

'दृष्टिकूट' प्रणाला की पहलियाँ भा हरियानी-लोकसाहित्य का अंग बनी हैं जिनमें प्रामाण्य बुद्धि कौशल ने प्रागैतिहासिक वृत्त को बाँधा है —

पथर ऊपर हल चल बैल गाऊ के पे।

हाली तो जाग्या नहीं, दुकियारी पहुँची खेत ॥

इस गाथा में इस जनश्रुति का आधार बनाना गया है कि नाल्मीकि जा ने रामचन्द्र जी के अवतार लेन से पूव हा रामायण लिख दी था। पत्थर (पात्र, भाजपत्र) ने ऊपर लखना चलती है। बैल रूपी भाव लेखक

ने मन में हैं। हाली (वर्ष्य पुरुष राम) तो अवतरित नहीं हुए हैं परंतु पोगी (पूण वयन) छकिमारी (लेखक ऋषि वाल्मीकि जी) ने कर दिया है। इन स्थानों पर विस्मय का भाव विशेष आनन्ददायी होता है। हरियाने में ऐसी पहेलियों को 'उलटा गाहा' नाम दिया जाता है। इनका अर्थ सहज समझ में नहीं आता। कभी कभी ग्रामीण मेघा घटना विशेष को लेकर पहेली रूप में मुखरित होती हुई दीप्त पड़ती है। बाल्टी में बंधकर कुए में रसती हुई रस्सी की घटना का एक उदाहरण है —

“सरद जा सरद आवै ।”

यहाँ कुए में बाल्टी फासने और खींचने की घटना का चित्रण हुआ है। इस प्रकार गाय या भैंस व शारारिक अर्गा की घटना ने एक पहेली का जन्म दिया है —

चार मेरे आऊ जाऊ चार मेरे कमाऊ ।

दो मुक्क लकड़, एक माखी टाऊ^१ ॥

चार बस्तुओं (चार पैरों) से मेरा आना जाना होता है। चार (चार धन) मेरे कमाऊ हैं। दो सींग (दो सूंठी) लकड़िया हैं और एक (पूछ) मक्खी-मच्छर आदि को उड़ानेवाली है।

साथ ही ग्रामीण प्रतिभा ने कहीं-कहीं यौन वृत्ति परिचालक शब्द चित्र व क्रिया चित्र भी दिये हैं जो सयत हैं और स्वलीय मात्रा में हैं। “काला बाठ्या, लालकाठ्या” में पहेलीकार ने लुहार की भट्टी में लोहे का काली कुसका पड़ते और तपकर लाल होते हुए देखकर यह पहेली बनाई है। परन्तु इसमें यौनवृत्ति की झलक आ गई है जो भोगियों के प्रति स्पष्ट है। ऐसे स्थानों पर सुग की भावना की प्रतीति होती है जो अवचेतन मन में बैठे यौन तनुओं व स्पन्दन से प्राप्त होता है।

लोकमेघा बरानर पहेलियों का निमाण करती रहती है। नये विषया या नये अनुभवों के साथ नये गाहे भी जन्म लेते रहते हैं। शिक्षा का प्रचार रग और किताबें पढ़ी जाने लगी तो किताबें और उनके पढ़नेवालों पर भी पहेलिया बन चली —

घोली धरती काला धोज ।

बाघय आला गार्द गीत ।

मिया खुसरा का पहेलिया में मच्छर विरहपाठी के रूप में पाठक को

मिला है परन्तु हरियानी पहेलियाँ में यही मञ्चुर सवभली बन गया है —

सेजाँ घड़ती राणी खाइ, बालक राये मन्दर में ।
काली नाग पुम्बी की खाइ, केइरी खाया जगल में ।
हाथिया सेती हाथ मिलावे, घोह घी जानवर जगल में ॥

राजप्रासादों में रानी का खानेवाला, घरों में बालकों का खानेवाला, मॉन में सप का और जगल में शेर का खानेवाला (काटनेवाला) तथा हाथिया व साथ हेइशोक करनेवाला जीव (मञ्चुर) जगल में रहता है ।

पहेलियाँ के साथ मुकरियों का नाम भा प्राचीन युग से चला आता है । अतः हम भी यहा पहेलियाँ के अध्ययन में इन्हें स्थान देते हैं । य भा विरमय, वैचित्र्य, फीनूहलकारी होने से पाठक के आनन्द का स्रोत बन जाती हैं । “भीत क्या बागी (टेदा), बहू क्या नागी (नग्न)”—(सूत न था) । यहाँ श्लेष बल पर अतः प्रश्न पूछा गया है —

सास बहू का झोलणा, भीत रही बलखा ।
ताथी पढ़ी जुलाहे के, को चेला किसका ? (सूत बिना)

यहा सूत सहयोग के बिना सास-बहू की लड़ाई, सूत के बिना भित्ती में टेट और घागों के बिना जुलाहे का काम बन्द है । यह बाहि प्रश्न है ।

घ सूक्तिया

सूक्ति का दूसरा नाम सुभाषित भी है । सूक्ति या सुभाषित वे उक्तियाँ हैं जिनमें प्राकृतत्व की प्रधानता होती है और ये जन-साधारण को दूसरा उक्तियाँ की अपेक्षा अधिक प्रभावित करती हैं । ये सूक्तियाँ लोकसाहित्य एवं शिष्ट साहित्य दोनों की अपनी वस्तुएँ हैं । इनकी अपना विशेषता एक यह भी है कि इनमें साधु भाव आत्यन्त आत-प्राप्त हाते हैं जो आता एवं पाठक को अनायास ही आनन्द निभोर कर देते हैं । ये सूक्तियाँ अवश्य ही किसी आप्त पुरुष की प्राञ्जल शब्दानुष्ठा हातो हैं । ये ही वे वचन हैं जिनका “हित च मनोहारी” की कल्पना को साक्षान् प्रकट करते हैं ।

लोकसाहित्य की खेती बिना तिथिवार एवं बिना कर्ता की उपज होता है परन्तु सूक्तियों के ऊपर उन लोगों के नाम की छाप भी देखी जाती है जिन्होंने इन्हें जन्म दिया है । परन्तु ये नाम सकार्यता की दुर्गन्ध से रहित हाते हैं । भारत के सभी प्रदेशीय लोकसाहित्याँ में घाघ, भड्डग (भड्डनी) और डाक का खेता व यथा विषयक सूक्तियाँ अवश्य सुनने का मिलेंगी । कई

विद्वानां का मत है कि ये तीनों नाम किसी एक ही प्रतिभाशाली व्यक्ति के नाम हैं जिसे देश भेद से कई नाम प्राप्त हो गये हैं। अथ-घाघ, भड्डरी और डाक तीनों को भिन्न भिन्न व्यक्ति मानते हैं।

सूक्तिया भाषा-बोली के अर्थ सौष्ठव, भावगाभीर्य एव सहार शक्ति की द्योतिका होती हैं। अतः जो भाषा जितनी सम्पन्न, एव अर्थ प्रकाशिका शक्ति समन्वित होती है उसमें उतनी ही अधिक सूक्तिया पाई जाती हैं। सस्कृत में सुभाषितों का प्रचुरता है। वहाँ 'सुभाषित रत्नभांडागार' जैसी अनुत्तम पुस्तकें विद्यमान हैं। हिंदी और उसकी बालियाँ में अभी ऐसी उपयोगी पुस्तकों का अभाव है।

हरियाना प्रदेश में घाघा (घाघ) और भड्डली की सूक्तिया मिलती हैं। हमारी राज में एक दा सूक्त सरूपा की भी मिली है। लोकहिताय अपनी वाणी, ध्वनित करने वाले इन कृषि पंडितों के विषय में इतिहास का साक्ष्य नहीं मिलता। 'घाघ' के विषय में कुछ पते की बातें महापंडित रामनरेश जी त्रिपाठी के अनुसंधानों से प्राप्त हुई हैं। एक जनश्रुति क अनुमोदन से पता चलता है कि इनकी जन्मभूमि उत्तर प्रदेश के धुरवती भाग गोरखपुर जिले में थी। कहा जाता है वहाँ वे अपने पुत्र और पुत्रवधू के साथ रहा करते थे। किंवदन्ती प्रसिद्ध है कि उनकी पुत्रवधू नदी चतुर थी और उससे इनकी नौक भौक बरानर रहती थी। घाघ जो कहावत कहते पुत्रवधू तत्काल उसकी काट कर देती। एक घटना से लुब्ध होकर वे नादशाह अकबर के दरबार में पहुँचे। गुणग्राही सम्राट् ने उनका बड़ा आदर किया और उनको कन्नौज के पास एक जागीर भी दी। घाघ अपने अतिम दिनों में उसी ग्राम में रहे। वह ग्राम कन्नौज से तीन मील दक्षिण में है और "अकबराबाद सराय घाघ" के नाम से प्रसिद्ध है। घाघ के वंशज आज भी उस गाँव में रहते हैं। 'घाघ' की कृषि विषयक सूक्तिया बड़ी प्रसिद्ध हैं। हरियाना में 'घाघ' की अन्धी अनुभूतियाँ की द्योतक एक कहावत 'पुराना घाघ' अत्यंत अनुभवी अभी तक चल रही है। परिणाम स्वरूप हम कह सकते हैं कि घाघ बड़ा ही पंडित और अनुभवी व्यक्ति था।

भड्डरी और डाक कौन थे, कहा और कब हुए आदि बातों का कुछ पता नहीं चलता। कुछ लोगों का अनुमान है कि भड्डरी डाक की पत्नी थी। भड्डरी शब्द के स्त्रीलिङ्गान्त होने से इस अनुमान का बल मिलता है। "कहपि डाक गुरु भड्डरी रानी।" इस वाक्य से तो सुस्पष्ट है कि भड्डरी डाक का पत्नी थी। गुजराती लोगीतों के यशस्वी अन्वेषक श्री भूपेन्द्र

मेघाणी ने अपने लोकसाहित्य के 'कठस्थ-श्रुतुगीतो' नामक अध्याय में गुजराती जनश्रुति के अनुसार भड्डरी को किमा ज्योतिषी की पुत्री बतलाया है। ब्रज में भड्डरी एक जाति है जो महाब्राह्मण का कार्य करती है और ज्योतिष से पलादेश बताती है। भड्डरी लग 'भट्टरी' की सूक्तियों के आधार पर बप का भविष्य बतलाते हैं। राजपुताने और हरियाने में 'भड्डली' नाम की स्त्री की कहावतें मिलती हैं। हरियाने की सूक्तियों में 'भड्डला' के साथ सहदेव, शादी, सैदा जा सहदेव के ही तद्भव रूप हैं, मिलते हैं। संभवतः भड्डला नामक स्त्री सहदेव की पत्नी है। जहा सहदेव ने उक्ति कहा है वहा ता सवन सहदेव और भड्डली का नाम आया है अथवा काइ नाम नहीं है। 'सरुपा' तो काइ आधुनिक सूक्तिकार शत होते हैं।

घाघ और भड्डली जनकवि थे। उन्होंने अपने मुख सौवध्य की चिन्ता न कर जन-साधारण की बोली में मौसमा ज्ञान की बातें सूक्ति रूप में कही हैं। परन्तु खेद है कि उनकी सूक्तियों की काइ लिपिबद्ध पुस्तक नहीं मिलती। उनका आसन किसान का कठ है। आज का वैज्ञानिक घाघ व भड्डरी की सूक्तियों के फल की यथार्थता पर आपात्त कर सकता है परन्तु इन लोगों ने जनता का मौसम की जानकारी उस युग में कराई है जब इस देश में आज की भांति अन्तरिक्ष विज्ञान के कन्द्र न थे। जनता इहाँ सूक्तियों के आधार पर कृषि-कर्म का निगाह करती थी।

हरियाने को इन्द्र की कृपा का लय भी प्राप्त नहीं हुआ है। अतः पानी की बँद को तरसनेवाले हरियाने के लिए ता इन श्रुतियों की बाणा सचमुच वेदवाक्य बन गई है। हरियाने की जनश्रुति है कि 'घाघा' ने छत्तीस प्रकार के चूतिया (मूरख) बताये हैं और उन मूर्खों को 'किं फमं किम कर्मेति' का उपदेश दिया है अथात् अवाञ्छनीय बातों के छोड़ने के लिए कहा है —

पहर सड़ाऊ हलये जोतै सुत्तण^१ पहर खालम्बै ।
कह घाघा जी तीन चूतिया (मूरख) सिर पै थोरु अर गावै ॥

अथवा,

नौकर सेत्ती मता उपावै, घर तिरिया की चालै सीख ।
कह घाघा जी तीन चूतिया, गाव गोरवे^२ घोवै इख ॥

महाकवि घाघ का कहना है कि ये तीन पुरुष मूर्ख हैं। (क) जो सड़ाऊ (पादुका) पहनकर हल चलाते हैं, (ख) पाजामा पहनकर जो नलाई करते

हैं तथा (ग) बोझ सिर पर रखकर जो गाते हैं। खड़ाऊ पहनकर हल चलाने से पैर टूटने का भय है, पाजामा पहनकर नलाने से बलतोड़ अधिक होते हैं तथा बोझ के नाचे गाने से फेफड़ों पर अधिक आघात पहुँचता है। अतः ये तीनों कार्य अवाञ्छनीय हैं। दूसरी सुक्ति भी इसी प्रकार तीन बातों का निषेध करती है जो पुरुष अपने भृत्य (सेवक) से सम्मति लेते हैं, स्त्री की सीख मानते हैं और गाँव के निकट इख बोते हैं वे मूर्ख व्यक्ति हैं। गाँव का समीप इख बोलने से हानि अधिक होती है।

घर तिरिया से लेकरो मागै, भू सुकड़ाई सोवै ।
कह धाधा जी तीन धूतिया, उधल गई नै रोवै ।

इसके द्वारा वे तीन मूर्ख कहे गये हैं जो पत्नी से हिसाब मागते हैं, विपुला पृथ्वी पर, सुकड़कर साते हैं और जो भगी हुई स्त्री का शोक करते हैं।

सहदेव और भङ्गली की सुक्तिया प्रायः वषा विषयक हैं —

चिउटी ले अडे चली, चिड़िया नहावे धूल ।
शादी कहे भाडली घरसा हो भरपूर ॥

सहदेव का विचार है यदि चींटिया अडे लेकर चलें, चिड़िया धूल में लेटें तो समझ लीजिए वषा अच्छी होगी।

सहदेव कहे सुन भाडली, जेठ गलिया मत रो ।
तो सावन पचक गले, नाहिज सवत हो ॥

इस उक्ति से सहदेव भाडली को समझाते हैं कि जेठ में पचक गलने की चिन्ता मत करो। यदि सावन में पचक गल जायें तो सवत् बुरा होगा। पचक पाच अनिष्ट नक्षत्र होते हैं। जिन दिनों वे आते हैं वे दिन पचक कहलाते हैं।

पढ़वा चले सबादली, पढ़ना चले नरोल^१
सहदेव कहे भाडली, घरसा गई कित्त ओढ़ ॥

यदि पूर्वी पवन चले और बादल हों, पश्चिमी वायु के चलने पर बादल न रहे तो निश्चय समझो वषा नहीं होगी। एक और उदाहरण है —

सुक्कर वाली वादली, रहै शनीचर छाया ।
कह सहदेव सुन भाडली, बिना बरसे न जाय ॥

यदि शुनगर का बादल हों और वे शनीगर तक छाये रहें तो निश्चय

१ बिना बादल के, रिक्त।

वया समझे । यहाँ पर भादली के स्थान पर 'भाजली' शब्द आया है । ऐसा परिश्रुति लोकसाहित्य में समभव है ।

श्रुतुआ में अष्टामयिक परिवर्तन भी अनिष्टकर होते हैं, इसी बात का बतलाते हुए एक उक्ति है —

माघ मचवा जेठ मिआल, साठ पदव बाल ।

सैदा बहै भागली, धग्गा गइ पाताल ॥

यदि माघ में गर्मी और जेठ में शीत पड़े, आषाढ में पूर्वी पवन चले तो निश्चय है कि वया नहीं होगी । इस दोहे में 'सिआल (शीत)' पदवा (पुरवा) और सैदा (सहदेन) शब्द देखने योग्य हैं जो भाषा वैज्ञानिक के लिए बड़े काम के हैं ।

ऊपर कही उक्तियाँ के अतिरिक्त, इन महापुरुषों की सैकड़ों कृति, मेट, बीज और पैल नियमक उक्तिवा प्रचलित हैं जिनमें नाम की पुट नहीं है । हमने लोकोक्ति के राह में वृत्तिपरक भाग म उई दिया है ।

४ खेलों में वाणी विलास

अब तक जिन रुद्रि, लोकोक्ति, प्रदेनिका एव सूक्ति आदि का वर्णन हुआ है, उनसे अतिरिक्त गावाँ में कुछ और भी उक्तियाँ मिलती हैं जिन्हें ग्रामीण बालक तथा युवक खेलों में प्रयोग करते हैं । वह वाणी-विलास साहित्य सञ्जा का अधिकारी तो नहीं है परन्तु फिर भी उमका अस्तित्व ग्रामीण वातावरण में अपना एक अलग महत्व रखता है ।

गावाँ में जितने खेल खेले जाते हैं उन्हें हम दो रूपों में विभाजित कर सकते हैं—एक, बड़ा के, दूसरे, शिशुओं के । बड़ों के अथवा युवकों के खेल भी मौसमवार होते हैं । हरियानी ग्रामीण युवक शरत्काल में—कण्डड़ी, आतीलो पातीलो, डका वित्ती (गिल्ली डडा), राहा खुलिया, हूल, टाई ला (आखमिचौना), कुडल और लिल्ली घोडा आदि से अपना मनोरजन करने हैं और शरीर को पुष्ट बनाते हैं । वे ही युवक मीष्मकाल में 'कायाभिरखी' चुपल, कालडा जमालशाद, और काकड़ चलमतीरा आदि खेलते हैं । पावस श्रुतु म नूणपाला, नौकट्ट, बारदकट्ट, बाडा तुआ, फीरा बुदाइ (लाग जम्ब) कांदा का धार और काल्ह आदि खेल युवक समाज के प्रिय खेल हैं ।^१

^१ इन खेलों के नामों आदि में इलाके इलाक में भेद मिलेगा । हमने यहाँ उन खेलों के नाम मात्र दिये हैं जो हरियाना प्रदेश में प्रायः सभी स्थानों पर खेले जाते हैं । इनके अतिरिक्त भी सैकड़ों प्रकार के खेल मिलते हैं ।

इन खेलों में जो युवक समाज में प्रचलित हैं कुछ ही खेलों में बाणी का प्रयोग होता है वरन् शक्ति एव बुद्धि काशल ही सहायक होते हैं। कनड्डी, कोलडा जमालशाह और 'आतालो पातीलो' ही ऐसे खेल हैं जिनमें बाणी का गिलास दिखलाई पड़ता है।

'कनड्डी' गाव का प्रिय खेल है। हरियाना प्रदेश में तो यह खेल यहाँ का राष्ट्रीय खेल माना जाता है। यह खेल दो दलों में जँटकर खेला जाता है प्रत्येक दल अपनी शक्ति एव बुद्धि काशल से विपक्षी दल पर विजय प्राप्त करना चाहता है। इस खेल की विशेषता दर्शक को प्रारम्भ में ही प्रतीत हो जाती है। युवक जब दो दल बनाते हैं तो पहिले दो खुटे (कैप्टेन) चुन लिए जाते हैं। खेल की इच्छा रखनेवाले शेष युवक दो दो की जाड़ी में उनके पास आते हैं और उन्हें अपना परिचय देते हैं। यह परिचयात्मक वाक्य बड़ा विलक्षण होता है। इसे सुनकर खुर्ग में से प्रत्येक अपने निर्यायानुसार पराजमी खिलाड़ी को छोट लेना चाहता है। ये वाक्य कई प्रकार के होते हैं। उदाहरण —

आइ तोड बेडी आइ, तोड के बगाई' ।

कोइ ले लो सूरन कोइ ले लो चाइ ।

बस, इस प्रकार सब खिलाड़ी दो दलों में विभक्त हो जाते हैं और खेल आरम्भ हो जाता है। इस खेल में 'महुड्ड' या 'कनड्डी कनड्डी' आदि छोटे-छोटे वाक्य बराबर बाले जाते हैं।

कोलडा जमालशाह या कमालशाह — एक दूसरा खेल है। इसमें खिलाड़ी गोलाकार रूप में बैठ जाते हैं। एक खिलाड़ी कोलडा लेकर उनके पीछे घूमता है और उमें रहस्यमय ढंग से किसी अन्य खिलाड़ी के पीठ पीछे रखना चाहता है। इस क्रिया के सम्पादन करते हुए वह खिलाड़िया को सचेत करता जाता है —

कोरडा कमाल शाह ।

पीछे देगे उसी ने मार खाइ ॥

यह पाठ भी सुनने का मिलता है —

कोलडा कमालशाही,

डिब्बे में तमारू में तेरा बाजू ।^२

'आतालो पातीलो'—इस खेल को खेलते हुए खिलाड़ी रात्रि में छिप-

१ कँकना । २ बाप, पिता ।

घाते हैं और पेंत देनेवाला लड़का उनका दूदता है। राज न मिलने पर छिपे लड़के “आतीलो पातीलो चम्मा फूल पहाड़िया या माड़िया कहर अपना स्थान व्यक्त करते हैं और आगे बढ जाते हैं। पिदनेवाला लड़का जिसको राज कर पकड लेता है फिर वह पों देता है और यह खेल चलता रहता है।

दूसरे प्रकार के खेल शिशुओं के हैं जिनमें प्रायः सभी में बायीं का प्रयोग होता है। हमने नीचे कुछ प्रचलित शिशु-छंद खेलों का दिया है।

शिशु जिसकी अवस्था अभी ५ वर्ष तक की है और जिसका सवार घर के अन्दर और अधिक से अधिक मुहल्ला तक सीमित है उसका मनोरञ्जन का तथा उसने समय को व्यस्त रखने का एकमात्र साधन खेल होता है। इस आयु में दीर्घ धूप के घर के बाहर क मैंगनी पेना की अपना वे खेल अधिक उपयोगी होते हैं जो अतरगा खेलों के (इंडार गेम्स) नाम से पुकारे जाते हैं और जिनमें शिशु की अन्यायनस्कता का दूर करने तथा उसने राने को बन्द करने का शक्ति होती है। इन खेलों को आवश्यकतानुसार प्रामाण्य का बुद्धि कौशल बच देता रहता है। ये खेल बाणियों का सहारा लेकर चलते हैं अथवा या कद लीजिए कि इस प्रकार के शिशु खेलों में बायाँ का बिलास देखने को मिलता है। मुख्यतः निम्न खेल हैं।

‘आट्टे वाट्टे या आट्टे वाट्टे — खिलानेवाला शिशु को खिलाते समय बालक का एक हाथ अपने हाथ में इस प्रकार रखता है कि बालक की हथेली ऊपर को रहे। फिर दूसरे हाथ से बालक के उस हाथ पर ताली पटकता हुआ कहता है —

आट्टे वाट्टे कान के काट्टे,
भूरा मोट्टा टेन्वा ही से चटाइयो ॥

इन शब्दों के उच्चारण करते-करते खिलाने वाला अपनी दा अंगुलियों से पैरों की तरह बालक की भुजा पर चलता हुआ कहता है “या पैर चा पैर यू गया यू गया” और भूजमूल तक पहुँच जाता है फिर उच्चारण में गुदगुदाकर कहता है “यू पाया, यू पाया, यू पाया।” बालक गिलापलापर हस पड़ता है।

इसका पाठान्तर यह है —

आट्टे वाट्टे दही चगक्के,
गोरी गाने जाये बाट्टे ।
या पागी, या पागी, या पागी ।

इस पाठ में चरमत्रिदु (क्लाइमैक्स) शीघ्र ही आ पहुँचा है। इसका एक रूपान्तर और भी मिलता है —

बच्चे की हथेली के बीच में उगली गालाकार रूप में घुमाते जाते हैं और निम्न प्रकार से पद बोलते जाते हैं। फिर बगल में गुलगुली करते हैं। मच्चा पिलखिला उठता है। पाठ यह है —

गोरी गाय च्याइ है,
गोरी वाच्छो ल्याइ है,
न्याणो तुड़ाइ है,
पारी फुड़ाइ है,
रोजा, खाजां,
यह लादी रे, यह लादी।

‘भूत्ती चढाणा’ — एक बालक बैठ जाता है। दूसरा उसकी पीठ को थपथपाता है और यह नीलता जाता है।

काली कतरनी काला केस,
चढ चढ भूत्ती मगरा घंस ॥

कुछ देर तक इस प्रक्रिया से उस बालक को भूतली चढ जाती है। वह अचेतन सा हाँकर गिर पड़ता है। खिलानेवाले लड़के उसे चिढ़ाते हुए इधर उधर भागते हैं। भूतग्रस्त लड़का किसी दूसरे लड़के को छूने के लिए दाढ़ता है। जो छू लिया जाता है। उस पर फिर भूती चढाई जाती है और खेल आगे बढ़ता है।

‘मकड़ी चढाना’ — यह खेल उपरोक्त खेल से मिलता-जुलता है। बच्चे उसी प्रकार है। वचन ये हैं —

चढ चढ मकड़ी महादेराणी,
आयेगा सक्का देगा धक्का।
आवगी जाल देगी गाल।

ऐसा करते करते खिलानेवाले उसे रूजू हिलाते और झुकझोरते हैं। फिर पृथ्वी हैं “चार खागा के रात्रड़ी” यदि वह स्थिर कहता है तो लड़के उसे धपियाते हैं और यदि रात्रड़ी कहता है तो समझा जाता है कि मकड़ी चढ गइ है और लड़का रावला हो गया है। लड़के भाग जाते हैं। बावला बगल लड़का उन्हें पकड़ने का प्रयत्न करता है। जिसे छू लेता है उसे पात देना होता है। खेल आगे बढ़ता है।

'कुकड़म कुकड़ा' :—एक लड़का अपने सिर पर हाथ रखकर बैठ जाता है। दूसरे लड़के मुट्ठी ग्राह कर लड़ हा जाते हैं और यह वाणी बोलते जाते हैं —

कुकड़म कुकड़ा कितना बोक।

७५ पल्लो तार ले मौमण बोक ॥

इस प्रकार वचन कहकर एक एक मुट्ठी हटाते जाते हैं। अतः म जन सप्त मुट्ठिया हटा ला जा चुकती हैं ता उसने हाथ पाछे का खींच लेते हैं और उमे गिरा देते हैं।

'राजी लगड़ा' — खेलनेवाले सबसे बड़े बालक को चुनते हैं और सुँटा बनाते हैं। उसमे छोटा लड़का उस मुट्ठे को कसकर पट से पकड़ता है। फिर उसने छोटा लड़का दूसरे के पेट को इसी प्रकार पकड़ता है। फिर उससे छोटा, फिर उससे छोटा अपने से अगले के पट को कसकर पकड़ लेते हैं। इस प्रकार ये पच्छिन्न हो जाते हैं और बैठ जाते हैं। तब एक लगड़ा राजी खारखा मठारता आता है। खुग उससे पूछता है कौन ? उत्तर मिलता है—'खाजा लगड़ा' फिर राजी लगड़ा जिशासा रूप से पूछता है, "राजा जी ने माग में के मोया से ?" उत्तर मिलता है, "कान्ही सरनूजा बगण ताडिया का छा।" राजी लगड़ा पूछता है, "पकड़ी या कच्ची ?" और सप्त लड़का के दाँत मार मार कर देपता है, और फिर पच्छि के अतः सप्त छोटे लड़के के पर पकड़कर गंचता जाता है (अर्थात्) उमे अपहरण करने का अभिनय करता जाता है। जिम वह अपहरण कर लेता है। वह खाजी लगड़े की पार्टी म सम्मिलित होता जाता है।

'ठेकरी' — यह खेल शकाल म धूप में खेला जाता है। लड़के कुडलाकार बैठ जाते हैं। किसी एक के हाथ में एक काकरा दे दी जाती है। एक लड़का कुडल के बीच म बैठता है। वह राजा भाज होता है। तब एक लड़का गोल कुडल म से बोलता है —

मरण गरण की ठेकरी, सरणाटा करती जा।

कहियो राजा भोज न भो क जिनावर जा ॥

इस बीच म वह ककड़ी आगे पीछे बढ़ा दी जाती है। इस प्रश्न का सुनकर राजा भाज ककड़ीवाल लड़के को पहचानने की चेष्टा करता है। यह पहचान जाये ता ठोक है नहाँ ता यही प्रश्न दुबारा किया जाता है। राजा भाज मात तार उस लड़के का न पहचान गये म म का म्हा बनाया जाता है। एक हाथ और एक पाय आपस म बांध म्हा है

उसे एक फरड़ा दे दिया जाता है । तब कोई बालक राजा के बगीचे में पूजता है, "कितने रुपये लगेगा इस भाँट के 'यदि उत्तर मिले अस्सी तो सार बालक कह उठते हैं "तेरे धिर में मारू कस्सी ।" बालक भाग जाते हैं । भोटा उस फरड़े से उन्हें छूने की काशिश करता है जो छू लिया जाता है, वह राजा भोज बनता है और खेल का दूसरा दौर आरम्भ हो जाता है ।

"धुड़िया के टोह वं" — यह एक सहाय्युक्त खेल है । एक बालक रेत में अपने हाथ को इस प्रकार फेरता है जैसे कुछ दूद रहा हो । खिलाने-वाला उससे पूछता है —

धुड़िया री धुड़िया के टोह वं ?

सुई टोहू सु ।

सुइ का के करेगी ?

कोयला सीम्यगी ।

कोयला में के घालेगी ?

रपय्ये घल्लगी ।

रपय्यां का के करेगी ?

म्हँस ल्याऊगी ।

म्हँस का के करेगी ?

दूध पीऊगी ।

मूत पीले री मूत पी ले री ।

कहकर सब भाग जाते हैं ।

बालक को पैरों पर झुलाने का—झुलाने वाला ग्याट आदि ऊँचे स्थान पर बैठकर अपने पैरों को मिलाकर उन पर बालक को बैठा लेता है । फिर पैरों से आगे पीछे करके झुलाता जाता है और यह बोलता जाता है —

गोर गडी भड गोर गडी,

बना छोटा बहू यडी ।

गोर गडी भड गोर गडी,

सास्मू छोटी बहू यडी ।

जितरुं मास्मू पायीर्यावै,

उतरुं थहू विनीले खावै ।

'महमूद का टट्टू' — तेल में दो दल हो जाते हैं । एक दल के सर लड्डके घोड़ी बनते हैं और झुक कर खड़े हो जाते हैं । दूसरे

दल के सम सवार बनते हैं। उन सवारों में से एक सवार अपनी धाड़ी की श्राव्य मोचकर और अपने हाथ की टगलियों में से कुट्ट को उठाकर पूड़ता है —

इन कला पर धीन कला,
महमूद के स्ट्ट के यारो ?

उत्तर सहा होने पर धाड़ी सवार और सवार घोड़ी बन जाते हैं। गलत होने पर वह सवार उस बनलाइ हुइ मख्या को उच्चारण करता हुआ कहता है —

‘चार (एक, दो, तीन आदि) का मार्या टेकड़ा।
अगली घोड़ी चद यारो !’

अगली घोड़ी पर जाकर मी इसी प्रकार के प्रश्न होते हैं।

हल्दीघाटी — यह खेल उपरोक्त खेल में मिलता-जुलता है। बस आदि का कथन भिन्न है। शेष उसी प्रकार है। आदि के वाक्य हैं —

हल्दी घाटी जीत कै आया,
राया जा का मान थड़ाया
क एक यारो ?

उत्तर अशुद्ध होने पर उही वचन का उच्चारण करता है जो उपरोक्त खेल के उत्तरार्द्ध में दिया है और अगली घोड़ी पर बदल जाता है।

लोरिया — जब बच्चा रोता है तो उसके मनोविनोदार्थ को सुखद शब्दावला उच्चारण की जाती है और जिनमें बच्चे को निद्रानिमग्न करने की क्षमता होती है लोरी कहलाती है। माता के भावना पूर्ण हृदय में लोरियों का रत्नाकर हिलोरें लेता रहता है।

दुर^१ जाइ रे कुत्ता, दुर जाइ रे कुत्ता,
बाणियों की हटकी पाकी कुत्ता।
बाणियों बूढ़ा डोकरो,
मेरे बेटे ने ल्यावे गुड़ सोपरो^२ ॥

बेटे शब्द के स्थान पर नाम भी ले लिया जाता है जो अधिक प्रमात्रशाली होता है। यथा —

^१ भागना । ^२ गोला ।

मेरे लीलू नै ल्यावै गुड़ खोपरो, आदि ।

इन लारियों में शब्द की ध्वनि भी उच्चे के ध्यान का आकर्षित करने में समर्थ होती है । ऐसी ही एक लारी नीचे दी जाती है —

भल्लड़ मल्लड़ दूध बिलोवै
जाठ्णी का छोरा रोवै ।
रोवै सै तो रोवण दे,
मनै दूध बिलोवण दे ॥ आदि ।

यहाँ 'भल्लड़ मल्लड़' शब्द की प्रथम ध्वनि ही बच्चे पर प्रभाव डालने में समर्थ होती है ।

च फुटकर — प्रकीर्ण साहित्य का विवेचन समाप्त करने से पूर्व घरों में बूढ़ली स्त्रियों का "आशीर्वाचन" भा देखा लेना असम्भव न होगा । घर में नगगत बधुएँ प्रात साय अपनी सास, जेठानी, दादस आदि के चरणस्पर्श करती हैं जिसे ग्रामीण भाषा में 'पापइशा' कहते हैं । तब वे अभिव्यथाएँ आशीर्वाद देती हैं । हरियाने की बूढ़ाएँ अपनी गधुआँ को इस प्रकार शुभाशी देती हैं —

बेन्वे बहू ! तू बूढ सुहागण हो, तेरे बेटा हो,
तेरे भाइ भतीजे जीवें ।

अथवा

बेन्वे बहू ! तेरा बेटा जीवो, तेरे नैण पराण यणे रह,
तेरे भाई भतीजे जीवें ।

यह दूसरा आशीर्वाद विधवा स्त्रियाँ के लिए है । उसके लिए 'बूढ सुहागण' नहीं कहा जाता । अन्यथा यह अपमानजनक होता है और चरित्र पर आक्षेप करता है । इन आशार्पा में उदात्त भावना भरी होती है —

सर्वे भयन्तु सुखिा सर्वे सतु निरामया ।
सर्वे भद्राणि परयन्तु मा कश्चिद्दुःखभाग्भवेत् ॥

वास्तव में लोक प्रतिभा का काद सा अग और अश देख लीजिए उसमें लोकहित का भावना श्रोत प्रात मिलेगी ।

किसान भा एक साधु है । वह अपने खेत, ब्यार पर प्रात साय, रामनाम की रट लगाये रहता है । कुआ चलाते समय भी वह इस गुरुमंत्र का नहीं

भूलता । वह कुञ्ज न कुञ्ज उच्चारण करता रहता है जिसे 'बाग' कहते हैं । जब चङ्गस भर जाता है तो वह कालिया^१ का सचेत करता है ।

“सहार^२ ले रे जल जा भरयो ।”

चरस के ऊपर आने पर वह प्रार्थना करता है—“कीलिया हा । निआइ ऐ रे राम ।” इस प्रकार 'एक पय दो काव' हा जाते हैं । रामनाम का छप और भ्रम विनोदन का कार्य ।

यह सक्षेप से हरियानी प्रमाण साहित्य की रूप रखा है । जिसने श्रवणेह में पाठक का पटरस मिलते हैं ।



सप्तम् अध्याय
हरियानी लोकमाहित्य
मे
प्रादेशिक सस्कृति

हरियानी लोकसाहित्य में प्रादेशिक सस्कृति

हरियाना प्रदेश के लोकसाहित्य का सामान्य विस्तृत अध्ययन कर लगे के उपरान्त अब हम हरियाना का प्रादेशिक गमूनि पर विचार करते हैं। वंश कि विगत ग्रन्थियाँ में लिखनाया गया है, हरियाना भारत के उन प्रदेशों में से एक है जहाँ की सस्कृति ने भारतीय गमूति की समष्टि में एक गौरवशाली स्थान प्राप्त किया है। वनेय देश भारत न नदी नद, पत उपत्यका, गिरि गहर, विस्तृत मैदान एव पशुपुत्रा की परिकमा, यहाँ की सस्कृति के प्रधान आधार हैं। इहाँ के प्राण में आदि मानव ने उन तत्वा की राज की थी जो मानव की आध्यात्मिक उन्नति के मूल हैं।

विश्व के अणु अणु में आत्मीयता की भावना ही सस्कृति का उज्वलतम पक्ष है। यही भारतीय सस्कृत के मूलमंत्र—

“सर्वे भवन्तु सुखिन सर्वे सन्तु निरामया।

सर्वे भद्राणि परयन्तु मा कश्चिद्दुःखभाग्भवेत् ॥”—के रूप

में ससार के सामने प्रकाश-स्तम्भ सदृश खड़ा है। यही वाणी जब हम हरियाने के साधारण पुरुष के मुख से सुनते हैं—“ह भगवान्! तैर राखियो, सब का भला करियो!” ता गद्गद् हो जाना पड़ता है कितना उच्च, पावन एव सर्वजनहितकारी भाव है। इस अध्याय में हम हरियाना प्रदेश में लोकसाहित्य में इसी प्रादेशिक सस्कृति का रूप देखेंगे—

एक किंवदन्ती है, जिसे हम पीछे भी दे चुके हैं, “देसा म देस हरियाणा, जित दूध दही का खाणा।” देश म हरियाना देश विशेष उल्लेखनाय है, जहाँ का भोजन दूध और दही है।

इस प्रसंग में उत्तर वाक्य बड़ा सार्थक है। इससे दो अर्थ व्यक्त होते हैं। एक—हरियाणा प्रदेश का पशुधन बड़ा समृद्ध है। यहाँ का गौश्रा का दूध देने की क्षमता विश्व विधुत है। हरियाने की गौ को यदि दूध की पान कहा जाये तो अत्युक्ति न होगी। इहाँ पयस्विनी गौश्रा का दूध दही खाकर हरियाना के नवयुवक बलवृद्धि सौन्दर्य म अद्वितीय हैं। लोगों का कहना है कि दूध दही के इस प्रदेश की महिमा न भगवान् कृष्ण तक का इधर आकर्षित किया था। दूध दही की यह प्रचुरता ‘मायनचौर’ के दिल में उस गद् होगी। आज भा ऐसा विश्वास है कि गौ जन उद्धरण हाकर रमाती है तो वह उसी कृष्ण की पुकार करती है। दूसरे—‘दूध दही का खाणा’

भारतीय सस्कृति के एक बड़े महत्वपूर्ण एवं उज्ज्वल पक्ष की श्रार लक्ष्य करता है। भारतीय सस्कृति में दुग्धाहार, पलाहार जैसे सात्विक भोजन की महत्ता बतलाई गई है। फिर भला गो दुग्ध का तो कहना ही क्या है? वह गौ जिसमें सर्वदेव विराजते हैं, उसका दूध आर्य सस्कृति के लिए क्यों न अनुकूल हो। अतः इस उक्ति से स्पष्ट होता है कि यह प्रदेश आर्य सस्कृति का आदि स्थल रहा है।

आज भी यहाँ की भाली भाली जनता में आधुनिक सभ्यता के वे चिह्न नहीं आ पाये हैं जो मास, मदिरादि भक्षण को सभ्यता का प्रतीक मानते हैं। वे लोग आज भी वैसा ही ऋषि सुलभ जीवन व्यतीत करते हैं जैसा प्राचीन काल में आरण्यक लोग किया करते थे। यह एक उल्लेखनीय बात है कि मुसलमानों के सबसे अधिक सम्पर्क में आनेवाले ये हरियानी निवासी आज भी मुसलमानी सभ्यता से अधिकांश में दूर हैं। इनका जीवन शुद्ध और सात्विक है।

क हरियानी सत सम्प्रदाय

इस जनपद की गौरवगाथा का यहाँ के अनेक साधु महात्माओं ने भी दूर-दूर तक फैलाया है। मुस्लिम धर्म एवं सस्कृति के प्रवाह को रोकने के लिए इन निरीह साधु महात्माओं ने जनता का नेतृत्व किया। इस प्रदेश में यात्रा करनेवाले व्यक्ति को गाँव-गाँव में कोई न कोई समाधि अवश्य मिलेगी जिसका एक न एक साधु के साथ सम्बन्ध रहा है। इन्हीं स्थानों पर ग्रामीण भक्तजन प्रातः काल तथा सध्या में एकत्र हो उन साधुओं के गात गाते हैं और कीर्तन करते हैं। इस प्रदेश में वेदान्ती और निगुणपथी अनेक साधु हुए हैं। गोरखपथ की कीर्ति पताका आज भी 'चोहर अस्तल' पर पहरा रही है और एक तार्थ स्थान के सदृश कई शताब्दियों के उपरान्त भी सिद्ध ज्ञानियों के प्रभाव का अक्षुण्ण बनाए हुए है। छुड़ानी में, एक श्रार यदि गरीबदास अपनी अमर वाणियों द्वारा अनुयायियों का हृत्समोहन कर रहे हैं सा किठौली के महाराज निहचलदास की सस्कृतज्ञता तथा वेदान्तवादिता का किस विद्वान को ज्ञान नहीं है। दूबलघन माजरा के महाराज नित्यान्द की लोक-पावन वाणियों के अभाव में कौन व्यक्ति नहीं तड़पता? महम के महमी मुस्लमान फकीर की सिद्धि और पकड़पन के गीत किसने नहीं सुने? महामती नानगी के साथे तथा सरल पदों के रसास्वादन से बचित रह कौन अपने को अभाग्य नहीं कहता? सहजोवाड़े ने "चलया है रहणा नहीं, चलना रिस्ते बीस। सहजा तनिक मुहाग पर, फौण गुदावै सीस ॥" आदि शब्द सवार

की श्रमरता का प्रकट करते हैं। विपद्गुना, इस प्रदेश के शत्रु शत्रु में ब्रह्म, वेद, वेदान्त, मिथ्य और गांध की मुगंधा भग पड़ी है। जहाँ तक गंधुगा, आचार की उन्नता, तथा जीवन की श्रेष्ठता का सम्बन्ध है यह प्रदेश ब्रह्ममंडल और काशापुरी व गमान हा है। नाना संप्रदायाँ एव आक मतमतान्तरोगाले इस प्रदेश में एक लोकधर्म के दर्शन होंगे। इस पर के जाने जाने हैं - सरलता, सत्यता और साधुता। हर महात्माओं का इस प्रदेश में इतना प्रभाव है कि छूटे-बड़े सभी लोगों का इनकी वाणियाँ बढरण हैं। हम यहाँ बाबा गरीब दास जी की एक वाणी आदर्श रूप में उद्धृत करते हैं -

चितावनी के श्रम में से

गरीब पानी की जलबूँद से, साज बनाया जीव ।
 अन्दर घट्टन अंदरा था, बाहर विमरिया पीव ॥
 गरीब पानी की जलबूँद से साज बनाया साध ।
 राखन द्वारा राखिया जठराग्नि की आध ॥
 गरीब पानी की जलबूँद से, साध बनाया साध ।
 कौदो बदले जात है, उचन माटे काँध ॥
 गरीब घरघोषर जान्या नहीं, निन्न मिरज्या तनमाज ।
 चेत मऊँ ते चेतिये, विगर जायगा काज ॥
 गरीब आध घड़ी को अघघड़ी, आध घड़ी की आध ।
 साधों सेती गोष्टी, जो कीजे सो साम ॥
 गरीब अन्न समय बीतै घनी, तन मन धरै न धीर ।
 उम साहँ क याद कर, निन्न यह धरिया शरीर ॥
 गरीब भक्त हेत घर बाँधिया, मागी महल मसान ।
 ते माहिय जान्या नहीं, भूल्या मूढ जहान ॥
 गरीब या मागे क महल भ भगन भेया क्यू मूढ ।
 कर माहिव की बदगी उम याहँ कू हूँ ॥

पिछले ७०-८० वर्ष से समाज सुधार की भावना से श्रोत प्रोत आर्य धर्म—वैदिक धर्म—का प्रचार आर्य समाज के द्वारा विशेष हुआ है। जिससे इन प्राचीन मठ व मंदिरों के प्रति उत्साह कम हो गया है। किन्तु यहाँ के शिवालय किसी भी पयटक का ध्यान श्रपना आर आकर्षित किये बिना नहीं रह सकते। कई विद्वान हर (शिव) का स्थान मानकर ही इसे 'हरयाणा' कहना उचित समझते हैं। उनका तर्क है कि रोहतक अथवा रोहतनारण्य काविरिय जी को प्रिय था। पश्चिम

से चले तो वे धन धान्य से पूर्ण स्वामा कार्तिकेय के प्रिय प्रदेश रोहीतक में पहुँचे ।^१ इस प्रकार यह प्रदेश शिव-परम्परा में प्रिय रहा है और आज भी शिव मंदिर शिव की महत्ता प्रकट कर रहे हैं ।

२. हरियाना की भूमि

यमुना के खादर से पश्चिम में एक ऊँची उठी हुई भूमि है जिसे बागड़ के नाम से पुकारा जाता है । यह पचनद और गंगा के दोआबों को पृथक् करने वाला वह ऊँचा उठा हुआ भूभाग है जो जलविभाजन (Watershed) के रूप में स्थित है । बागड़ से पूर्व की बहनेवाली नदियाँ बंगाल की खाड़ी में जाती हैं और पश्चिम की बहनेवाली नदियाँ अरब सागर में । यह भाग वषा के अभाव से पीड़ित रहता है ।

३. पानी की कृपिता

नदियाँ किसी भी देश के लिए बड़ी महत्वपूर्ण होती हैं । इस दिशा में यह प्रदेश सुभग नहीं कहा जा सकता । इस भूभाग में प्रागैतिहासिक काल में ३६० नदियाँ बहती बतलाइ जाती हैं किंतु आजकल उन प्राचीन एवं पवित्र नदियों में से केवल दो नदियाँ बचे हैं । वे वषा काल में बहकर यहाँ अपने का विलीन कर लेती हैं । नदियाँ के अभाव में यहाँ नई नई सर सरोवर बनाने का आरंभ जनता का विशेष ध्यान है । तालाब एवं बावड़ी बनाने का यहाँ विशेष महत्व है । रामरा, पिंडारा और कुदत्तेन^२ के पानन सरोवरों में आज भी महत्त्वशायी मुद्दूर भारत के काने काने से आकर स्नान करते हैं । इन्हीं सरोवरों के किनारे मेले भी लगते हैं । एक उक्ति के अनुसार किसी पुरुष की प्रसिद्धि, तालाब खुदवाने से तथा बाग लगवाने से, अधिक होती है । इनमें प्रथम जल का आशय तथा बागवगीचा वषा का कारण है ।

इस प्रदेश का एक नाम हरिजन रहा है । यह हम पीछे स्पष्ट कर आये हैं । इसने कुछ अवशेष आज भी दिखलाइ पड़ते हैं । हरियाना के प्राय सभी ग्रामों के आसपास बड़ी-बड़ी 'ननियाँ' छूटी हुई हैं जिनमें पीछे कुछ वर्षा के रूप से पाये जाते हैं । प्राचीन न्विदन्ती तथा काव्या में जागल देश के

^१ एतोरुभनरम्य गंगार्य धनधायवत् ।

कार्तिकेयस्य स्थित रोहीतकमुपाद्रवात् ॥ महापय अ याय ३५ श्लोक ४

^२ रामरा और पिंडारा दो प्रसिद्ध साधुस्थान रियासत में हैं । कुदत्तेन भी एक प्रसिद्ध स्थान है ।

लिए कहा गया है कि यहा पीलू और कैर के वृक्ष अधिक खल्या में होने हैं । राजपान के प्रसिद्ध 'ढालामारु' किन्ने में मारवाड़ का जो वर्णन मालवणी करता है वह पयात रूप में बागड़ प्रदेश पर मा घटता है । मालवणी के वचन देखिए —

“बाळुड वाया देमडड, पाया निहां कुवाह ।

आधारात कुइयकड़ा, जड माथमा मुवाह ॥”

भाया ! ऐसा देस जनाई जहा पाना गहरे कुआं में हा हाता है, जिसे निकालने हुए लाग आधारात न चिल्लाने लगते हैं —

मारु ! याकण देमडड एक न भावड रिड्ड,

ऊगालडक अरसणड, कर फाकडकर विड्ड ।

मारु ! तुम्हार देश में एक भी टुग दूर नहीं हता है कभी अमाल के मारे दूगरे देशा का भागना, कभी अनामृष्टि और कभी गिट्टिडिया का आनमण, एक न एक आनव लगा हा रहता है —

निणभुइ पनग पीमरा, कंर कटाला रुख,

आके पीगे छाहडी, छू छा भाजह भूख ।

जिस भूमि में पानेवाल साप हैं, फरील और कटेली ही रुख हैं, जहा आक और पाग के पत्तों की ही छाया है और जहा भुरट नामक कटौली घास के गांजा का खाहर लाग भूव भगाते हैं, भला वह देश भी काइ देश है । 'मारु' देश का ये विशेषताए कइ रूपों में हरियाना प्रदेश में भा मिलती हैं । पाना का अत्यधिक कमा न देश का दशा का उदा द्यनीय जना दिया है । प्रकृति इस देश के प्रति सद्य नहीं है । हरियाण का पिछला इतिहास यह बतलाता है कि यहा पर अनेक जार उड़ भाषण एव लामहर्षक अकाल पड़े हैं । एक रूप से ता हरियाना का समझने के लिए अकाला का इतिहास जानना अत्यावश्यक है । प्रत्येक अकाल ने जनता के मनस् पर अपनी रमृति का रेखाए छोड़ी हैं जिनमें दैन्य है आर है परिस्थिति का एक तथ्य निरूपण । ये वे तुम्हिल हैं बिन्दों प्रमाण जनता के इतिहास में युग निमाण किये हैं ।

२ अकालों की भीषणता

इन अकाला का स्वरूप दो प्रकार का होता है—अनाज का काल और चार का काल । अकालों में सबसे भाषण एव घातक अकाल 'बालीसा'

१ नागरी प्रचारिणी पत्रिका सं० १९६४ पृष्ठ ४२२ 'बोलामारु रा दूहा' का परिचय भाग मुशी अजमरा लिखित ।

(१८४० सवत्) का हुआ है। उसका वर्णन 'दि राजाज्ज आव दि पजाव' में बड़े मामिक ढंग से किया गया है। इसके बाद अगले सौ वर्षों में कई अकाल तार या ताता बाधकर पड़े हैं। इनमें नबिया, सतरा, चँतीसा और छप्पनिया काल की कहानिया आज भी ग्रामीण जनता को रोमांचित कर देती हैं। इन सबने गीत वर्णन आज भी उपलब्ध हैं जो श्रोता को भयावह परिस्थिति में डाल देते हैं। ये गीत एक बड़ी सख्या में मिले हैं परन्तु यहाँ हम केवल एक दो गभीर एवं भीषण परिस्थिति का वर्णन करनेवाले गीत ही देंगे। स० १९१७ में जो 'सत्तरा' नामक 'काल' पड़ा उसका वर्णन एक अकाल गीत में इस प्रकार आया है —

पड़ते अकाल जुलाहे मरे, और बिच में मरे तेली,
उतरते अकाल बनिये मरे, रुपये की रहगी धेली।
चना चिरौंजी हो गया, धर गेहूँ होंगे दाख,
सत्रह भी ऐसा बड़ा, चालीसा का बाप ॥

अकाल के आरम्भ में जुलाहे मरे और मध्य में तेली मरे। अकाल की समाप्ति पर वैश्य मरे क्योंकि उनके ऋण को आधा ही चुकाया गया, इस १९१७ के अकाल में चना, चिरौंजी मेवा के रूप में महंगा बिका और गेहूँ अगूर जैसा तेज हो गया। इस अकाल की भीषणता चालीसा स० १८४० के अकाल से कई गुना अधिक थी। एक दयनीय दशा है और जीवनापयागी वस्तुओं का अत्यन्त अभाव है कि चना चिरौंजी के भाव र्म तथा गेहूँ अगूर और द्राक्षा के भाव भी न मिले। अन्नाभाव में प्राणी की क्या दशा हुई होगी—अनुमान का विषय है। एक दूसरे 'अकाल गीत' में किसान की दुर्दशा का लोमहर्षक चित्र दिया गया है —

जीने घणिया मरेगे जाट,
टूटगी गड्डी मरगे धैल,
वे मुकलाया' होगी गैल।

अकाल पड़ने पर जाट (किसान) मर गये। बनिया व्यापार को बड़ा लाभ हुआ। किसान को गाड़ी लदते-लदते टूट गई और बेचारे धैल भा मर गये। किसान की पुत्री बिना गौना हुए अपने सासुर चली गई। इतनी आपत्ति आदि पिता ने अपनी लाड्डी को निवश हाकर गौने की प्रथा बिना किये ही पति के यहाँ सदा दिया, भेज दिया। प्रथामुक्त पिता के लिए कितना कष्टकारक यह दृश्य रहा हागा ?

एक अगले अकाल चींतीसा में स० १६३४ भी किसान और उसके सहयोगी साधना पर जो विपत्ति पड़ा उसका रामाचकारी बरान निम्न पद्यों में मिलता है —

एक रोटी को धैल बिना, भर पैसा विक गया ऊट ।
 चींतीसा नै खोदिया, भैम गाय का बट^१ ।
 चींतीसा नै चींतीसा मार, निचे वैश बसाइ ।
 ओह मारै तऊड़ी, भर उमने घुरा बलाइ ॥

इस चींतीसा अकाल न पैल की कामत एक राटी था और ऊँट एक पैसा में बिना । भैम और गाय का ता बश हा समाप्त हा गया । इस चींतीसा ने हृतास जातियों में से चींतीस मार दा । बवल दा जातिया वैश्य आर कसाइ बचीं । वैश्य अपनी तरानू न जीपित रह और कसाइ सस्ते पशु सरीदकर और उनका मास बेचकर लाम उठाते रहे । इन कालों का भाषणता ने सरकार की आगे रोना और पश्चिमी बमना नहर क निकलने से अकालों की वह भयकरता तो कतिचित् रूप में दूर हो गई किन्तु एक विस्तृत भूभाग देव दुर्विपाक से बहुत पाछे तक पीड़ित रहा ।

इन अकालों का प्रमाण इतना बरा कि कया देने में पहिले यह साचा जाने लगा कि जिस गाव में कन्या दी जा रहा है वह बैरानी (शुष्क) तो नहीं है । अपने जीवन निवाह के लिए कृषक यह चाहता रहता था कि कुछ भूमि उन्हें नहर पर मिल जाये । एक बहन अपने माइ से कहती है कि माइ ! सम्मान के लिए नहरी खेता करा—“मेरे भैय्यो नै, नहरा पै घरती जोआवे ।” बहन को मय है कि बैरानी गाव का माइ एक दीर्घकाल तक बुसारा ही न रह जाये । बहन को माइ का गृहस्थी की चिंता है ।

इसने साथ यह भी जान लेना उपयुक्त होगा कि जलहीन हरियाना स्वास्थ्य के दृष्टिकरण से बड़ा प्रसिद्ध प्रदेश है । यह सभार के स्वास्थ्यप्रद देशों में से एक है । यहा के तीर जैसे सीधे, दृष्ट पुष्ट नवयुवक अलम्य स्वास्थ्य का आनंद लेते हैं । शौर्य एव स्वास्थ्य के हेतु यहा न नयुवक प्रागैतिहासिक काल से बड़े जीवट सैनिक रहे हैं । भारत की विख्यात कहानियों की हरावल में यहीं के वार सैनिक होते थे । महाराज मनु का आदेश है कि महाकाय, शीघ्रगामी, तथा पुनाले कुरुक्षेत्रीय, विगट देशीय, कान्यकुब्ज और अहिच्छद प्रान्तीय एव शूरसेन प्रदेशीय जना जो सेनाप्र म गवा जाये ।^२ कुरुक्षेत्र तथा पानीपत के सुविस्तृत मैदान हरियानी नयुवकों की आजमयी स्नायुश्रां म आज भी शक्ति संचार करते हैं ।

(१८४० सवत्) का हुआ है। उसका वर्णन 'दि राजाज आव दि पजाव' में बड़े-मामिकदग से किया गया है। इसके बाद अगले सौ वर्षों में कइ अकाल तार या ताता बाधकर पड़े हैं। इनमें ननिया, सत्तरा, चातीसा और छुप्पनिया काल की कहानियां आज भी ग्रामीण जनता को रोमांचित कर देती हैं। इन सबके गीत वर्णन आज भी उपलब्ध हैं जो श्रोता को भयावह परिस्थिति में डाल देते हैं। ये गीत एक बड़ी सख्या में मिले हैं परन्तु यहा हम केवल एक दो गभीर एवं भीषण परिस्थिति का वर्णन करनेवाले गीत ही देंगे। स० १९१७ में जो 'सत्तरा' नामक 'काल' पढ़ा उसका वर्णन एक अकाल गीत में इस प्रकार आया है —

पढ़ते अकाल जुलाहे मरे, और विच में मरे तेली,
उतरते अकाल बनिये मरे, रुपये की रहगी धेली।
चना चिरौंजी हो गया, अर गेहूँ होंगे दास,
संग्रह भी ऐसा बड़ा, चालीसा का बाप ॥

अकाल के आरम्भ में जुलाहे मरे और मध्य में तेली मरे। अकाल की समाप्ति पर वैश्य मरे क्योंकि उनके श्रृण को आधा ही चुकाया गया, इस १९१७ के अकाल में चना, चिरौंजी मेवा के रूप में महंगा बिका और गेहूँ अगूर जैसा तेज हो गया। इस अकाल की भीषणता चालीसा स० १८४० के अकाल से कइ गुना अधिक थी। एक दयनीय दशा है और जीवनोपयोगी वस्तुओं का अत्यन्त अभाव है कि चना चिरौंजी के भाव में तथा गेहूँ अगूर और द्राक्षा के भाव भी न मिले। अन्नाभाव में प्राणी की क्या दशा हुई होगी—अनुमान का विषय है। एक दूसरे 'अकाल गीत' में किसान की दुर्दशा का लोमहर्षक चित्र दिया गया है —

जीने बणिया मरगे जाट,
टूटगी गड्डी मरगे बैल,
ये मुकलाया' होगी गैल।

अकाल पढ़ने पर जाट (किसान) मर गये। ननिया व्यापारी का बड़ा लाभ हुआ। किसान की गाड़ी लदते-लदते टूट गई और बेचारे बैल भी मर गये। किसान की पुत्री बिना गौना हुए अपने सासेर चली गई। इतनी आपत्ति आई कि पिता ने अपनी लाड्डी को निवश हाकर गौने की प्रथा बिना किये ही पति ने यहा सदा दिया, भेन दिया। प्रथामुक्त पिता के लिए कितना कष्टकारक वह दृश्य रहा होगा ?

एक अगले अकाल चंतासा में स० १९३४ भी किमा और उसने सहागा साधना पर जा विपत्ति पड़ा उसका रोमाचकारी वखान निम्न पंक्तियों में मिलता है —

एक रोदी को पैत रिश, अर पैमा विर गया उट ।
 चंतीमा न रोदिया, भैम गाय का यंट ।
 चंतीमा न चंतीसा मार, निये पैग बमाइ ।
 भोइ मार तऊगी, अर उमने घुरा चलाइ ॥

इस चंतासा अकाल में बेल का कामत एक रंगी था और ऊँट एक पैसा में बिना । भैस और गाय का ता बश हा समात हा गया । इस चंतासा न हतास जातियों में से चंतीस मार दा । रजल दा जातिया वैश्य और कसाइ बची । वैश्य अपनी तरानू से जीवित रह और कसाइ सन्ते पशु खरीदकर और टनका मास बेचकर लाभ उठात रहे । इस काला की भाषणता ने सरकार का आरें खोला और पश्चिमी जमना नहर के निकलने से अकालों की बह भयकरता तो कतिचित् रूप म दूर हा गई किन्तु एक विन्तृत भूभाग देव दुर्विपाक से बहुत पीछे तक पीड़ित रहा ।

इन अकालों का प्रभाव इतना बढा कि क्या देने स पहिल यह साचा जाने लगा कि जिस गाव में फन्या दी जा रहा है वह ज़राना (शुष्क) तो नहीं है । अपने जीवन निवाह के लिए कृपक यह चाहता रहता था कि कुछ भूमि उन्हें नहर पर मिल जाये । एक बहन अपने भाइ से कहती है कि भाई ! सम्मान के लिए नहरी खेती करो—“मेरे भैय्यो नै, नहरा पै घरती बोआवे ।” बहन को मय है कि ज़रानी गाव का भाइ एक दीर्घकाल तक ख़ुवारा ही न रह जाये । नहन को भाइ की गृहस्थी की चिंता है ।

इसके साथ यह भी जान लेना उपयुक्त होगा कि जलहान हरियाना स्वास्थ्य के दृष्टिनाय से बड़ा प्रसिद्ध प्रदेश है । यह सवार के स्वास्थ्यप्रद देशों में से एक है । यहा के तीर जैस साधे, हृष्ट पुष्ट नवयुवक अलभ्य स्वास्थ्य का आनंद लेते हैं । शौर्य एव स्वास्थ्य के हेतु यहा के नवयुवक प्रागैतिहासिक काल से बड़े जीवट सैनिक रहे हैं । भारत की विख्यात कहानियों की हरायल में यहीं के वीर सैनिक हाते थे । महाराज मनु न आदेश है कि महाकाय, शत्रुगामी, तथा पुर्तल्लि कुरुक्षेत्रीय, विराट देशीय, कान्यकुब्ज और अहिच्छत्र प्रान्तीय एव शूरसेन प्रदेशीय जना को सेनाग्र में रखा जाय ।^२ कुरुक्षेत्र तथा पानीपत के सुविस्तृत मैदान हरियानी नवयुवका का अोजमयी स्नायुओं में आज भी शक्ति संचार करते हैं ।

१ वश । २ मनुस्मृति, अध्याय ७, श्लोक १६३

एक अगले अकाल चौतीसा म स० १९३४ भी किसान और उसने सहाया साधनों पर वा विपत्ति पड़ी उसका रोमाचकारी वखन निम्न पक्तियों में मिलता है —

एक रोटी को बेल बिका, अर पैसा बिक गया उट ।

चौतीसा ने खोदिया, भैस गाय का बट ।

चौतीसा ने चौतीसा मार, बिये दंग कमाड ।

भोद मार करूनी, अर उसने घुरा चलाइ ॥

इस चौतीसा अकाल में बेल की कामत एक राटी था और ऊँट एक पैसा में बिका । भैस और गाय का तो बश हा समाप्त हो गया । इस चौतीसा ने छतास छातियों में से चौतीस मार दा । केवल दो छातिया वैश्य और कसाइ बचीं । वैश्य अपनी तरानू से जीवित रहे और कसाइ सस्ते पशु खरादकर और उनका मास बेचकर लाभ उठाते रहे । इन कालों का भाषणता ने सरकार का आखें खाना और परिचमा जमना नहर के निकलने में अकालों की वह मयकरता तो कतिबत् रूप में दूर हा गई किन्तु एक विन्मृत भूभाग देव दुर्विपाक से बहुत पाछे तक पीड़ित रहा ।

इन अकालों का प्रभाव इतना बटा कि कन्या देने ने पहिले यह साचा जाने लगा कि जिस गाव में कन्या दी जा रहा है वह पैराना (शुष्क) तो नहीं है । अपने जीवन निवाह के लिए कृपक यह चाहता रहता था कि कुछ भूमि उहें नहर पर मिल जाये । एक बहन अपने माइ से कहती है कि माई ! सम्मान के लिए नहरी खेती करो—“मेरे भैय्यो ने, नहरा पै धरती मोआपै ।” बहन को मय है कि पैरानी गाव का माई एक दीर्घकाल तक कुवारा ही न रह जाये । बहन को माइ की गृहस्थी की चिंता है ।

इसने साय यह भी जान लेना उपयुक्त होगा कि जलहीन हरियाना स्वास्थ्य के दृष्टिकारण से उडा प्रसिद्ध प्रदेश है । यह ससार के म्वाम्भप्रद देशों में से एक है । यहां के तार जैमे सीबे, हृष्ट पुष्ट नवयुवक अलम्य स्वास्थ्य का आनद लेते हैं । शौर्य एव स्वास्थ्य के हेतु यहां के नवयुवक प्रागैतिहासिक काल मे बड़े जीवट सैनिक रहे हैं । भारत की विख्यात कहानियों की हराबल में यहीं के वार सैनिक हाते थे । महाराज मनु का आदेश है कि महाकाय, शीघ्रगामा, तथा पुर्नोले कुरुक्षेत्रीय, विराट देशीय, कान्यकुब्ज और अहिच्छत्र प्रान्तीय एव शरसेन प्रदेशीय जना को सेनाप्र म रखा जाये ।^१ कुरुक्षेत्र तथा पानीपत के सुविस्तृत मैदान हरियानी नायुवका की आजमयी स्नायुओं में आज भी शक्ति सचार करते हैं ।

१ वश । २ मनुस्मृति, अ-याय ७, श्लोक १६३

ग हरियाना में प्रचलित विश्वास

१ अधविश्वास (Superstitions)

हिन्दुओं के यहाँ श्रद्धा एवं मूढ़ विश्वास धार्मिक उपचार तथा प्रथाओं में सम्मिलित किये गये हैं। यां कहा जाय कि धर्म और विश्वास एक ही वस्तु है तो कुछ सीमा तक काइ आपत्ति न होगी। हरियाने के हिन्दू जीवन में असंख्य अधविश्वास माने जाते हैं जिनमें से कृषि तथा पशु सम्बन्धी कुछ मूढ़ विश्वास निम्नलिखित हैं —

जुताइ हलाटिया ने प्रारम्भ के लिए मंगलवार वर्जित माना जाता है। बुधवार विशेषतः शुभ दिन माना जाता है। यहाँ एक उक्ति प्रचलित है 'बुद्ध बावनी मुक्कर लावनी' अर्थात् बुद्ध को बुझाई आरम्भ करनी चाहिए और शुक्र को कगाई, किंतु रोहतक जिले में हलकर्षण के लिए बुधवार अमंगलकारी एवं अशुभ माना जाता है। प्रत्येक पक्ष की प्रतिपद् अथवा चतुदशी को जुताई और बोनाइ प्रारम्भ नहीं की जाती। आश्विन मास के प्रथम १५ दिन पितृपक्ष, श्राद्धपक्ष या कनागत के नाम से पुकारे जाते हैं। उन दिनों बुझाई करना अहितकर माना जाता है।

खेती के पशु विशेषकर गैलों का अभावस्था के दिन काम में नहीं लाया जाता। यदि अबाध आवश्यकता उपस्थित हो तो अपराह्न में काम में ला सकते हैं। माघ मास में सक्रांति (सकरात) के दिन कुआँ चलाना निषिद्ध माना जाता है। उस दिन गाड़ी अथवा हल भी नहीं चलाया जाता। पशुओं का विशिष्ट रूप से चारा दिया जाता है। लोक विश्वास है कि जैसी अवस्था में सनाति ठैठती है वैसी ही अवस्था वर्ष भर रहेगी।

पशु क्रय विक्रय के लिए मंगल व शनिवार अशुभ माने जाते हैं। रोहतक जिले में पशु विक्रय के लिए बुधवार भी अमंगलकर माना जाता है। भय या दुःख पशु का क्रय विक्रय शनिवार को वर्जित माना जाता है। खरादा हुआ पशु आदि स्वामी के घर आते ही चौथ (गोबर) करे तो उसका टाँका लगा लेना शुभ माना जाता है।

जब कभी पशुरोग फैल जाता है तो फलगा (ग्रामद्वार) के श्रीचामीच रज्जु में एक सराई, जिस पर काली-पाली टिकलिया बना दी जाती है, लटका दी जाती है। रस्ती को लकड़ी की कीला में फस दिया जाता है। लोक विश्वास है कि जहाँ पशु हम रस्ती के नीचे से निकल जायेगा, वह रोग से मुक्त हो जायेगा। इसी प्रकार का एक विश्वास लोक कहानियाँ में आता है

कि तिल और जी बोने से श्रापति टल जाता है। चादू की कहानियों में चादू के लिए नीला डोरा अपेक्षित होता है। गाव में जब कुआँ खोदा जाता है अथवा कुआँ गलाया जाता है तो इनुमान लों की मन्दी बनाई जाता है। विश्वास है कि ऐसा करने से समस्त काय निर्विषम समाप्त हो जाते हैं और पानी माटा निष्कलता है^१।

२ अन्य विश्वास तथा शकुनविचार

नेता-क्षारी सम्बन्धी मूढ विश्वासों के अतिरिक्त हरियाने की जनता अनेकानेक विश्वासों का मानने की अभ्यस्त है। उनके जीवन में तरङ्ग-तरङ्ग की स्पष्टियाँ स्थान बनाये हैं और जनता में धर्म की नाना व्युत्स्थाएँ प्रचलित हैं। इनमें से कुछेक ये हैं —

काई व्यक्ति जब अपने घर में बाहर मात्रा आदि पर निकलता है, अथवा ध्यानार के लिए निदेश जाता है, और उस समय उसके सम्मुख यदि उपलों का ढल, ईंधन, काँटा या काला ब्राह्मण अथवा सर्प आ जाये तो यह अनिष्टकर तथा अपशकुनकर माना जाता है। एक स्थान पर यह शकुन विचार दिया गया है —

एकला दृग, दूना साख, मोट धर्या मिले गुआल ।

तीन कोम लग भिन जाय खेला, तो माँत निमाये गिर पर खेला ॥

यदि यात्रा का मार्ग में एकमाँ हिरन मिल, दो सप मिलें और भैंने पर चढा गुआला मिले तो यात्रा के शकुन अच्छे नहीं हैं। यदि उसी यात्री को तीन कस तर खेला भा भिन जाये तो निश्चय समझिए कि उसकी मृत्यु गिर पर गेल रहा है। दोष निवृत्ति के लिए इन्हें बामाग करके निकल जाना चाहिए। इस प्रकार किसा उद्देश्य विशेष के लिए जाते हुए पुरुष के सम्मुख यदि हिरन और हिरनी बायें में दायें का आगा काट बायें तो सुख शकुन माने जाते हैं। यदि ये ही दायें में बायें का मार्ग काट दें तो कायपूति में विघ्न होता है। पतिहारी जलपूजा दो कलश लेकर यदि नामने आये तो

१ हरियाना प्रात के बहुत से भाग में पानी की—विशेषकर पीने के पाना की महान् कम्निता है। पानी पृथ्वी में गहरे स्थान पर है और बहुधा स्वारा है। दुभाग्य की बात है कि धर्या के साथ एक विपुल धनराशि खप करके कुआँ खोदा जाये फिर भा यह स्वारा निकले। अत जनता अनेकानेक देवी देवताओं की मान्यता करके ही पने कार्यों में हाथ डालती है।

शुभ शकुन माना जाता है। अनाज व मिष्ठान लाते हुए पुरुष मिलें तो भी शुभ शकुन होता है।

कौश्रा, मृग, सर्प और गरुड़ का शुभ शकुनकारी बतलाया गया है। परिस्थिति की विशेषता अनिवार्य है। एक दाहे में जनता के सगुन इस प्रकार कहे गये हैं —

कागा मिरगा दाहिने बाए बिसियर हो।

गई सम्पत्ति बहावई जो गरुड़ सामने हो ॥

कौश्रा और हिरन दक्षिणाग हा, विपधर सर्प वामाग हो, नीलकठ (गरुड़) सम्मुख हो तो नष्ट हुआ धन भी मिल जाये। एक स्थान पर जमाता की मृत्यु के कारण भी अपशकुन ही कहे गये हैं —

जब तो घर तै लीकइया गभरू सेर जुआन।

हो गया सौण कुसौण गभरू सेर जुआन ॥

धाम्मै बोल्ली कोतरी, दहयै बोल्ल्या काग।

यहा कोतरी एक पत्नी विशेष का बाँई और बोलना और कौवे का दाईं ओर बोलना शुभ नहीं माना गया है।

एक अन्य स्थान पर रोहिताश्व कुमार के पुण्यचयन से संबंधित गीत में अनेक अपशकुन गिनाये गये हैं —

ठाइ डालदी हाय कवर नै जिव हिरदा सा हाला,
होगे सोन कसोन खबर के जिव फूल तोड़ने चाला।
रीची दोघड़ लिण खडो थी पाच सात पनिहारी,
आने सी नै मिला बाणिया दे रहा खडी बुहारी,
दरवाजे सगीन चढ़ाण देखे खड़े सिक्कारी,
जान गया रोहतास कवर हुईं घान गजप की मारी,
दो साथू आपस में लड़ते देखा डग निराला।
सास बहू का जूत घान रहा देखे खड़ी सहेली,
छोड़ तान हीजड़े नाचें पाँठ रूख हथेली,
आस काना तात खवे के मिला बाबना सेली,
सुनमय आन कोतरी बोल्ली सिर करदाईं खेली,
काठ दात फिर कप्यारी गल घमड़े की माला।
एक बालक की साथ पास रोवै सिर पीठ लुगाइ,
दीन ब्राह्मन नगे पैरां सरप काट गया राही,

मोले केम उधादे मिर एक मिथमा नजर में घाई,
 बिना मना मानम नै पकड़े जां ये चार मिपाही,
 हयालात की पाठक सुल रही मदर का यद साला।
 हम हमनी की जोट भूल गइ सन हेरा वेरी नै,
 यफरी उट की जोट मिलो रहा दाय स्यार कदरी नै,
 बाया नेत्तर पट्टक रहा या गतरा जान मरी नै,
 निदागी यचनी मुद्रिकल मै दिया चक्कर काल पैरी नै,
 धर्म पाप की हार जीत नै पाप जीत गया पाला।
 रहा काटड़े जोड़ एक विराल रूप का हाली,
 हिरन लकड़गे आगो के भोट्टे पै बीठा माली,
 छोट्टे थड़े ऊचे निच्चे पाँदे काट्टे माली,
 शर्मा जी गये याग बीच पकड़ी कन्नेर की डाली,
 लइका चाहये था पूल तोड़ना त्रिपीयर लग्गा काला,
 होग सौन कमीन कवर के निय पूल तोड़ने चाला ॥

रात्रि में काक और दिन में शृगाल का बोलना भावी अहित का सूचक माना जाता है। रात्रि में तारों का टूटना मृत्युसूचक माना जाता है। टूटता तारा यदि दाँव जाय तो देखनेवाला उसकी और शुक देता है जिससे दोष निवृत्ति हो जाती है।

सगाइ अथवा लगन लागे वाले नाइ ब्राह्मण को नमकीन वस्तु अचार आदि नहीं खिलाइ जाती। निश्वास है कि ऐसा करने से सम्बन्ध में मिठास नहीं रहती, उल्टे कडुवाहट आ जाती है। विवाह में जो गोरवा पूजन होता है उसमें निश्वास है कि यदि बर बरनी गोरवे की मिट्टी भंडार में रख दें तो भंडार गोरवे की भांति भरा रहता है, कमी नहीं आती।

अयुग्म सख्या शुभ मानी जाती है किन्तु तीन और तेरह अशुभ। इनका सम्बन्ध मृत्यु के पीछे अशुभ दिनों से है। इस प्रकार तीन तेरह अथवा तेरह तीन व्यर्थ व अर्थ में प्रयोग किया जाता है। तीन को यहाँ तक रचाया जाता है कि यदि एक पुरुष जिसके दो पत्नियाँ हैं वह तीसरी शादी करना चाहता है तो पहिले उसे किसी वृद्ध से शादी करना होती है और फिर स्त्री से, जो इस प्रकार चौथी हो जाती है। पाच की सख्या सबसे शुभ मानी जाती है, सात की उससे कम। ब्राह्मण को दक्षिणा देते समय सना सेर, अदाई सेर, पाँच मेर अथवा साडे सात सेर अनाज दिया जाता है या इही सख्या में रुपये।

दक्षिण को यम दिशा कहा जाता है जहाँ पर मृतात्माएँ निवास करती हैं। अतः चूल्हे का मुँह दक्षिण की ओर बनाया जाता, सोनेवाला दक्षिण की ओर करके नहीं सोता। मृत व्यक्तियों के पैर अथवा ही दक्षिण की ओर कर दिये जाते हैं।

छींक का आना शुभ माना जाता है। छींकने वाला अभी नहीं मरेगा, यह विश्वास माना जाता है। जब एक व्यक्ति को छींक आती है तो उसने हितैषी प्रसन्न होते हैं और कहते हैं 'शतजीव' अथवा 'छत्रपति'। 'चक्रपदी (छत्रपति) एक देवी मानी जाता है जो ब्रह्मा जी के छींकने पर मक्खी के रूप में उत्पन्न हुई थी। छींकते समय उसी का नाम लिया जाता है।

बच्चों के नाम को प्रायः अधिक प्रसिद्ध नहीं किया जाता। पिता अपने बच्चा का कई वर्षों तक तो नाम भी नहीं लेते। उनके यथार्थ नाम को छोड़कर 'बूजा' 'बूजी' कहते हैं। जन्मपत्री के नाम का प्रायः नहीं लेते।

एक ग्रामीण अपने दूसरे साथी का तिल का तेल अथवा प्रदत्त तिल को उपयोग में नहीं लाता। उसे विश्वास है कि यदि वह इनका भक्षण करेगा तो प्रदाता की भविष्य जन्म में दासता करनी पड़ेगी। इस विश्वास के आधार पर एक उक्ति प्रचलित है "के मने तिले काले तिल चाब राखे सैं?" काले तिलों की दासता एवं कृतघ्ना अधिक होती है।

एक बनिया सर्वप्रथम (बाइनी के समय) उधार नहीं देता। उसका विश्वास है कि यदि बोहनी उधार से होती है तो दिन भर उधार ही चलेगा।

पति-पत्नी परस्पर एक दूसरे का नाम से नहीं पुकारते। संस्कृत के नीतिकार ने भी एक स्थान पर इसी प्रकार के विश्वासमूलक शब्द कहे हैं —

आत्मनामगुरोर्नाम नामातिकृपणस्य च ।

धेयस्वामो न गृह्यायाज्जेष्ठापत्यकलत्रयो ॥

विश्वास है कि अपना, गुण का, अतिवृष्ण, जेठी सतान और पत्नी का नाम लेने से धेयस् की हानि होती है। एक हिन्दू से गाय का घघ हो जाने पर गोघातक गोपुच्छ को एक छड़ी में घाघ उस ऊँचा उठाकर गगा स्नान के लिए जाता है। गगा पर प्रभूत धन व्यय करके उस दास से मुक्त होता है।

बृहस्पतिवार का काजल अथवा मुर्मा नहीं आजा जाता। विश्वास है कि एक बृहस्पति अघी आती है। यदि उस बृहस्पतिवार का काजल आजली जायेगी तो लगाने वाले की आत्में अघी हो जायेगी।

धरती पर या भित्ति पर श्रीमिया^१ बनाते हैं। यदि वे लकीरें टा से विभाजित हो गये तो काय मिट्टि की आशा दाता है अथवा नहीं। यह भा एक विश्वास है।

विश्वास है कि 'द्विकर्षी' जब आता है तो काइ प्रियजन याद करता है। बारी-बारी से प्रियजनों का नाम लते जाते हैं, जिस नाम लेने से द्विकर्षा मन्द हो जाये वही स्मरण करता है—ऐसा माना जाता है।

ऐसा विश्वास है कि यदि हथेला खुजाता है तो धन प्राप्ति की आशा का जाता है और 'पैर खुजाता है' तो यात्रा करनी पड़ती है। पुरुष का दाईं आँगुल पड़कना शुभ माना जाता है और स्त्री का बाईं आँगुल का पड़कना श्रेष्ठ दाता है।

इनके अतिरिक्त हरियानी में अन्य अनेक विश्वास प्रचलित हैं जिनके मूल्य पर विचार करना भी यहा अप्रामाणिक न होगा। समार का सभ्य अमम्य जातियां म विश्वास प्रचुर माना में प्रचलित मिलते हैं। उनका अपना मूल्य है। भामती धन ने ठीक कहा है कि हल या गाड़ी की आकृति का उतना महत्व नहीं जितना महत्व उन नियात्रा एवं मन्त्राचारणों का है जो हलगाइक (हाली) गाड़ीवान अथवा चरसिया काय क प्रारम्भ में प्रयोग में लाता है। भाषा चाहे अस्मष्ट एवं अस्सृष्ट क्यों न हो परन्तु उसकी आस्था म जो पावनता है एवं आत्मा का जो साक्षात्कारिता है, उसका मूल्य अवश्य है जो लौकिक पदार्थों के रूप म नहीं आका जा सकता।

कर्म, ज्ञान और भक्ति का त्रिवेणा से हाकर धर्मनद बहता है। इनमें भक्ति ही प्रेरक शक्ति है। धार्मिक पुरुष इसी भक्ति को लेकर ज्ञान और कर्म में प्रवेश करता है और धर्मपद की प्राप्ति करता है। ये मूढ विश्वास, जब मन भक्तितत्व को विकृत करनेवाले कहे जाते हैं परन्तु इनमें भ्रष्टा का वह अंश रहता है जिसका मूल्य अन्यून है। मूढ विश्वास जन-जन के द्वारा जब भा धर्म की हानि और खानि हुई है, वह अधविश्वास एवं जन-जन के कारण नहीं अपितु इसन विकृत प्रचार व प्रयोग के कारण हुई है। पुत्रजन्म के कल्पम को दूर करने में टाने टाटकों से जो काम लिया जाता है उसने अन्तर्गत भा भ्रष्टा की एक क्षीण रेखा निहित रहती है। वही भ्रष्टा सनुपयोग के बल पर धर्म प्राप्ति का कारण बन सकती है।

३ जन्मत्र और टोने टोटके

हरियानी प्रदेश में विविध प्रकृति के जन-जन मन, जाट, टाने टोटके

१ सीधी खड़ी लकीरें काटना।

प्रचलित मिलते हैं। लोक जीवन में इनकी मायता दो रूपों में मानी जाती है — एक, हित कामना के लिए, दूसरे, अहित कामना के लिए, वैर आदि उतारने के लिए।

आरस दूखने पर 'चोत्र' उतारने आदि के नाना प्रकार के टोटके किये जाते हैं। बरी के सात पत्ते और सात आटे की गोलियाँ सीक से भींधकर ग्राहों के सामने सात बार उतारी जाती है। फिर इन्हें छुप्पर में टाक दिया जाता है। इस टोटके से ग्राह की सुरखी दूर हो जाती है। आरस में फूला पड़ जाने पर तो और भी कई प्रकार के टोने किये जाते हैं।

गाव में बहुत से रोग जन या टोने से दूर कर दिये जाते हैं। कई नीची जातियाँ के पुरुष इस प्रकार के टोने जानते हैं। कई प्रकार के ज़रों के ऊपर जन भेषजू अक्षय हो जाती है तब ये जन (टोने) किये जाते हैं।

कई तालाबों में स्नान मात्र से सर्पदशन का विष उतर जाता है। ऐसा एक तालाब 'गाराला कला' में है जिसमें हरिदास पुण्यात्मा का प्रभाव बताया जाता है। छारा के तालाब में स्नान करने से पीलिया रोग दूर हो जाता है। कुत्ता का काटा 'खडराली' के तालाब की मिट्टी लगाने से ठीक हो जाता है। इस प्रदेश में ऐसे असंख्य जन या टोने (Charms) पाये जाते हैं, जिनके प्रयोग से प्राचीन पुरुष अनेक बीमारियाँ दूर कर लेते कहे जाते हैं।

ग्रधविश्वासा की भाँति जनमन, टोने टोटके भी बहुधापी हैं। इनके सांस्कृतिक मूल्य की परख भी की जा सकती है। जनमन, टोने टोटके जिनका वर्णन ऊपर हुआ है, सम्भ्यता के दृष्टिकोण से मले ही जगलीपन से युक्त हैं, परन्तु आप तनिक उस पृष्ठभूमि में प्रवेश कानिए जो छोटे से छोटे विश्वास में सनिहित है। आपको एक ही तत्व दिखाई देगा—वह तत्व है अनन्य श्रद्धा। यही वह तत्व है जो मानव को साधारण भावभूमि से ऊपर उठाकर आनन्द का मधुमता भूमिका में प्रवेश कराता है। अतः गभीरता से विचार करें तो ये ही वे तत्व हैं जो सस्कृति का पचाग हैं।

सस्कृति आत्मा की पुकार है। सस्कृति का रूप आत्मा का रूप है। विश्वास इसने अभिन्न अंग हैं। श्रद्धा, आस्था एवं विश्वास में अद्भुत शक्ति है। इन्हीं में सस्कृति का प्रतिबिम्ब दिखाई पड़ता है। अतः किसी देश की सस्कृति का परख के लिए तद्देशाय प्रचलित प्रथाएँ, रीतियाँ, अंध विश्वास, जन और टोने टोटके का सम्यग् ज्ञान परमावश्यक है।

घ हरियानी समाज

हरियाणा समाज के विषय में जन विचार करते हैं तो सर्वप्रथम हमारा

ध्यान यहा की जातियों के प्रति आरुपित होता है। भारत के अन्य प्रदेशों की भांति हरियाना में भी नाना जातियाँ निवास करती हैं जिसमें अपनी-अपना परम्पराएँ एवं रीत-रिवाज प्रचलित हैं। प्रत्येक जाति के विषय में विशद विवेचन इन लेखों का अभिप्राय नहीं है। सामूहिक रूप से ही कुछ विचार किया जायेगा।

यहा का समाज जातियों में वैवाहिक प्रथा सजातीय (Endogamous) है किन्तु सगात्राय (Exogamous) नहीं है। बहु विवाह प्रथा भी है। ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्यों के अतिरिक्त समाज जातियों में न्याय अथवा करवा की प्रथा प्रचलित है। इस प्रथा ने बहु पत्नी प्रथा को प्रथम दिया है। अभी तक सर्वत्र सम्मिलित कुटुम्ब प्रथा चल रही है। सम्मिलित कुटुम्ब प्रथा में वृद्ध कुलपति का शासन रहता है जिसमें सबका समान अधिकार होता है। पाश्चात्य शिक्षा के प्रभाव एवं नाकरी का प्रभुत्व ने इस पुनीत प्रथा का एक बड़ा धक्का पहुँचाया है। यह प्रथा आज निष्प्राण होती चली जा रही है। उत्तराधिकार अधिकतर पगड़ीवाट या भाइ वाट के सिद्धांत पर है किन्तु कि-हाँ गाँव अथवा कि-हीँ कुटुम्बों में बीर-वाट या चुहा वाट भी प्रचलित है।

हरियानी समाज में जिसकी भाँकी ऊँच की कतिपय पक्तियाँ में दी गई है, उक्त स रीति रिवाज प्रचलित हैं। प्रजनन, विवाह, मृत्यु आदि पर जो रिवाज प्रचलित हैं उनका विशद वर्णन गीतों के अध्याय में ही हुआ है। यहा पर नामकरण संस्कार के विषय में कुछ चर्चा की जायेगी। पुत्र-त्वन्ति पर घर घर के वृद्ध पुरुष, पति को बुलाते हैं और उससे नामजात शिशु का नाम पूछते हैं। वह जन्म की राशि के अनुकूल नाम रखता है। नाम प्रायः किसी देवी देवता अथवा इश्वर के नाम पर होते हैं। यथा—रामचन्द्र, किशनलाल, देवीदत्त आदि। कभी कभी पवित्र तीर्थों के नाम पर रखे जाते हैं। यथा—मथुरादास, वृन्दासिंह, काशीराम आदि। पवित्र पौदों के नाम पर भी नाम होते हैं। यथा तुलसीदास, गोंदासिंह आदि। दुष्ट ग्रहों की उपशांति के लिए कुछ असुन्दर (भँडि) नाम भी रख लिए जाते हैं यथा—मगनू (मागा हुआ), पसीटा (पसीटा हुआ), बुद्धू (मूर्ख), बदलू (बदल कर लिया हुआ), कुड़िया (कूड़ी पर मिला हुआ) आदि जिनसे इच्छालु को घृणा हा जाये किन्तु आजकल प्रवृत्ति पूरणरूपण बदली हुई है। रामायण और महाभारत में आये हुए नामों की पुनरावृत्ति सबन दीख पड़ती है।

जब बच्चा मूल नक्षत्र में उत्पन्न होता है तो मूल की शांति के लिए विभिन्न आचारों का आश्रय लिया जाता है। इसका विस्तृत वर्णन नीचे अध्याय में जन्म के गीतों में पाछे दिया जा चुका है।

कन्याओं के लिए ऐसी कोई प्रथा प्रचलित नहीं है। हा, विवाह के पश्चात् समुराल की स्त्रियां उसे बाप के नाम से पुकारने लगती हैं, यथा—तेजा की पुत्री को 'तेजाही' लखी की पुत्री 'लखाही' आदि। पुरुष उस स्त्री का पति के नाम से पुकारते हैं, यथा—बदलू की बहू आदि। यहा पर यह भी देखा लेना चाहिए कि जाट आदि जातियों में जो नियोग अथवा करवा की प्रथा प्रचलित है उसे ब्राह्मण आदि अन्य जातियां सम्मान की दृष्टि से नहीं देखती। ये जातियां करवा करनेवाली जातियों को व्यंग्योक्ति में कह देती हैं—“आजा बेटी, लेन्से फेरे, ये मरजा और भतेरे।” जिन जातियों में करवा प्रचलित है उन जातियों में सौभाग्य के लिए इतनी चिंता नहीं होती, पति के मरने पर दूसरा पति कर लिया जाता है। हरियानी समाज की दो महत्वपूर्ण अभिलाषाएँ—‘पक्की रोटी’ और ‘पक्की हवेली’ उसका लौकिक समृद्धि की पराकाष्ठा है। एक दूसरे स्थान पर हरियानी किसान जीवन की आनन्ददायिनी परिस्थिति की अवतारणा इस रूप में की है —

दस चगे बैल देख, वा दस मन बैरी,
हक़ हिसाबा न्या, वा साक़ीर जोरी,
भूरी भँस का दूधा, वा राबड़ घोलणा,
इतना दे करतार, तो केर ना बोलणा।

किसान के अच्छे ‘चगे बैल हो’ पयास अनाज हो जाये, फसल के पीछे लगान या माल मागा न जाये, भँस का दूध पीने का मिले और राबड़ी का भोजन खाने को मिले तो उसे फिर अधिक की चाहना नहीं होती।

ड हरियाने का भोजन

हरियाने के इतिहास, विश्वास, रीति रिवाज तथा एतद्देशीय लोकसाहित्य के दिग्दर्शन से यहा की प्रादेशिक संस्कृति का पयास परिचय दिया गया है। हरियाना के निवासियों के भोजन के विषय में अब कुछ विचार कर लेना उचित होगा। हरियाने के भोजन के विषय में लोकोक्तिकार ने बड़ी मार्मिक बात कही है—‘देसा म्हें देस हरियाना, जित दूध दही का खाना’। यहा के खाने में दूध-दही की प्रचुरता है।

‘रबड़ा’ यहा के भोजन का एक विशिष्ट अंग है। यह हरियाने का प्रातराश है। यहा पर लाकोक्तिकार ने अहीरों पर व्यंग्य कहा है—“अहार ग्या राबड़ा बतावे गीर” अहीर के लिए यह खीर बन गई है। हरियाने का खीर एक प्रिय भोजन है जो दुग्ध और तदुल के मिश्रण से बनता है।

हरियानी के भोजन का वर्णन करने में अवश्य अपूर्यता रह जायेगी यदि हम यहा के टीकड़ा या अगाकड़ा की आर पाठक का ध्यान आकर्षित न करें। यह भी प्रातराग का भोजन है जिसे हम देसी विस्कुट कह सकते हैं। बड़े आटे से बनी मोटी नमकीन रोटी 'टीकड़ा' कहलाती है। यह उर्ही लोगों को प्रिय है जो एक बार ४ छटाक घी खा सकने की शक्ति रखते हैं। लोगों का कहना है कि बस एक टीकड़ा और पावमर या खाइये कि राम मिल जायेंगे।

परिशिष्ट

परिशिष्ट क

हरियानी लोक-कहानी

“खीचड़ी”

‘एक चमार था। वीं था बड़ा बावला। जहाँ टाल कोइ जह नै मझादे ऊँह टाला मान जा था। एक बार वा अपणी मुसराइ डिगर गिया। उइ ऊँह क साना नै खूब सेबा कर। चमार का सासू नै बनाइ के चा में एक शहूदा भरन खीचड़ी बशाइ। चमार आगे एक याला खीचड़ी घरदी अर ऊह में खूब गेर दिया घी। चमार का जा बाठ बाठै सूत वा सारी नै डकारग्या। ऊइ ने खाबड़ा बौहत आच्छी लाग्गा पर विचारे ने ना का पता नरीं था। चमार ने खीचड़ी अकरै याइ चाब तै घरा चालकै बणवाइये। पर मुसावत घै या अक इह का ना काँह टाल पता लागै। उह नै कुछ होककै बेसरम सा इह का ना अपणी सासू त बृन्ना। पता लाग्गा कि यो तै “खीचड़ी”। यो बिन्ने इ रटण लाग्गा—‘खीचड़ा, ‘खीचड़ी’।

अगले दिन चमार नै अपणे घरकँड का रस्ता लिया। चालते-चालते “खीचड़ी” कहणा तै गया भूल अर लाग्गा भौंकरण “खाचिड़ी खाचिड़ी”। रस्ते में इक खाट अपणे नेत्र का रुवाला था और गोपिये तै चिडिया नै उडावण लाग रहा था। विचारे का चिडिया नै बौहत नभसान कर दिया था। किन्ने तै छा में या ही अर कुछ चमार के “खाचिडा-खाचिडी” के कसूते बाल मुख क लाल पीला हंग्या। चमार तै कहण लाग्गा अकरै अन्यायी के पद तौ के भाककै से। अइआ तन्ने में कसंगा सूघा। जाटने चमार कै पाच सत जूत फटकारे अर कहण लाग्गा अक भाइ “आ फदे में, आ फदे में” कहता चाल्याजा। चमार विचारा इस्ती बात ने कहता चाल लिया।

आगे बाल के ऊँह नै चार चार फँटे। वे चारा सँण मना कै चोरै करण जा ये। चमार “आ फदे में, आ फदे में” कहता जा रह्या था। इसतै चारा के सौण मराब हीमे अर चमार कै बेरसाण के दो चार जमा इये अर कहण लागे कि ‘ले ले जाओ, घर घर आओ’ कहता चाल्या जा। चमार नै दर के मारे ये ही आवर पकड़ लिये अर चालता बण्पा।

आगे मुसलमाना का कोइ माणस मरग्या था। वे ऊह नै गाइण्डण र ये। कुछ तै विचारा कै मग का बनण थाए कुछ चमार नै ‘ले ले जाओ

घर घर आओ” कहके उनके घा में लूण छिड़क दिया। मुसलमाना ने चमार खून पनाया और कह दिया कै “इसी किस्से कै ना हो” कहता चाल्या जा। वो त मार गैल पेंतरे बदलै था। वो न्यूहे रटण लाग्या।

चमार “इसी किस्सै कै ना हा, इसी किस्से कै ना हा” कहता जा रखा था। आगे राह म एक गाम पडै था। उडै एक बाणिया धरम कर रहुया था। उडै बी पाच-सात आदम्या नै जिब इह चमार के इसे कडवे बाल सुणे तै ऊह के गरमागरम पाच-सात भापट रसीद कर दिये और कह दिया अक “इसी सबके हा, इसी सब के हो” न्यू कहता चाल्या जा। चमार विचारा चाल दिया रोमता।

आगे सी एक जहाँ किस्सै की पूलिया मे लाग गी थी आच। उडै पूलिया आले का तै हो रहा था घर एक तमासा और चमार चिल्ला रहया “इसी सब के हा, इसी सब के हो।” उन्ने चमार ठाके आच विचाले पटक दिया। थोड़ा नी हाथ में चमार का तै गडासा सा बुझ गया। विचारा गऊ का जाया घर ताहीं बी ना पाह चा। ‘खाचड़ी’ नै कीस्से जुलम टाये विचारे की गैला।

एक राजा के छोरे की कहानी

एक बार की बात सै। एक बाम्मण का छोरा नै ऊ का बाप नै उसताहीं देस लिकाड़ा दे टिया। जब वो घर तें चाल्ल्या जा था तौ ऊनै रा में एक साप मिला जो क जाड्डात कती कठ्टा हार्या था। ऊ नै लकके नै साप कै कुछ सेक स्याक देकके नै गर्मी दी तो के देकके सै क साप का लाल बणग्या। ऊ नै ले जाकके वो लाल राज्जा नै दे दिया। राज्जा नै उसताहँ सन्दूक में बंद कर के और उसका टकण्य मूद दिया।

एक दिन राज्जा सपदूक नै खोल कै देकण्य लाग्या तो के देकनै सै क लाल का घणा साणा छोरा हो रह्या सै। राजा कै काइ थौलाड ना थी। वो न्हात राज्जी होया। छोरा बड्डा होग्या भल नै ऊ का बाप मरग्या। ऊ की सगाइ वो करग्या था। फर इकीकिया नै ऊ नै माराकूथ्या और भग्या टिया।

वा थोड़ी सी मार ले कै और बिना बरै ऊए गाम में आग्या जै में ऊकी सगाइ होरिही थी। छोरा पड्टण जाण लाग्या और ऊए मन्तरसा में जेम्हें वा छारी पट्या करती जिह कै सेत्ती ऊए छोरा की सगाइ होरि थी।

दोनू सहोत मुगरे ये अर दानू राज्जा का श्रीनाद ये । ऊहा आपस म प्यार हाया । ऊ नै न्यू नहीं बेरा या अक ग्दारी आनस म सगाइ हादिहा से ।

कुछ दिना पाच्छे ऊ छोरी के मा-बाप नै ऊहा सगाइ आर भित करदी । फेर ऊका या^१ नाइ आया । छोरी नै ऊते सारी रात राता दी अरु मेरी सगाइ पहल्या पलासा पलासी ठीइ हागी थी । फेर छोरा नै बताई अक बो ता में ए छु ।

इव छोरी बोल्ती क जय तारण चटकण का माकका आरे ता तू घाडा लेकके अर ऊ तै पैल्या^२ तोरण चटफा दीये । अर म दूसरा घाडा लेकके त्पार खड़ी मिल्लुगी । ऊ नै न्यू एकरी । दानू घाड्या दे नदके भाजगे । अर सव लोग देखते व देखते रैगे ।

दोनू एक राज्जा के साला बीज्जा का नाचा तै वा छोरी मरद बणके रहय लागगे । राजा ऊ नै सहोत घणा चाहा करता । वै राज्जा का राग में रहा करते ।

एक दिन रात नै परी आणुके उन रूवा नै पाटण लाग्गी ता ऊ छोरा नै तनवार काट के अर ऊनै मारी ता ऊका कपडा कटके रैया ।

राणी बाल्ला इहा कपडा और ल्या । ता वा छोरी गज में लिक्ड़ पड़ी । चालती-चालती ऊ नै एर बाबा जी मिल्या । ऊ नै बताइ अक इतराँ^३ इतराँ बाग में परी हाण आर्व से । ज वै न्हाण लाग्या ता उनके कपडे उठाके भानैये । ऊनै ऊ ए तराँ करी । बाबा जा नै पताया अक सब का कपडा बारी-बारी दे दिय मल उडली आवै ता ऊ का चोटी काट लिये । ऊ नै ऊ ए तरा करी । ता वै गाल्ला अक इव हम इर लत्या का के करा ? फेर ऊ नै ऊनी "वीन तवड़ी" दी अक जने त इने बाजावागी तो हम आणुके नाच करागी । इतणी कहके वै लुफगी ।

ऊ नै 'वीन तवड़ी' बजाइ अर वै सारी आण के नाचण लाग्गी । बाबा का मन ललचाया । बाल्ल्या क बन्वा । ले या गीन बूड़ी तै मने देहे अर या रसा साटा त लल्ले । त कहगी तै ए^४ या रसी ता बाघ लेगी अर या सोडा पीहेगा ।

आगी सी जाके वा छोरा (छोरी) ठणक ठणक करण लाग्या । बाबा बोल्त्या ने मइ ! तू ठणक ठणक क्यू करै से ? वा छोरा बाल्ल्या माने वीन बूड़ी ल्यादे । ऊनै बाबा जी बाघ के गूल पाया । बाबाजी नै वीन बूड़ी दे दी ।

१ विवाह, व्याह । २ पहिले । ३ इस प्रकार, इस तरह । ४ इमी को ।

आगौ सी जाके ऊए तरा एक बीर बाकी मिली । ऊने एक डिव्बो दी अक जिसा लत्ता चाबड़ेगा उसाए मिल ज्यागा । फेर एंतराँ ऊने एक उडा खटोल्ला मिलग्या अर ऊ पै नैठके अपणी नगरी में आण पहुँचा ।

राज्जा ऊ तै बहौत राज्जी हाया अर अपणी छोरी का ग्या ऊतै कर दिया ऊ छोरी नै बतादी अक बिर में बी छोरी ए सू । फेर दोनू राणी अर वो राजकवर राज्जी राबी रहण लागग्या । ऊ रसी सोहा की ओट^१ तँ ऊ नै अपणा राज बी ले लिया ।

फेर वा छोटणी राणी ऊतै एक दिन बोल्ली अक तेरी के जात सै । पहल्या ता नो बताइ मल ऊकी इट करण तै बोल्या क आऽच्छा तू मेरै काच्चा दूध का छींटा मार । ऊनै तो छींटा मार्या अर वो साप बणके सरइ सरइ मौरी गँ बड़ग्या । वै दोनू देखती की देखती रैगी अर अपणा किया पै पछताइ ।

परिशिष्ट—२

स्वरलिपि

लोकसाहित्य संग्रहक को अपने प्रयत्न में यथार्थ (एक्यूरेट) होने की बड़ी भारी आवश्यकता है । यदि वह ऐसा नहीं करता तो उसका प्रयास निरुक्त तथा कृत्रिम-सा प्रतात होने लगता है और वह विशेष उपयोगी नहीं रहता । जो बात लोकसाहित्य के लिए कही जा सकती है वह लोक-गीतों के विषय में और भी अधिक स्वीकार्य है । लोक-गीतों की रक्षा के लिए गायक के उच्चारण के साथ उन्हें ठीक ठीक उतारने का प्रयत्न बाध्यनीय है । यह कार्य विशुद्धरूप से तभी हो सकता है जब प्रत्येक गीत की 'स्वरलिपि' भी की जाये । स्वरलिपियों ने तुलनात्मक अध्ययन से लोकगीतों के बर्ण और प्रसार के इतिहास पर भी भारी प्रकाश पड़ता है । आधुनिक वैज्ञानिक युग में इन गीतों को विवृति से बचाने के लिए उचित तो यह है कि इन गीतों के 'रिकार्ड' तैयार कर लिए जायें ।

आदर्शरूप में, हम यहाँ तीन हरियानी लोकगीतों की स्वरलिपि दे रहे हैं, जिससे इन गीतों के रागात्मक पक्ष को हृदयगम करने में सहायता मिलेगी ।

१ राग पीलू भरवा

ताल कहरवा

सा सा रे रे सा सा नी — । सा सा रे रे गा — रे — ।
 ग्हा रे री घे ऽ र में ऽ आ या री ब टे ऽ ऊ ऽ
 नी — नी नी सा ऽ रे नी । सा — — — नी — नी नी ।
 सा ऽ थ य का ल णि हार ऽ ऽ ऽ सा ऽ थ ण
 सा — रे रे गा गा रे रे । सा सा नी नी सा सा रे नी ।
 चा ऽ ल प झी री मे रे ढ ब ढ ब म र आ ये
 सा — — — — — ।
 नैय्य ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ।

शेष गान्त तृतीय अध्याय के १६५ पृष्ठ पर देखिए ।

x

x

x

मेरा छोटा बीरा लाडला बणखड की राही हो लिया ।
 कित्तै हो तो बीरा बोलिये मैंने सारा बणखड टोलिया ।

२ राग पीलू

ताल कहरवा

नी सा रे — रे — र — । गा रे गा सा रे रे रेमा रे ।
 मे रा छो ऽ टा ऽ बी ऽ रा ऽ ऽ ला ढ ला री ब ।
 मा गा रे सा नी सा — रे । गा रे सा — नी सा — — ।
 ण ख ढ की ऽ रा ऽ ही । ऽ ऽ हो ऽ लि या ऽ ऽ

वेवे अन्न मिलै ना खाण नै दरखत के पते खा रहे ।
 जल मिलै ना पीण नै जोड कुणु सव टो छिणु ।
 मेरा छोटा बीरा लाडला बणखड की राही होलिया ।
 कित्तै हो तो बीरा बोलिये मैंने सारा बणखड टोलिया ।
 बीरा तेरे रे भाणजे का क्या ए मै कौण आवेगा भात में ।
 वेवे मेरे मे छोटे तान सँ तेरे वै आवेगे भात में ।
 वेवे याली में घालें तीन सो ए लोटे में मार घला लिणु ।
 - मेरा छोटा बीरा लाडला बणखड की राही होलिया ।
 कित्तै हो तो बीरा बोलिये मैंने सारा बणखड टोलिया ।

कात्यक बंदी अमावस आइ दिन था खास दिवाली का ।

आर्या के कहें आसू आग्ये देख लिया घर हाली का ।

३ राग माढ

ताल कहरवा

पा — पा घा सां सां — रे । — सां सां सां — सां — पा ।

का ऽ त्य का ब दी ऽ मा ऽ व स आ ऽ इ ऽ दिन

— पा पा — पा पा पा — । पा मा पा घा पा मा रे मा ।

ऽ था खा ऽ स दि वा ऽ ली ऽ का ऽ ऽ ऽ आ ऽ

पा सां नी घा पा — पा घा । पा मा — — गा — रे सा ।

ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ आर्या के म्या ऽ ऽ आ ऽ सू ऽ

रे — सा — रे । रे — रे रे — रे रे रे — रे सा ।

आ ऽ ग्ये ऽ दे ऽ ख लि या ऽ ष र हा ऽ ली ऽ

रे मा गा रे सा — — — ।

का ऽ ऽ ऽ आ ऽ ऽ ऽ

सभी पड़ोसी बच्चों रातर खेल खिलीने ल्यावें थे ।

दो बच्चे हाली के बैठे उनकी ओर लग्गवें थे ।

रात बूच की जली खाचडी घोल नीत में खाव थे ।

दो हुत्ते बैठे भगन हुए उनकी ओर लग्गवें थे ।

तीन कटोरे पकू यखीरा काम नहीं था थाली का ।

आर्या के कहें आसू आग्ये देख लिया घर हाली का ॥१॥

कहीं कहीं तो खीर पके कहीं हलुये की महभार उठ री ।

हाली की बहू एक थोड नै खड़ी धाजरा कूट री ।

हाली बैठ्थ्या राट विद्याके पायतारानी टूट री ।

हुक्का भर कै पीवण लाग्या चिलम तल तै फूट री ।

चाकी धोरें डहूक पढ़्या था जर लाग्या एक पाली का ।

आर्या के कहें आसू आग्ये देख लिया घर हाली का ॥२॥

परिशिष्ट—ग

शब्दकोष

हरियानी लोकसाहित्य में प्रयुक्त कतिपय शब्दों की तालिका हम नीचे दे रहे हैं । देखकर आश्चर्य होता है कि अक्षरज्ञान विहीन ग्रामीण जनता

ने प्राचीन शब्द निधि को कितनी श्रद्धा के साथ अर्प्य देकर बचाया है तथा उसका शब्दभण्डार कितना सम्पन्न है। भावाभिव्यक्ति के लिए उन्हें कदापि शब्द-गारिद्रव्य नहीं घेरता। उनके यहाँ शब्दों की टक्काल सतत जारी रहती है।

“अ”

अभ्र	(अज्ञा) बकरी
अगेता	पहला, समय से पहिल
अडास	१ कठिनाइ, समस्या ‘अडास में आया’ कठिनाइ में पस गया। २ चित करना, विघ्न उपस्थित करना ‘अडास लाना’ निम्न कर रहा है।
अड़ै, आड़ै	यहाँ
अर्षी	नीक
अधल (विरोपण)	स्पष्ट, पकी, प्राय पहचान, शब्द के साथ इसका पहचान प्रयोग हाता है। अधल पहचान (पहाण) के अर्थ हाने, स्पष्ट पहचान, खूब पहचान।
अंत (वि०)	समाप्ति अथवा लक्ष्य
अलेप (अलक्ष्य)	भगवान
अतना (वि०)	अत्यधिक “घना न अंत का बोलना, घनी ना अंत की चुप।”
अवेर	देरी
अकरभइर	चालाकियों, अगर, मगर
अटफल सटकल	अनुमान, अदाजा
अणआत	(अणहात) अभाव अथवा गरीबी
अलवादी (वि०)	भृष्ट, जिद्दी, (पुरुष या पशु)
असतल	(स्थल) बैरागी साधुओं का मठ या आश्रम

“आ”

आरुल	चूपम, निजार
आँख	(आँचि तथा अचर) लिपि के अचर, दो आँख काटना, कुछ लिख देना।
आटना	मरना। कुआ अथवा तालाब को मिट्टी डाल कर मर देना।
आगमबुधी	(अप्रबुद्धि)
आठें	अष्टमी
आठ न साठ	तीन तेरह, व्यर्थ। “खेती की उसकी आप कर आधी उसकी देखना जाय। आये गये को पुच्छे बात, उसकी खेती आठ ना साठ।”

आड	१, विघ्न २ रोक ३ सरसों की आड़
आढा	कुछ, कड़वा । “राड़ करो तो बोलो, आढा ।”
आया	निपिद्ध, परहेज । “दारू की आया सै,” मद्य का निषेध है ।
आघमआघ	बराबर-बराबर
आल	१ आर्द्रता, गीलापन । २ दगा, उपहास, मूखता
आलकस	आलस्य
आस	आशा
आखा	(आश्रय) सहारा, “मालिक के आसरे तै” भगवान की सहायता से ।
आयत	सिरहाना, सिर की ओर

“इ” “ई”

इलहान	व्यर्थ की बात जो अपनी शक्ति से बाहर हो ।
इधे	इधर
इंटी	बोझा, विशेषकर पानी का धड़ा टोने के लिये सिर पर रखने का कपड़े का गोल चक्र । “दबी आने, दबी जा ।”

“उ”

उजाड़	जगल
उग्मना	उदित दिशा में, पूर्व दिशा में । ‘उग्मना खेत’ । पूर्व की ओर खेत हितकर नहीं होता । प्रातः जब जाग्रो ता सूर्य सम्मुख, सध्या में वापिस आग्रो ता भी सम्मुख ।
उम्रा	वह भूमि जिसमें बिना सिंचाइ के रबी की फसल पैदा होती है ।
उशिहार	(अनुहार) सदृश, ‘जेठ की उशिहार, जेठ की सदृश
उबना	निकलना, उद्भव होना

“ऊ”

ऊत	निपूत, निष्पुत्र, दुर्भाग्यशाली
ऊपला	गोसा, कडा

“ए”

एकला	एकाकी
------	-------

आन्दा
आट, आटना

“ओ”

छाटा, लघु
१ स्वाकार करना—‘अपणा कसूर ओट ले’। अपराध स्वीकार कर लो।
२ मान लेना—“आज घर में काम है, मेरा आड़े का काम तू ओटल।”
३ सहना, झेलना—‘मेरी लाटा आट, गेंद ओट’। संमालना।
उपालम, व्यंग्य।

ओहलना

“औ”

औलासीला
(नि वि)
औले
औली बात
औले ता कौले

बैसा-त्तैसा
काने में
कड़ु, ककरा, गाली
इधर उधर

“क”

कय
कठरा
कड़
कड़े
कतनी
कनै
कपत्ता
कमेर
करग
कराल

पति
कठिन
कमर, पीठ
कुन, कहा ?
कातते समय पूनी रखने की टोकरी पास—‘तेरे कनै’ तुम्हारे पास।
भगडालू कुपुन “नलाइ ना करा दापत्ती, क्या चुगौगी कपती”
१ कायक्षमता २ कमाई
अरिथया
कठिन, बुरा बना हुआ। ‘कराल हल’ कठिनाई से भूमि में लगनेवाला हल।
ऊट

कहैला
कल्दारा
कसुआ
कसूत
कसौन
काकड़ा
कागला

भगाडालू, धृष्ट
एक कौड़ा जो फसल में लग जाता है
बुरा, हानिकर
अपशकुन, कुशकुन
बिनीला
कौआ

किनौड़ (त्रि वि)	किधर
किम्मे न	कहीं नहीं
कुकरा	मुर्गी मुर्गी
कुतान (विशे०)	निकृष्ट, छोटा, 'आछी नगरी कुतान बासा । करी बीर क्या घर बासा'।
कैहर	नरक, कष्ट, आपत्ति "रहना तो सहर का, चाहे कैहर क्यू ना हो!"

“ख”

खडवा	सापा
खुरा	खुरवाला 'बंगनखुरा' रंगन के से खुरवाला ।
खापार	निम्मी, हानिकर

“ग”

गद देसी (त्रि वि)	एकदम, अनायास
गदर	ग्रथपका "कच्चे फल सुखाने, गदर हुय मिठान । वे फल कौन से, जा पक्के हा करवान ।" शैशव, यौवन, वृद्धावस्था ।
गमीना	रिश्तेदारी
ग्यासा	एक शब्द विशेष
गावरु	युवक
गाहा	पहली
गोड़ा	चक्र
गोरा	आनादी के पास, गौरवर्ण
गोरी	सुनती स्त्री । इस शब्द के पाछे रसिक स्त्री का चित्र उपस्थित हाता है । यौवन की लाली या स्वभाव, सुलभ लज्जावश लाली का भाव गोरी शब्द में छिपा है ।
गासा	उपला, कडा

“घ”

घालमाल	गढबड़, 'जाट जाट के साले, करदे घालेमाले' ।
--------	---

“च”

चबाला	एक प्रकार का राग जिसमें प्रायः प्रेम का बखन होता है ।
चाम	खाल, चरस, "भरगया चाम राम मनाइयो"—चरस भर गया है ।

चोत्र	कौटुक, आरचन
चौकस	शायधानी, पक्का बात नरनाथ का पिछार, सजन तुम गिल में रखना । नर का देना भार, नाथ का चौकस रखना ॥ नर (ताना) नाथ (ताली) ।
चौरा	वेग, (विवाद की) “छ”
छाद	गध “ज”
जनेन	जगत
जनहैरी	जलकलश
जानलवासा	जनमासा, बरात व ठहरने का स्थान
जेठा	बड़ा, पदला “झ”
जहमत	परिश्रम, “भक्त विधा, पञ्चत भेना” ।
भिरवे	टुबल हाना, सूचना । ‘शाना भिरवे जान ने’ जानी शान के लिए कष्ट उठाता है । “ट”
टलना	बचना, वापिस जाना, चूकना “कालटलना, काल ना टले” मृत्यु से बचाव हा सकता है ।
टाबर	जाल बच्चे
टाढा	प्राय १०० नैलों के समूह का टाढा कहते हैं । बनबारे टाढा लादकर चलते थे । प्रसिद्ध है लाख बनबारे के टाढा ३ लाख बैल थे ।
टीका	रत का पर्वत
टेक	प्रतिज्ञा, सहाय, रक्षा
टोय	हानि
टारडे	ककड़
टहना	खोजना, तलाश करना “ठ”
ठाढा	१ शक्तिशाला, २ खड़ा रहना, रुकना

[हरियाणा प्रदेश का लोक साहित्य]

डाकौत
डामचा
डागर
डूम
डैहर

ज्योतिषी
मचान, ठाढ़
पशु
एक जाति जो नाच-गाकर आजीविका कमाती है।
बाढ

“डू”

दाणा
दायी
डुकाव
दोर

“डू”
१ कुआ का छोटा सा सघन, २ किसानों की छोटी सी बस्ती
बस्ती
कन्या के द्वार पर मनाया जानेवाला आचार
डागर

“तू”

तगार
तला
तहेता
तापड़
तिस
तिसाया
तीजन
तील
तारख

गीली मिट्टी का ढेर
नीचे
जोरदार, ठीक समय पर
कड़ी भूमि
प्यास, तृषा
प्यासा
चरखा कातने की जगह
लियों के पहरो व कपड़े “आगी आदना और लहगा”।
द्वार पर लगी हुई काठ की चिड़िया

“थू”

थान
थामना
थे

(स्थान) साधुआ के रहने का स्थान
ठहरना
तुम्हारे

“दू”

रास्ता
(दारिद्र्य) गरीबी, निर्धनता
देश निकाला
शत्रु

दग्गा
दलदर
दछोटा
दावेव

दुहाग	(दुभाग) राड बैठाना, तलाक, सजा
दुहेला	कठिन
दूधल	दुधार, 'गाय तो दूधल बाकी' दुधार गाय प्रशसनीय है ।
दूभर	कष्टकर । 'मरदा दूभर पीसना' पुद्ग के लिये पीसना कष्टसाध्य है ।
देवघर	कोहबर घडा फेरों के पीछे वर को ले जाते हैं ।

“घ”

घण	(घन्या) पत्नी
घण्ठी	स्वामी, पति
घडा	(घ्वघ) झंडा
घाप	छुक कर । “कितने सुखते जीवा ये जद घाप के रावड़ी पीवाये” †
घीनू	दूध का पशु करना
धीय	बेटी
घोकना	पूजना, नमस्कार, दंडवत् करना

“न”

नगमलग	अनेला, बिना परिवार के
निगोडा	अशिष्ट, व्यर्थ, बावला
निपजना	उत्पन्न होना
निमाना	मूर्ख
निरासा	(निराश्रय कि० वि०) तीव्रता स “जेठ मास जो तपे निरासा, तो जानो बर्खा की आशा ।”
निम	निर्भय

“प”

पगड़ी बाँट	भाई बाँट
पल्लुवाड़े	घर के पीछे
पडवा	१ प्रतिपद, २ पूर्वा वासु । ‘सावन माह चले पडवा । खेले पूत बुलाले मा ।’
पत	इज्जत, मान
पदीडा	अत्यंत पीनता, “नदी दे नै मित्या कटोरा । पानी पी पी हुआ पदीडा ।”
परस	चौपाल, मरदानी बैठक

“ड”

डाकौत	ज्योतिषी
डामचा	मचान, ठाड
डागर	पशु
डूम	एक जाति जो नाच-गाकर आजीविका कमाती है
डैहर	बाढ

“ढ”

दाया	१ कुआ का छोटा सा सघन, २ किसानों की छोटी सी
दायी	बस्ती
डुकाब	कन्या के द्वार पर मनाया जानेवाला आचार
दोर	डागर

“त”

तगार	गीली मिट्टी का ढेर
तला	नीचे
तहेता	जोरदार, ठीक समय पर
तापड़	कड़ी भूमि
तिस	प्यास, तृपा
तिसाया	प्यासा
तीजन	चरपा कातने की जगह
ताल	लियों के पहरने के कपड़े “आगी आदना और लहर
तोरण	द्वार पर लगी हुई काठ की चिड़िया

“थ”

थान	(स्थान) साधुओं के रहने का स्थान
थामना	ठहरना
थारे	तुम्हारे

“द”

दग्दा	रास्ता
दलहर	(दारिद्र्य) गरीबी, निर्धनता
दसोटा	देश निकाला
दावेत	शत्रु

दुहाग	(दुभाग) राह बैठाना, तलाक, सजा
दुइला	बठिन
दूधल	दुधार, 'गाय तो दूधल बाकी' दुधार गाय प्रशसनीय है ।
दूमर	कष्टकर । 'मरदा दूमर पीसना' पुसप के लिये पीसना कष्टसाध्य है ।
देवघर	कोदर बहा फरो के पीछे वर का ले बाते हैं ।

"घ"

घण	(घन्या) पत्नी
घपी	स्वामी, पति
घषा	(घष) भटा
घाप	छक कर । "कितरो मुखते बीबा ये जद घाप के राबकी पीबाये" ।
घीन्	दूध का पशु करना
घीय	बेटी
घोकना	पूजना, नमस्कार, दबवत् करना

"न"

नगमलग	अरेला, बिना परिवार के
निगोड़ा	अशिष्ट, व्यथ, बावला
निपजना	उत्पन्न होना
निमाना	मूर्ख
निरासा	(निराश्रय क्रि० वि०) तीव्रता से "जेठ मास जो तप निरासा, तो जानो बला की आशा ।"
निभ	निर्भय

"पु"

गङ्गी घाँट	भाई घाँट
गङ्गावाड़े	घर के पीछे
गङ्गा	१ प्रतिपद, २ पूर्वी वायु । 'सावन माह चले पङ्गा । खेल पूत बुलाले मा ।"
गि	इज्जत, मान
दीडा	अत्यंत पीनता, "नदी दे नै मित्या कयोरा । पानी पी पी हुआ पदोडा ।"
रस	चीपाल, मरदाना बैठक

परार	एक वर्ष से पहिले
पर्नी	परिणीता
पटेला	पेट्ट, बड़े पेट का
पाली	गाप, गाला
पायत	पैरों की ओर
पाही	गैर निस्वेदार
पिलाणा	जीन रखना
पीला	चुदड़ी, पीला पौमचा भी होता है जिसे प्रसव के उपरांत माताएँ आढती हैं ।
पुगना	१ जीतना, रहना । “बिन्ती टंडा म में अवरल पुगया”— गिल्ली डंडा के रोल में सर्व प्रथम रहा । २ चुकना, दीजाना “उगाही नहीं पुगी ।”—भूमिकर नहीं दिया गया
पेश्रोसाल	पितृशाला, नेहर
पौन	पना
पोली	घर म प्रवेश का फमरा, दुबारी
पौहड्डा	आश्रय

“फ”

फलसा	मुत्पद्धार
फँस	कष्ट, चिन्ता “ले लेना भँस, कट जागी फँस ।”

“ब”

बगड़	आगन
बटेऊ	पथिक, यात्री, अतिथि, पाहुना
बत्ता	अधिक, “दो घर बत्ती माँगनी, पर चलता मसाल की चाँदनी ।”
बरगा	सदृश “मे घो तेरा ए बगी सू ।”
बरो ब्राबर	एकठा, समान
बरजना	मना करना, निषेध करना
बाका	१ छैल, २, टेटा
बागी	टेदी । ‘भीत क्यों बागी, नहू क्यों नागी’—(सूत न था)
बापल	पिता
बारनै	द्वार पर
बाहुड़े	लौटना

गिराना	करना करना, रसदिना
बीज	विजनी
बुलद	बैल
पैदा	देना
बल	व्यग्र

“म”

मदना	लगाना (किनाइ)
मानइ	घर का समस्त वस्तुएँ सानूहिक रूप में
माने	चाह, बेचक
मौना	कठपुतला का नाच गिरानेवाली एक जाति जो राजस्थान में विशेषरूप से मिलती है ।

“मू”

मदा	किसी सिद्ध पुरुष की समाधि
मत	मति, समझ
मनध	मनिश्रार
महा (मादा)	फलका, मूँह का चपाती
मेलबड़	किछा वृद्ध के मरने पर काज आदि करना
मार मुलक के	अगणित, अमख्या, 'टुनिया भर क' ।
मारु	प्रियतम
माचड़े	चूने
मोढा	साधु

“मूँ”

राघइ	मुसलमान राजपूत, “सौ राघवों की एक मा ।”
रीवा	रिक्त, खाली
रुपा	चाँदी
रैवारी	एक जाति

“लू”

ल्लास	१ खेती के काम में सहायता देने के लिये बुलाए हुए अथैतनिक व्यक्तियों को जो जो माबन दिया जाता है वह ल्लास कहा जाता है ।
-------	--

२ कोआपरेटिव लीग (डगवारा)

छिपकर

रूढ़, शुष्क, सूखा

“स”

प्रातः काल

गधा

(स्वभाव) आदत—मन मोती और दूध का एक सभाओ ।

पाटे पाछे नामिले लाल करो उपाओ ॥

समीप—नृप, बैल, विद्या, तिरिया, येह ना गिहें गुणजात ।

जो समेप इन के रहे, उसी के लिपटे हाथ ॥

सूक्ष्म दक्षिणा

काम चलना

आर्पात्त, दुष्काल

सखी

एक प्रकार के साधु जो निहग रहते हैं और शादी नहीं

(स्यार) गीदड़, ‘रात नै बोले कागला, दिन नै बोले साल’ ।

श्वसुरालय

फरते

साथ

शकुन

“ह”

जार से

समय, काल, वक्त

रुक्का, पुकार

तरफ, और, ‘आइये म्हारे हेर’ ।—तू हमारी और आना

सहायक-सामग्री

१ ग्रामीण हिन्दी	डा० धीरेन्द्र वमा
२ विचार धारा	डा० धीरेन्द्र वमा
३ हिन्दी भाषा और लिपि	डा० धीरेन्द्र वमा
४ प्राकृत प्रकाश	डा० ए सी कलनर
५ हेमचन्द्र शब्दानुशासनम्	हेमचन्द्र सूरि
६ मजभाषा का व्याकरण	किशोरीदास वाजपेयी
७ दक्खिनी हिन्दी	डा० वानूराम सक्सेना
८ भाजपुरी भाषा और साहित्य	डा० उदयनारायण तिवारी
९ हिन्दी भाषा का उद्गम और विकास	डा० उदयनारायण तिवारी
१० हिन्दी भाषा का विकास	डा० श्यामसुन्दर दास
११ हिन्दी व्याकरण	दुलीचद
१२ राजस्थानी भाषा और साहित्य	मातीलाल मेनारिया
१३ पृथ्वीपुत्र	डा० वासुदेव शरण अग्रवाल
१४ भारतीय अनुशीलन ग्रथ	हिन्दी साहित्य सम्मेलन
१५ पुरातत्व निग्धावलि	राहुल जी
१६ लोकसाहित्य	भक्वेरचद मेघाणी
१७ लोकसाहित्य नु समालाचना	भक्वेरचद मेघाणी
१८ ब्रज लोकसाहित्य का अध्ययन	डा० सत्येन्द्र
१९ राजस्थानी वाता	सूर्यकरण पारीक
२० भाजपुरी लोकसाहित्य का अध्ययन	डा० कृष्णदेव उपाध्याय
२१ भारतीय लोकसाहित्य	श्याम परमार
२२ कविता कौमुदी भाग ५ वा	रामनरेश त्रिपाठी
२३ ग्राम साहित्य	रामनरेश त्रिपाठी
२४ घरती गाती है	देवेन्द्र सत्यार्थी
२५ बेला फूले आधीरात	देवेन्द्र सत्यार्थी
२६ चट्टान से पृष्ठ लो	देवेन्द्र सत्यार्थी
२७ बाजत आवे टोल	देवेन्द्र सत्यार्थी
२८ भाजपुरी ग्राम-गीत भाग २	डा० कृष्ण देव उपाध्याय

२६ भोजपुरी ग्राम्य-गीत	आर्चर तथा सकटा प्रसाद
३० राजस्थानी लोक-गीत	सूर्यनरयण पारोक
३१ मैथिली लोक-गीत	रामइकवाल सिंह 'रावेश'
३२ हरियाना के लोकगीत	एस एस रधावा और देवी शकर 'प्रभाकर'
३३ कुच प्रदेश के लोक गीत	गणेश दत्त गोड़
३४ हिन्दी लोक गीत	रामकिशारी श्रीवास्तव
३५ गढ़वाली लोक-गीत	नत्थी प्रसाद जुगपाल
३६ मालवी लोकगीत	श्याम परमार
३७ इसुरी की फाग	लोक वाता परिपद, टीकमगढ
३८ ग्राम्य गीतों में करुण रस	सातादेवी
३९ धूलिधूसरित मणिया	सीतादेवी
४० गरीबदास जी की गाी	बम्भई
४१ ब्रज की लोक-कहानिया	डा० सत्ये द्र
४२ ब्रज की लोक कथाए	आदर्श कुमारी यशपाल
४३ बुंदेलखण्ड की ग्राम कहानिया	शिवसहाय चतुर्वदी
४४ हरियाना की लोक कथाए	राजा राम शास्त्री
४५ जातक समूह	ना० वा० तुंगार
४६ राजस्थानी साहित्य की रूपरेखा	मातीलाल मेनारिया
४७ राजस्थान रा दूहा भाग १	नरोत्तमदास स्वामी
४८ ढाला मारू रा दूहा	पारीक, ठाकुर और स्वामी
४९ राजस्थानी कहावतें	मुरलीधर और स्वामी
५० राजस्थानी लोकोक्ति या	डा० कहेया लाल सहल
५१ राजस्थान के ऐतिहासिक प्रवाद	डॉ० कहेया लाल सहाय
५२ घाघ और भडुरी की कहावतें	श्रीकृष्ण शुक्ल
५३ मराठी साहित्य का इतिहास	कृष्णलाल शरसादे
५४ तारीख जवान ए उर्दू	डा० मसूदहसन
५५ उर्दू साहित्य परिचय	हरिशकर शमा
५६ उर्दू साहित्य का इतिहास	डा० रामभाबू सक्सेना
५७ जीवन विहार	काका कालेलकर
५८ भारतीय रीति रिवाज	रत्नमानु सिंह नाहर
५९ हिन्दुओं के त्याहार	कु० कहेया जु
६० राजपूताना का इतिहास	गौरीशकर हीराचंद भा

६१	बीकानेर राज्य का इतिहास	गौरीशंकर हीराचन्द्र भू
६२	हमारा खडकथान	शुक्ली सिंह मेहता
६३	इतिहास प्रवेश	जयचन्द्र विद्यालकार
६४	मविश्वरत्न कदा	धनराल
६५	हिन्दी काव्यधारा	राहुलजी
६६	अथ योधय	राहुल जी
६७	बृहद विष्णु पुराण (प्रदेश माहात्म्य भाग)	
६८	स्कन्द पुराण	
६९	महाभाष्य	
७०	महाभारत—सभासत्रं, वनसत्रं, उद्योगपर्व	
७१	मनुस्मृति	
७२	निम्न (नैगमकाण्ड) दुर्गाचार्य का टीका	
७३	वेदधरातल	गिरीशचन्द्र श्रवस्ती
७४	पारिणिकालान भारतवर्ष	डा० कामुदेव शरण्य अग्रवाल
७५	नाटक की परम्परा	डा० खत्री
७६	हिन्दी नाटक साहित्य का विकास	डा० सामनाथ गुप्त
७७	महापुराण पुष्पदत्तविम्बित	
७८	शब्द कल्पद्रुम काण्ड २	
७९	श्रीमन्नदेव राक्षो	नरपति नालह
८०	बालमुकुन्द गुप्त स्मारक-ग्रन्थ	
८१	अग्रवाल जाति का इतिहास	डा० सत्यनेत्रु विद्यालकार
८२	'तारीख परिस्ता'	

- 1 Linguistic Survey of India Dr George Grierson
- 2 The Legends of the Punjab Sir R C Temple
Vol 3
- 3 Standard Dictionary of Folk lore, Mythology & legends Funks and Wagnalls
- 4 Annals & antiquities of Rajasthan Col Tod
- 5 Encyclopedia Britanica (History of Folk lore

- | | | |
|----|---|--|
| 6 | Gazetteers of Districts — | Gurgaon,
Rohtak,
Delhi,
Hissar,
Karnal,
Patiala (State)
Jind (State) |
| 7 | Introduction to the popular
religion and folklore
of Northern India | Crooke |
| 8 | Golden Bough | Sir James Frazer |
| 9 | Queen of the Air | John Ruskin |
| 10 | Field songs of Chhattisgarh | Dr S C Dube |
| 11 | Snow balls of Garhwal | N S Bhandari |
| 12 | Hindi Folk songs | A G Sheriff |
| 13 | Folk songs of the Maikal Hills | Dr Vanier Elvin |
| 14 | Folk tales from Mahakaushal | Dr Vanier Elvin |
| 15 | A History of Maithili
literature | Dr J K Misra |
| 16 | Dictionary English Sanskrit | William Morrier |
| 17 | 'Fables choriques' | La Fountain |
| 18 | Old Ballad | Frank Sidgwick |
| 19 | The English Ballad | Robert Graves |
| 20 | The Oxford book of Ballads | Arthur Quiller Couch |
| 21 | Ballads & songs of the
peasantry of England | Robert Bell |
| 22 | Lyrical Ballads | Thomas Hutchinson |
| 23 | The Ballads | M J Hodgart |
| 24 | Geography of early Buddhism | B C Law |
| 25 | Census report 1954 paper
No 1 Punjab Tables | |

- | | | |
|----|--|-------------------|
| 26 | The origin & development of Bengali language | Dr S K Chatterji, |
| 27 | Downfall of Hindu India | C V Vaidya |
| 28 | Epigraphia Indica | |
| 29 | Ina Akbari | Busman |
| 30 | Ellis's History of India as told by its own historians | |
| 31 | Epigraphia Indo Muslemica | Gulam Yazdani |
| 32 | The ocean of story | Penger |
| 33 | The Rajas of the Punjab | |

पत्रिकाएँ

- | | | | |
|----|--|----|--|
| १ | जनपद | १२ | हिन्दी अनुशीलन पत्रिका, प्रयाग विश्वविद्यालय |
| २ | मधुकर | १३ | राजस्थानी लोकवार्ता |
| ३ | सरस्वती | १४ | जनवाणी |
| ४ | विशालभारत | 15 | Modern Review |
| ५ | सम्मेलन पत्रिका (लोकजाता विशेषांक) | 16 | Indian Antiquary |
| ६ | भारतीय साहित्य (हिन्दी विद्यापीठ आगरा) | 17 | Man in India—Folk lore number |
| ७ | चाद | 18 | Indian Historical Quarterly—Calcutta |
| ८ | हस | 19 | General of Asiatic Society of Bengal (Files) |
| ९ | आजकल | 20 | General of Royal Asiatic Society—London |
| १० | नागरी प्रचारिणी पत्रिका | | |
| ११ | हिन्दुस्तानी पत्रिका | | |